हरिजन-सेवा

हरिजन-सेवक-संघ
की
त्रैमासिक मुख-पत्रिका

ठक्कर बापा की
पुण्यस्मृति में

"जो किसी भी बात में हमसे अलग नहीं है, और जो अनेक तरह से समाज की भारी सेवा कर रहा है, ऐसे मानवजाति के एक बड़े जनसमूह को निकाल बाहर कर देने का घोर पाप हमने किया है। इस पाप में से हिन्दू-धर्म जितनी जल्दी निकल जाये उतनी ही उसकी बड़ाई और प्रतिष्ठा है।

"जैसे एक रत्ती संखिया से कटोराभर दूध बिगड़ जाता है, उसी प्रकार अस्पृश्यता से हिन्दू-धर्म भ्रष्ट होजाता है। अस्पृश्यता की रूढ़ि में धर्म नहीं, किन्तु अधर्म है।

"इस जन्म में मुझे मोक्ष न मिले, तो मेरी आकांक्षा है कि अगले जन्म में किसी भंगी के घर मेरा जन्म हो।" —गांधीजी

नवम्बर १९५२

वर्ष २—अंक ४]

वार्षिक मूल्य २ रुपये
एक प्रति, ८ आने

[सं०—वियोगी हरि

विषय-सूची

हरिजन-सेवा

हरिजन-सेवक-संघ

की

त्रैमासिक मुख-पत्रिका

दूसरा वर्ष] — नवम्बर, १९५२ — [पहला अंक

संपादकीय

ठक्कर बापा-जयन्ती

आज २९ नवम्बर को पूज्य ठक्कर बापा का ८३ वाँ जन्म-दिन है। साथ ही, 'हरिजन-सेवा' पत्रिका का दूसरा वर्ष भी आज शुरू होता है।

आज पूज्य बापा का जयन्ती-दिवस, अथवा उनके **पुण्यकृत्यों का जय-दिवस है, और हम सेवकों के लिए अपने कर्त्तव्यों के प्रति बोध-दिवस भी। इस दिन को हम सब हरिजन-सेवक तथा आदिवासी-सेवक** आत्म-निरीक्षण करते हैं;—यदि नहीं करते, तो करना चाहिए। अस्पृश्यता-निवारण की दिशा में हम लोग पिछले बारह महीनों में कितने आगे बढ़े, हरिजनों की हमने कितनी, क्या प्रत्यक्ष सेवा की, इस सबका लेखा-जोखा नम्रतापूर्वक करने का आज का यह दिन है। साथ ही, अगले बारह महीने हमें किस तत्परता और तेजी के साथ काम करना है, इसका संकल्प-बंदन भी यह जयन्ती-दिवस है।

मृत्यु से कुछ मास पूर्व, रोग-शय्या पर से, भेजे हुए बापा के इस प्रेरक सन्देश को हमें भूलना नहीं चाहिए, कि—"सभी हिन्दुओं और खासकर हरिजन-सेवकों का यह धर्म हो जाता है कि हरिजनों को नागरिक सुविधाएँ दिलाने और प्राप्त करने में जो कठिनाइयाँ आयें, उन्हें दूर करने में वे लग जायें। हमें अपना कार्य-क्षेत्र शहर छोड़कर देहातों की तरफ ले जाना होगा, जहाँ हरिजनों को अधिक कठिनाइयाँ हैं। नये संविधान के अनुसार संसद तथा प्रान्तीय विधान-सभाओं से हरिजनों को केवल १० वर्ष अर्थात् १९६० तक संरक्षण मिला है। इस बीच में हमें ऐसी हालत पैदा कर देनी है, कि आगे न तो हमें संरक्षण की ज़रूरत पड़े और न हरिजनों को इसकी माँग करनी पड़े।" पूज्य बापा के इस संदेश की गहराई को देखने व समझने और उसपर अमल करने का ईश्वर हमें बल दे।

दूसरा वर्ष

"हरिजन-सेवा" का दूसरा वर्ष आज इस अंक से शुरू होता है। गतवर्ष उसने संघ की प्रवृत्तियों का थोड़ा-बहुत लेखा पाठकों के सामने रखा और महत्त्व-पूर्ण प्रश्नों पर कुछ विचार भी प्रकट किये। यह सच है कि संघ द्वारा संचालित प्रवृत्तियों का और विचारों का जितना प्रचार और प्रसार होना चाहिए था, उतना नहीं हुआ। हमारे कार्यकर्त्ताओं तक ही "हरिजन-सेवा" पहुँच पाई। अच्छा होता कि दैनिक और साप्ताहिक समाचार-पत्र इसमें प्रकाशित विचारों को उदारतापूर्वक उद्धृत करते और इस प्रकार हरिजन-सेवा-कार्य को प्रोत्साहन और प्रगति देते। हमारे 'हरिजन', 'हरिजन-सेवक' और 'हरिजन-बन्धु' इन तीनों पत्रों को तो संघ के महत्वपूर्ण विचारों का प्रचार करना ही चाहिए। हमें आशा है, कि इस वर्ष से ये तीनों पत्र तथा अन्य समाचार एवं विचार-पत्र भी 'हरिजन-सेवा' में प्रकाशित महत्वपूर्ण विवरणों और विचारों को प्रचारित करते रहेंगे।

"हरिजन-सेवा" का मूल्य लागतमात्र से भी कम-केवल २ रु० वार्षिक रखा गया है। ग्राहक इसके अबतक बहुत ही कम बने हैं। कदाचित् हमारे अपने कार्यकर्त्ताओं ने भी ग्राहक बनाने का कोई खास प्रयत्न नहीं किया। हमारा अनुरोध है कि संघ के सभी कार्यकर्त्ता और सेवक "हरिजन-सेवा" के अधिक-से-अधिक ग्राहक इस वर्ष बनायेंगे और उसे स्वावलम्बी बना देंगे।

'प्रथम पूजा'

बंगाल-हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री प्रो० प्रियरंजन सेन ने अपने एक पत्र में 'प्रथम पूजा' शीर्षक गुरुदेव की एक सुन्दर कविता के आशय को उद्धृत किया है। यह कविता-कहानी हमारे मंदिर-प्रवेश-आंदोलन पर एक सकरुण प्रकाश डालती है। यह है कवि की रचना का आशय :

"एक मंदिर था, त्रिलोकेश्वर का।

इतिहासकार कहते थे कि उसका निर्माण किरातों ने किया था, एक सहस्र वर्ष से भी पहले।

क्षत्रियों ने पीछे उस प्रदेश को अपने अधिकार में कर लिया,—प्रदेश को ही नहीं, किरातों के देवता को भी और उनके उस मंदिर को भी।

किरात अब अछूत थे; मंदिर में वे प्रवेश नहीं कर सकते थे।

किन्तु उनकी जाति का दीपक अभी बुझा नहीं था। उनका अपना मंदिर नहीं था, पर हरि-कीर्तन पर उनका अब भी अधिकार था;

वे पूजा नहीं कर सकते थे; पर पत्थर पर पुष्पों को उत्कीर्ण करने का कौशल उनकी उँगलियों में अब भी था; वे कुशल मूर्तिकार थे, उनकी गढ़ी मूर्तियों में से उनका अन्तर्काव्य फूट पड़ता था।

उस स्वर्ण-मंदिर को वे लोग अब दूर से ही झुककर प्रणाम कर लिया करते थे।

एक मांगलिक दिवस की संध्या—यकायक भूकम्प आता है; भारी उथल-पुथल होती है। प्रातः 'स्वर्ण-मंदिर' की दीवारें लोग ढही-गिरी देखते हैं!

मंदिर का तुरन्त राजाज्ञा से पुनर्निमाण होना है, पर करे कौन? सब किंकर्तव्य-विमूढ़!

किरात शिल्पी ही निर्माण-कार्य को हाथ में लेंगे; दूसरे शिल्पी कहाँ इतने स्थापत्य-कुशल हैं?

किन्तु मूर्ति को तो उन्हें आँखों पर पट्टी बाँधकर गढ़ना होगा, इसलिए कि कहीं वह उनकी दृष्टि से अपवित्र न हो जाये!

किरातों का बूढ़ा मुखिया माधव अन्दर बैठकर मूर्ति-निर्माण करने लगा; दूसरे किरात मंदिर के बाहर निर्माण-कार्य कर रहे थे।

माधव ने न दिन देखा न रात; वह ध्यान-मग्न था, गा रहा था और उसकी कुशल उँगलियाँ प्रस्तर-खण्ड पर एक लय के साथ थिरक रही थीं,—

५८२५

मानो कोई अदृष्ट शक्ति उससे यह सब करा रही थी।

समाप्ति थी अब। माधव ने स्वयं ही कहलवाया— 'मेरा काम अब समाप्त होनेवाला है।'

पहरेदार बाहर चला गया अधिकारियों को सूचित करने।

माधव ने अपनी आँखों पर से पट्टी खोलकर फेंकदी।

मूर्ति के आगे उसने घुटने टेक दिये; वह बड़ी देरतक मूर्ति को एकटक निहारता रहा दोनों हाथ जोड़े। उसकी आँखों से अश्रुधारा बह रही थी। देवता के चरणों पर वह साष्टांग गिर पड़ा।

एकायक उसके सिर को धड़ से अलग कर दिया गया—राजा ने मंदिर के अंदर आकर क्योंकि देखा कि एक धृष्ट अंत्यज पवित्र देव-प्रतिमा को अपने स्पर्श से अपवित्र कर रहा है, और उसने उसे तत्काल राज-दण्ड दिया।

किन्तु 'प्रथम पूजा' तो सम्पन्न हो चुकी थी,—किरातों का मुखिया वृद्ध माधव 'स्वार्पण' कर चुका था।"

श्री प्रियरंजन सेन लिखते हैं कि इतिहास के पन्नों में इस कविता-कहानी को खोजने की आवश्यकता नहीं। इसे तो कवि ने महात्माजी के चलाये महान् सामाजिक-धार्मिक आन्दोलन से प्रभावित होकर लिखा और अपनी अमर वाणी द्वारा इस मूर्ति और मूर्तिकार को अपनी स्वर्ण-कल्पना के तारों में गूँथ दिया। सवर्णों का धर्म के नाम पर अत्याचार राजा की प्यासी तलवार का वार था।

'पवित्रीकरण'

श्रीप्रियरंजन सेन ने अपने उसी पत्र में रवि बाबू की ऐसी ही एक और कविता-कहानी का आशय 'पुनश्च' पद्य-खण्ड में से उद्धृत किया है, और वह यह है :

"अभी सूर्योदय होने में देर है। गंगा के तटपर रामानन्द स्वामी शांतमुद्रा में पूर्व की ओर खड़े-खड़े अर्द्धोन्मीलित नेत्रों से देख रहे हैं।

प्रार्थना में तल्लीन हैं कि उनकी आँखों पर से आवरण हट जाये कि वे भगवान् का दिव्य दर्शन पा सकें।

दिन चढ़ आया। लोग उनके चारों ओर चलने-फिरने लगे, पर वे वैसे ही शांत ध्यान-मग्न खड़े थे।

एक शिष्य ने आकर पूछा, "महाराज! आज इतनी देरी क्यों? पूजा का समय बीता जा रहा है।"

"मेरा शरीर अब भी पवित्र नहीं हुआ; गंगाजी अब भी मुझसे बहुत दूर हैं।"

शिष्य बेचारा कुछ समझ नहीं सका।

स्वामी रामानन्द के मन में जल में खड़े-खड़े एक विचार उठा, और वे बाहर निकलकर, बिना ही पूजा किये, चल पड़े।

शिष्य ने आश्चर्य-चकित होकर पूछा, "स्वामी-जी! आप जा कहाँ रहे हैं? उधर भद्रलोगों की बस्ती नहीं है।"

"मुझे अपने आपको पवित्र जो करना है," और वे आगे बढ़ गये।

चलते-चलते वे एक गली में पहुँचे, एक ऐसी जगह पर, जहाँ इमली के घने पेड़ थे और बस्ती वह नगर से बिल्कुल बाहर थी। रामानन्द स्वामी सीधे भजन नामक चमार के घर पर पहुँचे।

चील्हें वहाँ सिर पर झपाटे मार-मारकर उड़ रही थीं, मृत मांस की दुर्गन्ध हवा में भरी हुई थी, और एक मरियल कुत्ता एक हड्डी को चिचोड़ रहा था।

शिष्य बस्ती के बाहर ही मन बिगाड़कर वहीं ठहर गया; बस्ती के अन्दर नहीं गया।

रामानन्द स्वामी ने भजन चमार को छाती से लगा लिया, पर वह बेचारा परे हटता जा रहा था कि महात्मा उसके स्पर्श से कहीं अपवित्र न हो जायें।

रामानन्द ने कहा—"मैंने भगवान् को बहुत खोजा, पर उसे पाया नहीं, कारण कि मैं तुम्हारी बस्ती से दूर रहा, तुम्हारी छाया से भी बचता रहा। मैं सूर्य को नमस्कार करता था, पर उसमें मुझे ईश्वर की प्रत्यक्ष अनुभूति नहीं हुई।

अब आज मैंने तुम्हें हृदय से लगाया, और उसका दर्शन मुझे तुम्हारी आँखों में हो गया। उसे मैं अपनी भी आँखों के अन्दर देख रहा हूँ आज।

मुझे भगवान् का दर्शन हो गया, हो गया।"

मंदिर-प्रवेश

हरिजनों के निर्बाध मन्दिर-प्रवेश को गांधीजी ने अस्पृश्यता-निवारण की सच्ची और अंतिम कसौटी माना था। त्रावणकोर के इड़वा जाति के दलित-लोगों ने १६१६ में ही मंदिर-प्रवेश की माँग रखी थी, मगर इस प्रश्न को तबतक हाथ में नहीं लिया जा सका, जबतक कि गांधीजी ने इसपर गम्भीरता-पूर्वक विचार नहीं किया। उन्होने सवर्ण हिन्दुओं से ज़ोरदार शब्दों में कहा कि वे हरिजनों को देव-मंदिरों में सब के समान प्रवेश और पूजा करने की अनुमति स्वेच्छा से देदें। हरिजन-सेवकों ने हरिजनों के मंदिर-प्रवेश के पक्ष में सारे देश में ज़ोर से प्रचार किया, किन्तु मंदिरों में प्रवेश दिलाने के मार्ग में अनेक क़ानूनी कठिनाइयाँ सामने आईं, जिन्हें दूर करने के लिए विभिन्न राज्य धारा-सभाओं में विधेयक पेश किये गये। त्रावणकोर राज्य के महाराजा ने १६३६ के १२ नवम्बर को एक चिरस्मरणीय-राज-घोषणा जारी करके अस्पृश्यता का अन्त कर दिया और राज्य के सब मन्दिरों को हरिजनों के लिए खुलवा दिया। भारत के सामाजिक तथा धार्मिक इतिहास की यह एक बहुत बड़ी घटना थी। दूसरी महत्वपूर्ण घटना थी मदुरा के विशाल और प्राचीन 'मीनाक्षी'- मंदिर में हरिजनों का प्रवेश। इसके बाद, मद्रास-सरकार ने मंदिर-प्रवेश क़ानून पास किया, और फिर तो कई राज्यों ने इस प्रकार के क़ानून बनाये। मद्रास और बम्बई राज्य में तथा और भी कितने ही राज्यों में अनेक छोटे-बड़े मंदिरों में हरिजनों को प्रवेशाधिकार मिल गया।

स्वराज्य आने पर भारतीय संविधान में अस्पृश्यता और हरिजनों की सामाजिक एवं नागरिक निर्योग्यताओं का अन्त कर दिया गया। क़ानूनी दृष्टि से अथवा क़ानूनी घोषणा से उनकी सामाजिक बाधाएँ निस्सन्देह दूर हो गयी हैं, किन्तु वस्तुतः वे आज भी काफ़ी भयंकर रूप में मौजूद हैं, यद्यपि कुछ तो काल का प्रवाह और कुछ सुधारकों के प्रयत्न उन्हें हटाने में कुछ-कुछ सफल होते दीख रहे हैं।

लेकिन मंदिर-प्रवेश की प्रवृत्ति को सवर्ण लोक-मत जैसे भुलता-सा जा रहा है, यह दुःख की बात है। प्रायः कहा जाता है और बहुत हदतक सही भी है कि मंदिरों में जाने और पूजा करने की ओर से हरिजन स्वयं उदासीन हैं; उनके सामने प्रश्न भूमि और रोटी का है, मंदिरों में जाने का नहीं। पर सवर्ण कहे जानेवाले समाज को इस दलील से प्रभावित होने का कोई कारण नहीं दीखता। सभी या एक बड़ा भाग सवर्णों का भी कब मंदिरों में नियम से जाता है? मगर जाना चाहें, तो बिना किसी रोक-टोक के वे मंदिरों में देव-दर्शनार्थ जा सकते हैं। यही बात हरिजनों पर लागू नहीं होती। वे जाना भी चाहें, तोभी उनके लिए मंदिरों के द्वार बन्द हैं। असल में कहना तो यह चाहिए कि जिन लोगों ने धर्म के ग़लत नाम पर मंदिरों के द्वार बन्द कर रखे हैं, वे अपने हृदय के द्वार बन्द रखना चाहते हैं, जिसका यह अर्थ हुआ कि वे अपनी अहन्ता के आगे ईश्वर की प्रभुता और सर्वव्यापकता को भी तुच्छ समझते हैं, बल्कि ईश्वर के अस्तित्व में भी व्यवहारतः उनका विश्वास नहीं है। मंदिरों में हरिजनों

के प्रवेश करने या न करने का प्रश्न असल में नहीं है। प्रश्न तो उन्हें प्रवेशाधिकार देने व दिलाने का है, अपने हृदय-द्वार खोल देने का है।

आज गांधीजी हमारे बीच में नहीं हैं, वे हमें छोड़कर चले गये। वे हमारे बीच में रहते भी तो आखिर कबतक? बरसों उन्होंने हमें एक प्रकाश-मार्ग दिखाया। हम उस मार्ग पर काफी दूर तक चले भी। पर उनके जाते ही हमारी गति जैसे रुक गयी, बल्कि कभी-कभी पीछे की ओर मुड़ने का भी हमारा मन होने लगा। स्वराज्य हमारा साध्य था और गांधीजी के बताये हुए सारे कार्य उस साध्य के साधन थे। साध्य पा लिया और साधनों को भुला दिया, बल्कि उठाकर उन्हें फेंक दिया। साथ ही, हम यह भी भूल गये या अधिक सही तो यह है कि गांधीजी की कल्पना के स्वराज्य का सच्चा अर्थ हम पहले भी नहीं समझे थे। गांधीजी का स्वराज्य मात्र भौतिक स्वराज्य नहीं था, वह तो समस्त आन्तरिक बुराइयों और दुर्बलताओं से मुक्ति पाने का एक बहुत ऊँचा ध्येय था। अस्पृश्यता-निवारण को उन्होंने ऊँच-नीच की भेद-भावना का आत्यन्तिक अभाव माना था। हम एक क्षण के लिए अन्त-र्निरीक्षण करें, ज़रा गहरे उतरकर देखें कि उस स्वराज्य का, उस धर्म-राज्य का हमने अबतक किनारा भी छुआ है या नहीं। उस शुद्ध नैतिक स्वराज्य के आगे सचमुच इस भौतिक स्वराज्य का नगण्य-सा मूल्य है। उस स्वराज्य में एक भी प्रजा-जन का हृदय-द्वार बन्द रह नहीं सकता—मंदिरों के प्रवेश-निषेध का तो तब कोई प्रश्न ही नहीं रहने का।

कहा जा सकता है कि यह हृदय-द्वार खुलने का तो बहुत लम्बा रास्ता है, शायद स्वप्न-मार्ग है। पर गांधीजी ने तो इसी स्वप्न-मार्ग पर स्वयं चलने और दूसरों को चलाने की खातिर जीवनभर एक के बाद दूसरे प्रयोग किये और उन्हें बहुत दूरतक सफलताएँ भी मिलीं। गांधीजी को और ठक्कर बापा को हरिजन-सेवकों से बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं। वे मानते थे कि हरिजन-सेवक भौतिक प्रलोभनों से बच-कर अस्पृश्यता-निवारण का कार्य सत्य और अहिंसा की दृष्टि से साधते रहेंगे। बहुत अंशोंतक उन्होंने ऐसा किया भी, और आज भी कई जन-सेवक धर्म-दृष्टि से ही इस प्रवृत्ति को अपने सीमित साधनों के बल पर जहाँ-तहाँ चला रहे हैं।

मगर कुल मिलाकर हर बात में हमारी दृष्टि सत्ता और क़ानून की ओर, दुर्भाग्य से, आज खिंची जा रही है। प्रायश्चित्त और हृदय-परिवर्तन की धर्म प्रवृत्ति को बेचारी सत्ता क्या बल दे सकती है! उसका कर्त्तव्य तो यही हो सकता है और होना चाहिए कि वह हरिजनों को उनके तमाम उचित अधिकार, जिनसे कि वे वंचित थे और बहुत हदतक अब भी हैं, दिलाये, उनके आर्थिक और सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाये। किन्तु तथाकथित सवर्णों को अपनी हृदय-शुद्धि का कार्य तो निश्छल प्रायश्चित्त के द्वारा ही करना है। उसमें सत्ता का क्या वास्ता? हरिजन-सेवक शुद्ध सेवा और प्रेम की भावना से सवर्ण-समाज को प्रेरित करें कि वह उन सभी स्थानों का निर्बाध रूप से हरिजनों को उपयोग करने दे, जो दूसरों के लिए बिना किसी रुकावट या भेद-भाव के खुले हुए हैं। देव-मंदिरों के द्वार तो शुद्ध धर्म-बुद्धि से, प्रायश्चित्त की पवित्र भावना से हरिजनों के लिए बग़ैर क़ानूनी सहायता के खुल जाने चाहिएँ।

कई प्रान्तों में मंदिर-प्रवेश की दिशा में न्यूनाधिक रूप में काम हुआ है। जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम्, द्वारिका इन महाधामों के मंदिर खुल गये हैं, किन्तु यह देखकर दुःख होता है और लज्जा भी आती है कि काशी, अयोध्या और मथुरा इन बड़े-बड़े तीर्थ-स्थानों के प्रसिद्ध मंदिर आज भी हरिजनों के लिए वैसे ही बन्द हैं। जो दक्षिण भारत कट्टरता के लिए कलतक कुख्यात था, वह तो इस सुधार की दिशा में खासा आगे बढ़ गया, पर उत्तर भारत के ये बड़े-

बड़े तीर्थ-स्थान अपने प्रसिद्ध देव-मन्दिरों के द्वार आज भी बन्द किये हुए हैं! आदिगुरु शंकराचार्य को जिस काशीपुरी में अभेद-ज्ञान की दीक्षा शिव-रूपधारी एक चाण्डाल द्वारा मिली थी, वहाँ भी भगवान् विश्वनाथ के मन्दिर में हरिजनों को न जाने देना अद्वैतवाद की विडम्बना नहीं तो क्या है? इसी प्रकार 'समदर्शन' का उपदेश करनेवाले श्री कृष्ण की लीलाभूमि अपने मन्दिरों के द्वार बन्द रखे वह गीता की अवगणना नहीं तो और क्या है? उत्तर भारत, खासकर उत्तर प्रदेश के जन-सेवकों, लोक-नेताओं और जनसाधारण को हिन्दूधर्म पर लगे इस कलङ्क को अविलम्ब दूर कर देना चाहिए। अस्पृश्यता-निवारण प्रवृत्ति के प्रमुख अंग मंदिर-प्रवेश की उपेक्षा हिन्दू-समाज के अपने हित में आगे चलकर अहितकर सिद्ध हो सकती है, इसमें सन्देह नहीं।

पहावली का हत्याकाण्ड

गत अगस्त मास के अंक में इस आशय का एक समाचार हमने प्रकाशित किया था कि मध्यभारत के मुरैना जिले के अन्तर्गत पहावली ग्राम में कुछ हथियारबन्द गूजर ठाकुरों के एक गिरोह ने वहाँ के चमारों को जाकर धमकाया कि, 'तुम लोगों ने पिछले चुनावों में कांग्रेस को वोट दिये थे, इसलिए तुमसे हम ५०) प्रतिघर जुरमाना वसूल करने आये हैं। उन्होंने जब रुपया देने से इन्कार किया, तो ६ चमारों को वहीं पर गोली से उड़ा दिया गया, उनकी बस्ती में आग लगा दी गई और उनका कुछ सामान उठाकर वे वहाँ से साफ़ निकल गये। यह घटना ५ जुलाई १९५२ को घटी थी। इसकी सचाई की पुष्टि मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री दातेजी ने हमारे पूछने पर की। हमने तुरन्त इस भीषण दुर्घटना के बारे में मध्यभारत-सरकार को लिखा। श्री दातेजी के साथ भी इस बारे में चर्चा की, जिस-के फलस्वरूप घटनास्थल देखने के लिए हम दोनों पहावली ग्राम ५ सितम्बर को पहुँचे। हमारे साथ ग्वालियर से श्रीयशवन्तसिंह कुशवाह, श्रीगौतम शर्मा और मुरैना से श्रीहरिदास राठ, भी गये थे। मुरैना से यह गाँव पश्चिमोत्तर दिशा में कोई ६ मील दूर है। चमारों के यहाँ १०-११ घर हैं, ११-१२ घर गूजरों के हैं, १६ घर काछियों के तथा ४-५ घर अन्य जातियों के भी हैं। हम लोगों ने वहाँ की स्थिति को अच्छी तरह देखा और समझा। ७ सितम्बर को मैंने पहावली गाँव के उक्त हत्याकाण्ड पर निम्नलिखित वक्तव्य प्रकाशित किया :

"पहावली गांव में घुसते ही सबसे पहले चमारों की ही बस्ती पड़ती है। हम लोग सबसे पहले इसी बस्ती में गये; काम भी हमारा इसी बस्ती से था। जिन ६ चमारों के मारे जाने का उल्लेख हमारे कार्यकर्त्ता की रिपोर्ट में था, पूछने पर वह प्रायः सब सही निकला। हमें बतलाया गया कि ५ जुलाई की शाम को क़रीब ३ बजे बाग़ियों का एक गिरोह जब चमारों की बस्ती में पहुँचा, तब वहाँ उतने ही लोग मौजूद थे, जो गोली से मारे गये, और उनकी कुछ औरतें भी थीं। कुछ लोग खेतों पर काम कर रहे थे। बस्ती को घेर लिया गया था। गोली चलने की नौबत कैसे आई, इसे बिलकुल सही तौर पर बतलानेवाला तो कोई बचा नहीं। औरतें भी घरों से निकलकर उस भारी आतंक से इधर-उधर भाग गईं थीं। एक बुढ़िया, जिसका नाम बौलाई है, अपने २१ साल के लड़के शिब्बा को बचाने के लिए उसके ऊपर लेट गई थी। बौलाई के सिर पर उस गिरोह के एक आदमी ने तलवार का वार किया और शिब्बा को उससे अलग करके गोली से उड़ा दिया। रोती-कलपती बुढ़िया ने हमें यह आप-

बीती सुनाई। शिब्बा का छोटा भाई विश्राम भी मारा गया, जो १८ साल का नौजवान था। दोनों का बड़ा भाई केवल कलाराम बच सका, जो उस वक्त बस्ती में नहीं था। कलाराम ग्राम-पंचायत का मेम्बर भी है। २५ साल का नौजवान छोटा भी गोली से उड़ा दिया गया। उसके ५० साल के बूढ़े बाप सोना चमार ने जब चिल्लाकर कहा कि—अरे, मुझे क्यों रोने के लिए छोड़ रहे हो, मुझे भी गोली मारदो, तो बागियों ने सोना को भी गोली मारदी। ५० वर्ष के एक दूसरे चमार धनपाल की भी यही गत हुई और १६ साल का गबदू लड़का भी गोलियों से भून दिया गया। उनके झोंपड़ों में आग लगा दी गई थी। झोंपड़े धांय-धांय जल रहे थे और आग की लपटों से जान बचाकर भागते हुए चमारों को गोलियों का निशाना बनाया जा रहा था। हम लोगों ने जले हुए झोंपड़ों को देखा और दीवारों पर गोलियों के कई निशान भी देखे। जिनके पति और जिनके दो-दो पुत्र आततायियों के शिकार बन चुके थे, वे स्त्रियाँ हमारे सामने बुरी तरह विलाप कर रहीं थीं। कड़ी छाती करके हम लोगों ने वह सब हृदय-विदारक दृश्य देखा। कौन कहता है कि हिन्दू जाति स्वभाव से क्रूर नहीं होती? वहाँ तो कोई साम्प्रदायिक द्वेष का भी कारण नहीं था।

झगड़े की जड़ के कारण पूछने पर हमें बतलाया गया कि गूजर ठाकुरों के घर अपनी स्त्रियों से लिपवाने से चमारों ने इन्कार किया, देव-शयनी एकादशी के दिन सदा की भाँति गूजरों के खेतों में एक-एक टोकरी मिट्टी नहीं डाली, और ग्राम-पंचायत में एक गूजर के मुकाबले में कलाराम चमार को मेम्बर चुना गया। चमारों ने पिछले चुनावों में वोट कांग्रेस को दिये ही थे। हमें यह भी बतलाया गया कि बहुत-से दूसरे गांवों में बागियों के गिरोह चमारों से चंदे वसूल कर रहे हैं, उसी तरह पहावली गांव में भी उन्होंने घर पीछे पचास-पचास रुपये माँगे थे।

मालूम हुआ कि १४ गूजरों को गिरफ्तार किया गया था, जिनमें से शायद ३ को छोड़ दिया गया है। जो गूजर पकड़े गये हैं वे पहावली ग्राम के बाशिन्दे हैं। चमारों का यह कहना है कि वे लोग अपने रिश्तेदारों या बिरादरी के बागी गूजरों को उनकी बस्ती पर चढ़ाकर लाये थे। जिन बागियों ने बस्ती को जलाया और ६ चमारों को गोली से मार दिया, उनमें से अबतक एक भी नहीं पकड़ा गया है। हमें बतलाया गया कि वे सब के सब फरार हैं।

ठाकुरों की हवेली के सामने हमने ताज़ीरी (प्यूनिटिव) पुलिस की गारद को तैनात देखा। कुल १० सशस्त्र जवान थे।

इस दुर्घटना के बाद मध्यभारत सरकार के मुख्य मंत्री माननीय श्री मिश्रीलाल गंगवाल तथा राज-कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री कन्हैयालाल खादीवाला भी पहावली गये थे और उन शोक-पीड़ित परिवारों को कुछ राहत उन्होंने भी दी थी। पर हमने देखा कि वे राहत नहीं चाहते, वे तो पूरा न्याय और अपनी सुरक्षा चाहते हैं। उन्हें पूरा भय है कि यदि उन आततायियों और उन्हें शरण देनेवाले गुण्डों को ठीक-ठीक दण्ड न दिया गया, तो वे फिर बुरी तरह से बदला लेंगे, और उनमें से एक भी आदमी नहीं बचेगा। इसलिए यह ज़रूरी मालूम देता है कि पहावली में जबतक कि आततायी बागियों का आतंक दूर न हो जाये, सशस्त्र पुलिस चौकी कायम रहनी चाहिए।

यह हुआ एक पहावली गांव का क़िस्सा। मगर इससे मिलते-जुलते और भी अनेक वाक़यात सुनने में आये हैं। मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ उनके तथ्य और आंकड़े इकट्ठे कर रहा है। जगह-जगह ग़रीब हरिजनों पर आये दिन जुल्म हो रहे हैं। किसी गांव में उनके पशुओं को खोलकर ले जाते हैं, किसी गांव में उनके खड़े खेत काट लिये जाते हैं, कहीं खेतों को बेदखल कर लिया जाता है, चन्दे के नाम पर कितने ही गांवों में उनसे वसूलियाँ की गई हैं और कहीं-कहीं पर इसी तरह की क़त्ल की घटनाएँ भी सुनी जाती हैं। यह भी सुनने में आता है कि बाग़ियों या डाकुओं द्वारा होनेवाली इस प्रकार की नृशंस हत्याओं और लूट-मार के पीछे राजनैतिक और साम्प्रदायिक तत्त्वों का भी कुछ हाथ है।

मध्यभारत की सरकार अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग नहीं है यह मैं नहीं कहता, पर उसे और भी अधिक जागरूक और चुस्त रहने की आवश्यकता है। पहावली की और इससे मिलती-जुलती अन्य घटनाएँ कोई मामूली घटनाएँ नहीं हैं। अंग्रेजी के अखबारों ने, जिनकी पहुँच हमारे देश के बड़ों की मेज़तक है, इस भीषण हत्याकाण्ड पर एक पंक्ति भी नहीं लिखी, यह बड़े दुःख की बात है। सरकार को ग़रीब प्रजा की ही नहीं अपनी भी सुरक्षा के लिए सख्त क़दम तुरन्त उठाना चाहिए। ऐसी घटनाओं की रोक-थाम समय पर न की गयी तो आतंक जड़ पकड़ता ही जायेगा और प्रजा का विश्वास भी शासन पर से किसी दिन खत्म हो जायेगा। उसे चाहिए कि वह नागरिक सुरक्षा की दिशा में कुछ ग़ैर सरकारी सहयोग लेने का भी यत्न करे। शासन राजनैतिक उधेड़बुन में न फँस-कर अपने कर्त्तव्यों के प्रति जाग्रत और तत्पर रहेगा तभी वह लोकप्रिय रह सकेगा। केन्द्रीय सरकार को भी शांति और सुव्यवस्था का वातावरण बनाने में राज्य-सरकारों को अपना उचित सहयोग देना चाहिए।

और प्रजा का अपना भी कर्त्तव्य है। ग़रीब हरिजनों पर इस प्रकार के अत्याचारों का होना और जारी रहना राज्य के लिए ही नहीं बल्कि सारी प्रजा के लिए भी दुःख और लज्जा की बात है। ग़रीब निहत्थों को गोलियों से भून देना और उनके झोंपड़ों में आग लगा देना, हिन्दू समाज और हिन्दूधर्म पर भी एक ऐसा कलंक है जो धोया नहीं जा सकता। ऐसे नृशंस हत्या-काण्डों की निन्दा सुधारक तथा रूढ़िवादी और कांग्रेसी तथा ग़ैरकांग्रेसी सभी एक स्वर से करें। विधान-सभा तथा लोक-संसद में जो हरिजन और हरिजन-हितैषी सदस्य आये हैं, उनका तो अपने निर्वाचन-क्षेत्रों में निर्भयता, साहस और सुरक्षा का वातावरण पैदा करना प्रथम कर्त्तव्य है।"

और भी ऐसी हो दुर्घटनाएँ

इस तथा गोहद परगने के अंजनी का पुरा गाँव की व अन्य कई छुटपुट मारपीटों और हत्याओं के बारे में भी मध्यभारत के हरिजन-सेवक-संघ ने अपने कार्यकर्त्ताओं द्वारा पता लगवाया। इस बीच में, उज्जैन के अतिवृद्ध संन्यासी स्वामी रामानन्द ने तो इन्दौर में जो कांग्रेस महासमिति का अधिवेशन होनेवाला था उसके पण्डाल के सामने, हरिजनों पर आये दिन हो रहे अत्याचारों से क्षुब्ध होकर, आमरण अनशन करनेतक का निश्चय कर लिया। हमारे पत्र लिखने और सरकार की ओर से अत्याचारों को दबाने की दिशा में सख्त क़दम उठाने का आश्वासन मिलने

पर स्वामीजी ने बड़ी मुश्किल से अनशन शुरू करने का इरादा छोड़ा।

२२ सितम्बर को मैं तथा श्री दत्तेजी मध्य-भारत राज्य के मुख्यमंत्री श्री गंगवालजी तथा गृह-मंत्री श्री मनोहरलाल मेहता से मिले और हरिजनों पर हुए इन अमानुषिक अत्याचारों की विस्तार से चर्चा की। उन्होंने इन दुर्घटनाओं पर खेद और चिन्ता प्रकट की, और जल्दी ही और भी तत्परता के साथ अत्याचारों के खिलाफ सख्त कार्रवाई करने का हमें आश्वासन भी दिया। हरिजन-सेवक-संघ की ओर से आतंकित क्षेत्रों के हरिजनों और सवर्णों के बीच घूम-घूमकर प्रचार-कार्य करने की हमारी तजवीज़ का भी उन्होंने स्वागत किया। इस बीच में अंजनी का पुरा के हत्याकाण्ड का भी पूरा विवरण हमारे पास आ गया। यह २५ फ़र्वरी १९५२ की पुरानी घटना थी। इस गाँव में भी ५ चमारों को हथियारबन्द कई ठाकुरों ने गोली से उड़ा दिया था। गाँव छोड़कर बाक़ी के चमारों और असहाय स्त्रियों व बच्चों ने गोहद स्टेशन से ३ मील दूर एक मंदिर के पास भागकर शरण ली। अंजनी के पुरा को छोड़कर सभी भयभीत चमार दूसरे गाँवों में जा बसे।

जब हम लोग मुख्य मंत्री महोदय से ग्वालियर में मिले उससे ५ दिन पहले ही गोहद परगने के कतरौली गाँव में आठ-आठ नौ-नौ साल की दो लड़कियों और एक नौजवान चमार को डाकुओं के गिरोह ने आधी रात को उनकी बस्ती को घेरकर बड़ी निर्दयता से अपनी गोलियों का शिकार बनाया।

एक के बाद एक इस प्रकार आततायियों द्वारा मुरैना और भिण्ड ज़िले के कई गाँवों में चमारों पर कितनी ही वारदातें हुईं,—उनसे ज़बरन वसूलियाँ की गईं, उन्हें मारा-पीटा गया और नृशंसतापूर्वक उनकी हत्याएँ भी की गयीं।

संघ द्वारा प्रकाशित वक्तव्य

संघ की वार्षिक बैठक में भी मध्यभारत के उत्तरी भाग के उत्पीड़ित हरिजनों की शोचनीय स्थिति पर विस्तार से चर्चा हुई, जिसके फलस्वरूप संघ के केन्द्रीय बोर्ड ने ५ अक्टूबर को नीचेलिखा वक्तव्य प्रकाशित किया :

> "मध्यभारत राज्य बनने से पूर्व हरिजन-कल्याण-कार्य शासकीय व्यवस्था द्वारा करने का प्रयत्न भूतपूर्व होल्कर राज्य ने किया था। बाद को ग्वालियर राज्य ने भी इस ओर क़दम उठाया और इस कार्य के लिए एक रकम भी मंज़ूर की। इसके पश्चात् धार, रतलाम, जावरा आदि छोटी-छोटी रियासतों ने भी हरिजन-कार्य की शुरूआत की। वहां के राजाओं ने सामाजिक निर्योग्यताएँ हटाने की घोषणाएँ कीं और इस कार्य के लिए आर्थिक सहायता देना भी मंजूर किया। इस तरह हरिजन-कार्य के लिए एक उपयुक्त वातावरण तैयार किया जा रहा था। नवीन मध्यभारत राज्य के प्रथम और अत्यन्त प्रमुख कार्यों में से एक कार्य हरिजन-काम के महत्त्व को मान्यता देना भी था। इस दिशा में काफ़ी वेग से काम चलाने के लिए उसने एक हरिजन-कल्याण विभाग स्थापित किया, जिसका जनता तथा अधिकारियों पर खासा अच्छा प्रभाव पड़ा। उन्होंने यह अनुभव किया कि चूंकि शासन हरिजन-कार्य को बहुत अधिक महत्त्व देता है, इसलिए सभी सम्बन्धित वर्गों को हरिजन-कार्य में पूरा सहयोग देना चाहिए। इस विभाग ने प्रारम्भिक कार्य लगभग ३ मास किया, मगर शासन ने बहुत जल्दी न मालूम क्यों पहले तो इस विभाग के डायरेक्टर का पद तोड़ दिया और फिर दो वर्ष बाद सारा विभाग ही खत्म

कर दिया। हरिजन-कार्य को बहुत ही गौण स्थान देकर शासन ने उसे विकास-विभाग को सौंप दिया। इस कार्य का महत्त्व कम होता हुआ देखकर अधिकारियों और जनता को, खासकर रूढ़िवादी जनता को कुछ ऐसा विश्वास हो गया कि शासन हरिजन-कल्याण-कार्य करने के लिए बहुत उत्सुक नहीं हैं, इसलिए वे अब हरिजनों को तकलीफ़ देने और मारपीट करने के लिए स्वतन्त्र हैं। ज़मींदारी व जागीरदारी-उन्मूलन तथा गत चुनावों में कांग्रेस के पक्ष में वोट देना ये कारण तो थे ही, चमारों ने मृत पशु उठाने से भी इन्कार किया इससे हरिजन-विरोधियों की क्रोधाग्नि और भी भड़क उठी। परिणामतः मध्यभारत के उत्तरी भाग के हरिजनों की जान और माल खतरे में पड़ गये। उनके क़त्ल हुए और उन्हें लूटा गया। भय है कि अगर ऐसी ही हालत कुछ समयतक और रही, तो मध्यभारत के दक्षिणी भाग में भी समाज-विरोधी तत्त्व इसी प्रकार उपद्रव मचाना शुरू कर देंगे, और लक्षण कुछ-कुछ इस प्रकार के दीखने भी लगे हैं। यदि समय रहते रोक-थाम न की गई, तो सारे राज्य की शांति और व्यवस्था खतरे में पड़ जायेगी, इसलिए इस दिशा में कारगर क़दम उठाना आवश्यक प्रतीत होता है। एक उच्च अधिकार-प्राप्त समिति तुरन्त नियुक्त की जाये, जिसका काम हरिजन-कल्याण-कार्य के लिए ऐसे ठोस उपाय सुझाना हो, जिनसे कि हरिजनों को एक लम्बे समयतक लाभ मिलता रहे। साथ ही, मध्यभारत-सरकार तुरन्त कुछ ऐसे प्रतिबन्धक क़दम उठाये, जिससे कि हरिजनों के जान व माल की हिफ़ाज़त हो सके। ग़ैर सरकारी तौर पर अन्दाज़ किया गया है कि अबतक २०–२५ हरिजनों की हत्याएँ हुई हैं। और हरिजनों से चन्दे के नाम पर हजारों रुपये की वसूलियाँ की गई हैं, उनकी सम्पत्ति जो लूटी गई वह अलग। इस सबसे हरिजनों के मन पर बड़ा आतंक छा गया है, इसलिए परिस्थति को बिगड़ने न देने के लिए तत्काल आवश्यक क़दम उठाने की ज़रूरत है।"

पिछड़ी हुई जातियों के कल्याणार्थ पुनः अलग विभाग स्थापित करने की, खासकर मौजूदा परिस्थिति में, तत्काल आवश्यकता है। सुनने में आया है कि इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर मध्यभारत की सरकार गम्भीरतापूर्वक विचार कर रही है।

हमारा प्रचार-कार्य

हमने ग्वालियर में कुछ स्थानीय कार्य-कर्त्ताओं के साथ बैठकर भिंड व मुरैना ज़िले के आतंकित क्षेत्रों में जिस प्रचार-योजना बनाने और उसके अनुसार काम करने का निश्चय किया था, उसे मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ ने इस बीच में बनाकर शासन के पास उचित सहयोग प्राप्त करने के लिए भेज दिया। परिगणित व आदिम जातियों के कमिश्नर श्री लक्ष्मीदास श्रीकान्त की सिफ़ारिश से, जिन्होंने खुद जाकर यहाँ की परिस्थिति का अध्ययन किया था, शासन ने हमारी योजना को कार्यरूप में परिणत करने की दृष्टि से हमारे प्रचारकों के लिए एक जीप गाड़ी व २००० रु० की आर्थिक सहायता देना मंजूर कर लिया। तदनुसार आतंकित क्षेत्रों में मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ के सहायक मंत्री श्री रा० मो० रानडे तथा श्री अवन्तिकाप्रसाद दुबे एक महीने से घूम-घूमकर सवर्णों व हरिजनों में प्रचार-कार्य कर रहे हैं। योजना इस प्रकार है:

१ गोहद व मुरैना ज़िले के लगभग १००० गाँवों में ६ प्रचारकों द्वारा हरिजनों में साहस पैदा करना और अत्याचारों के प्रतिकार तथा रोक-

थाम के लिए ऐसे नवयुवकों को तैयार करना जो 'होमगार्ड' में लिये जा सकें।

२ हरिजनों की ज़मीन की बेदखलियों के बारे में उचित कार्रवाई कराना।

३ सवर्णों में प्रचार द्वारा अत्याचार-विरोधी जन-मानस निर्माण करना। जहाँ-जहाँ परिस्थिति बहुत बिगड़ गयी है, वहाँ सद्भावना व शांति स्थापित करने के लिए स्थानीय समितियाँ बनाना।

४ लोकनेताओं को आमन्त्रित करके पैदल यात्रा कराना।

५ सभा-सम्मेलनों का जगह-जगह आयोजन करना।

६ पंचायत-क़ानून तथा हरिजनों के अधिकारों के संबंध में प्रचार करना।

यह योजना केवल २ मास के लिए बनायी गयी है। सरकारी जाँच-समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने के बाद, इस योजना में आवश्यक परिवर्तन करके दूसरी योजना तैयार की जायेगी और उसके अनुसार काम किया जायेगा।

सरकार द्वारा नियुक्त जाँच-समिति

मध्यभारत सरकार ने भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री तख्तमलजी जैन की अध्यक्षता में हरिजनों को जिन असमर्थताओं तथा त्रास का शिकार होना पड़ रहा है, उनकी छान-बीन करके भारतीय संविधान द्वारा दिये गये अधिकारों की रक्षा के हेतु उपाय सुझाने के लिए एक जाँच-समिति नियुक्त की है। यह समिति एक लम्बी प्रश्नावली तैयार करके हरिजनों की दुरवस्था व निर्योग्यताओं की जाँच कर रही है। आशा है, कि यह समिति श्री तख्तमलजी जैन की सुयोग्य अध्यक्षता में सही और ठोस परिणामों पर पहुँचेगी और जो उचित और आवश्यक उपाय वह सुझायेगी उनको तत्परता के साथ मध्यभारत-सरकार कार्यान्वित करेगी।

कारण क्या हैं ?

मध्यभारत-सरकार ने इन घटनाओं के जिन कुछ कारणों पर प्रकाश डाला है और जो बहुत हद तक सही है, वह हैं :—

१ राज्य के उत्तरी भाग के मुरैना और भिण्ड ये दो ज़िले, जहाँ कि ऐसी घटनाएँ घटी हैं, बहुत पहले से ही क़त्ल व डकैती के लिए कुख्यात हैं।

२ गत आम चुनावों के परिणामस्वरूप इन घटनाओं के पीछे कुछ राजनैतिक उद्देश भी हैं।

३ ज़मींदारी-उन्मूलन क़ानून सरकार द्वारा प्रभावशील किये जाने के फलस्वरूप गाँवों में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं, उनसे हरिजनों व सवर्णों में जगह-जगह खिंचाव पैदा हो गया है।

४ हरिजनों के जीवन-स्तर में दिखाई देनेवाला सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन।

स्वाभाविक है, कि समाज में जब कोई राजनैतिक या आर्थिक उथल-पुथल होती है तब जिस वर्ग का स्तर अपेक्षाकृत निम्नतर होता है, उसे अत्याचारों का सबसे अधिक सामना करना पड़ता है, और वहीं पर शासन की दृढ़ता की परीक्षा भी होती है। मध्यभारत-सरकार ने इधर इतना कुछ शोर मचाने पर जो कुछ अधिक तत्परता और दृढ़ता से क़दम उठाया है, वैसा पहले से ही उसने उठाया होता, तो ऐसी दुर्घटनाओं की बारबार दुःखद पुनरावृत्तियाँ न होतीं। यह जानकर संतोष हुआ कि हाल में कुछ डाकू पुलिस द्वारा मारे गये हैं, और फरार गूजर-ठाकुरों की एक खासी संख्या ने आत्मसमर्पण कर दिया है। किन्तु आततायियों को पकड़ लेने, गोली से मार देने या जेल में भेज देने से ही इस प्रकार की आतंक और त्रास फैलानेवाली घटनाओं का सर्वथा अन्त नहीं होगा। इन घटनाओं के मूल कारणों की छान-बीन करके उन्हें दूर करने के रचनात्मक उपाय भी खोजने होंगे।

विचारणीय

गत ३१ अक्तूबर को नागपुर में संसद तथा राज्य-विधान-सभाओं के परिगणित जातीय सदस्यों और कार्यकर्त्ताओं का जो एक खास सम्मेलन हुआ था, उसके अध्यक्ष-पद से दिये गये श्री जगजीवनराम के भाषण के कई महत्वपूर्ण अंश हमने अन्यत्र दिये हैं। उनका भाषण विचारणीय और ध्यान देनेयोग्य है—शासन के लिए, तथाकथित सवर्ण समाज के लिए तथा हरिजनों के लिए भी। अध्ययन, निरीक्षण और अनुभव के आधार पर संतुलित भाषा में श्री जगजीवनराम ने अपने विचार व्यक्त किये हैं। उनकी इस स्पष्टोक्ति से इन्कार नहीं किया जा सकता कि "हानिकारक सामाजिक रिवाजों का अंत करने और अंधविश्वासों एवं मूढ़ग्राहों को दूर करने के लिए बनाये गये क़ानूनों को अमल में लाना मुश्किल मालूम देता है। इसके लिए ज़रूरत इस बात की है कि जो उन क़ानूनों को व्यावहारिक रूप देने के अधिकारी हैं, वे लोकप्रियता को खो देने अथवा शासनसत्ता से हटा देने के डर से अपने काम में सुस्ती व ढिलाई न करें। ऐसी ढिलाई की मनोवृत्ति का फल यह हुआ है कि यद्यपि संविधान ने अस्पृश्यता को हर रूप में ग़ैरक़ानूनी घोषित कर दिया है, और अनेक राज्यों में परिगणित जातियों की सामाजिक और नागरिक अयोग्यताओं को दूर करने के लिए क़ानून बनाये गये हैं, लेकिन वे क़ानून किताबों में ही बन्द पड़े हैं, उनके अनुसार काम नहीं किया गया।"

हम मानते हैं कि शासन को लोकप्रिय बनने और रहने का सदा यत्न करना चाहिए, पर एक वर्ग की नाराज़गी से डरकर दूसरे दुर्बलतर वर्ग की उपेक्षा करके शासन यदि अपनी लोकप्रियता को बनाये रखना चाहता है, तो वह भारी भूल करता है। उसे न्यायोचित सिद्धान्तों के खातिर अपनी लोकप्रियता ही नहीं, अपने अस्तित्व को भी खतरे में डालने के लिए तैयार रहना चाहिए। विधान-सभाएँ हज़ारों निष्प्राण क़ानून ढालते रहने की टकसालें न रहकर शासन को प्रेरित और नियंत्रित करें, कि वह सबसे आवश्यक और अत्यन्त महत्त्व के क़ानून पर, केवल एक ही क़ानून पर अर्थात् 'नीतिधर्म' पर दृढ़ता से अमल करें और दूसरों से करायें।

परिगणित जातियों की आर्थिक दुरवस्था पर भी भाषण में बहुत अच्छा प्रकाश डाला गया है। हम इस बात से बिल्कुल सहमत हैं, कि किसी व्यक्ति का परिगणित जाति का सदस्य होना अथवा उसका अछूत होना ही उसकी आर्थिक प्रगति में भारी बाधक है।

भाषण में विस्तार के साथ भूमि-व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने पर ज़ोर दिया गया है, और यह बताया गया है कि खेतिहर मज़दूर की समस्या का वास्तविक समाधान भूमि के पुनर्वितरण पर ही, अर्थात् जो खुद जोते उसीको ज़मीन दे देने पर निर्भर करता है। "भूमि का पुनर्वितरण असली किसान की माली हालत ठीक करने के लिए ही ज़रूरी नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय हित में भी यह आवश्यक है।

हरिजनों के उद्योग-धन्धों, उनकी शिक्षा और सरकारी नौकरियों और पदों पर उनकी नियुक्तियों के विषय में भी श्री जगजीवनरामजी ने अपने स्पष्ट विचार व्यक्त किये हैं।

हरिजनों के सामूहिक धर्म-परिवर्तन की भावना का उन्होंने जोरदार विरोध किया है और लौकिक लाभ के लिए, अथवा कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए धर्म-परिवर्तन को कमज़ोरी और कायरता का चिन्ह उन्होंने माना है। उन्होंने कहा है कि, "हिन्दू-धर्म के सच्चे स्वरूप के ऊपर जितने कलुषित आवरण चढ़ा दिये गये हैं, उनको हटाकर हिन्दूधर्म का सुधार

करके उसे अपने गौरवपूर्ण स्थान पर स्थापित किया जा सकता है।"

हिन्दूसमाज और हिन्दूधर्म के संशोधन का उत्तरदायित्व तथाकथित सवर्णों पर सबसे अधिक है। समाज-सुधार के मामलों में सवर्णों द्वारा शिथिलता या उपेक्षा दिखाने पर शासन भी हस्तक्षेप कर सकता है।

भाषण के अंत में श्री जगजीवनरामजी ने जो चेतावनी दी है, उसपर सारे हिन्दूसमाज को और शासन को भी गहराई से ध्यान देना चाहिए—खासकर इस अंश पर :

"आज अपने मार्ग में आई सब रुकावटों और बाधाओं को दूर करने में परिगणित जातियाँ भले ही समर्थ न हों, किन्तु उनकी यह असहाय अवस्था बहुत देरतक या हमेशा न रहेगी। हरेक चीज की एक सीमा है, हद है। जब किसी आदमी के धीरज पर बहुत भार डाला जाता है, तो वह अधीर हो जाता है और प्रायः निराश हो जाता है। निराशा में आदमी कुछ भी कर सकता है। "मरता क्या न करता" इसे नहीं भूलना चाहिए। मैं अपने उन दोस्तों से निवेदन करना चाहता हूँ, जिन्होंने धार्मिक और आर्थिक क्षेत्रों में निहित स्वार्थ बना लिये हैं, कि वे ऐसी हालतें पैदा न करें जिनसे हरिजन निराशा की सीमा पर पहुँच जायें।"

श्री नेहरू का उद्घाटन-भाषण

नागपुर में ३१ अक्टूबर को संसद तथा राज्य-विधान-सभाओं के परिगणित जातीय सदस्यों एवं कार्यकर्त्ताओं के समक्ष उनके सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए हमारे प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने जो विचार व्यक्त किये, खेद है कि, वे कुछ खास उत्साह-वर्द्धक नहीं थे। पंडितजी ने हरिजन-समस्या के बारे में कभी-कदास ही कुछ कहा है। बड़े-बड़े अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों के आगे देश के हर किसी प्रश्न पर उनका ध्यान जाये या जाना चाहिए यह आशा रखना उनके साथ ज्यादती करना है। किंतु जब वह किसी महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर मन से ध्यान देते हैं तब उसमें पूरी तरह से तल्लीन हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, आदिवासियों के प्रश्न पर उनका ध्यान आज कितना अधिक केन्द्रित हो गया है। हमें आशा है कि, भूमिहीन तथा अनेक सामाजिक और नागरिक निर्योग्यताओं से पीड़ित हरिजनों के प्रश्न पर भी उनका कभी-न-कभी अवश्य ध्यान जायगा।

सम्मेलन के उद्घाटन-भाषण में पंडितजी ने उस दिन कहा कि, "हरिजनों के उत्थान का प्रश्न स्वतंत्र भारत की आर्थिक समृद्धि के प्रश्न का ही एक भाग है।" उनकी राय में हरिजनों की समस्याओं पर विचार करना और उनकी अवस्था को सुधारने के उपाय सुझाना यद्यपि हमारा कर्त्तव्य है, तथापि देश के सामने उपस्थित इससे भी बड़ी समस्याओं की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। इस समस्या को वृहत्तर समस्या के दृष्टिकोण से देखने की उन्होंने सलाह दी। "हाथी के पैर में सब छोटे-बड़े पैर समा जाते हैं" यह लोकोक्ति वर्षों से हरिजन-सेवा के छोटे-से क्षेत्र में काम करनेवाले हम कार्यकर्त्ताओं को खास संतोष नहीं देती। हम मानते हैं कि शोषण के प्रश्न से हरिजनों का ही नहीं, हरिजनेतरों का भी वैसा ही संबंध है, अर्थात् आर्थिक स्तर सबका हमें समान कर देना है, पर इस सच्चाई को हम भुला नहीं सकते कि कुछ हदतक हरिजनों का प्रश्न शेष समाज के प्रश्न से भिन्न और विशिष्ट है। इसलिए राष्ट्र के पुनर्संगठन के कार्यक्रम में इस प्रश्न को 'प्राथमिकता' देना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। सामान्य अस्पताल में सामान्य रोगियों की चिकित्सा के साथ क्षय के रोगियों पर अलग से खास ध्यान देना ही होगा। किया भी यही गया है, नहीं तो

राजनैतिक क्षेत्र में हरिजनों को विशेष संरक्षण देने की ऐसी क्या आवश्यकता थी? विभिन्न राज्यों में हरिजनों तथा अन्य पिछड़े हुए वर्गों के कल्याणार्थ अलग विभाग क़ायम करने का भी यही हेतु है। यह कोई नहीं चाहेगा कि विशेष संरक्षण और विशेष विभाग स्थायी तौर पर एक लम्बे समयतक बने रहें। प्रथकता का अन्त करने के लिए 'विषस्य विषमौषधं' का अवांछनीय प्रयोग तात्कालिक धर्म समझकर करना पड़ा है, और करना कर्त्तव्य था। संविधान ने अस्पृश्यता का विधिपूर्वक अंत कर दिया है सही, पर आज भी वह बुरे-से-बुरे रूपों में हमारे ग्रामों में, और कहीं-कहीं शहरों में भी मौजूद है। हरिजन आज भी सार्वजनिक स्थानों का सबके साथ समानरूप से सर्वत्र उपयोग नहीं कर सकते, और न हरेक उद्योग-धन्धे को ही चला सकते हैं। वैधानिक रूप में राजनैतिक अधिकार मिलने पर भी उनका सामाजिक और आर्थिक स्तर, तरह-तरह की निर्योग्यताओं के रहते हुए, सबके समान नहीं हो पा रहा है। इन्हीं सब कारणों से हरिजनों के प्रश्न पर, सर्वजन-कल्याण के लिए कामना और साधना करते हुए भी, शासन को और उससे भी अधिक सवर्ण-समाज को विशेष ध्यान देना ही चाहिए। दुर्बलतर अंगों को पुष्ट करके ही समस्त राष्ट्र को स्वस्थ और बलिष्ठ बनाया जा सकता है, और अंतर्राष्ट्रीयता भी ऐसे ही राष्ट्र के सम्मान को स्वीकार करती है।

एक अध्ययन करने की चीज़

हाल में बम्बई राज्य सरकार ने भंगियों की जीवन स्थिति पर प्रकाश डालनेवाली जांच-कमेटी की एक रिपोर्ट प्रकाशित की है। सरकार ने अपने १ अगस्त, १९३९ के एक निश्चय के अनुसार श्री वि० न० बरवे (महाराष्ट्र-हरिजन-सेवक-संघ के अध्यक्ष) की अध्यक्षता में ९ सदस्यों की एक जांच-कमेटी नियुक्त की थी। इस कमेटी ने बम्बई राज्य के भंगियों की जीवन-स्थिति का अध्ययन और पूरी जांच-पड़ताल की। साथ ही, उनकी मौजूदा अवस्था और कार्य-पद्धति को उन्नत करने के तरीके और साधन भी सुझाये और यह भी निश्चित किया कि उन्हें कम-से-कम कितना वेतन मिलना चाहिए।

रिपोर्ट में कुल १४ अध्याय हैं। रिपोर्ट गहरे और विस्तृत अध्ययन और शोध के साथ लिखी गई है। प्रस्तावना, भंगी-धन्धे का इतिहास, जांच-कमेटी के उद्देश, यह सिफारिश कि हाथ से पाखाना साफ करने का तरीक़ा उठा दिया जाये, घराकी या भंगियों के आचारिक अधिकारों (Customery Rights) का उन्मूलन, रहन-सहन की हालत, भंगी-काम में सुधार, न्यूनतम वेतन तथा सामान्य प्रश्न और उपसंहार ये सारे ही अध्याय भंगीविषयक समस्याओं के गहरे अध्ययन और विस्तृत पर्यवेक्षण के पश्चात् लिखे गये हैं। इस अत्यंत उपयोगी रिपोर्ट का अध्ययन हरेक हरिजन-सेवक, खासकर भंगी-सेवक को करना ही चाहिए।

प्रकाशित होने के बाद बम्बई सरकार ने इस रिपोर्ट को प्रचारित किया है। हमें आशा है कि रिपोर्ट में दी गई सिफारिशों को कार्यान्वित करने में बम्बई सरकार संकोच और विलम्ब नहीं करेगी। दूसरी राज्य सरकारों से भी हमारा अनुरोध है कि इस रिपोर्ट से वे अवश्य लाभ उठाएँ।

किसी भी सरकारी मान्यता प्राप्त पुस्तक-विक्रेता से यह रिपोर्ट खरीदी जा सकती है। मूल्य २॥।=) है।

भंगी का पेशा

उक्त रिपोर्ट में से हम नीचे भंगी के पेशे की ऐतिहासिकता और दुरवस्था का एक अवतरण देते हैं, जिससे उसके पुश्तैनी पेशे और भंगी तथा गैरभंगी समाज की पारस्परिक गुलामी पर अच्छा प्रकाश पड़ता है :

"पाखानों के साफ़ करने का प्रश्न जिसे हम 'सभ्यता' कहते हैं उससे पैदा हुआ है। जब

मनुष्य जंगलों में घुमक्कड़ का जीवन बिताता था, उस काल में मल-मूत्र की सफाई का कोई प्रश्न ही नहीं था। यह प्रश्न तो तब उठा, जब वह एक जगह पर जाकर बस गया. आबादियाँ दिन-पर-दिन बढ़ने लगीं, और लोगों को बस्ती के बाहर हर वक्त शौच के लिए जंगल में जाना मुश्किल हो गया। स्वभावतः लोगों ने तब बस्ती के पास मल-विसर्जन के लिए गढ़ढे खोदे। दो सहस्र वर्ष प्राचीन कौटिल्य के अर्थशास्त्र से इस प्रकार के गड्ढों के होने का पता चलता है।

सड़कें साफ करनेवालों को तब 'पांसुधावक' कहते थे, और नालियाँ साफ करनेवालों को 'रजक'। पर इस प्राचीन ग्रंथ में ऐसे शौचालयों का कोई उल्लेख नहीं मिलता, जिनमें मल-मूत्र-विसर्जन के लिए बर्तन रखे जाते हों, और मैला उठाकर बस्ती से बाहर डाला जाता हो। अक्सर यह कहा जाता है कि, मुग़ल बादशाहों के राज्य-काल में सबसे पहले मैला उठाने का काम करने के लिए कुछ लोगों को मज़बूर किया गया था, लेकिन इस बात का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता। 'शेतखाना' और 'पाखाना' इन दो शब्दों से यह अनुमान होता है कि मुग़ल-राज्य में इनका चलन हुआ होगा। किंतु यह स्पष्ट है कि, अंग्रेज़ी शासन-काल में सार्वजनिक स्वास्थ्य-विभाग और नगरपालिकाएँ स्थापित होनेतक गाँवों और क़स्बों के अधिकांश लोग खेतों में या जङ्गल में शौच फिरने जाया करते थे। समर्थ रामदास स्वामी ने अपने महान् ग्रन्थ 'दासबोध' में कहा है, "शौच फिरने ऐसी जगह जाना चाहिए, जहाँ का किसीको पता भी न चले।" शहर के बीच में रहनेवाले लोग 'शौच-गड्ढे' अथवा 'शौच-कूप' बनवा लेते थे, जिनकी सफाई के लिए भंगी की ज़रूरत नहीं पड़ती थी। जिन लोगों के घर शहर के बाहर या किसी नदी-नाले के किनारे होते थे, उनका पाखाना ढालू जगह पर गिरने से सुअर व दूसरे जानवर साफ कर दिया करते थे; इस व्यवस्था में भी भंगी की ज़रूरत नहीं पड़ती थी। आज भी हज़ारों गाँवों में किसी भी प्रकार के खानगी पाखाने नहीं हैं। गुजरात के बहुत-से गाँवों और क़स्बों में और महाराष्ट्र के भी कुछ क़स्बों में, जैसे भुसावल तालुका के वरणगांव में, शौच-कूप आज भी खासी संख्या में पाये जाते हैं।

मैला उठाने या साफ करने की समस्या यों तो हरेक देश में है; पर यह बात केवल हिंदुस्तान में ही है कि पाखाने और सड़कें साफ करने का काम खास जातियों का ही पेशा समझा जाता है। हिन्दुस्तान में ऐसे सभी प्रकार के काम, जो गंदे मान लिये गये हैं, हरिजनों की किसी-न-किसी जाति के हिस्से में आये हैं, जैसे, (१) मृत पशुओं को उठाकर ले जाना और उनका चमड़ा उधेड़ना, (२) चमड़ा रँगना, (३) चमड़े की चीज़ें तैयार करना, (४) सड़कों और पाखानों की सफाई। ये सभी ऐसे पेशे हैं, जो समाज के कल्याण के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं, पर चूँकि उनके करने में गंदी और सड़ी-गली बदबूदार चीज़ों को हाथ लगाना पड़ता है, इसलिए हरिजनेतर लोग बतौर पेशे के इन कामों को करने के लिए तैयार नहीं होते। हरिजनों में भी यों ऊँच और नीच अनेक जातियाँ हैं, पर भंगी उनमें सबसे नीच जाति का समझा जाता है। हरेक जाति को किसी-न-किसी दूसरी जाति से

अपने आपको ऊँची मानने का अधिकार मिला हुआ है, पर बेचारा भंगी या हलालखोर या बिहार का डोम और मद्रास का मदारू अपने आपको किस जाति से ऊँचा माने ? पाखानों की और सड़कों की, दोनों की ही सफ़ाई का काम भंगी ही करता है। सड़कों या मोरियों-नालियों को साफ़ करने का काम कुछ दूसरी हरिजन जातियाँ भी करती हैं, जैसे, गुजरात के मेघवाल या नाड़िया या महाराष्ट्र के महार, माँग या माँग गारुड़ी, और कर्नाटक के चारवाड़ी। पर पाखाने-साफ़ करने के लिए सिवा भंगी के दूसरी कोई भी जाति तैयार नहीं होती।

इस प्रकार मैले और कूड़े-कचरे की सफ़ाई का काम एक प्रकार का 'इजारा' (एकाधिकार) बन गया है। यों असल में 'इजारा' शब्द का प्रयोग मुनाफ़ेवाले उद्योग-धन्धों के लिए होता है, मैले और कूड़े-कचरे की सफ़ाई के काम का इजारा कैसा ? यह तो एक ऐसा काम है, जिसे करने के लिए दूसरी जातियों के लोग बिल्कुल तैयार नहीं हैं। सचमुच में तो यह एक प्रकार का अभिशाप या अन्याय है। इस अत्यावश्यक सफ़ाई के काम में तो हरेक जाति का उचित भाग होना चाहिए था। दुर्भाग्यवश, यह काम एक खास जाति का या उससे मिलती-जुलती जातियों का बन गया है।

अप्राकृत व्यवस्था का परिणाम हर तरह से दुःखद हुआ है। ग़ैरभंगी लोग इस काम में हाथ लगाना तो दूर, इसकी कल्पना भी करने को तैयार नहीं। वे इतने कठोर बन गये हैं, कि उन्हें इस बात का ख़याल भी नहीं आता कि भंगी किस तरह का जीवन बिताता है, और काम वह किस प्रकार का करता है। वे जानते हैं कि भंगी कैसे भी हो अपने हिस्से का काम तो बाध्यतः करेगा ही। वह अधिक सफ़ाई से, अधिक आसानी से और अधिक अच्छे ढंग से काम करे, इस बात में भी वे उसकी मदद नहीं करते। भंगी भी जानता है कि अगर वह सदा के लिए अपना पेशा छोड़दे, और कोई दूसरा काम करना चाहे, तो क़ानून उसे ऐसा करने से रोक नहीं सकती। लेकिन आदत उसकी कुछ ऐसी बन गई है, कि जिससे उसने अपना स्वाभिमान यहाँतक खो दिया है, कि जिस काम को वह करता है उसे वह कोई अभिशाप नहीं समझता और उससे वह अपने को मुक्त नहीं करना चाहता ; बल्कि वह उसे अपना एक विशेष स्वत्त्व समझता है, और उसकी वह रक्षा करता है। जब किसी शहर में नया-नया 'फ्लश' दाखिल होता है, तब भंगी उसका विरोध करते हैं, क्योंकि उसे वे अपनी जीविका का एकमात्र साधन छीन लेनेवाला समझते हैं। उनमें इतनी हिम्मत नहीं, कि वे खेत पर या किसी कल-कारखाने में अपने लिए कोई काम तलाश लें। वे सख्त मशक़्क़त का काम भी करने के लिए राज़ी नहीं होते। उन्हें प्रतिस्पर्धा का भी डर नहीं, क्योंकि वे अच्छी तरह जानते हैं, कि किसी दूसरी जाति का आदमी उनका काम कभी करने का नहीं। इसलिए वे मन से और शरीर से भी कुछ आलसी-से हो गये हैं। और जिस बुरी अवस्था में वे रह रहे हैं, उसका उन्हें जैसे ख़याल भी नहीं आता है। अपने बच्चों को वे इसलिए नहीं पढ़ाते, कि उनकी सफ़ाई का कमाऊ धन्धा तो बहुत करके निश्चित ही है, फिर उन्हें पढ़ाने-लिखाने से लाभ क्या ? यद्यपि भंगी अत्यन्त गंदा काम करता है, जिसे कि दूसरे लोग करने के लिए कदापि तैयार नहीं, तो भी समाज उसका एहसान नहीं मानता,

और उसे पर्याप्त पारिश्रमिक देने के लिए भी वह तैयार नहीं है। भंगी और समाज एक प्रकार से एक दूसरे के गुलाम बन गये हैं। समाज तो इसलिए भंगी का गुलाम बन गया है, कि काम तो वाध्यतः उसे उसीसे लेना है, फिर काम वह अच्छा करे या खराब। समाज लाचार है, क्योंकि खुद तो वह अपना सफाई का काम करने से रहा। यदि भंगी कभी काम करने से इन्कार करदे, तो उसकी जाति के किसी दूसरे आदमी को किसी दूसरी जगह से बुलाना पड़ता है। और भंगी भी समाज का गुलाम बन गया है। यद्यपि हमेशा ही वह घृणा की नज़र से देखा जाता है, और मेहनताना भी उसे कम दिया जाता है, फिर भी लाचारी से उसे वही बँधा हुआ काम करना पड़ता है। काम को वह छोड़ नहीं सकता, हालांकि उसके रहन-सहन की दशा अच्छी नहीं है, और उसकी काम करने की पद्धति भी मनुष्योचित नहीं है।"

भंगी और उसके पेशे का—यदि उसे सचमुच पेशा कहा जाये—यह नग्नचित्र है,—समाज को आगाह करनेवाला, नगर-पालिकाओं के लिए शर्मनाक और भंगी के लिए भी चिन्तनीय। हरिजन-सेवकों का यह खास कर्त्तव्य होना चाहिए कि समाज को वे लापरवाह, निर्दय और कृतघ्न बनने से रोकें, शासन और नगर-पालिकाओं को उनके प्राथमिक कर्त्तव्यों का बार-बार भान करायें, और भंगी को भी उसकी लाचारी और जड़ता से सचेत करते रहें। हमेशा हरजगह उन्हें अपने कार्यक्रम में भंगी के भयावह प्रश्न को प्राथमिकता देनी चाहिए। हरिजन-सेवक इस प्रश्न का केवल अध्ययन और निरीक्षण ही न करें, बल्कि स्वयं स्वेच्छा से भंगी की जीवन-स्थिति का अनुभव करने के लिए भंगी बन जायें, भंगी-काम को सीखलें।

वि० ह०

दस साल के अन्दर ही

मुझे इधर अपने अनेक प्रवासों में जो अनुभव हुए हैं, उनको ध्यान में रखते हुए यह मालूम देता है कि इधर सवर्ण समाज अस्पृश्यता दूर करने में कुछ शिथिल-सा हो गया है। स्वराज्य आने पर एक ग़लत ख़याल ने लोगों के मन में घर कर लिया है कि जितने भी रचनात्मक कार्य हैं, वे सब-के-सब सरकारी यन्त्र द्वारा होनेवाले हैं। अस्पृश्यता-निवारण और हरिजन-सेवा की प्रवृत्ति केवल शासन-सत्ता और क़ानून के बल पर होनेवाली चीज़ नहीं है। बड़े-बड़े शहरों को छोड़कर छोटे-छोटे देहातों में हरिजनों की अवस्था संतोषजनक देखने में नहीं आती। कहीं-कहीं पर तो पीने के पानी की भी उन्हें काफ़ी तकलीफ़ है। मेहतर भाइयों की स्थिति पर तो हरिजन-सेवकों को अपना ध्यान खास करके केन्द्रित करना चाहिए। जो हरिजन धारा-सभाओं में गये हैं, उन्हें हरिजन-सेवक-संघ की प्रवृत्तियों की ओर अपना ध्यान एवं सहयोग देना चाहिए। हरिजनों के नेता और हरिजन-सेवक-संघ दोनों मिलकर काम करेंगे तभी अस्पृश्यता का मूलोच्छेद संविधान में ली हुई शपथ के अनुसार १० वर्ष की अवधि के अन्दर हो सकेगा।

लक्ष्मीदास सं० श्रीकान्त

[शे० का० तथा शे० ट्रा० कमिश्नर]

दीनबन्धु बापा

२६ नवम्बर, १६४६ की सुबह। नई दिल्ली के कर्ज़न रोड पर स्थित कांस्टिट्यूशन क्लब का मैदान। ठक्कर बापा की ८० वीं जयन्ती थी। प्रबन्ध-कर्त्ताओं ने मैदान, पण्डाल तथा मंच को खूब ठाट-बाट के साथ सजाया था। देश के बड़े-बड़े महारथी—पं० जवाहरलाल, सरदार पटेल, मौलाना आज़ाद आदि हाज़िर थे। कुछ विदेशी राजदूत आदि भी उपस्थित थे। उक्त तीनों महारथियों तथा अन्य लोगों ने बापा का गुणगान किया, उनकी सेवाओं का वर्णन किया। सामान्यतः प्रशंसा तथा गुणगान के जो शब्द कहे गये थे, वे किसी भी व्यक्ति का दिमाग़ ख़राब करने के लिए काफ़ी थे। पर अपनी प्रशंसा सुनकर केवल अनासक्त ही नहीं बल्कि उलटे आत्म-निरीक्षण की ओर प्रवृत्त होना यह विरले ही कर सकते हैं। बापा उन्हीं विरलों में थे।

जब बापा के बोलने की बारी आई, उन्होंने कुछ ऐसा कहा, "मुझे यह सब सज-धज अच्छी नहीं लगती। नई दिल्ली का यह तड़क-भड़क का वातावरण मुझे मौजूं नहीं होता। मैं तो देहात के उस क्षेत्र का प्राणी हूँ, जहाँ हरिजन, आदिवासी और अन्य दीन-दुखी प्राणी रहते हैं।"

यह केवल औपचारिक या विनम्रतावश कही हुई बात नहीं थी। ग़रीबों की, दीन-दुखियों की, हरिजनों की, ग्राम-वासियों की बातें आजकल कवि, लेखक, राजनीतिज्ञ, शासक सभी करते हैं, मन से करते हैं,-- हृदय से चाहते हैं कि उनका 'उपकार' और 'उद्धार' हो, पर उनकी इच्छा मन-ही-मन रह जाती है। अभी-अभी हमारे प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू आसाम के पहाड़ी क्षेत्रों में गये थे—वहाँ से लौटने पर उन्होंने कहा था कि, "नई दिल्लीवाले वहाँ के लोगों का शायद ही कभी ख़याल करते हों, दिल्ली वहाँवालों के लिए दूर है।" पंडितजी चाहते हैं कि हमारे इधर के लोग उधर जायें, आदिवासियों से अपना सपर्क बढ़ायें और उनके सुख-दुख की बातों को समझें। पर दीन-दुखियों की सेवा तलवार की धार पर चलने के समान है। उसके लिए दर्द चाहिए, एक टीस चाहिए। दीन-दुखियों की अवस्था सदा काँटे की तरह चुभती रहनी चाहिए। ठक्कर बापा ऐसे ही व्यक्ति थे। बिना किसी अतिशयोक्ति के यह कहा जा सकता है कि वे अपनी जाग्रत अवस्था में दीन-दुखियों और उपेक्षितों की ही बात सोचते रहते थे, और उनकी निष्काम सेवा करते थे। जो वर्ग व प्रदेश उपेक्षित और तिरस्कृत हो उसकी सेवा करना ही उनका ध्येय था। उत्कल, आसाम, बुन्देलखण्ड आदि उपेक्षित प्रदेशों के कार्य-कर्त्ता इस बात की गवाही दे सकते हैं। मुझे १६४३ का ख़याल आता है। डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी के काफ़ी प्रचार तथा अन्य राजनैतिक कारणों से बंगाल के दुर्भिक्ष का ख़ूब प्रचार हुआ और सहायता के लिए रुपया भी ख़ूब आया। पर उत्कल के बालेश्वर, कटक, पुरी तथा गंजाम ज़िलों की कराह शायद ही प्रदेश से बाहर गई हो। ऐसे समय में बापा ही 'दया-दूत' बनकर उत्कल पहुँचे और उन्होंने सहायता का प्रबन्ध किया। बापा का एक सिपाही बनकर मुझे भी उत्कल की सेवा करने का थोड़ा मौक़ा मिला, यह मेरा बड़ा सद्भाग्य था।

इसके पहले भी उत्कल की ग़रीबी का बापू से परिचय करानेवाले बापा ही थे।

१६५० की १५ वीं अगस्त को जब सारा भारत

स्वतंत्रता-दिवस मना रहा था, आसाम में भारी भूचाल आया, बाढ़ आई--आसाम तहस-नहस हो गया। बापा अस्वस्थता के कारण भावनगर में पड़े हुए थे। आसाम की हालत जानकर उन्हें बड़ी व्यथा हुई। इसके पहले जब-जब आसाम पर 'भीड़' पड़ी थी, बापा उसकी सहायता के लिए दौड़कर पहुँचे थे। इस बार अपनी लाचारी से उनका मन बड़ा ही अस्वस्थ था। मैं एक सप्ताह बाद ही उनसे कस्तूरबा-ट्रस्ट के काम से भावनगर मिलने गया। वहाँ से मुझे दिल्ली सरदार पटेल से मिलने आना था। उन्होंने कई बार मुझसे आसाम के बारे में चर्चा की। वहाँ के कार्यकर्त्ताओं को पत्र लिखाया। और चलते समय मुझसे कहा, "सरदार से कहना कि आसाम की आफत और अपनी लाचारी के कारण मेरा मन बड़ा अस्वस्थ है--वहाँ के लिए जो कुछ हो सके सरदार अवश्य करें।" दिल्ली आकर मैंने सरदार को बापा का सन्देश दिया। सरदारजी ने मुझे कहा कि, "तुम बापा को लिखदो कि वे निश्चिन्त रहें; मुझसे जो कुछ हो सकेगा वह मैं करूँगा।" पर बापा इतनी जल्दी निश्चिन्त होनेवाले नहीं थे। उन्होंने दाहोद और अन्य स्थानों से पीड़ित क्षेत्रों में काम करने के लिए कार्यकर्त्ता भेजे और भावनगर में बैठे-बैठे बराबर मार्गदर्शन देते रहे।

हमारे देश के विकास के लिए आज बड़ी-बड़ी योजनाएँ बन रही हैं, और किसी कदर कुछ कार्यान्वित भी हो रही हैं--बड़े-बड़े कल-कारखाने, बाँध, अन्वेषण-शालाएँ आदि खुल रहे हैं। करोड़ों और अरबों से कम की बात ही नहीं होती। उसके लिए हम विदेशों से भीख माँगने के लिए भी तैयार हैं। पर रेल, शहर और आधुनिक सभ्यता से सैकड़ों मील दूर बसनेवाले भील या गोंड को पीने का पानी, खाने को भरपूर अन्न और बीमारी में दवा-दारू भी नहीं मिलती इसका दर्द किसीको नहीं होता। वे उपेक्षित-से पड़े जीवन बिताते हैं। कुछ वर्षों पहले तो वे और भी बुरी हालत में थे। थोड़े-से मिशनरी अपना धर्म फैलाने के मुख्य हेतु से इन लोगों में जा-जाकर काम करते थे। ऐसे उपेक्षितों की ओर सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की ओर से बापा ने पहले-पहल ध्यान आकर्षित किया। अभी-अभी सितम्बर के मध्य में पं० जवाहरलाल नेहरू मध्यभारत के अतीत गौरव को देखने के हेतु से माण्डव गये थे। लगभग १५ हज़ार भीलों ने उनका वहाँ स्वागत किया और अपने प्रतिनिधियों के मार्फ़त अपने दुख-दर्द की कहानी पेश की। उसके उत्तर में पंडितजी ने कहा कि, "यद्यपि आदिवासी भाई-बहिनों से मेरा प्रत्यक्ष संपर्क नहीं रहा है, पर उनके बारे में स्व० ठक्कर बापा मुझे बराबर कहते रहते थे।"

बापा सचमुच में उपेक्षितों के परममित्र थे। वे केवल सेवा की बात नहीं करते थे, वे स्वयं करते थे, और दूसरों को भी उस ओर प्रेरित करते थे। कस्तूरबा-ग्राम (इंदौर) का २ अक्तूबर १९५० का शिलान्यास करते समय सरदार पटेल ने बापा की ग़ैरहाज़िरी का ज़िक्र करते हुए कहा था, "जहाँ दीन-दुखियों की सेवा का काम होनेवाला हो, वहाँ से ठक्कर बापा मन से कैसे ग़ैरहाज़िर हो सकते हैं?"

करीब डेढ़ मास पूर्व बंबई के एक पत्र में, कर्नाटक के एक पत्रकार की डायरी से, १० वर्ष पहले की एक घटना प्रकाशित हुई थी। बापा अकाल-राहत के कार्य से बीजापुर ज़िले में प्रवास कर रहे थे। पत्रकार ने उन्हें कभी पहले नहीं देखा था, पर अनुमान से उसने यह समझ लिया कि गाड़ी में बैठे हुए वही व्यक्ति बापा हैं। वह गाड़ी में बापा के सामने की बेंचपर बैठ गये, और झट से अपने ऑटोग्राफ की किताब हस्ताक्षर कराने के लिए उनके आगे बढ़ादी। अब आगे उन्हीं

पत्रकार के मुँह से सुनिए:

बिना कुछ कहे नोटबुक लेकर बापा उसके पन्ने उलटने लगे। "क्या आप पत्रकार हैं?" बापा पूछने लगे।

"जी हाँ!" बड़े गर्व के साथ मैंने कहा।

थोड़ा रुककर फिर बापा ने प्रश्न किया—"तो आप इस क्षेत्र के अकाल की जानकारी रखते होंगे?"

"क्यों नहीं?"—और मैं बड़े उत्साह के साथ अपनी जानकारी बयान करने लगा।

अकस्मात् मृदु कण्ठ से बापा ने पूछा,"क्या आप इन देहातों में कभी हो आये हैं?" सीधा-सादा सवाल था—भोले-भाले भाव से पूछा गया था—लेकिन मेरे हृदय के अन्दर तीर के समान बिंध गया! मैंने तो ग्रामों में जाने का सोचातक नहीं था। मेरी सभी जानकारी अखबारी रिपोर्ट और सरकारी वक्तव्य पर आधारित थी। मुझे मौन देख बापा ने कहा—

"क्या आप कभी नहीं गये?"

मैं मौन!

बापा ने मेरी नोटबुक पर पेन निकालकर कुछ लिख दिया।

गाड़ी एक छोटे-से स्टेशन पर जब रुकी और मैं उतरने लगा, तब उन्होंने हाथ बढ़ाकर मुझे मेरी नोटबुक वापस देदी।

वहीं स्टेशन पर खड़े-खड़े मैंने अपनी नोटबुक निकालकर देखी—लिखा था:—

"अपने आपको केवल 'शहरी' न बनाओ, देहातों के साथ एकरूप हो उनकी सेवा करो।—ए. वी. ठक्कर"

मैं सिर्फ पाँच मिनट बापा के साथ था। क्या मैं इन पाँच मिनटों को जिन्दगीभर भूल सकूँगा?"

बापा ने अपनी ईश्वर-भक्ति का साधन दीन-दुखियों और उपेक्षितों की सेवा को बनाया।

'वैष्णवजन तो तेने कहिए जे पीरपराई जाणे रे' बापा के 'पीरपराई जानने' का थोड़ा अंश हममें भी आये यही हम आज बापा की पुण्यस्मृति में प्रार्थना कर सकते हैं।

कस्तूरबा-ग्राम, इन्दौर] **श्यामलाल**

बापा—कितने कठोर, कितने कोमल!

१९३२ के साल से उनके अंतिम समय, १९ जनवरी १९५१ तक ठक्कर बापा की पुनीत सेवा में रहने का मुझे जो सद्भाग्यपूर्ण अवसर मिला, उसे मैं अपने जीवन का अत्यन्त मूल्यवान् काल मानता हूँ। १९३२ के सितम्बर में ब्रिटिश प्रधान मंत्री द्वारा दिये गये सांप्रदायिक निर्णय के विरुद्ध गांधीजी ने यरवडा-जेल में जो ऐतिहासिक अनशन किया था उसके तुरन्त बाद 'एण्टी-अनटचेबिलिटी लीग' (पीछे जिसका नाम हरिजन-सेवक-संघ हुआ) की स्थापना होते ही ठक्कर बापाने मुझे अपनी सेवा में ले लिया था। बापा के साथ मैं कितनी ही बार सारे देश के लंबे-लंबे प्रवासों में गया और उनके साथ लगातार १९ वर्षोंतक रहने का मुझे स्वर्ण अवसर मिला। इतने वर्षोंतक उनके निकटतम सम्पर्क में रहते हुए भी, मेरे खयाल में, ऐसी एक भी बात नहीं आती, जिसे बापा के साथ काम करनेवाले और साधारण लोग न जानते हों, क्योंकि उन्होंने अपने मित्रों और साथी कार्यकर्त्ताओं से कभी कोई बात छिपाई नहीं थी। उनके जीवन में 'व्यक्तिगत' जैसी कोई चीज़ ही नहीं थी। ग़रीबों और दीन-दुखियों के लिए उनका 'अर्पित' जीवन था, उनका जीवनक्रम किसीसे छिपा नहीं था, वह सबके लिए एक खुली

हुई पुस्तक था ।

अनुशासन का पालन स्वयं करने और दूसरों से कराने में बापा बड़े ही कठोर थे । उनकी समय की और काम की पाबन्दी तो सचमुच अनुकरणीय थी । रुपये-पैसे के मामलों और हिसाब-किताब में तो वे बहुत ही सख्त थे । यदि किसीने कभी ज़रा भी रुपये-पैसे के मामले में गफ़लत करदी, तो वह सदा के लिए उनकी सहानुभूति खो बैठता था । उनकी पक्की मान्यता थी कि जो व्यक्ति अच्छी तरह हिसाब-किताब रखना नहीं जानता, वह अच्छा समाज-सेवक हो नहीं सकता । प्रवास के दिनों को छोड़कर वे रोज़ नियम से रोकड़बही को देखते, उसपर दस्तखत करते और अपनी डायरी लिखने के बाद ही सोते थे । प्रवास पर से लौटते, तो उतने तमाम दिनों की रोकड़बही देखते थे, यद्यपि उनके सहायक के दस्तखत तारीखवार उसपर रहते थे । उनकी इस प्रकार की सख्ती से ही २० बरस के दरम्यान रुपये-पैसे और हिसाब-किताब के मामले में केवल एक बार हरिजन-सेवक-संघ की एक प्रान्तीय शाखा के एक कार्यकर्त्ता ने ग़लती की थी, पर वह भी तुरन्त पकड़ ली गई और प्रांतीय शाखा चलाने के जो व्यक्ति उत्तरदायी थे, उनसे बापा ने खड़े-खड़े वह सारी क्षतिपूर्ति कराली । ऐसे मामलों में किसी व्यक्ति का सामाजिक या राजनैतिक क्षेत्र में कितना ही ऊँचा स्थान क्यों न हो या बड़े-से-बड़े आदमी से उसका सम्बन्ध हो, बापा उसकी परवा नहीं करते थे । उनकी दृष्टि में तो एक साधारण अपराधी से भी बड़ा अपराध उसका होता था जो सार्वजनिक रुपये-पैसे का ग़लत तौर पर उपयोग करता या देखभाल में अपनी लापरवाही की वजह से दूसरों को वैसा करने देता था । मुझे याद है कि एक खास मामले में तो एक व्यक्ति पर वे इतना ज्यादा बिगड़ गये थे कि उन्होंने उसे पुलिस के हवाले कर देने का निश्चय कर लिया था । पर बापू ने बीच में पड़कर मामले को अदालत में नहीं जाने दिया, और सारी रकम वसूल करादी ।

बापू के एक खास सेनानी होते हुए भी वे 'पैसा माँगने' की कला में निपुण नहीं थे । शायद ही उन्होंने कभी धनिक लोगों के आगे हाथ फैलाया हो । हाँ, अपने संघ के अध्यक्ष श्री घनश्यामदास बिड़ला तथा श्री जुगलकिशोर बिड़ला को उन्होंने ज़रूर 'अपवाद' बना रखा था । बिड़ला-बन्धुओं के साथ बापा का अन्त समयतक अत्यन्त हार्दिक संबंध रहा । जब कभी उन्हें किसी अच्छे काम के लिए रुपये की आवश्यकता हुई, उन्होंने सीधे जाकर उनसे कहा, और मुझे ऐसा एक भी प्रसंग याद नहीं आता जबकि उन्होंने बापा की बात को टाला हो ।

७० वर्ष की उम्र के बाद उनका स्वास्थ्य धीरे-धीरे गिरने लगा । दोनों आँखों में मोतियबिन्द हो गया था, चलने-फिरने में काफ़ी तकलीफ़ होती थी । कितना ही कहा गया, पर हरिजन-सेवक संघ के खर्च से मोटर-गाड़ी रखने की बात उनके गले नहीं उतरती थी । उनका यह केवल शील-संकोच ही था, न कि खर्च का खयाल । बिड़लाजी के पास वे ताँगे या बस से करीब १० मील अक्सर संघ या बापू के कार्यक्रम के बारे में बात करने जाते थे । बिड़लाजी गाड़ी रख लेने के लिए उनसे अनुरोध करते, पर बापा हमेशा हँसकर टाल देते थे, गाड़ी रखना उन्होंने ज़रूरी नहीं समझा । गाड़ी तो मजबूरन तब उन्हें रखनी पड़ी, जब विधान-परिषद के दिनों में उसका रखना अत्यन्त अनिवार्य हो गया । गाड़ी पर जो खर्च आता था उसे वे विधान-परिषद के अलाउन्स में डलवाते थे ।

अपने सहकारियों से वे खूब कसकर काम लेते थे, और खुद भी काम करने में किसीसे पीछे नहीं रहते थे । ७५ वर्ष की उम्र में भी वे कभी-कभी ६—७ घंटे लगातार बोलकर लिखाते और एक-एक

काग़ज-पत्र पढ़वाते थे। अंतिम दिनोंतक उन्होंने ६ या ७ विभिन्न प्रवृत्तियों को सक्रियरूप से चलाया—हरिजन-सेवक-संघ, कस्तूरबा-गान्धी-स्मारक-ट्रस्ट भारतीय आदिमजाति-सेवक-संघ, निर्वासित हरिजन पुनर्वास-बोर्ड, भारत-सेवक-समाज की ओर से बाढ़ तथा दुर्भिक्ष-निवारण आदि कितने ही कार्य वे अपने जीवन की अंतिम घड़ियोंतक करते रहे। जब वे दौरे पर जाते थे, तब कभी-कभी इन सभी संस्थाओं के काम उन्हें एकसाथ करने पड़ते थे। जितना जिस संस्था का काम वे करते, उसके उतने अनुपात से उस-उस खाते में बड़े ध्यान से अपने दौरे का खर्च डलवाते थे। इस नियम को उन्होंने अंततक सख्ती से निभाया। भावनगर में बीमारी के दिनों में डाक-खर्चतक को वे अलग-अलग हिसाब में लिखवाते थे। दीन-दुखियों की अधिक-से-अधिक सेवा करने की उनकी सबसे बड़ी आकांक्षा रहती थी। बिना किसी काम के दिन बिताना उन्हें पहाड़-सा लगता था। अपनी बीमारी से भी अधिक कष्ट उन्हें इस बात का रहता था, कि वे घूम-घूमकर अब दीन-दुखियों की सेवा नहीं कर सकते। किन्तु रोग-शय्या पर पड़े-पड़े भी उन्होंने काम करना नहीं छोड़ा था। जीवन-सन्ध्या उनकी ज्यों-ज्यों निकट आती जाती थी, काम करने की तृष्णा भी उनकी बढ़ती जाती थी। भारत-सेवक समाज और भील-सेवा-मण्डल के कई कार्यकर्त्ताओं को उन्होंने भावनगर बुलाया और आसाम में जाकर सरकार के साथ बाढ़-संकट-निवारण का काम करने के लिए उनसे अनुरोध किया। बिहार के मुसहर हरिजनों की भी उन्हें आखिरी दिनों में बहुत चिन्ता रहती थी। राँची से अपने दो अच्छे कार्यकर्त्ताओं को उन्होंने बुलाया, और मुसहरों में शीघ्र कल्याण-कार्य शुरू करने के लिए उन्हें आदेश दिया, तीन वर्षतक का खर्च चलाने के लिए गान्धी-स्मारक-निधि से आवश्यक रुपया भी उन्हें दिला दिया। तीसरी और सबसे अंतिम आकांक्षा उनकी यह थी, कि हरिजन-सेवक-संघ केरल प्रदेश के 'नायाडी' जाति के लोगों के कल्याणार्थ एक सेवा-केन्द्र वहाँ खोलदे। उनकी दृष्टि में कुछ-न-कुछ सेवा-कार्य उनके लिए करना बहुत आवश्यक था। नायाडी लोगों को छूना तो दूर, उन्हें पास भी नहीं आने दिया जाता था, और उन्हें देखना भी पाप समझा जाता था। बापा के शुरू कराये यह दोनों काम—मुसहरों तथा नायाडियों के कल्याण-कार्य—बिहार और केरल में उनके इच्छानुसार बहुत अच्छी तरह से चल रहे हैं।

अब बापा की खुद की आर्थिक स्थिति के विषय में दो शब्द। १९३२ के अक्तूबर में जब बापू ने हरिजन-कार्य सँभालने के लिए उनसे कहा, तब वे भारत-सेवक-समाज के एक ज्येष्ठ सदस्य थे। उन्हें तब ८०) मासिक अलाउन्स मिलता था और सफ़र में दूसरे दर्जे का रेल-किराया। जिस दिन से वे हरिजन-सेवक-संघ के प्रधानमंत्री बने उसी दिन से तीसरे दर्जे में मुसाफिरी करना उन्होंने शुरू कर दिया। देश के एक कोने से दूसरे कोनेतक कई लम्बी-लम्बी यात्राएँ कीं। बैलगाड़ीतक पर उन्होंने यात्रा की। दूसरे दर्जे में तो बहुत पीछे अपने आखिरी दिनों में बुढ़ापे या बीमारी में या जब कभी सरकारी काम से कहीं गये, तभी सफ़र किया। हरिजन-सेवक-संघ से वे सिर्फ सफ़र-खर्च लिया करते थे। अपने अलाउन्स में से वे हरिजन-सेवक-संघ को प्रतिमास अपने मकान का किराया और हाउस-टैक्स भी देते थे। अलाउन्स का औसतन तिहाई भाग हर महीने ग़रीबों और ज़रूरतमन्दों पर खर्च होता था। जब कभी बापा को मालूम होता, कि उनके दफ्तर का कोई आदमी बीमारी या किसी दूसरे कारण से मुसीबत में है, तब उसकी आवश्यकता के अनुसार अपने मामूली-से अलाउन्स में से वे उसे एकमुश्त रकम

बतौर मदद के दे दिया करते थे। इधर जीवन के अंतिम दिनों में तो उनकी उदारता इस सीमातक बढ़ गई थी कि ज़रूरतमन्दों की सहायता करने के खयाल से वे अपनी निजी आवश्यकताओं को भी कम करके अलाउन्स में बचत कर लेते थे। उनके परिवार में कुछ गरीब और विधवा स्त्रियाँ थीं। १९ जनवरी १९५१ को जब बापा की मृत्यु हुई, तब उनके निजी खाते में, जिसे हरिजन-सेवक-संघ रखता था, सिर्फ रु० ५४-१५-६ थे। यह रुपया फरवरी मास की सहायता के रूप में उन असहाय बहिनों को भेज दिया गया।

भारत-सेवक-समाज (सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी) का नियम है कि जब कोई व्यक्ति उसका सदस्य बनता है, तब उसे अपनी निजी संपत्ति का त्याग कर देना पड़ता है, और जबतक वह मेम्बर रहता है उसे उसके निर्वाह-मात्र के लिए सोसाइटी से खर्च दिया जाता है। गवर्नमेण्ट से या किसी भी दूसरे ज़रिये से, सदस्य रहते हुए, वह जो कुछ उपार्जन करता है, उसे सोसाइटी को दे देता है। उसमें से वह उस कार्य से संबंध रखनेवाला आवश्यक और उचित खर्च ही कर सकता है। जबतक ठक्कर बापा विधान-परिषद् और दूसरी सरकारी कमेटियों के मेम्बर रहे, उन्होंने सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के नाम का एक अलग खाता रखा था। अलाउन्स के रूप में जितना भी रुपया आता इसी खाते में जमा करा देते थे और संबंधित कामों पर जितना खर्च होता, उसे भी इसी खाते में डलवा देते थे। काफ़ी रकम हर तीसरे महीने सोसाइटी को भेज दी जाती थी। उसमें से वे एक भी पाई अपने ऊपर तो क्या, किसी दूसरे सार्वजनिक कार्य पर भी खर्च नहीं करते थे, क्योंकि वे उसे सोसाइटी की सम्पत्ति मानते थे। अपनी बीमारी के दिनों में भावनगर से उनके लिखने पर उस खाते को बन्द करके बचा हुआ बाकी रुपया सोसाइटी को भेज दिया गया। दूसरे अनेक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं और नेताओं की तरह उन्होंने अपना कोई निजी या गुप्त हिसाब नहीं रखा था। उन्होंने अपने लिए किसीसे कभी कुछ भी नहीं माँगा। उनकी आवश्यकताएँ बहुत ही थोड़ी थीं—मोटी खादी के दो-तीन जोड़ कपड़े और बिल्कुल सादा भोजन। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में तो उन्होंने अपनी वैयक्तिक आवश्यकताएँ बहुत ही कम करदी थीं। उनकी स्वेच्छा से वरण की हुई हद दर्जे की अकिंचिनता को देख-देखकर उनके मित्रों और साथियों को व्यथा होती थी। जब १९ जनवरी १९५१ को उनकी मृत्यु हुई, उन्होंने इतना भी नहीं छोड़ा था कि जो उनके दाह-संस्कार के लिए भी पर्याप्त हो।

कुछ क़ीमती कही जानेवाली चीज़ों में उन्होंने केवल एक शाल छोड़ा, जो उनके ८०वें जन्म-दिवस पर कस्तूरबा-निधि के कार्यकर्त्ताओं ने उन्हें भेंट किया था। उनकी दूसरी चीज़ें ३०-४० रुपये से ऊपर की नहीं थीं।

समाज-सेवा के क्षेत्र में बापा का स्थान बहुत ऊँचा था। बड़े-बड़े नेताओं और श्रीमंतों के साथ उनका संबंध था। इसपर से लोगों का शायद यह खयाल होगा कि बापा की आर्थिक स्थिति बड़ी अच्छी रही होगी, पर बात इससे उलटी थी। ठक्कर बापा के जैसा प्रेरणाप्रद उदाहरण विरले ही महापुरुषों के जीवन में मिलेगा—सार्वजनिक रुपये-पैसे की रक्षा करने में वज्र से भी कठोर, पर हृदय जिनका पुष्प से भी अधिक कोमल।

हरिजन-निवास, दिल्ली] का०स० शिवम्

बापा के संस्मरण

जिन दिनों भारतभर में राजनैतिक हलचल, खासकर असहयोग की हलचल बड़े ज़ोर से चल रही थी, उन्हीं दिनों बापा का स्थिर रचनात्मक कार्य भी गुजरात में शुरू हुआ। बापा राजनैतिक ढंग के व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने कांग्रेस का लेबल अपने ऊपर नहीं लगाया था। मगर सारा कार्य उनका कांग्रेसजनों के सहयोग से ही शुरू हुआ। दाहोद के भील-सेवा-मण्डल में गुजरात-विद्यापीठ के स्नातक दाखिल हुए। पूज्य गांधीजी और सरदार वल्लभ भाई के साथ तो बापा का घनिष्ठ सम्बन्ध था ही। गुजरात कांग्रेस प्रान्तीय-समिति भील-सेवा-मण्डल को आर्थिक सहायता भी दिया करती थी।

गोधरा की एक सभा का प्रसंग याद आ रहा है। गांधीजी ने उस सभा में चर्खा चलाने के प्रश्न पर बहुत ज़ोर दिया था। उन्होंने पूछा कि नियमित-रूप से चर्खा चलाने के लिए कितने आदमी तैयार हैं? हाथ उठाकर बहुत-से लोगों ने चर्खा चलाने का वचन दिया। बापा ने भी अपना हाथ खड़ा कर दिया, मगर थोड़े ही दिनों बाद बापा को लगा कि चर्खा चलाना उनके वश का नहीं। गांधीजी को उन्होंने अपनी इस असमर्थता के बारे में तुरन्त लिख भी दिया।

१९३० में मद्य-निषेध का आन्दोलन बड़े ज़ोर से चल रहा था। सरकार उसका मुक़ाबला भी उतने ही ज़ोर से कर रही थी। गिरफ्तारियाँ ज़ोरों से हो रही थीं, और स्वयंसेवकों के साथ मारपीट भी होती थी। एक दिन बापा ने सुना कि महमदाबाद में शराब की दूकानों पर पिकेटिंग करनेवाले स्वयंसेवकों पर बहुत ज़्यादा अत्याचार हो रहा है, उन्हें पीटा भी बेरहमी से जाता है। बापा स्वयं जाँच करने के लिए वह पहुँचे। पिकेटिंग में वे शरीक नहीं हुए थे, फिर भी उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया और सज़ा सुनाकर साबरमती के सेण्ट्रल जेल में उन्हें भेज दिया गया। बापा सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के सदस्य थे। इस संस्था की गणना असहयोगी पक्ष की संस्थाओं में नहीं थी। श्री देवधरजी ने, जो सोसाइटी के अध्यक्ष थे, बापा से बात करके हाईकोर्ट में अपील की। हाईकोर्ट ने उनकी सज़ा रद्द करदी।

यों तो बापा के साथ मैं १९२३ से ही काम करने लगा था, पर उनसे घनिष्ठ संबंध मेरा १९२४ में हुआ। इस साल गुजरात में अतिवृष्टि होने से देहातों में बहुत नुकसान हुआ। गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस समिति ने बाढ़-संकट-निवारण-कार्य के लिए कई सेवा-केन्द्र खोले, और बापा को उनकी सारी जिम्मेवारी सौंपदी गई। बापा ने सारे गुजरात में घूम-घूमकर ग़रीब जनता की दुरवस्था को देखा। उन्होंने देखा कि ग़रीब हरिजनों को रहने के घरों का तो कष्ट था ही, पीने के पानी की भी उन्हें भारी तकलीफ़ हो रही थी। बाढ़-संकट-निवारण फण्ड से तथा गान्धीजी के द्वारा श्री जुगलकिशोर बिड़ला से २२ हज़ार रुपये लेकर बापा ने हरिजनों के लिए कितने ही स्थानों पर कुएँ खुदवाये और बँधवाये। गुजरात प्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघ ने आज भी बापा के शुरू किये हुए कूप-निर्माण का काम चालू रखा है।

परीक्षितलाल मजमुदार

[हरिजन-आश्रम, साबरमती]

हरिजन-सेवक-संघ की प्रवृत्तियाँ

हरिजन-सेवक-संघ आज से २० साल पहले ३० सितम्बर १९३२ को स्थापित हुआ था। संघ कुछ-कुछ संयुक्त राष्ट्र संघ की ट्रस्टीशिप कौन्सिल की तरह का है। संसारभर के दुर्बलतर राष्ट्रों, उपनिवेशों और जातियों के साथ अधिक शक्तिशाली राष्ट्रों ने जो सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक अन्याय किये हैं, उन्हें दूर करने की जिम्मेवारी इस कौंसिल ने शुद्ध मानवता की दृष्टि से अपने ऊपर ले रखी है। हरिजन-सेवक-संघ भी ऐसे ही सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनों की एक ट्रस्ट-जैसी संस्था है, जो संघ के कार्यक्रम और नीति के प्रति पूरी सहानुभूति और आस्था रखते हैं। दूसरी संस्थाओं की तरह कोई व्यक्ति कुछ नियत चन्दा देकर इस संस्था का सदस्य नहीं बन सकता। इस संस्था में तो उसी व्यक्ति को सदस्य के रूप में लिया जाता है, जो कोई-न-कोई निश्चित सेवा-कार्य करता है, और जो किसी भी रूप में अस्पृश्यता को अपने जीवन में स्थान नहीं देता। इस प्रकार हरिजन-सेवक-संघ एक ट्रस्ट है। उसके बोर्ड के सदस्य—सवर्ण और अवर्ण दोनों ही—न केवल संघ की निधि के ही ट्रस्टी हैं, बल्कि सारी हिन्दूजाति की मान प्रतिष्ठा के संयुक्त संरक्षक और जाग्रत पहरेदार भी हैं। संघ का विधान स्वयं गांधीजी ने बनाया था। उसके उद्देश हैं—अस्पृश्यता का सर्वथा निवारण और सवर्ण समाज द्वारा हरिजनों के प्रति प्रायश्चित्त की पवित्र भावना से कर्त्तव्य-पालन। इन दोनों उद्देशों की पूर्ति मुख्यतः सवर्ण हिन्दुओं को करनी है।

संघ ने शुरू से ही सवर्णों के गले इस बातको उतारने का प्रयत्न किया, कि अस्पृश्यता हिन्दूधर्म के मूलभूत सिद्धांतों के एकदम विरुद्ध है; मानवता, समता और न्यायपरता के ऊँचे सिद्धांतों के भी वह सर्वथा विरुद्ध है। साथ ही, संघ ने हरिजनों की नैतिक, सामाजिक और भौतिक उन्नति की ओर भी अपना लक्ष्य रखा।

प्रचार-कार्य

हरिजन-सेवक-संघ कितना बड़ा भाग्यशाली है, जो उसे गांधीजी-जैसा अद्वितीय प्रचारक अपने जन्म-काल से ही मिल गया। गांधीजी ने 'हरिजन', 'हरिजन-सेवक' और 'हरिजन-बन्धु' इन तीनों पत्रों में वर्षों अस्पृश्यता के विरुद्ध अपने ऊँचे विचारों को जोरदार शब्दों में निर्भयतापूर्वक लिखा और अगणित सार्वजनिक सभाओं में भाषण भी दिये। रूढ़िग्रस्त हिन्दुओं के विरोध का उन्होंने ऐसी निर्भयता और दृढ़ता से सामना किया कि सारा विरोध उनके प्रेम के आगे पानी-पानी हो गया।

संघ ने स्वयं भी अस्पृश्यता के विरुद्ध प्रचार का सुसंगठित कार्यक्रम चलाया। उसने सभा-सम्मेलनों और हिन्दूत्योहारों के मनाने का आयोजन किया, जिनमें हरिजनों और सवर्णों ने समान रूप से भाग लिया। उसके सेवक और प्रचारक हजारों गाँवों में हरिजनों को मुक्ति का नया सन्देश लेकर पहुँचे।

देश की विभिन्न भाषाओं में अस्पृश्यता-निवारण-विषयक साहित्य भी प्रकाशित हुआ। संघ की प्रान्तीय शाखाओं और कुछ संस्थाओं तथा व्यक्तियों ने भी देश के विभिन्न भागों में हरिजनों की अवस्था का समालोकन (सर्वे) किया, जिससे हरिजनों की अनेक निर्योग्यताओं का पता चला।

रचनात्मक कार्य

संघ ने हरिजनों के सामाजिक, आर्थिक और भौतिक कल्याण की दिशा में भी यथाशक्ति, यथा-

साधन, जहाँ कहीं संभव हुआ, काम किया। अपने अधिकारों के लिए कटिबद्ध और निर्भय रहने के लिए हरिजनों को हर जगह प्रोत्साहित किया गया।

संघ ने हरिजन बालक-बालिकाओं की शिक्षा पर अपना विशेष ध्यान दिया। हरिजन बच्चों को सार्वजनिक पाठशालाओं में दाखिल कराते समय कार्यकर्त्ताओं को सवर्ण हिन्दुओं के विरोध का काफ़ी सामना करना पड़ा। जहाँ पर स्कूल नहीं थे, वहाँ या तो म्यूनिसिपल और लोकल बोर्डों पर ज़ोर डाल-कर संघ ने दिन या रात्रि के स्कूल चलाये, या अनेक स्थानों पर आश्रमों के रूप में बालक-बालिकाओं के छात्रालय उसने स्वयं स्थापित किये।

इसके अतिरिक्त, संघ ने हरिजन छात्र-छात्राओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रतिवर्ष अनेक छात्रवृत्तियाँ भी दीं। संघ द्वारा छात्रवृत्तियाँ पाये हुए विद्यार्थियों में से आज कुछ तो कुछ राज्यों के मंत्री हैं, कुछ विधान-सभाओं और लोक-संसद के सदस्य हैं और कुछ वकील, डाक्टर, इंजीनियर और कुछ अनेक सरकारी पदों पर भी हैं।

संघ के सतत प्रयत्नों से राज्य-सरकारों ने हरि-जन विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियाँ और दूसरी कई सुविधाएँ भी दीं। मद्रास राज्य में तो हरिजन विद्या-र्थियों के लिए तमाम स्कूलों और कालेजों में १० प्रतिशत जगहें सुरक्षित कर दी गयी हैं, और इससे भी अधिक संख्या में वे वहाँ दाखिल हो रहे हैं।

संघ ने अपने उद्योग-विद्यालय भी कई स्थानों पर चलाये, जिनमें बढ़ईगीरी, लुहारगीरी, बेंत का काम, जिल्दसाज़ी, छपाई, दरज़ीगीरी आदि दस्त-कारियों का सैद्धान्तिक व व्यावहारिक शिक्षण दिया जाता है। दिल्ली की हरिजन-उद्योगशाला तथा कस्तूरबा-बालिका-आश्रम, साबरमती का हरिजन-आश्रम, मद्रास का ठक्कर बापा-विद्यालय, इलाहाबाद का हरिजन-आश्रम आदि संस्थाएँ उल्लेखनीय हैं।

संघ ने पूज्य ठक्कर बापा की खास प्रेरणा से अनेक राज्यों के कितने ही स्थानों पर सहयोगी ऋण-दात्री समितियाँ संगठित कीं, जिनके द्वारा कमर तोड़ देनेवाले कर्ज़ के भार से हरिजनों को काफ़ी राहत मिली और अपने रहन-सहन को भी वे बेहतर बना सके। सहकारी आन्दोलन के आर्थिक लाभों का अनुभव हरिजन अब खुद भी धीरे-धीरे करने लगे हैं।

गांधीजी के मार्गदर्शन और नेतृत्व में संघ ने अस्पृश्यता के जिस सबसे अधिक काले धब्बे को धोने का प्रयत्न किया, वह है उसका मंदिर-प्रवेश कराने का प्रयत्न। गांधीजी की दृष्टि में तो हरिजनों का मंदिर-प्रवेश ही अस्पृश्यता-निवारण का सबसे अंतिम परीक्षण था। मंदिर-प्रवेश के पक्ष में हरिजन-सेवकों ने बड़े ज़ोर से सारे देश में प्रचार द्वारा लोकमत तैयार किया। परिणाम-स्वरूप त्रावणकोर राज्य के महाराजा ने १२ नवम्बर १९३६ को राज-कीय घोषणा द्वारा अस्पृश्यता का अन्त करके राज्य के तमाम मंदिरों को हरिजनों के लिए खुलवा दिया। भारत के सामाजिक एवं धार्मिक इतिहास में यह एक बहुत बड़ी घटना थी। इसके बाद, मद्रास-सरकार ने मंदिर-प्रवेश क़ानून पास किया। और अब तो लगभग सभी राज्यों ने सामाजिक तथा नागरिक निर्योग्यता-निवारण क़ानून तथा मंदिर-प्रवेश क़ानून पास कर दिये हैं।

मद्रास तथा बम्बई राज्य की सरकारों ने हरिजनों की हर तरह की उन्नति पर ध्यान दिया। मद्रास-सरकार ने अनेक शैक्षणिक सुविधाएँ देने के अतिरिक्त कृषि के लिए ८, २७, ६०० एकड़ ज़मीन सुरक्षित कर दी है, जिसमें से ३, ७४, ७८८ एकड़ हरिजनों को दे दी गयी है और २,०१,६०० एकड़ भूमि पर वे काश्त भी कर रहे हैं।

दूसरे भी कई राज्यों ने इसी प्रकार की थोड़ी-बहुत सुविधाएँ संघ की प्रत्यक्ष प्रेरणा से हरिजनों को प्रदान की हैं।

कुल मिलाकर इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि जहाँतक लोकमत का संबंध है, उसे हम आज हर जगह अस्पृश्यता-निवारण के पक्ष में पाते हैं। आज से २० साल पहले किसी हरिजन का सवर्ण घरों में सबके साथ त्योहारों व उत्सवों के अवसरों पर सम्मिलित होना असम्भव-सा था। सवर्ण सेवकों का हरिजनों के साथ खान-पान, हरिजन बच्चों को नहाना-धुलाना, उन्हें कपड़े पहनाना और उनके साथ खेलना-कूदना आज से २० साल पहले यह सब कल्पनातीत था। गांधीजी की कठोर तपश्चर्या ने, ठक्कर बापा की सतत सेवा-साधना ने और संघ के विनम्र प्रयत्नों ने आज बहुत सीमातक अविश्वसनीय को भी विश्वसनीय बना दिया है। फिर भी अभी बहुत-कुछ करने को संघ के सामने काम पड़ा हुआ है।

निःसंदेह, हरिजन-आन्दोलन आधुनिक संसार के इतिहास में एक महान् अर्थ रखता है। इस आंदोलन में लगभग ६ करोड़ लोगों का उत्थान हम, बगैर हिंसा और घृणा के, देखते हैं। गांधीजी के नेतृत्व में 'उत्पीड़क' अर्थात् ऊँची जातियों के हिन्दू स्वयं भी इन 'उत्पीड़ितों' के मुक्ति-आन्दोलन के नेता बनकर आगे आये और अपने ही लोगों के साथ लोहा लेते हुए उन्होंने सब तरह के कष्टों और बलिदानों को स्वेच्छा से वरण किया। कोई दूसरा देश होता, तो ऐसे आन्दोलन से वहाँ एक भयानक वर्ग-युद्धतक छिड़ सकता था। सद्भाग्य से, गांधीजी की अहिंसात्मक क्रांति के कारण भारत में ऐसा नहीं हुआ। उत्पीड़कों की अन्तरात्मा को गांधीजी अपने प्रेम से प्रभावित कर सके, और उन्होंने अपने पाप पर पश्चात्ताप किया और सक्रिय प्रायश्चित्त भी। साथ ही, गांधीजी ने करोड़ों हरिजनों के अन्दर ऐसा साहस, ऐसी स्वतंत्र भावना और ऐसी शक्ति उँडेल दी कि जिससे वे बड़े-से-बड़े अत्याचारों का डटकर सामना कर सकें। बलशालियों को उन्होंने उनकी अहंभावना की ऊँचाई से नीचे झुका दिया, और बलहीनों तथा पद-दलितों को मुक्ति की ऊँचाई पर लाकर खड़ा कर दिया। अपनी नैतिक और राजनैतिक क्रांति के द्वारा वे ऐसा महान् परिवर्तन ला सके। २५ वर्ष के अंदर ही गांधीजी ने एक ऐसी दुष्टता-पूर्ण परम्परा का उन्मूलन कर दिया, जो दो हजार वर्ष पुरानी थी, और जिसने हमारे सारे सामाजिक जीवन की जड़ोंतक विष-ही-विष भर दिया था। इन पिछले वर्षों में जिस वेग और व्यापकता के साथ यह आंदोलन चला उसका सिंहावलोकन करते हुए इतिहास का विद्यार्थी क्या उसे एक चमत्कारपूर्ण घटना नहीं मानेगा ?

मद्रास] एस० आर० वेंकटरमण

ध्यान देनेयोग्य कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न

[गत ३१ अक्टूबर को नागपुर में 'भारतीय-दलित जातीय संघ' के तत्वावधान में संसद तथा राज्य-विधान-सभाओं के परिगणित जातीय सदस्यों व कार्यकर्त्ताओं का जो सम्मेलन हुआ था, उसके अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए श्री जगजीवनरामजी ने कितने ही महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश डाला है। उनके उस भाषण में से हम कुछ उल्लेखनीय एवं विचारणीय अंशों को नीचे उद्धृत करते हैं : सं०]

उन अभागे लोगों को, जो सदियों से न केवल अछूत कहे जाते रहे हैं बल्कि जिनके साथ अछूतपन का व्यवहार किया जाता रहा, हमारे संविधान ने कुछ अधिकारों की गारंटी दी है। उनको कुछ सुविधाएँ

भी दी है। संविधान की भूमिका में ही स्थिति, दर्जे और अवसर की समानता की गारंटी दी गई है। राष्ट्र के सामुदायिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में वे पिछड़े हुए हैं, यह ख़याल करके उनको कुछ मूलभूत अधिकारों की भी गारंटी दी गई है। अस्पृश्यता का अन्त कर दिया गया है, और धर्म, जाति, नस्ल, लिंग या जन्मस्थान के कारण भेदभाव करने का निषेध कर दिया गया है।

मगर हानिकर सामाजिक रिवाजों का अन्त करने और अन्धविश्वासों एवं मूढ़ग्राहों को दूर करने के लिये बनाये गये क़ानूनों को अमल में लाना कठिन है। इसके लिए ज़रूरत इस बात की है कि जो उन क़ानूनों को व्यावहारिक रूप देने के अधिकारी हैं वे लोकप्रियता के खो देने अथवा शासन-सत्ता से हटा दिये जाने के डर से अपने काम में सुस्ती और ढिलाई न करें। ऐसी ढिलाई की मनोवृत्ति का फल यह हुआ है कि यद्यपि संविधान ने अस्पृश्यता को हरेक रूप में ग़ैरक़ानूनी घोषित कर दिया है और अनेक राज्यों में परिगणित जातियों की सामाजिक और नागरिक अयोग्यताओं को दूर करने के लिए, जिनके कारण परिगणित जातियाँ कष्ट पा रही हैं; क़ानून बनाये गये हैं, लेकिन वे क़ानून किताबों में ही बन्द रहे, उनके अनुसार काम नहीं किया गया।

परिगणित जातियों की अन्तश्चेतना जाग उठी है। वे जिन अयोग्यताओं, अपमानों, हीनताओं और घृणा के शिकार रहे तथा जिनके भार के नीचे दबे हुए हैं, उनसे मुक्त होने के लिए वे छटपटा रहे हैं। देश के अनेक भागों से हमें खबरें मिलती रहती हैं कि हरिजनों के प्रति दुर्व्यवहार किया जाता है और गाँवों में उनका सामाजिक बहिष्कार भी किया जाता है। ऐसी दुःखपूर्ण घटनाएँ जितनी घटती हैं, जितनी वारदातें होती हैं, वे सभी प्रकाश में नहीं आती हैं, अखबारों में नहीं छपती हैं। उनका एक अंशमात्र ही आता है। ऐसी घटनाएँ अधिकांश रूप में वहाँ ही होती हैं जहाँ हरिजन सजग और सतर्क हैं और अमानवीय सामाजिक कुरीतियों, आर्थिक शोषण, अत्याचार और ज़्यादती के सामने सिर न झुकाकर उनका विरोध करते हैं, प्रतिकार करते हैं और मुक़ाबला करते है।

ये अत्याचार नये हो नहीं हैं, ये तो सदियों से किये जा रहे हैं। केवल जागृति के कारण अब वे असह्य प्रतीत होते हैं और लोग उनका विरोध करने लगे हैं। जो कोई वर्ग अपनी ग़ुलामी के बंधनों को काटने के लिए कोशिश करता है, संघर्ष करता है, उसे सतानेवाले और अधिक कष्ट और यातना देते हैं और उसको इनका सामना करना ही पड़ता है। किसीने भी आजतक बिना कष्ट सहे दासता से मुक्ति नहीं पाई। उसको सदा अपनी मुक्ति के लिए, आज़ादी के लिए भारी क़ीमत चुकानी पड़ती है।

परिगणित जातियों की आर्थिक दुरवस्था उनके कष्टों और कठिनाइयों के मूल में है। किसी व्यक्ति का परिगणित जाति का सदस्य होना अथवा उसका अछूत होना ही उसकी आर्थिक प्रगति में भारी बाधक है। क़ानूनन किसी नागरिक के लिए देश के किसी भाग में जाने की रुकावट नहीं, कोई काम करने की मनाही नहीं, किन्तु परिगणित जाति के व्यक्ति के मार्ग में तो सदियों से प्रचलित रिवाज रुकावट उत्पन्न करते हैं। सामाजिक रूढ़ियों ने ऐसा प्रतिबंध लगा रखा है कि वह अमुक व्यापार नहीं कर सकता, अमुक पेशा नहीं अपना सकता। यदि वह करे भी तो कोई उससे लेनदेन नहीं करता। परिगणित जातियाँ ग़रीब हैं, इस कारण बड़े पैमाने पर कोई काम करने का उनके पास साधन नहीं। बहुत हुआ तो वे छोटा-मोटा काम-धंधा, व्यापार-व्यवसाय कर सकते हैं, किन्तु उनमें मुक़ाबला ज़बर्दस्त है, प्रतियोगिता तीव्र है। मुक़ाबले के अलावा अछूतपन

सदा उनके मार्ग में रोड़ा खड़ा करता है। वे पान, शर्बत या मिठाई की दूकान या दाल-आटे की दूकान नहीं खोल सकते। कारखानों और व्यावसायिक दफ्तरों (फर्मों) में भी कितने ही काम हैं, जिनपर इनको बहाल नहीं किया जाता, इसलिए नहीं कि उस काम के करने की योग्यता उनमें नहीं, बल्कि केवल इसलिए कि वे अछूत हैं और छुए नहीं जा सकते।

देश के कुछ भागों में परिगणित जातियों को ज़मीन खरीदने की मनाही थी, रुकावट थी। इस मनाही की सबसे अचरज की बात यह है कि ऐसी जातियाँ, जिनके बिना खेती का होना संभव नहीं, अखेतिहर गिनी जाती थीं। संविधान के अमल में आने के बाद से इस प्रकार की क़ानूनी रुकावटें दूर होगई हैं, परन्तु अब एक नया अनुभव हुआ है। वह यह कि खेतीयोग्य परती पड़ी ज़मीन भी उनको नहीं दी जा रही है। फलतः वे खेतिहर मज़दूर के तौर पर अपनी जीविका चला रहे हैं। इन मज़दूरों का जीवन बड़ा कठोर है। खेती के मौसम में जब काम बहुत होता है, बुवाई या कटाई का समय होता है, उस समय इनको काम मिलता है; वह भी लगातार नहीं, सारे मौसमभर भी उनको काम नहीं मिलता। फिर काम के घण्टे बहुत होते हैं, किन्तु मज़दूरी बहुत कम होती है। यह कहा जाय कि उनकी अवस्था ग़ुलामी जैसी है तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। रद्दी अनाज या अन्य किसी रूप में उचित से कम मज़दूरी मिलती है। खेती का मौसम जब नहीं होता है या मन्दा समय होता है तब इतना काम भी उनको नहीं मिलता, पर इनके दोहन तथा शोषण के सब तत्व मौजूद रहते हैं। औद्योगिक मज़दूरों के वास्ते तो कुछ किया भी गया है, परन्तु इन लाखों लाचार और मूक लोगों के लिए जिनके ऊपर सारे देश के अन्न की पैदावार गया है। सालों के विचार के बाद 'मिनीमम वेजेज़ एक्ट' (न्यूनतम मज़दूरी क़ानून) १९४८ में बनाया गया। इसका एक उद्देश्य यह है कि खेतिहर मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी की गारण्टी हो जाय। जिन राज्यों में यह क़ानून लागू कर दिया गया है उनको जरूर श्रेय मिलना चाहिए, परन्तु मुझे यह देखकर दुःख, क्षोभ और कष्ट होता है कि अभी बहुत-से ऐसे राज्य हैं जहाँ यह क़ानून अभीतक लागू नहीं किया गया। खेतिहर मज़दूरों को यह सामाजिक न्याय प्राप्त होगा, यह आशा करना क्या बहुत अधिक है? खेतिहर मज़दूरों के आन्दोलन के बाद ही यदि यह मज़बूरी से लागू किया गया तो इसका बहुत-सा श्रेय नष्ट हो जायगा।

खेतिहर मज़दूर की समस्या का वास्तविक समाधान तो भूमि-व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने ही पर होगा। इस विषय में सभी एकमत हैं कि भूमि-व्यवस्था इस ढंग की होनी चाहिए जिससे खेत जोतनेवाले काश्तकार और राज्य के दर्मियान कोई भी दलाल न रहे और ज़मीन उन्हीं लोगों के साथ बन्दोबस्त की जाय, जो "असल में खेत जोतनेवाले" हैं। कठिनाई तो तब पैदा होती है जब यह तय करना पड़ता है कि "असल में खेत जोतनेवाला" कौन है। प्रचलित धारणा के अनुसार कोई भी व्यक्ति "असली जोतनेवाला" मान लिया जा सकता है, जो अपने एजेंट या मैनेजर द्वारा अपने द्वारा दिये गये औज़ारों और उपकरणों से शत-प्रतिशत मज़दूरों से ही खेती करा सकता है। विवेकपूर्ण भूमि-वितरण के प्रस्ताव के मार्ग में यह परिभाषा ही बड़े विरोध का कारण है। यदि "ज़मीन जोतनेवाला" का यही अर्थ माना जाय जो कि वस्तुतः उसका अर्थ है, तो ज़मीन का पुनःवितरण बड़ा सरल हो जाय।

भूमि का पुनर्वितरण केवल खेतिहर मज़दूरों

की अवस्था सुधारने और 'असली किसान' की माली हालत ठीक करने के लिए ही जरूरी नहीं है बल्कि राष्ट्रीय हित में भी यह आवश्यक है। अनाज की पैदावार बढ़ाने की कोई आयोजना इच्छित फल न देगी, जबतक किसान खेत पर खुद मेहनत न करेगा। भाड़े के मजदूरों द्वारा खेती कराने और खुद खेती कराने के बीच भारी अन्तर है और पैदावार पहले की अपेक्षा दूसरे में पन्द्रह से बीस प्रतिशत तक अधिक होती है। किसान के खुद खेती करने से पैदावार हमेशा अधिक होती है।

परिगणित जातियों के लोगों के समाज द्वारा निर्धारित तथा कुछ परम्परागत पेशे हैं। अपना माल तैयार करने के आधुनिक तरीके और ढंग न जानने के कारण वे प्रतिद्वंद्विता में नहीं टिक सकते। उनका पेशा उनसे अधिक धनी बड़े लोगों ने छीन लिया है और उन्हें बेकार बना दिया है। लेकिन उनपर लादे हुए समाजिक बोझ को, जिम्मेदारी को भी उनसे पूरा करवाया ही जाता है। वे अपनी इच्छा के विरुद्ध ये काम करने को लाचार किये जाते हैं। यदि वे इनको छोड़दें तो उनको अनेक तरह से डराया-धमकाया जाता है। यहांतक कि कुछ अदालतों ने भी उन घृणित और हेय कामों को उनके द्वारा छोड़ देने के विरुद्ध फैसले दिये हैं, यद्यपि यह संविधान द्वारा दिये गये नागरिकता के अधिकारों के प्रतिकूल हैं। सतर्क और चौकस रहने के बावजूद वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर किये गये ऐसे हमलों को ये बेचारे नहीं रोक सकते, क्योंकि इनके पास इतना रुपया कहाँ, जिससे वे सुप्रीम कोर्ट में जाकर उसके विरुद्ध लड़ें।

शिक्षा की दृष्टि से परिगणित जातियाँ बहुत पिछड़ी हुई हैं। यदि उनका रहन-सहन और जीवन-मान ऊँचा करना है, तो यह जरूरी है कि इस दिशा में उनको आवश्यक सुविधाएँ दी जायें। गरीबी और सामाजिक परिस्थितियों के कारण उनके लिए अपने बच्चों को शिक्षा देना सम्भव नहीं। महात्माजी ने इस बात को बहुत पहले अनुभव कर लिया था और उनके पथ-प्रदर्शन और उनके संरक्षण में "हरिजन-सेवक-संघ" ने परिगणित जातियों की शिक्षा पर बहुत ध्यान दिया। विभिन्न राज्यों में लोकप्रिय मंत्रि-मंडलों के बनने से संघ का काम इस दिशा में अब घट गया है, क्योंकि यह कार्य राज्यों द्वारा अधिकाधिक मात्रा में अपने हाथ में लिया जा रहा है। राज्यों की सरकारों की ओर से परिगणित जातियों के छात्रों के वास्ते अनेक सुविधाएँ दी गई हैं। लेकिन बहुत-से राज्यों ने उनको कोई विशेष सुविधा प्रदान नहीं की है। उन राज्यों में भी जहाँ ऐसी सुविधाएँ दी गई हैं, वे इतनी नहीं हैं कि परि-गणित जातियों के छात्रों की जरूरतें पूरी कर सकें। उनके लिए सामान्य होस्टलों या उनके लिए बनाये गये होस्टलों में उनके लिए काफी जगह नहीं है। किसी भी बहाने से उनके दाखिले को नहीं रोकना चाहिएँ। जहां जरूरी हो उनके लिए स्कूल-कालिजों में स्थान सुरक्षित रखने चाहिएँ। होस्टल भी उनके लिए बढ़ाने चाहिएँ। टैक्निकल शिक्षा को उत्साहित करना चाहिए, जिससे शिक्षित हो जाने पर उनमें बेरोज़गारी और बेकारी न फैले।

देहातों में हरिजनों के पास ज़मीन नहीं; वह ज़मीन भी जिसपर उनकी विपन्नता और निर्बलता के प्रतीकस्वरूप उनकी झोंपड़ी होती है, उनकी अपनी नहीं होती। वह या तो ज़मींदार की होती है या किसी बड़े किसान की। ज़मीन का मालिक उनसे ज़बर्दस्ती बेगारी लेता है और उनके कुटीर-उद्योग के तैयार माल को कम दाम पर या कहीं-कहीं तो मुफ्त ही ले लेता है।

यदि हरिजनों, शिल्पियों, और देहातों के और गरीब लोगों के मकानों के स्थान की समस्या का हल कर

दिया जाय तो बेगारी लेने की घटनाएँ भी बहुत कम हो जायें। आज हमारा ध्यान शहरों की गन्दी बस्तियों की ओर गया है, लेकिन बहुत कम लोग यह जानते हैं कि हमारे अधिकांश गाँवों में, जहाँ हरिजनों की बस्ती होती है, वह स्थिति शहरों की गन्दी बस्तियों से कहीं अधिक [illegible] होता है।

यदि किसीको पृथकता और अलगाव को कठोरता से अमल में आते हुए देखना है, निस्सन्देह यह देश के कानून के खिलाफ है—तो उसको प्रत्येक गाँव में हरिजनों की झोंपड़ियों और मुहल्लों को देखना चाहिए। देश के बहुत-से भागों में ये झोंपड़ियाँ और मुहल्ले गाँव की मुख्य बस्ती से काफी दूरी पर होते हैं। पिछले कुछ वर्षों में हरिजन बस्तियों के आसपास की जमीन जोत ली गई है। और [illegible] और गैरमजरूआ आम, शामलात देह तथा गाँव के पंचायती स्थान भी बन्दोबस्त कर दिये गये हैं और उनको जोत दिया गया है। हरिजन बस्तियों को जानेवाले मार्ग भी जोत लिये गये हैं और रास्ते-तक बन्द कर दिये गये हैं। फलतः आबादी बढ़ने पर उनको बस्ती के विस्तार को कोई जगह नहीं रही है। घर बनाने के वास्ते और ज़मीन पाने की उनकी सब कोशिशें बेकार होगई हैं। उन ज़मीनों के मालिक यह नहीं चाहते कि परिगणित जातियों के लोगों के साथ ज़मीन बंदोबस्त की जाये, क्योंकि उनको भय है कि यदि उनका ज़मीन पर हक होगया तो फिर उन लोगों को दबाकर नहीं रखा जा सकेगा और बेगार नहीं ली जा सकेगी। इसका नतीजा यह हुआ कि एक हरिजन परिवार के सभी व्यक्ति—स्त्री, पुरुष, बच्चे—पशु, ढोर, मुर्गी आदि के साथ एक छोटी कोठरी में रहने के लिए विवश होते हैं। सरकार को इस ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। पहले तो इस बात की जाँच होनी चाहिए कि किस-किस गाँव की पंचायती जमीन, शामलात देह, गैरमजरूआ आम आदि बन्दोबस्त कर दिये गये हैं और जोत लिये गये हैं। हरिजनों के और अन्य भूमिहीन वर्गों के घर देहातों में जिस ज़मीन पर बने हुए हैं उन ज़मीनों पर उनका दखीलकारी हक हो जाना चाहिए। कानून द्वारा इसकी व्यवस्था शीघ्र होनी चाहिए। मद्रास सरकार ने एक योजना स्वीकृत की है जिसके द्वारा दलित वर्ग को मकान बनाने के लिए ज़मीन मुफ्त दी जाती है। प्रत्येक परिवार को पानीवाली ज़मीन में ३ सैंट्स (करीब १५० वर्गगज) और सूखी ज़मीन में ५ सैंट्स (करीब २५० वर्गगज) दिया जाता है। सन् १९५० के अन्त तक लगभग ४६,००० परिवारों को घर बनाने के लिए ज़मीन दी गई। मैसूर सरकार ने भी इस प्रकार की कार्रवाई की है। अन्य प्रदेशों की सरकारों को भी ऐसा प्रबन्ध जल्द करना चाहिए।

परिगणित जातियों के अन्दर एक वर्ग ऐसा भी है जो मानता है कि उनकी वर्तमान शोचनीय हालत का मूल कारण उनका हिन्दूधर्म में होना ही है। उनका खयाल है कि ज्यों ही वे हिन्दूधर्म एवं समाज के घेरे से निकल जायेंगे त्यों ही वे अछूत न रहेंगे एवं उनकी सामाजिक और आर्थिक अयोग्यताएँ दूर हो जायेंगी। इस विचार का मैंने कभी समर्थन नहीं किया और परिगणित जातियों द्वारा सामूहिक धर्म-परिवर्तन के विचार का सदा प्रतिरोध किया है।

लौकिक लाभ के लिए अथवा कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए धर्म परिवर्तन को कमज़ोरी और कायरता का चिह्न माना जाता है। मैं आज भी ऐसा मानता हूँ कि हिन्दूधर्म के सच्चे स्वरूप के ऊपर जितने कलुषित आवरण चढ़ा दिये गये हैं उनको हटाकर हिन्दूधर्म का सुधार करके उसको अपने गौरवपूर्ण स्थान पर स्थापित किया जा सकता है। अस्पृश्यता और जातिभेद का जल्दी-से-जल्दी अन्त होना चाहिए। ऐसी बातों में राज्य की सहायता

क़ानून की मदद सदा आवश्यक होती है। मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूं जो यह कहते हैं कि सामाजिक सुधार के क्षेत्र में सरकार को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। समाज के अन्दर जीवन के नैतिक मानदंड को ऊंचा रखने में और समाज-सुधार के कार्यों में सदा राज्य ने हस्तक्षेप किया है और राजदंड बरता है। किसी भी स्मृति को देख लीजिए, उसमें आपको इसके बहुत प्रमाण मिल जायेंगे। जातियों और वर्णों को मिटाने में सरकार को ठोस कदम उठाना चाहिए। जाति-प्रथा को मिटाने के लिए हमें तो कमर कसकर जहाद बोल ही देना है।

देश स्वतन्त्र हुआ, इसे स्वराज्य मिल गया, लेकिन दलितों की झोंपड़ियों में आज भी अंधकार है; वहां स्वाधीनता-सूर्य की किरणों का अभीतक प्रवेश नहीं हुआ है। गरीबी और दुःखपूर्ण जीवन उनके पुराने और अभिन्न संगी हैं। अन्न-वस्त्र की दुर्लभता, महंगी और कमी के कारण उनका जीवन और अधिक कष्टमय होगया है।

आज अपने मार्ग में आई सब रुकावटों और बाधाओं को दूर करने में परिगणित जातियां भले ही समर्थ न हों, किन्तु उनकी यह असहाय अवस्था बहुत देरतक या हमेशा न रहेगी। हरेक चीज़ की एक सीमा है, हद है। जब किसी आदमी के धीरज पर बहुत भार डाला जाता है, तो वह अधीर हो जाता है और प्रायः निराश हो जाता है। निराशा में आदमी कुछ भी कर सकता है। "मरता क्या न करता" इसे नहीं भूलना चाहिए। मैं अपने उन मित्रों से निवेदन करना चाहता हूँ, जिन्होंने धार्मिक और आर्थिक क्षेत्र में निहित स्वार्थ बना लिये हैं कि वे ऐसी हालतें पैदा न करें जिनसे हरिजन निराशा की सीमा पर पहुँच जायें।

मध्यभारत और राजस्थान के कुछ भागों तथा देश के और कुछ भागों में हरिजनों पर जैसी ज्यादतियाँ हो रही हैं यदि यही हालत बनी रहने दी गई तो डर है कि सारे देश में अत्यधिक विस्फोटक स्थिति पैदा हो जायगी। यह स्थिति सर्वथा अवांछनीय है।

मैं विश्वास करता हूँ कि इस विशाल देश के प्रत्येक भाग में इन लोगों के साथ न्यायपूर्ण बर्ताव किया जायगा और समाज इस स्थिति को सुधारने का हर तरह से प्रयत्न करेगा।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि वह समय दूर नहीं, जब दलित और शोषित जातियों के लोग भी सभी क्षेत्रों में दूसरों के बराबर बन जायेंगे तथा वे देश की आर्थिक और नैतिक समृद्धि को बढ़ाने में अपना अंशदान देने में किसीसे पीछे न रहेंगे।

मध्यभारत की हरिजन-समस्या

यों तो सारे देश में हरिजन-समस्या अपनी विचित्र अवस्था में गुज़र रही है, किन्तु मध्यभारत में दिनोंदिन उसका नग्न रूप प्रकट होता जा रहा है। महात्मा गांधीके १६३२ के ऐतिहासिक उपवास के तुरन्त बाद ही हरिजन-उत्थान और अस्पृश्यता-निवारणके कार्य को संगठित करने की गरज़ से हरिजन-सेवक-संघ का देशव्यापी निर्माण किया गया था, और उसके साथ ही मध्यभारत की बिखरी हुई छोटी-मोटी कुछ रियासतों में भी इस कार्य का श्रीगणेश पूर्व ग्वालियर व इन्दौर राज्य के कुछ उत्साही सज्जनों ने कर दिया था, जिनमें सर्वश्री कु० वा० दाते, श्री व्यं० दा० पुस्तके, डॉ० मुखटनकर, डॉ० सरजूप्रसादजी, प्रो० पाटील, प्रो० बोर्दिया व प्रो० यार्दे के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

मध्यभारत में लगभग पच्चीस छोटी-मोटी रियासतें थीं, जिनकी प्रजा अंग्रेज़ी और देशी नरेशों की दोहरी गुलामी में पिसा करती थी, और हरिजन बेचारे तो अंग्रेज़ी हुकूमत, देशी राजों तथा सवर्ण समाज की तिहरी गुलामी में से गुज़र रहे थे। तत्कालीन शासन को हरिजन-कार्य जैसे शुद्ध सामाजिक कार्य में भी राजनीति की गन्ध आती थी, और उसे शक की निगाह से देखा जाता था। राजे-महाराजे तो पुराने प्रतिगामी रीति-रिवाजों के प्रभाव में थे ही, प्रजा में भी दकियानूसी संस्कार बुरी तरह घर किये हुए थे। अछूतों को मनुष्य समझना और उनके साथ मनुष्यता का बर्ताव करना यह घोर पाप माना जाता था। ऐसे वातावरण में हरिजनों के कार्य को हाथ में लेना एक भारी समस्या थी। किन्तु गांधीजी के १९३२ के ऐतिहासिक अनशन ने सारे भारत को एक छोर से दूसरे छोरतक हिला डाला। आर्यसमाज जैसी सुधारक संस्थाओं तथा गांधी-विचारधारा के कुछ रचनात्मक प्रवृत्तिवाले कार्यकर्त्ताओं के अदम्य उत्साह से आरम्भ में ग्वालियर, इन्दौर, भोपाल, रतलाम जैसी दो-चार रियासतों में हरिजनों की शिक्षा का तथा जल-कष्ट दूर करने का कार्य हाथ में लिया गया। निरन्तर प्रचार व प्रयत्नों से रियासती शासन का शिक्षा-विभाग भी दो-चार वर्षों के बाद हरिजनों की शिक्षा-व्यवस्था में दिलचस्पी लेने लगा। हरिजनों की प्रगति में इन्दौर का नाम सबसे आगे आता है। सन् १९२७ के पहले से ही वहाँ के सरकारी स्कूलों में हरिजन बालकों को प्रवेश मिलने लगा था; यद्यपि उन्हें सवर्ण बालकों से अलग बैठाया जाता था। ग्वालियर तथा अन्य राज्यों में यह स्थिति सन् १९३६ के बाद भी पैदा नहीं हो सकी थी। इन रियासतों में हरिजन बच्चों की पढ़ाई के लिए अलग से स्कूल कायम किये गये, जिनमें प्रारंभिक कक्षातक हरिजन विद्यार्थी मुश्किल से पढ़ पाते थे। चौथा दर्जा पास कर लेने के बाद इन रियासतों के हरिजन विद्यार्थी—चमार और बलाहियों को छोड़कर—मेहतर आदि सन् १९४५ तक आगे की पढ़ाई से वंचित ही रहते थे।

हरिजन स्कूलों के अध्यापक तथा अन्य कार्यकर्त्ता अधिकतर सवर्ण ही थे। इन्हें जनसाधारण की तरफ से हरिजनों से भी अधिक कष्ट उठाने पड़ते थे। उन दिनों हरिजन-कार्य करना सवर्ण समाज की निगाह में धर्म नष्ट करने के समान एक अक्षम्य अपराध गिना जाता था। सवर्ण कार्यकर्त्ता को 'भंगी' कहकर पुकारा जाता था। उसका हरतरह से सामाजिक बहिष्कार किया जाता, उसपर गोबर, कीचड़ व पत्थर फेंके जाते, रहने को उसे मकान नहीं दिया जाता, और मित्रमंडली तक उसका साथ छोड़ देती थी। अजनबी प्राणी की तरह शहर में से गुज़रते समय सवर्ण लोग उसे देखते ही शोरगुल मचाने लगते और हरतरह से उसे तिरस्कृत किया जाता था। दूसरे, जब सवर्ण कार्यकर्त्ता हरिजनों के घर पर जाते, उनसे मिलते और अपनापन बतलाते थे, तो उन्हें यह सब अच्छा नहीं लगता था। उन्हें ऐसा लगता था मानों वे उनकी आज़ादी में बाधा डालने आते हैं। न पढ़ने में उन्हें किसी तरह का रस आता था, न कार्यकर्त्ताओं के साथ सम्पर्क बढ़ाने में ही उनका मन गवाही देता था। भयभीत-से रहते थे वे, पर फिर भी अपने घर आये हुए व्यक्ति के प्रति उनके दिल में आदर-भाव होता था। प्रेम से उनकी बातें सुनते व समझने की कोशिश भी कभी-कभी करते थे, किन्तु अपना पिंड उनसे जल्दी-से-जल्दी छुड़ा लेना चाहते थे। ऐसी अवस्था में उनमें जागृति पैदा करना, उन्हें उनकी मनुष्यता का भान कराना कार्यकर्त्ताओं के सामने एक जटिल प्रश्न था। आर्थिक प्रश्न तो ऐसे कार्यों में सबसे पहले उपस्थित होता था। पहले तो ऐसे कार्यों

में किसीका विश्वास ही नहीं होता था। कहीं किसी कोने में कोई सहानुभूति रखनेवाला व्यक्ति निकल भी आया तो वह समाज के अन्य लोगों से डरकर कुछ मदद देते हुए घबरा जाता था। फिरभी कुछ कार्यकर्त्ता साहस के साथ इस काम को आगे बढ़ाने में लगे रहते थे। मध्यभारत में हरिजन-कार्य के लिए धन एकत्रित करने में श्रीयुक्त पुस्तकेजी का नाम उल्लेखनीय है। हरिजन-कार्य के लिए धन जुटाने में उन्होंने अपने प्रभाव और उत्साह का काफी उपयोग किया। शासनाधिकारियों और ऊंचे तथा नीचे स्तर के सवर्ण समाज में हरिजन-कार्य के लिए अनुकूल वातावरण बनाने में भी वे हमेशा आगे रहे हैं।

फिरभी कार्य इतना बड़ा है कि उसके मुकाबले में एक-दो व्यक्तियों के प्रयत्न बहुत नाकाफी मालूम देते हैं। सरकारी तथा गैरसरकारी अन्य संस्थाओं के कार्यकर्त्ता कुछ-न-कुछ दूसरा काम करके अपनी अर्थ-समस्या को किसी हदतक सुलझा लिया करते थे, किन्तु हरिजन-कार्य करनेवाले के सामने ऐसी सुविधा मिलने की कोई भी आशा नहीं थी। उसे तो अपनी मामूली तनख्वाह में ही गृहस्थी का भार ढोना पड़ता था। दस से पन्द्रह रुपयेतक की तनख्वाह ही उसके लिए एक वरदान थी। अर्थार्जन के अन्य सब मार्ग उसके लिए बन्द थे। हमेशा गांधीजी के लेखों और व्याख्यानों की प्रेरणा से वह जनता द्वारा दिये गये पैसे को फूंक-फूंककर खर्च करना चाहता था। चाहे भूखों ही मर जाये, पर अपनी निश्चित आय और कम-से-कम व्यय में अपनी गृहस्थी चलाकर अधिक-से-अधिक राष्ट्र के इस पवित्र कार्य को करते रहने की साध में वह कभी कमी नहीं आने देना चाहता था। अपने समाज पर लगे अस्पृश्यता के कलंक को धोने की और अपने दलित भाइयों की हीनावस्था को दूर करने की उसमें व्याकुलता थी। वह अपने निर्धारित मार्ग पर दृढ़तापूर्वक बढ़ता चला जा रहा था। कुछ कार्यकर्त्ताओं को इस कार्य में सवर्णों के हाथों बुरी तरह पिटना भी पड़ा! एकाध को तो अपने जीवन से भी हाथ धोना पड़ा। हरिजनों को भी, जैसे-जैसे ऊपर उठने की भावना जागृत होने लगी, भारी-भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। झमरा, धा डगा नाम की कुप्रथा को दूर करते समय कुछ हरिजनों को भी मौत के घाट उतरना पड़ा। यह सब कुछ होते हुए भी हरिजन-कार्य जैसे-तैसे आगे बढ़ता ही गया और इस कार्य में दिलचस्पी लेनेवाले लोगों की संख्या भी बढ़ती गई।

सन् १९३८ में इन्दौर के महाराजा ने हरिजनों को सवर्णों के समान ही तमाम नागरिक अधिकार देने की घोषणा करदी, और उसे कार्य-रूप में परिणत करने के लिए आरम्भ में पांच हज़ार रुपये की, जो बाद में बीस हज़ार रुपयेतक पहुँच गई थी, सहायता देकर केन्द्रीय हरिजन-उत्थान समिति का निर्माण किया। उसके मार्ग-दर्शन में ज़िलों और परगनों में अर्ध सरकारी समितियाँ संगठित की गईं। हरिजन उत्थान-समिति का सारा कार्य प्रो० यार्देजी ने अवैतनिक रूप से लगभग दस वर्षतक किया। महाराजा होल्कर ने अपनी व्यक्तिगत आय में से प्रतिवर्ष एक लाख रुपये से इन्दौर शहर में लगभग तीन लाख रुपयों की लागत की तीन सुन्दर हरिजन-बस्तियाँ भी इन्हीं दिनों तैयार करवाकर उनमें हरिजनों के लगभग दो सौ परिवारों को बसाने की व्यवस्था करादी। सन् १९४४ तक राज्य के लगभग सभी सरकारी मन्दिर हरिजनों के लिए दर्शनार्थ खुलवा दिये। बहुत-से ग्रामों के सार्वजनिक कुएँ, घाट, धर्मशालाएँ, शहर के कई होटल, नाइयों और धोबियों की दूकानें, आटा पीसने की चाकियां आदि भी हरिजनों के लिए खुलवा दी गईं। झमरा आदि कुरीतियों को बन्द कराने के लिए सख्ती से कार्रवाइयाँ की गईं। चाँदी

के जेवर और क़ीमती वस्त्रों के पहनने पर जो अनुचित रुकावटें थीं, वे अधिकांश जगहों पर दूर करवा दी गईं। कुछ स्थानों पर भूमिहीन हरिजनों को खेती के लिए ज़मीन भी दिलाई गई। ग्राम-पंचायतों में एक-एक सदस्य हरिजनों में से भी नियुक्त किया गया। कुछ गण्य-मान्य सज्जन अपने-अपने घर पर हरिजनों को आमंत्रित करके उनके साथ जलपान भी करने लगे। कुछ स्थानों पर केन्द्रीय हरिजन-उत्थान समिति के सहयोग से हरिजनों के लिए कताई, नाई, लकड़ी व सींग के कंघे तथा बटन बनाना, तेलघानी, हाथ से काग़ज़ बनाने का काम, बाँस व खजूर के टट्टे, टोकरियाँ बनाना आदि दस्तकारियों को प्रोत्साहन देकर हरिजनों की कुछ हदतक आर्थिक मदद भी पहुँचाई गई।

देवास छोटी पाँती के महाराजा खासे साहब पवाँर ने भी इस कार्य में काफ़ी हाथ बँटाया। वे स्वयं हरिजनों के कष्ट-निवारण के लिए हमेशा तत्पर दिखाई दिये, उनके द्वारा प्रतिवर्ष किया जानेवाला हरिजनों और सवर्णों का सम्मिलित प्रीतिभोज तो भुलाया नहीं जा सकता। इस प्रीति-भोज में देवास महाराजा स्वयं भी हरसाल शरीक होते थे। हरिजन-उत्थान-कार्य के लिए देवास में भी एक हरिजन-उत्थान-समिति का निर्माण किया गया। देवास राज्य की शिक्षण-संस्थाएँ तो पहले से ही हरिजनों के लिए खोल दी गई थीं।

बड़वानी राज्य के नाबालिग़ शासन के प्रमुख शासक सर हरिलाल गोसालिया ने भी अपने शासन-काल में हरिजनों के लिए राजकीय तमाम शिक्षण-शालाएँ खोल दी थीं। कुछ हरिजनों को सरकारी उच्च नौकरियों में भी प्रवेश दे दिया था। सार्वजनिक कुएँ भी खुले घोषित कर दिये थे, किन्तु उनका उपयोग हरिजनों को करने नहीं दिया जाता था। एक-दो स्थानों पर हरिजनों का जलकष्ट दूर करने में और उनसे कुओं का उपयोग कराने में सवर्ण कार्यकर्त्ताओं और हरिजनों को भी अन्य रूढ़िग्रस्त लोगों के द्वारा कराये गये झगड़ों का शिकार होना पड़ा था।

सन् १९४० में पूज्य ठक्कर बापा, श्री पुस्तकेजी, दातेजी, यार्देजी आदि के सत्प्रयत्नों से डॉ० एस.एच. पण्डित के सभापतित्व में मध्यभारत के हरिजन-सेवक-संघ का संगठन किया गया। इस संघ ने मध्यभारत, बुन्देलखण्ड व बाघेलखंड की कई रियासतों में ज़िला-हरिजन-सेवक समितियाँ संघटित कीं। सन् १९४३ में महाराजा ग्वालियार ने भी इन्दौर की जैसी ही हरिजन-उत्थानसम्बन्धी राजकीय घोषणा करदी। घोषणा के तुरन्त बाद ही उज्जैन का सुप्रसिद्ध गोपाल-मन्दिर हरिजनों के लिए खोल दिया गया। कई स्थानों पर हरिजनों के लिए सार्वजनिक कुएँ भी खुलवा दिये गये। शिक्षण-संस्थाएँ भी खुल गईं। कुछ स्थानों पर स्वयं महाराजा सिंधिया अपने साथ हरिजनों को लेकर मन्दिरों में दर्शनार्थ गये। शनैः शनैः रीवां, नागौद, ओरछा, रतलाम, जावरा, धार, भोपाल आदि रियासतों में भी कुछ ऐसी ही घोषणाएँ वहाँ के शासकों ने जारी करदीं। रतलाम और जावरा में तो एक तरह से क़ानून ही बना दिया और कुछ हज़ार रुपये प्रतिवर्ष इस कार्य के लिए मंजूर करके एक-एक समिति भी बनादी।

भारत के स्वतंत्र होने के बाद इन्दौर राज्य की प्रजातांत्रिक सरकार ने हरिजन-अयोग्यता-निवारण क़ानून बना दिया। ग्वालियर में भी उसकी पुनरावृत्ति की गई। सन् १९४८ में मध्यभारत राज्य-संघ का निर्माण होने पर मध्यभारत की लगभग २२ रियासतें इस राज्य संघ में सम्मिलित की गईं। इसी समय इस बृहद् राज्य-संघ में हरिजन व आदिवासी उत्थान-कार्य के लिए शासन की तरफ़ से प्रो० यार्दे के संचालकत्व में एक कल्याण-विभाग क़ायम किया गया। उसके द्वारा सारे मध्यभारत में यह कार्य

सरकारी रूप से संगठित किया जाने लगा। मध्यभारत राज्य-संघ ने भी हरिजन-अयोग्यता-निवारण क़ानून पास करा लिया। प्रो० यार्दे व श्री० कृ० बा० दाते ने सारे मध्यभारत में घूम-घूमकर हरिजन-कार्य को प्रगति दी। स्थान-स्थान पर मंदिर, कुएं, घाट, तालाब, होटल आदि बिना अधिक विरोध और असंतोष पैदा किये ही उन्होंने खुलवा दिये। यह कार्य सुसंगठित होकर आगे बढ़ ही रहा था कि अचानक इस पृथक् कल्याण-विभाग को, दस महीने बाद, एक छोटे-से कम प्रभावकारी विभाग में परिणत कर दिया गया। अधिकार न रखनेवाले कल्याण-विभाग के प्रति बहुत कम महत्त्व रह गया। इन्हीं दिनों खिलचीपुर कांड भी घटित हुआ। खिलचीपुर में हरिजनों को जल-कष्ट था। उसे दूर करने के लिए हरिजन-सेवक-संघ के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता श्रीजानकीनाथ रैना व खादी-संघ के कार्यकर्त्ता मेहताजी ने खिलचीपुर की नदी में खुदे हुए बहुत से कुओं में से एक कुएँ पर हरिजनों के हाथ से पानी भरवा दिया। इसपर वहां के सवर्णों ने उनकी खूब पिटाई की। १० अप्रैल १९५० से लगातार एक महीनेतक अस्पृश्यता-निवारण का शांत, अहिंसक तथा वैध प्रचार हरिजन-सेवक-संघ और सरकारी हरिजन-उत्थान विभाग के कार्यकर्त्ताओं ने किया, किन्तु यह कार्य भी शासन की उपेक्षा-वृत्ति के कारण वहां की सवर्ण जनता ने नहीं करने दिया।

स्थिति के बिगड़ने पर पुलिस के संरक्षण में सब कार्यकर्त्ताओं को खिलचीपुर से हटा दिया गया। इस कांड के बाद इस विभाग को विकास-कमिश्नरी में विलीन करके उसका अस्तित्व ही खत्म कर दिया गया। परिणाम यह हुआ कि प्रजा और सरकारी कर्मचारियों की दृष्टि में यह कार्य महत्त्वहीन हो गया। लोगों की यह धारणा बनने लगी कि शासन स्वयं ही इस कार्य के प्रति उदासीन है।

दुर्भाग्य से इधर कुछ प्रतिगामी शक्तियों के सिर उठाने के कारण हरिजनों को अनेक मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है। आम चुनावों में हरिजनों ने कांग्रेस के पक्ष में वोट देकर उसके हाथ में शासन की बागडोर थमाने में अपना हिस्सा अदा किया। उसका परिणाम भी हरिजनों के हक में उलटा ही हुआ। अप्रगतिशील, अवसरवादी राजे-महाराजे, जागीरदार, ज़मींदार और निहित स्वार्थवाले लोग, हरिजनों के वोट उनके अपने उम्मीदवारों को न मिलने के कारण, उनसे असंतुष्ट हो गये हैं और आये दिन हरिजनों पर तरह-तरह के ज़ुल्म करते रहते हैं। मालवे के अधिकांश ग्रामों में इस तरह की घटनाएँ प्रायः घट रही हैं। पिछले दिनों भिंड और मुरैना में क़रीब २० चमारों को गोली से उड़ा दिया गया। यह देखकर थोड़ा सा संतोष होता है कि मध्यभारत-सरकार अब अपने कर्त्तव्य के प्रति कुछ-कुछ जागृति हुई है और उसने हरिजनों की सुरक्षा की खातिर इधर कुछ सख्ती से क़दम उठाया है। पर हरिजनों के कष्टों और सामाजिक निर्योग्यताओं को दूर करने का कारगर तरीक़ा तो यही है कि सरकार तुरन्त पहले के जैसा पृथक् कल्याण-विभाग क़ायम करदे और उसका संचालन किसी ऐसे सुयोग्य व्यक्ति के हाथों में सौंपदे जिसे हरिजन-कार्य करने का अधिकार और अनुभव हो।

इन्दौर | मूलचन्द उपाध्याय

मेरे प्रवास

पिलानी : (राजस्थान)—संघ के अध्यक्ष श्री घनश्यामदासजी बिड़ला के साथ गया, और वहाँ १ व २ सितंबर को विभिन्न शिक्षण-संस्थाएँ देखीं। पाया कि सामान्यतः हरिजन छात्रों के साथ कोई भेद-भाव नहीं बरता जाता है।

ग्वालियर—४ सितंबर को श्री कृ० वा० दाते के साथ पहावली ग्राम गया। वहाँ उन ६ चमारों के परिवार के लोगों से मिला, जो गूजर ठाकुरों के हाथ से मारे गये थे। आग लगा दिये गये उनके झोंपड़े भी देखे। ग्वालियर आकर स्थानीय कार्यकर्त्ताओं के साथ चर्चा की।

इलाहाबाद-बनारस—१३ सितंबर को इलाहाबाद के हरिजन-आश्रम का निरीक्षण किया। नित्य नियमपूर्वक सूत-कताई की व्यवस्था देखकर संतोष हुआ। चमड़े व लकड़ी का भी काम देखा। कार्यकर्त्ताओं के साथ आश्रम के संबंध में बात की।

बनारस एक दिन के लिए एक निजी काम से गया।

ग्वालियर—२२ सितंबर को पहावली ग्राम तथा अन्य स्थानों पर हरिजनों के लूटे व क़त्ल किये जाने के बारे में श्री दातेजी के साथ मध्यभारत-गवर्न्मेंण्ट के मुख्य मंत्री श्रीमिश्रीलाल गंगवाल तथा गृहमंत्री श्रीमनोहरलाल मेहता से मिला, और विस्तार से उनके साथ चर्चा की।

स्थानीय कार्यकर्त्ताओं के एक आयोजन में गया, और हरिजन-समस्या पर वहाँ बोला।

श्री दाते के साथ बैठकर संघ द्वारा आतंकित क्षेत्रों में प्रचार-कार्य करने की योजना तैयार की।

जयपुर—२६ सितंबर को जयपुर में राजस्थान-हरिजन-सेवक-संघ की बैठक में सम्मिलित हुआ। प्रान्तीय संघ के अध्यक्ष श्री भागीरथ कानोडिया और मंत्री श्री भवंरलाल भदादा के साथ बजट पर चर्चा की। सदस्यों व कार्यकर्त्ताओं के साथ हरिजन-समस्या पर भी चर्चा की।

मद्रास—१२ अक्तूबर से १६ अक्तूबरतक संघ द्वारा नियुक्त एक विशेष उपसमिति के साथ ठहरा। यह उपसमिति मद्रास नगर के ठक्कर बापा विद्यालय का निरीक्षण तथा वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन करने के लिए भेजी गई थी। सर्वश्री प्रो० यार्ड, परीक्षितलाल मजमुदार, श्यामलाल, के० एस० शिवम् तथा मैं इस समिति में थे।

ठक्कर बापा विद्यालय का हमने निरीक्षण किया, और हिसाब-किताब भी जाँचा। श्री भाष्यम् आयंगार तथा विद्यालय के कुछ ट्रस्टियों व प्रबन्ध-समिति के सदस्यों से हम मिले और उनके साथ चर्चा की।

सर्वेंट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के दफ़तर में स्थानीय हरिजन-सेवक-संघ ने एक दिन जलपान का आयोजन किया, जिसमें हम लोग स्थानीय कार्यकर्त्ताओं से मिले, और उनके साथ बात की।

हरिजन-कन्या-छात्रालय देखा। व्यवस्था और स्थान की स्वच्छता देखकर संतोष हुआ। बालिकाओं की प्रार्थना-सभा में श्रीपरीक्षितलाल मजमुदार तथा मैंने संक्षिप्त भाषण किये।

आन्ध्र-महिला-सभा द्वारा संचालित शिक्षण-संस्था को भी हमने देखा, और उसका नर्सिंग होम भी। माध्यम अँग्रेज़ी है; उद्योग-शिक्षण की सुन्दर व्यवस्था है।

हरिजन-कल्याण-विभाग के मंत्री श्रीकृष्णराव से भी हम लोग मिले। हमारे साथ संघटित कार्य के संचालक स्वामी आनन्दतीर्थ भी थे। मंत्री महोदय

के साथ सामान्य हरिजन-समस्या पर चर्चा होने के बाद आन्ध्र की कार्य-शिथिलता के संबंध में भी बात हुई। उन्होंने आन्ध्र में संघ के कार्य का पुनर्संगठन करने के लिए हमसे कहा, और कुछ व्यक्तियों के नाम भी सुझाये।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा द्वारा किये गये स्वागत-आयोजन में राष्ट्रभाषा और संत-साहित्य पर मैंने अपने विचार व्यक्त किये। सभा का प्रेस और प्रकाशन-विभाग देखकर तथा श्री हरिहर शर्मा से मिलकर आनन्द हुआ।

दतिया (विन्ध्यप्रदेश)—२६-२७ अक्तूबर। ७ हरिजन-बस्तियाँ देखीं। घर व बस्तियों की गलियाँ बहुत ही स्वच्छ पाईं। बच्चों को स्कूलों में भेजने की रुचि लोगों में कम देखी। सरकार की ओर से हाल में ही स्थापित आश्रम (हरिजन-छात्रावास) को देखा। एक रात वहीं ठहरा भी। विन्ध्यप्रदेश-हरिजन-सेवक-संघ की देखरेख में यह नया आश्रम शुरू हुआ है। स्थान शहर से बाहर स्वच्छ और सुन्दर है। व्यवस्था संतोषजनक पाई।

पशु-चिकित्सालय का शिलान्यास किया। इस अवसर पर शिक्षा-मंत्री श्री महेन्द्रकुमार 'मानव' भी उपस्थित थे। उनके साथ हरिजन-कार्य के बारे में चर्चा की।

लखनऊ—२६ अक्तूबर को श्री चौधरी गिरिधारीलालजी के साथ उत्तरप्रदेश की सरकार द्वारा चल रहे हरिजन-कार्य के सम्बन्ध में बात की।

सेवाग्राम-वर्धा—३० अक्तूबर से १ नवंबरतक हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के सम्मेलन में भाग लिया।

उत्तरप्रदेश की गांधी-निधि के संचालक बाबा राघवदासजी के साथ बात की। दोहरी घाट-हरिजन-गुरुकुल के व्यवस्थापक स्वामी सत्यानन्दजी के साथ उत्तरप्रदेश के पूर्वी भाग में हरिजन-कार्य सुसंगठित करने के सम्बन्ध में चर्चा की।

विदर्भ प्रान्तीय गांधी-निधि के संचालक डा० मारे से हरिजन-कार्य के पुनर्संगठन के विषय में परामर्श किया।

नागपुर—२ नवंबर को श्री तात्याजी वझलवार, काका साहब बरवे व श्री वखिकर के साथ गवर्नमेंण्ट-चोखामेला-होस्टल देखा। यह जानकर आश्चर्य हुआ कि दूसरे राज्यों की अपेक्षा यहाँ छात्रवृत्ति कम मिलती है।

कांग्रेस-ऑफिस में स्थानीय हरिजन-कार्यकर्त्ताओं के साथ हरिजन-कार्य पर मैंने तथा काका साहब बरवे ने चर्चा की, और जल-पान भी।

हैदराबाद—३ नवंबर से ५ नवंबरतक। संघ के अध्यक्ष व राज्य-विधान-सभा के स्पीकर श्री काशिनाथराव वैद्य के साथ कृष्णनगर की हरिजन-बस्ती को देखा। इस बस्ती के हरिजनों में खासी जागृति देखने में आई।

श्री गौतमजी के साथ सेवा-सदन का निरीक्षण किया। गौतमजी का बालिका-विद्यालय व वाचनालय भी देखा। विद्यालय की व्यवस्था संतोषजनक पाई।

हैदराबाद से १२ मील दूर हयातनगर गाँव की रात्रि-पाठशाला का निरीक्षण किया। सुबह छोटे-छोटे बालकों को पढ़ाया जाता, और नहलाया जाता है। नाश्ता भी बच्चों को पाठशाला में देते हैं। रात्रि में प्रौढ़ों को पढ़ाया जाता है। ग्रामवासियों की सहानुभूति पाठशाला के प्रति अच्छी देखने में आई।

हयातनगर से २ मील आगे बड़ी अंबरपेठ की प्रौढ़-रात्रि-पाठशाला भी देखी। हरिजन व सवर्ण सभी यहाँ एकसाथ पढ़ते हैं। शिक्षक अभी अवैतनिक रूप से कार्य कर रहा है।

स्थानीय हरिजन-कार्यकर्त्ताओं के साथ सेवा-

सदन में हमने चर्चा की। इस चर्चा में स्वामी रामानन्दतीर्थजी भी सम्मिलित हुए थे।

हैदराबाद राज्य के मुख्य मंत्री श्री रामकृष्णराव से भी मैं मिला और उनसे अनुरोध किया कि हरिजन-सेवक-संघ को १०,०००) वार्षिक सहायता शेड्यूल्ड कास्ट्स ट्रस्ट फंड से और राज्य से भी दिलाने का कृपापूर्वक प्रयत्न करें।

वि० ह०

हरिजन-सेवक-संघ की
१६ वीं वार्षिक बैठक की
कार्यवाही

[५ अक्तूबर, १६५२]

१ केन्द्रीय बोर्ड के कुल २८ सदस्य बैठक में उपस्थित हुए। १२ सज्जन विशेष निमंत्रण पर आये थे। बोर्ड के २ सदस्य किसी-न-किसी कारण से उपस्थित नहीं हो सके।

श्री घनश्यामदास बिड़ला अपने पिता सेठ श्री बलदेवदास बिड़ला के अचानक अस्वस्थ हो जाने के कारण संघ की बैठक में उपस्थित नहीं हो सके, उन्होंने अपनी अनिवार्य अनुपस्थिति पर अपने एक पत्र में हार्दिक खेद प्रकट किया। अतः अध्यक्ष का पद सर्वसम्मति से श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने ग्रहण किया।

२ उपस्थित जनों ने निम्नलिखित शोक-प्रस्ताव खड़े होकर पारित किये :

(क) हरिजन-सेवक-संघ की यह बैठक गांधी सिद्धांतों के स्वतंत्र प्रतिपादक, ऊँचे भाष्यकार, महान् तत्त्वशोधक तथा सेवा-परायण कर्मयोगी श्री किशोरलाल मशरूवाला के देहावसान पर गहरा शोक प्रकट करती है और प्रार्थनापूर्वक उनकी पुण्यस्मृति में अपनी श्रद्धांजलि चढ़ाती है।

(ख) हरिजन-सेवक-संघ की यह बैठक रायपुर (महाकोशल) की हरिजन-सेवक-समिति के अध्यक्ष श्री शिवदास डागा की मृत्यु पर हार्दिक शोक तथा उनके परिवार के प्रति समवेदना प्रकट करती है।

३ संघ के कार्यवाहक मंत्री श्री शिनय ने उपस्थित सदस्यों तथा विशेष रूप से आमन्त्रित व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय कराया।

४ संघ की उपाध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने सब आगन्तुक जनों का स्वागत किया और अपने प्रारम्भिक भाषण में अस्पृश्यता-निवारण-कार्य को अधिक सुसंगठित रूप में तथा अधिक वेग से चलाने का अनुरोध किया।

५ प्रधान मन्त्री श्री वियोगी हरि ने संघ का १६ वाँ वार्षिक कार्य विवरण प्रस्तुत किया, जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

६ अचल सम्पत्ति की तफ़सीलवार सूची

निश्चय हुआ कि प्रधान कार्यालय की ओर से विभिन्न प्रान्तों में संघ की अचल सम्पत्ति की, जो संघ या संघ से सम्बन्धित व्यक्तियों के निजी नाम पर दर्ज हो, विगतवार सूची शीघ्र तैयार कराई जाये और आवश्यकतानुसार सुयोग्य इन्जीनियर या ओवरसीयर और क़ानूनदां व्यक्तियों की भी सहायता ली जाये।

७ हरिजनों, खासकर बुनकरों की बढ़ती हुई बेकारी

हरिजनों, खासकर बुनकरों की बढ़ती हुई बेकारी पर विचार-विनिमय के फलस्वरूप निश्चय हुआ कि इन छह व्यक्तियों की एक उपसमिति बना दी जाये, जो चर्चा के सभी पहलुओं को ध्यान में रखकर इस सम्बन्ध का एक प्रस्ताव तैयार करके पेश करे :

१ श्रीमती रामेश्वरी नेहरू
२ श्री भागीरथ कानोड़िया
३ श्री गोपालस्वामी
४ श्री परीक्षितलाल मजमुदार
५ श्री प्रियरंजन सेन
६ श्री मोहनलाल

८ अस्पृश्यता-निवारणसबंधी संघटित कार्य

तामिलनाड, महाराष्ट्र तथा मध्यभारत-राजस्थान में संघटित कार्य का विवरण संचालकों तथा सेवकों द्वारा प्रस्तुत किया गया। साथ ही, इस महत्त्वपूर्ण कार्य के मार्ग में आनेवाली बाधाओं तथा अपने अनुभवों को भी उन्होंने केन्द्रीय बोर्ड के सम्मुख रखा और इसपर खासी अच्छी चर्चा हुई।

चर्चा के फलस्वरूप, केन्द्रीय बोर्ड इस निश्चय पर पहुँचा कि अस्पृश्यता-निवारण तथा सामाजिक निर्योग्यता-निवारण के कार्य को व्यापक रूप में तथा अधिक वेग के साथ चलाया जाये, और इस संघटित कार्य की प्रगति का विवरण संघ की वार्षिक रिपोर्ट में अलग से दिया जाया करे।

९ हरिजनों, खासकर बुनकरों की बढ़ती हुई बेकारी के संबंध में बोर्ड द्वारा नियुक्त उपसमिति ने नीचेलिखा प्रस्ताव तैयार किया, जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ :

"हरिजन-सेवक-संघ का केन्द्रीय बोर्ड पिछड़ी हुई और हरिजन जातियों खासकर बुनकरों की, जिनकी खासी अच्छी संख्या है, तेज़ी से बढ़ती हुई बेकारी पर गहरी चिन्ता प्रकट करता है। भय है कि इस बेकारी से तो हमारी सारी सामाजिक व्यवस्था ही खतरे में पड़ सकती है। इसलिए संघ अपनी तमाम प्रादेशिक शाखाओं को आदेश देता है कि वे अपने-अपने प्रदेशों में बुनकरों की अवस्था की जाँच करें और व्यावहारिक उपाय भी सुझायें। उस बीच में संघ भारत-सरकार से अनुरोध करता है कि :

(१) अपनी नागरिक और सैनिक दोनों प्रकार की ज़रूरतों के लिए, मिलों के बने कपड़े की बजाय, सारे अथवा कम-से-कम अधिकांश कपड़े की खरीद में वह खादी और हाथबुने कपड़े को तरजीह दे ;

(२) गृह-उद्योगों के हक़ में ऐसा वातावरण तैयार करे, जिससे कि सभी सरकारी कर्मचारी उन उद्योगों की ओर आकृष्ट होने लगें ;

(३) बुनकरों को उचित आर्थिक पूरक सहायता दे, जिससे कि वे अपने हाथबुने कपड़े को मिलों की प्रतिस्पर्धा में बेच सकें ;

(४) मिलों में तैयार सूत का पर्याप्त अंश बुनकरों को उचित मूल्य पर बेचने के लिए मिलों को बाधित करे ;

(५) हरेक प्रदेश की आवश्यकता के अनुसार अमुक प्रकार का कपड़ा तैयार करने का मिलों पर प्रतिबन्ध लगावे और इस प्रकार हाथ-कर्घा के उद्योग को प्रोत्साहन दे ; और

(६) देहाती बुनकरों को रोज़गार देने के लिए अन्य आवश्यक साधन उपलब्ध करे।

संघ अपने पिछले वर्ष के इस निश्चय को पुनः दोहराता है कि सरकार कुटीर-चर्मोद्योग को हर प्रकार से प्रोत्साहन दे।"

प्रस्तावक : श्री प्रियरंजन सेन
अनुमोदक : श्री परीक्षितलाल मजमुदार

[मध्यभारत में हरिजनों की दुरवस्था पर केन्द्रीय बोर्ड ने जो वक्तव्य प्रसारित किया, वह पृष्ठ (९) पर दिया गया है। सं०]

[७ अक्तूबर १९५२]

११ हरिजनों की भूमिहीनता की समस्या

हरिजनों की भूमिहीनता तथा ज़मींदारी और जागीरदारी-उन्मूलन से सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नों पर विस्तार से चर्चा हुई, जिसके फलस्वरूप ये दो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए:

(क) "जिन राज्यों में ज़मींदारी व जागीरदारी-उन्मूलन कानून पास हो गये हैं अथवा होनेवाले हैं, उन राज्यों के संघों के प्रतिनिधियों ने हरिजन-सेवक-संघ का ध्यान इस बात पर आकृष्ट किया है कि ज़मींदार और जागीरदार अपने बटाई के या शिकमी काश्तकारों को, जिनमें हरिजन काफी संख्या में हैं, सभी प्रकार के उचित व अनुचित तरीकों से बेदखल कर रहे हैं, जिससे कि त्रास और अरक्षा की स्थिति पैदा हो रही है। इसलिए हरिजन-सेवक-संघ सभी राज्यों की सरकारों से अनुरोध करता है कि वे मौजूदा कानून में इस प्रकार का आवश्यक संशोधन करदें, अथवा परिस्थति के अनुसार ऐसे अन्तरिम कानून बनादें, जिससे हरिजन बटाई या शिकमी काश्तकारों को मिलकियत के हक़ उस ज़मीन पर मिल जायें, जिसपर कि वे कम-से-कम गत एक साल से काश्त कर रहे हों, और इस प्रकार उनको ज़मींदारों द्वारा की जानेवाली बेदखली के भय से बचा लिया जाये।"

प्रस्तावक : श्री कृ० वा० दाते

अनुमोदक : स्वामी आनन्दतीर्थ

(ख) "हरिजन-सेवक-संघ के केन्द्रीय बोर्ड को यह जानकर गहरी चिन्ता हुई कि बिहार राज्य के मुसहरों को उनके रहने की और दूसरी ज़मीनों से बेदखल किया जा रहा है, जो ज़मीन बटाई या उल्फी ठेका के बतौर १२ साल या उससे अधिक समय से उनके कब्ज़े में रही है। उनकी अज्ञानता और लाचारी से लाभ उठकर ज़मींदार उनकी काश्त की ज़मीनतक से उन्हें वंचित कर रहे हैं।

हरिजन-सेवक-संघ को लगता है कि अगर बेदखली और ज़मीन से उन्हें वंचित करना इसी प्रकार जारी रहने दिया गया, तो बिहार में किसानों की स्थिति भयावह हो जायेगी, जिससे कि सारे राज्य की कृषि-व्यवस्था बेकाबू हो जाने का अन्देशा है। इसलिए संघ का आग्रह है कि बिहार-सरकार शीघ्र ही सभी प्रकार के उचित क़दम उठाये, जिनमें गश्ती अदालतों का क़ायम करना भी शामिल हो, जिससे कि मुसहर अपने रहने की तथा खेती की ज़मीन की मालकियत को फिर से हासिल करके उसपर अपना अधिकार रख सकें।"

प्रस्तावक : प्रो० बलदेव नारायण

अनुमोदक : प्रो० आर० के० यार्दे

१२ हरिजन-सेवक-संघ का केन्द्रीय बोर्ड भारत-सरकार का ध्यान भारतीय संविधान के ३४० वें अनुच्छेद की ओर आकृष्ट करते हुए, अनुरोध करता है कि बेकवर्ड क्लासेज़ कमीशन को वह शीघ्र नियुक्त करे, और सरकार से प्रार्थना करता है कि उक्त कमीशन में हरिजन-सेवक-संघ के ऐसे कार्यकर्त्ताओं को ले, जिन्होंने हरिजन-कार्य के लिए अपने जीवन का एक बड़ा भाग और अपनी शक्ति को लगाया है।

प्रस्तावक: श्री आर० के० यार्दे

अनुमोदक: स्वामी आनन्दतीर्थ

१३ नीचेलिखा प्रस्ताव लाला मोहनलाल, श्री आर० के० यार्दे तथा श्री अवधबिहारी लाल की उपसमिति द्वारा पेश किया गया और स्वीकृत हुआ:

"हरिजनों को सामाजिक न्याय दिलाने के लिए गत २० वर्ष से व्यापक और संगठित कार्य सारे देश में चलाने के अनन्तर हरिजन-सेवक-संघ इस परिणाम पर आया है कि जबतक गाँवों में, जहां वे अधिकतर रहते हैं, उनका आर्थिक स्तर ऊँचा नहीं किया जाता तबतक उनकी सामाजिक अवस्था में कोई उल्लेखनीय सुधार होना शक्य नहीं है।

सारे ही देश में हरिजनों की आर्थिक अवस्था आज अत्यन्त शोचनीय है। यद्यपि अधिकांश हरिजनों का मुख्य धन्धा खेती है, फिर भी ज़मीन पर उनकी मालिकी नहीं है। देश के कुछ भागों में तो उनके अपने घर भी नहीं, अर्थात् जिस ज़मीन पर घर

बने हुए हैं वह उनकी अपनी नहीं है। इस स्थिति ने उनको लाचार और अनेक तरह के ज़ुल्मों का शिकार बना दिया है, यहांतक कि ज़रा-ज़रा-से कारणों को लेकर उन्हें बेदखल कर दिया जाता है। इसलिए संघ का केन्द्रीय बोर्ड तमाम राज्य-सरकारों से अनुरोध करता है कि:

(१) जिस ज़मीन पर उनके घर हैं, या जहाँ पर वे घर बनायें उस ज़मीन की मालिकी का हक़ उनको दे दें;

(२) गाँवों की शामिलात ज़मीन के उपयोग करने का हक़ उन्हें दें,

(३) हरेक हरिजन परिवार को ज़मीन का एक टुकड़ा उनके घर के नज़दीक में दें, जिस-पर कि वे साग-भाजी और चारा उगा सकें।"

१४ हरिजन-सेवक-संघ के केन्द्रीय बोर्ड का यह मत है कि भारतीय संविधान के अनुसार जो मौलिक अधिकार हरिजनों को दिये गये हैं और उनको कार्यान्वित करने के लिए विभिन्न राज्यों में जो क़ानून बनाये गये हैं, वे एकसरीखे नहीं हैं और उनमें अनेक त्रुटियाँ भी हैं, इसलिए केन्द्रीय बोर्ड भारतीय संसद से अनुरोध करता है कि वह भारतीय संविधान में दिये अधिकारों को कार्यान्वित करने के लिए ऐसा केन्द्रीय क़ानून बनाये जिससे क़ानून का उल्लंघन करनेवालों को शीघ्र दण्ड दिया जा सके और अस्पृश्यता का जल्द-से-जल्द नाश किया जा सके। हरिजन-सेवक-संघ इस प्रकार के क़ानून का मसविदा बनाने में अपना सहयोग देने का विश्वाश दिलाता है।

प्रस्तावक : श्री आर० के० यार्दे
अनुमोदक : स्वामी आनन्दतीर्थ

१५ हरिजन-सेवक-संघ का केन्द्रीय बोर्ड आचार्य विनोबा भावे के भूमिदान यज्ञ का स्वागत करता है और संघ के सब कार्यकर्त्ताओं से अनुरोध करता है कि वे इस कार्य को सहायता दें।

प्रस्तावक : श्री टी.पी.आर. नांबसन्
अनुमोदक : स्वामी आनन्दतीर्थ

१६ हरिजन-सेवक-संघ के केन्द्रीय बोर्ड का इस बात पर ध्यान गया है कि मद्रास के 'ठक्कर बापा विद्यालय'-समिति का निर्माण उसके नियमों के अनुसार अबतक नहीं हो पाया है, इसलिए केन्द्रीय बोर्ड संघ की कार्यकारिणी समिति को अधिकार देता है कि विद्यालय समिति के नियमों के अनुसार अधिक-से-अधिक २० तक मानद (ऑनरेरी) सदस्य नामज़द करने के लिए वह शीघ्र कार्रवाई करे। इसी प्रकार सभापति व मैनेजिंग ट्रस्ट सहित ट्रस्टी बोर्ड की नियुक्ति और व्यवस्था-समिति के सदस्यों में से ६ व्यक्तियों की पसन्दगी व विद्यालय की व्यवस्था-समिति के अध्यक्ष, मंत्री और खजांची की नियुक्ति भी वह करे। और ठक्कर बापा विद्यालय समिति के विधान व नियमों के अनुसार संघ के केन्द्रीय बोर्ड पर अन्य जो भी कार्य और जवाबदारियाँ आती हों, उनके सम्बन्ध में भी कार्य-कारिणी समिति कार्रवाई करे।

१७ गांधी-स्मारक-निधि ने हरिजन-सेवक-संघ को अपनी प्रवृत्तियाँ चलाने के लिए जो सहायता दी, उसके लिए केन्द्रीय बोर्ड ने गांधी-निधि को धन्यवाद दिया और अनुरोध किया कि संघ के कार्य को अधिक विस्तार देने और अधिक वेग के साथ चलाने के लिए निधि उसकी उचित और आवश्यक माँगों के अनुसार बराबर सहायता देती रहे।

अन्त में, संघ की उपाध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने सब सदस्यों तथा विशेष रूप से आमन्त्रित व्यक्तियों को धन्यवाद दिया और अपने उपसंहारात्मक भाषण में कहा कि केन्द्रीय बोर्ड ने जो अनेक महत्त्व-पूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत किये हैं, उन्हें कार्यान्वित करने के लिए हम सबको अपनी शक्तिभर पूरा प्रयत्न करना ही चाहिए।

श्रीयुक्त पुस्तकेजी ने सबकी ओर से संघ की उपाध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू को धन्यवाद दिया।

वियोगी हरि, प्रधान मंत्री

निर्वासितों का पुनर्वास-कार्य

[अप्रैल, १९५१ से मार्च, १९५२ तक]

सन् १९४९ में भारत-सरकार के पुरर्वास-**मंत्रालय के** हरिजन-विभाग का काम हरिजन-सेवक-**संघ ने पूज्य** बापा के अदम्य उत्साह से प्रेरित होकर **अपने हाथ में** ले लिया था। इस काम को चलाने के लिए संघ ने एक अलग निर्वासित-हरिजन-पुनर्वास बोर्ड (Displaced Harijans Rehabilitation Board) श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की अध्यक्षता में संगठित किया। इस बोर्ड के मुख्य दो काम हैं—हरिजनों को काम-धन्धों में लगाना, **और** उनके लिए मकान बनवाकर देना। दिल्ली, **पूर्वी पंजाब**, गुजरात-सौराष्ट्र, बंगाल, अलवर और **श्रीगंगानगर (बीकानेर)** इन क्षेत्रों में बोर्ड ने पुनर्वास **का कार्य किया। १९५१–५२ में** केन्द्रीय सरकार ने ८५,००० रु० व्यवस्था इत्यादि के लिए मंजूर किये।

बोर्ड ने २,२२६ निर्वासित हरिजनों को अपने प्रयत्न से इस वर्ष विविध प्रकारों के काम-धन्धे दिलाये।

बम्बई-सरकार से ८७४ हरिजन कुटुम्बों को बसाने के लिए प्रतिकुटुम्ब १० एकड़ ज़मीन तथा ५,०५,४४० रुपये का तकावी कर्ज़ दिलाया।

बोर्ड ने १३०८ छोटे-छोटे घर २८,३२,५५३ रुपये की लागत से निर्वासित हरिजनों के लिए बनवाये।

इसके अलावा, बोर्ड के प्रयत्न से पंजाब व पेप्सू में १२६३ खाली घर निर्वासित हरिजनों को दिये गये।

एक दर्जन सहकारी समितियाँ भी उनके लिए **बोर्ड ने संगठित कीं, जिनके द्वारा निर्वासितों ने अपनी कुछ दूकानें चलाईं।**

अलवर में सहकारी पैमाने पर खेती कराने **का प्रयोग** भी बोर्ड ने हाथ में लिया।

[एप्रिल, १९५२ से नवंबर, १९५२ तक]

निर्वासित हरिजन-पुनर्वास बोर्ड ने **निम्नलिखित** कार्य किया :

१ मकानों में बसाना

(क) बोर्ड ने अपनी मारफ़त मकान बनवाये :—

प्रदेश	मकानों की संख्या	
किलोकड़ी (दिल्ली)	२१६	ये सब मकान १९५१-५२ में बनने शुरू हुए थे। बनकर तैयार हुए १९५२ में
कालकाजी (दिल्ली)	९६	
अजमेर	१६०	
ब्यावर	१३६	
अहमदाबाद	५००	
कुल	११०८	

(ख) बोर्ड ने मकान दिलवाये, और **उनमें** निर्वासित हरिजनों को बसाया :—

प्रदेश	मकानों की संख्या	स्थान
दिल्ली	७२	पटेलनगर
,,	८५	किलोकड़ी
,,	१५	कालकाजी
,,	८	प्लाट मुबारकपुर कोटला में
गुजरात	१०	प्लाट मेहसाणा के पास
,,	५००	ठक्कर बापा नगर
पेप्सू	४००	शुतराना और गुलहार
पंजाब	६	....
सौराष्ट्र	२५८	....
कच्छ	१	भुज
कुल	१३५५	

२ काम-धंधे दिलाना

नीचेलिखे अनुसार निर्वासित हरिजनों को काम-धन्धे दिलाये गये :—

प्रदेश	मकानों की संख्या
दिल्ली	३६१
कच्छ	१२०३
बंगाल	२
	कुल १५६६

३ कर्ज़ दिलाना

नीचेलिखे अनुसार निर्वासित हरिजनों को कर्ज़ दिलाये गये :—

प्रदेश	कुटुम्बों की संख्या	कुल कर्ज़	किस प्रकार का
दिल्ली	१२	३३५०)	पुनर्वास के लिए
पंजाब	२७५	१७७७५)	....
अलवर	३७	२८४८२)	तक़ावी
,,	६२	२७६००)	,,
कच्छ	४	१५७५)	पुनर्वास के लिए
,,	२२५	४५०००)	,,
,,	२	१०००)	तक़ावी
,,	२२	३४००)	,,
बंगाल	३३	६६००)	मकान बनाने के लिए
,,	४६	६२००)	,,
,,	१ सहकारी समिति	३०००)	औद्योगिक
पेप्सू	२१३	४१२५०)	तक़ावी
,,	१५०	४५०००)	पुनर्वास के लिए
	कुल ११११	कुल २,३३,२३२)	

४ खेतीबाड़ी में लगाना

प्रदेश	कुटुंबों की संख्या	स्थान
अलवर	३	भारखेड़ा
पेप्सू	२०७	शुतराना
,,	२५०	गुलहर
,,	४०	
गंगानगर	४२	
सौराष्ट्र	४	राजकोट
गुजरात	३१	
,,	८०	दीसा
बंगाल	४०	
	कुल ६६७	

५ सहकारी समितियाँ

प्रदेश	संख्या	किसलिए
दिल्ली	४	१ कर्ज़ प्राप्त करने के लिए १ उद्योग शुरू करने के लिए २ कल्याण-कार्य करने के लिए
गुजरात	१	भूमि-विकास के हेतु कर्ज़ प्राप्त करने के लिए
पेप्सू	१	पुनर्वास के लिए
बंगाल	१	भूमि और कर्ज़ प्राप्त करने के लिए
कच्छ	१	कर्ज़ प्राप्त करने के लिए

६ कल्याण-कार्य

प्रदेश	प्रवृत्तियाँ
दिल्ली	१ किलोकड़ी में रात्रि-पाठशाला शुरू की गई
गुजरात	१ ठक्कर बापा नगर में बालमंदिर तथा एक शाला शुरू की गई २ कुबेरनगर के उद्योग-शिक्षण-केन्द्र में हरिजनों को दाखिल कराया गया; हरेक को ३०) मासिक छात्रवृत्ति दी गई।
बंगाल	१ सरकार से २ स्कूलों को मान्यता दिलाई
कच्छ	१ भुज के टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल में एक हरिजन अध्यापक को दाखिल कराया गया।
पंजाब	१ ४ हरिजन छात्रों की फ़ीस माफ़ कराई। २ देमगंज में प्रौढ़-शिक्षण-केन्द्र खुलवाया।

३ अमृतसर में एक कताई-केन्द्र चलाया।

पेप्सू १ रोज़ ३०० बच्चों को १५ दिनतक दूध दिया गया।

२ एक बुनियादी स्कूल लड़कियों के लिए शुरू किया गया।

३ एक नर्स का इंतज़ाम बच्चों और उनकी माताओं के लिए किया गया।

७ राहत-काम

दिल्ली में रु० ६४६-१०-३ दवादारू इत्यादि पर खर्च किये गये।

अलवर में २३२० रुपये का पशुओं के लिए चारा तथा २७४३ रुपये के बैल खरीदकर दिये गये। २१६ रुपये का बीज भी दिया गया।

संबंधित समाचार

—हरिजन-सेवक-संघ की उपाध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने सितम्बर मास के अन्त में पूर्व जरायम-पेशा जातियों के लिए सेवा-कार्य का संगठन करने के उद्देश्य से पूर्वी पंजाब का दौरा किया और उनके पुनर्वास तथा किसी ग़ैरसरकारी संस्था के द्वारा उनके लिए कल्याण-कार्य करने के बारे में अपने भाषणों और वक्तव्यों में काफ़ी ज़ोर दिया।

साथ ही, श्रीमती नेहरू ने अपने दौरे में निर्वासित हरिजनों का पुनर्वास-कार्य भी देखा।

—समस्त राजस्थान में राजस्थान सरकार के आदेश से गत ४ अक्तूबर को "हरिजन-दिवस" मनाया गया। जो कार्यक्रम रखा गया था, उसमें हरिजनों और सवर्णों का एकसाथ मन्दिरों में जाकर कीर्तन करना, प्रीति-भोजन का संयुक्त आयोजन करना, हरिजनों के हाथ से सार्वजनिक कुओं पर से पानी निकलवाना और हरिजन-बस्तियों की सफ़ाई आदि कार्य शामिल थे। कितने ही स्थानों से जो हरिजन-दिवस मनाने की खबरें आई हैं, उनसे इतना तो मालूम हुआ है कि कार्यक्रम कई स्थानों पर खासा सफल रहा।

—५ अक्तूबर से ७ अक्तूबरतक हरिजन-सेवक-संघ की वार्षिक बैठकें श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की अध्यक्षता में हरिजन-निवास में हुईं, जिनमें देश के विभिन्न भागों से आये हुए २८ सदस्यों ने तथा विशेष निमन्त्रण पर १२ सज्जनों ने भाग लिया। बैठकों की कार्यवाही अन्यत्र दी गई है।

—३१ अक्तूबर व १ नवम्बर को नागपुर में श्री-जगजीवनरामजी की अध्यक्षता में भारतीय संसद एवं राज्य-विधान-सभाओं के परिगणित जातीय सदस्यों तथा कार्यकर्त्ताओं का सम्मेलन हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने किया। इस सम्मेलन ने एक महत्त्वपूर्ण आवेदन-पत्र तैयार किया।

संविधान में इस प्रकार का संशोधन करने के लिए इस आवेदन-पत्र में अनुरोध किया गया है, जिसके अनुसार संघ-सरकार राज्य-सरकारों को परिगणित जातियों के कल्याणार्थ आवश्यक योजनाएँ निर्माण करने का आदेश दे सके और उनको क्रियान्वित भी कराया जा सके।

आवेदन पत्र में हरिजनों के लिए आर्थिक न्याय, सामाजिक उद्धार, शैक्षणिक सुविधाएँ और उच्च पदों पर उनके लिए स्थान सुरक्षित करने का भी अनुरोध किया गया है। १९३८ के न्यूनतम वेतन-क़ानून को लागू करने तथा भूमि-पुनर्वितरण कमीशन स्थापित करने की भी माँग इसमें की गई है।

परिगणित जातियों की सांस्कृतिक तथा नैतिक

प्रगति के लिए आवेदन-पत्र में कहा गया है, कि सवर्ण हिन्दुओं को चाहिए, कि वे हरिजनों को संकीर्तनों व देव-पूजनों में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया करें, जिससे कि दोनों के बीच का अन्तर दूर हो जायें।

आवेदन-पत्र में एक परिगणित जातीय कमीशन की नियुक्ति की भी माँग की गई है। सरकार से यह भी अनुरोध किया गया है कि संविधान के अनुसार जो बैकवर्ड क्लासेज़ कमीशन नियुक्त किया जा रहा है, उसे सलाह देने के उद्देश्य से एक सलाहकारी-बोर्ड स्थापित किया जाये, जिसमें परिगणित जातियों व अन्य पिछड़ी जातियों के विभिन्न हितों के प्रतिनिधि भी लिये जायें।

—बिहार-सरकार ने ३०००) रु० की छात्रवृत्तियाँ ऐसे हरिजन विद्यार्थियों को देना मंजूर किया है जो बिहार राज्य में तथा बाहर भी उद्योग-शिक्षण ले रहे हैं।

—दिल्ली के म्यूनिसिपल बोर्ड ने सरकार से भंगियों के क्वार्टर बनाने के लिए ५,६०,००० रु० की अतिरिक्त माँग की है।

—मध्यभारत के उपमंत्री श्री सज्जनसिंह विशनार ने बताया है, कि राज्य सरकार मध्यभारत में हरिजनों व आदिवासियों के कल्याण-कार्य को नियमितरूप से चलाते रहने के लिए एक योजना तैयार कर रही है और उसके लिए एक अलग विभाग का संगठन शीघ्र ही किया जायेगा।

उन्होंने यह भी बताया कि चालू वर्ष में हरिजन विद्यार्थियों को १,६१,६६६ रु० और आदिवासी विद्यार्थियों को ४०,६०० रु० छात्रवृत्तियाँ, पाठ्य पुस्तकें व परीक्षा-शुल्क आदि देने के लिए मंजूर किये गये हैं। हरिजनों व आदिवासियों की बस्तियों में नये कुएँ बनवाने व पुराने कुओं की मरम्मत कराने के लिए क्रमशः ३०,००० रु० व ५०,००० रु० सरकार ने मंजूर किये हैं। हरिजनों के लिए ६५ सहकारी समितियाँ और आदिवासियों के लिए १५ समितियाँ खोली गईं।

—इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध हरिजन-आश्रम में १४ नवम्बर को स्वागत-सत्कार के उत्तर में राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने कहा, कि "यह खेद की बात है कि देश के विभिन्न भागों से अब भी हरिजनों पर होनेवाले अन्यायों के समाचार आते रहते हैं। देश से अस्पृश्यता दूर करने के लिए आज और भी अधिक साहस और योग्यता से काम करने की आवश्यकता है। गांधीजी ने जो कार्य आरम्भ किया था वह अभी पूरा नहीं हुआ।"

— २६ नवम्बर को ठक्कर बापा-जयन्ती को "हरिजन-दिवस" के रूप में मनाने का निश्चय बिहार-सरकार ने किया है।

—मध्यभारत के उत्तरी क्षेत्र में हरिजन-सेवक-संघ अपने सद्भावना-संचारक मण्डल द्वारा प्रचार-कार्य कर रहा है। प्रेम-भाव बढ़ाकर तथा अन्तर्जातीय कटुता दूर करके यह मण्डल हरिजनों में साहस पैदा कर रहा है। मुरैना ज़िले का दौरा पूरा करके अब वह भिण्ड ज़िले में प्रचार कर रहा है। उसने अनेक ग्रामों में पटेलों, ग्राम-पंचायत के सरपंचों तथा सवर्णों और हरिजनों की सामूहिक सभाएँ कीं। सैकड़ों लोगों ने हाथ उठाकर प्रतिज्ञा ली कि अत्याचारों को रोकने की वे पूरी कोशिश करेंगे तथा सरकार अत्याचारों को रोकने के लिए जो भी क़दम उठायेगी वे उसमें अपना पूरा सहयोग देंगे। मण्डल में मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री रानडे, संयोजक श्री-अवन्तिकाप्रसाद दुबे और श्री मंगलचन्द हैं। गोहद और नोनेरा में श्री यशवन्तसिंह कुशवाह ने सद्भावना-मण्डल को अपना प्रशंसनीय योग दिया। आतंकित हरिजनों में संघ के इस प्रचार-कार्य से साहस बँधता हुआ दीख रहा है।

अस्पृश्यता का प्रश्न

हरिजन-सेवक-संघ
की
त्रैमासिक मुख-पत्रिका

ह रि ज न - से वा

हरिजन-सेवक-संघ

की

त्रैमासिक मुख-पत्रिका

दूसरा वर्ष] फरवरी, १९५३ [दूसरा अंक

संपादकीय

जलकष्ट और उसका निवारण

"हरिजन-सेवा" के गतांक में हमने मन्दिर-प्रवेश के सम्बन्ध में लिखा था। किसी मन्दिर में प्रवेश न मिलने के कारण हरिजनों को कोई आर्थिक या भौतिक कष्ट नहीं होता। मन्दिर-प्रवेश का प्रश्न तो तथाकथित सवर्णों के अपने पाप का प्रायश्चित्त करने और हिन्दूधर्म पर से एक भारी कलंक मिटा देने का प्रश्न है। वह हरिजनों की ओर से रखी जानेवाली कोई आवश्यक माँग नहीं है। उनके जिस जन्म-सिद्ध अधिकार को धर्म के नाम पर सवर्ण हिन्दू छीन या दबा बैठे हैं, उसे स्वयं ही, बिना उनके माँगे, हरिजनों को दे दिया जाय, यही मन्दिर-प्रवेशाधिकार का अभिप्राय है। किन्तु जिस जटिल प्रश्न पर हम आज सवर्ण-समाज का ध्यान खींचना चाहते हैं वह ऐसा है, जो अनेक स्थानों पर हरिजनों को भारी असुविधा और असह्य कष्ट दे रहा है। प्रश्न है वह उनके जलकष्ट का।

देश के लगभग सभी भागों में ऐसे बहुत सारे नगर, क़स्बे और गाँव देखने में आते हैं, जहाँ हरिजनों को नहाने-धोने की तो बात क्या, पीने के लिए भी पानी बड़ी कठिनाई और अपमान के साथ नसीब होता है। देहातों में तो यह जलकष्ट जहाँ-तहाँ देखने में आता ही है, बहुत-से क़स्बे और शहर भी इसके अपवादरूप नहीं हैं। उनको, उनकी स्त्रियों को घण्टों, जहाँ उनकी बस्तियों में उनके अपने कुएँ नहीं होते, सार्वजनिक कुओं के नीचे घड़े लिये खड़ा रहना पड़ता है। या तो पैसे लेकर उनके घड़ों में दूर से पानी डाल दिया जाता है या कोई दयालु आदमी उन घड़ों में पानी डाल देता है। कहीं-कहीं पर गाँवों के बाहर जबतक किसी पोखरे में बरसात का पानी भरा रहता है, उससे वे पानी भरकर लाते हैं या फिर किसी नदी-नाले से। राजस्थान के किसी-किसी भाग में तो कुएँ की खेल (हौज़) से भी प्रायः उन्हें पानी लेना पड़ा है—जिस खेल से जानवर पानी पाते हैं और स्त्रियाँ गंदे कपड़े धोती हैं। जब उनकी बस्ती के प्रायः कच्चे और अधटूटे कुओं का पानी गरमी में सूख जाता है, तब तो उनका कष्ट और भी अधिक बढ़ जाता है। एक मनुष्य (!) अपनी ही तरह भूख-प्यास को महसूस करनेवाले दूसरे मनुष्य के साथ कहाँतक उपेक्षा और क्रूरता का व्यवहार कर सकता है, इसके प्रत्यक्ष प्रमाण अनेक हरिजन-बस्तियों में हमें आज देखने को मिलते हैं।

प्रश्न यह है कि इस भारी कष्ट का निवारण हो तो

कैसे ? उपाय दो हैं-(१) सभी सार्वजनिक कुओं **और अन्य** जलाशयों पर से हरिजनों को सबके समान **पानी भरने** दिया जाये, (२) उनकी बस्तियों के पास यदि **कुएँ न हों,** तो खुदवा दिये जायें, और जहाँ-जहाँ पुराने **और अधटूटे कुएँ** हों, उनकी मरम्मत करा दी जाये।

पहले हम दूसरे उपाय को लेलें। **स्पष्ट है कि पहले** उपाय पर अमल न किये जाने अथवा अमल न हो सकने पर ही--कुछ अपवाद के साथ--दूसरे उपाय पर गम्भीरता-पूर्वक विचार और अमल करना होगा, यद्यपि पहले उपाय की विफलता हमारे समाज के लिए और हमारे ही बनाये अपने देश के संविधान के लिए भी बड़ी लज्जा की बात होगी।

यह बात नहीं है कि देश के सभी भागों के सारे ही सार्वजनिक कुओं पर हरिजन नहीं चढ़ सकते। कुछ स्थानों के कुएँ कुछ तो सार्वजनिक कार्यकर्ताओं के प्रयत्न से और कुछ क़ानून के दबाव से कहीं-कहीं पर खुल गये हैं, पर यह समुद्र में बूँद के समान है। प्रश्न यह है कि उस अनुकूल समय की प्रतीक्षा आखिर कबतक की जाये कि जब सार्वजनिक कुएँ और जलाशय सबके समान हरिजनों के लिए भी खुल जायेंगे। यह कहना बहुत आसान है और कानों को अच्छा भी लगता है कि अब नये कुएँ नहीं खुदवाने चाहिएँ, ऐसा किया गया तो अस्पृश्यता सौ बरस में भी जाने की नहीं। ठीक है। पर जलकष्ट-पीड़ितों का कहना है, कि उन्हें भी स्वच्छ पानी सबके समान सुलभ होना चाहिए अर्थात् उन्हें कुएँ चाहिएँ--सर्वसाधारण के न हों तो अलग कुएँ--फिर भले वे अस्पृश्य ही बने रहें। सवर्णों की आँखें धर्मबुद्धि से या क़ानून के भय से जबतक न खुलें, तबतक जलकष्ट से पीड़ित जन-समूह अब और अधिक प्रतीक्षा आखिर कबतक करेगा ?

दुर्भाग्य से, हरिजनों की बस्तियाँ भी अक्सर शहरों और गाँवों के बाहर होती हैं। हमारे धर्म-शास्त्र ने तो उन्हें सवर्ण-बस्ती से अलग गाँव के बाहर बसाने की व्यवस्था लिख ही दी थी, म्युनिसिपल-शास्त्र ने भी अपने भंगी कर्मचारियों को बाहर बसाना ही उचित माना है। यदि शहर **या गाँव का कोई** सामान्य कुआँ खोल भी दिया गया, तो **उतने दूर पानी भरने के लिए** वे जायेंगे नहीं। तब पहले **उस भूल को सुधारना होगा,** जो उन्हें बस्ती से दूर, गाँव **के बाहर, बसाकर की गई,** अर्थात् सबके साथ किसी-न-**किसी तरह जगह निकालकर उनको फिरसे बसाना होगा। पर इस भूल का सुधारना आज असम्भव नहीं, तो महा-**कठिन तो है ही। **ऐसी हालत में, हरिजन-बस्तियों के पास अच्छे पक्के कुएँ बनवाने ही होंगे। अच्छा यह होगा कि** उनकी बस्तियों के **कुओं पर कुछ सवर्ण भी, खासकर** सुधारक, पानी भरना शुरू करदें। पर इसका यह अर्थ नहीं कि यदि वे कुएँ अच्छे मीठे पानी के हों, तो धीरे-धीरे सवर्ण लोग उनपर भी अपना अधिकार जमालें। ऐसा कहीं-कहीं पर हुआ भी है। अकोला (विदर्भ) से कोई ३-४ मील दूर उपराली नाम की एक नई बस्ती के हरिजनों के लिए एक कुआँ हाल में ही बनवाया गया था, जिसमें हरिजन-सेवक-संघ का भी रुपया लगा है। उस कुएँ पर बाद में धीरे-धीरे सवर्णों ने अपना एकाधिकार कर लिया है। हरिजनों को उनपर, उन्हींके लिए बने कुएँ पर, नहीं चढ़ने दिया जाता! सुधारक लोग जाग्रत रहेंगे, तो ऐसे दुःखद बनाव नहीं बनने पायेंगे।

मोटे तौर पर हम मान लेते हैं कि भारत के ५ लाख गाँवों की हरिजन-बस्तियों में १० लाख कुओं की ज़रूरत होगी। एक-एक गाँव में औसतन दो-दो बस्तियाँ हमने मानी हैं, ऐसी बस्तियाँ जो एक दूसरे से दूर होंगी। अच्छे-बुरे ५ लाख कुएँ पहले से ही उन बस्तियों में होंगे, यह मानकर हम चलें, तो ५ लाख कुओं की ज़रूरत तो होगी ही--उनमें भी ढाई लाख कुओं की तो तत्काल अनिवार्य आवश्यकता है। यदि औसतन एक कुएँ पर ८०० रुपये का खर्च हम बाँधलें (बिहार, मद्रास, उड़ीसा जैसे राज्यों में ५०० रुपये प्रतिकुआँ खर्च आयेगा, किन्तु राजस्थान, मध्यभारत आदि राज्यों में १५०० रुपये से भी ऊँचा खर्च जा सकता है), तो ढाई लाख कुओं पर क़रीब २० करोड़ रुपये खर्च होंगे। प्रश्न यह है कि इतना रुपया कहाँ से आयेगा ? रुपये के अलावा कहीं-कहीं पर ज़मीन का भी सवाल सामने आ सकता है, जिसपर कि कुएँ खुदवाये

जायेंगे। आज तो कुछ राज्यों में शामिलात ज़मीन पर भी हरिजनों का हक़ नहीं माना जा रहा है।

'पंचवर्षीय योजना' में इस सम्बन्ध का जो आयोजन हुआ है, वह ग्राम के सामूहिक हित को दृष्टि में रखकर किया गया है। अबतक सामूहिक हित में किये जानेवाले जो-जो काम हुए हैं, उनसे प्राप्त लाभ से हरिजन प्रायः वंचित ही रहे हैं। सिद्धान्ततः पृथकता को किसी भी रूप में न चाहते हुए भी सामाजिक असमानता और अनेकविध निर्योग्यताओं से पीड़ित जातियों और वर्गों के हित को देखते हुए, उन्हें पृथक सुविधाएँ दिलाना आज आवश्यक हो गया है। यह कोई नहीं चाहेगा कि हरिजनों के लिए अलग कुएँ खुदवाये ही जायें, पर 'आपद्धर्म' समझकर बाध्यतः ऐसा करना होगा। यदि राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं और समाज-सेवकों ने सार्वजनिक कुएँ व जलाशय खुलवा देने का उद्योग पूरी शक्ति लगाकर किया, साथ ही, राज्य-सरकारों की ओर से शासन-तन्त्र तथा संविधान की प्रतिष्ठा क़ायम रखने के लिए पूरा प्रयत्न हुआ, तो आवश्यक कुओं की जिस आनुमानिक संख्या का हमने ऊपर उल्लेख किया है, उसमें काफ़ी कमी हो सकती है। फिर भी बस्तियों की तात्कालिक आवश्यकता को देखते हुए कुएँ हमें खासी संख्या में बनवाने होंगे, और इस काम को सरकार ही पूरा कर सकती है। चाहे तो साधारण तन्त्र द्वारा इस काम को वह कराये, या पंचवर्षीय योजना के द्वारा हरिजन-बस्तियों की आवश्यकता का खास तौर पर ध्यान रखते हुए।

हरिजन-सेवक-संघ ने अपने पानी-फण्ड से देश के विभिन्न भागों में कितने ही कुएँ खुदवाये हैं और पुराने कुओं की मरम्मत भी कराई है। वह फण्ड यद्यपि अब समाप्त हो चुका है, फिर भी हरिजन-सेवक-संघ कुछ-न-कुछ मदद कुओं के लिए समय-समय पर देता रहता है। यह सही है कि राज्य-सरकारों को कुएँ खुदवाने की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनी चाहिए, पर इससे सवर्ण-समाज अपनी जिम्मेदारी से अपने आपको मुक्त न समझ बैठे। कूप-निर्माण सनातन काल से एक महान् धर्म-कार्य माना गया है। आचार्य विनोबा आज भूमिदान-यज्ञ की जो देशव्यापी धर्म-प्रवृत्ति चला रहे हैं, उसके साथ-साथ कूप-दान का भी अनुष्ठान चलना चाहिए। कूप-निर्माण का सनातन काल से चला आया क्रम रुक नहीं जाना चाहिए।

अब हम पहले उपाय पर आयें। पूछने पर जनसाधारण और कहीं-कहीं पर तो सार्वजनिक कार्यकर्त्ता भी बिना सोचे-विचारे कह देते हैं कि हरिजनों के लिए कुएँ खुले हुए हैं। यह भी अक्सर बतलाया जाता है कि सार्वजनिक कुएँ तो पहले से ही खुले हुए हैं, सिर्फ़ खानगी कुओं पर वे नहीं चढ़ सकते। पर असल में, उनका ऐसा कहना बहुत सही नहीं होता। जिनको 'सार्वजनिक' कुएँ कहा जाता है, वे गाँवों में प्रायः खेतों पर के कुएँ होते हैं, जिनसे हरिजन भी पानी ले सकते हैं! खेतिहर मज़दूर, जो अधिकतर हरिजन होते हैं, उन कुओं से पानी लेकर पी सकते हैं, पीते भी हैं, और जिन कुओं को 'खानगी' कहा जाता है, वे अधिकांश में खानगी नहीं होते। खानगी तो उसी कुएँ को कहा जा सकता है, जो किसीके अपने घर के अन्दर हो। जिस कुएँ को किसी व्यक्ति ने अथवा उसके बाप-दादा ने बनवाया हो और जिसपर मोहल्ले के दूसरे लोग पानी भरते हों, वह कुआँ खानगी नहीं कहा जा सकता, भले ही उसका नाम 'पण्डित शिवशंकरवाला' कुआँ हो या 'लाला बुद्धामलवाला' कुआँ हो। हिन्दूधर्म के अनुसार तो कोई भी कुआँ निजी कुआँ होता ही नहीं है। निर्माण हो जाने पर खुदानेवाला 'सर्वजन हिताय' उसका "उत्सर्ग संकल्प" कर देता है। ऐसे सब कुओं पर स्वच्छता के सामान्य नियमों का पालन करते हुए सर्वसाधारण को, बिना किसी भेद-भाव के, पानी भरने का समानाधिकार स्वतः प्राप्त है। यह दुःख और लज्जा की बात है कि बाध्य होकर कुएँ खुलवाने के सम्बन्ध में क़ानून की शरण आज लेनी पड़ रही है। क़ानून का उपयोग स्वयं कोई अच्छी चीज़ नहीं है। इस उपचार से रोग का समूल नाश नहीं होता। क़ानून का उपयोग या शासकीय बल-प्रयोग बाद को एक आपसी कटुता छोड़ जाता है, इसलिए जहाँतक बन पड़े, क़ानून का कम-से-कम प्रयोग किया जाये। असल काम तो विशेषतया

हरिजन-सेवकों और साधारणतया सभी कार्यकर्त्ताओं के करने का है। जिन सवर्ण-मोहल्लों में हरिजन-बस्तियां से बहुत दूर सार्वजनिक कुएँ हों, उन्हें हरिजनों के लिए खुलवाने का कार्यक्रम वे तत्काल हाथ में लेलें। मोहल्ले के लोगों को हर तरह से समझायें, संविधान द्वारा दिये गये समान नागरिक अधिकारों को बतायें, और हरिजनो में भी जाकर अहिंसक क्रांति करें जिससे कि वे अपने मानवोचित प्राप्त अधिकारों को समझ सकें और उनका उपयोग करने के लिए तैयार होना सीखलें। सार्वजनिक कुएँ खुलवाने के साथ-साथ जिन प्याऊओं पर हरिजनों के लिए अलग नालियाँ या टोंटियाँ लगी हुई वे देखें, उन्हें भी हटवादें। हरिजन भी जिन प्याऊओं पर उनके लिए अलग नालियाँ लगी हों उनसे कदापि पानी न पीएँ। अपमान के साथ अमृत भी मिलता हो, तो उसे वे विष समझें।

एक भारी क्षति

श्री मुनिस्वामी पिल्ले की दुःखद मृत्यु से सब को एक भारी क्षति पहुँची है। श्री पिल्ले साधु प्रकृति के एक धर्मभीरु सत्पुरुष थे। हरिजन-सेवक-संघ के वर्षों वे सदस्य रहे। हाल म ही उन्हें संघ ने मद्रास की ठक्कर बापा-विद्यालय-समिति का एक ट्रस्टी भी नियुक्त किया था। गांधीजी के दिखाये मार्ग पर चलकर उन्होंने हरिजन-कार्य को प्रगति देने में सदा अपना योग दिया। गांधीजी तथा ठक्कर बापा के वे एक अच्छे भक्त थे। उनके देहावसान से हमें गहरा धक्का लगा है। श्री पिल्ले के शोकाकुल परिवार के प्रति हम अपनी हार्दिक समवेदना प्रगट करते हैं।

श्री काजरोलकर का अभिभाषण

कांग्रेस के गत अधिवेशन के अवसर पर हैदराबाद में जो भारतीय दलित वर्ग संघ का सम्मेलन हुआ था, उसके अध्यक्षपद से दिये अभिभाषण में श्री नारायणराव स० काजरोलकर ने कई महत्वपूर्ण बातों पर सरकार का तथा समाज का ध्यान खींचा है, और कुछ उपयोगी सुझाव भी दिये हैं। उनके भाषण में से हम कतिपय उल्लेखनीय अंश अन्यत्र उद्धृत कर रहे हैं। भाषण के अन्त में हरिजनों की सर्वाङ्गीण आर्थिक व सामाजिक उन्नति करने और अस्पृश्यता को पूरी तरह से मिटा देने के लिए जो सुझाव उन्होंने दिये हैं, उनमें से कई ऐसे हैं, जिनपर सरकार और सवर्ण-समाज का ध्यान जाना ही चाहिए।

बॅकवर्ड क्लासेज़ कमीशन

जिस बॅकवर्ड क्लासेज़ कमीशन के नियुक्त होने की बहुत दिनों से चर्चा थी, वह काका साहेब कालेलकर की अध्यक्षता में गत २६ जनवरी को राष्ट्रपति के आदेश से नियुक्त कर दिया गया। कुछ ऐसा खयाल था कि परिगणित जातियों (हरिजनों), अनुसूचित जनजातियों (आदिवासियों) और दूसरी पिछड़ी जातियों की अवस्था की जाँच करने और उनकी आर्थिक, शैक्षणिक तथा सामाजिक उन्नति के उपाय सुझाने के लिए यह कमीशन नियुक्त होगा। किंतु कमीशन नियुक्त होने से कुछ पहले इस बात को स्पष्ट किया गया कि खासकर जिन 'अन्य पिछड़ी जातियों' की संख्या ५० लाख से ऊपर मानी जाती है और संविधान में जिनको 'अनुसूचित' नहीं किया गया है उनके लिए यह कमीशन नियुक्त होगा। संविधान के ३४०वें अनुच्छेद के अधीन यह कमीशन नियुक्त किया गया है।

मुख्यरूप से तो परिगणित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के अलावा जो दूसरी बहुत सी पिछड़ी जातियाँ हैं, जिनमें 'आदतन अपराधी' जातियाँ भी शामिल हैं, उनके लिए ही इस आयोग की नियुक्ति हुई है। पर संविधान के ३४० वें अनुच्छेद में साफ लिखा है कि सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की जाँच यह आयोग करेगा। शैक्षणिक दृष्टि से हो सकता है कि कुछ हदतक परिगणित जातियाँ अपेक्षाकृत आगे बढ़ी हुई हों, पर सामाजिक दृष्टि से तो वे सबसे अधिक पिछड़ी हुई हैं। हम यह मानते हैं कि संविधान ने उनको विशेष सुविधाएँ और १० वर्ष की अवधितक के लिए विशेष संरक्षण भी दिये हैं। दूसरी पिछड़ी जातियों को ऐसी सुविधाएँ नहीं दी गई हैं। किंतु अस्पृश्यता के कारण सामाजिक स्थिति में परिगणित जातियाँ जितनी अधिक पिछड़ी हुई हैं, उतनी दूसरी पिछड़ी जातियाँ नहीं। इसलिए हम आशा करते हैं कि पिछड़ी

जातियों का यह कमीशन, गौण रूप से ही सही, परिगणित जातियों की सामाजिक अवस्था की भी जांच करेगा, और जहाँतक शैक्षणिक स्थिति का संबंध है अनुसूचित जनजातियों की भी वह उपेक्षा नहीं करेगा।

पंच वर्षीय योजना

चिरप्रतीक्षित **पंच वर्षीय योजना** गत ७ दिसम्बर १६५२ को योजना-आयोग के मंत्री श्री गुलज़ारीलाल नंदा ने भारत सरकार के समक्ष पेश करदी। लोक-संसद् के दोनों सदनों द्वारा योजना पर औपचारिक विचार हुआ और उसे स्वीकार कर लिया गया। पक्ष और विपक्ष में उसपर आलोचना भी काफ़ी हुई। हमारा संबंध तो खासकर योजना के उतने अंश से है, जिसमें कि हरिजन-समस्या का उल्लेख किया गया है। योजना के ३७ वें अध्याय में 'पिछड़ी जातियों' के उत्थान का उल्लेख आया है। लिखा है कि, "भारतीय संविधान के १७ वें अनुच्छेद द्वारा अस्पृश्यता का अन्त कर दिया गया है, मगर चूँकि अस्पृश्यता एक युग से चली आ रही है, इसलिए कुछ जातियों के मानस में और सामाजिक ढांचे में उसने जड़ कर रखी हैं। जबतक अस्पृश्यता को जन-मानस द्वारा मान्यता मिली हुई है और अप्रत्यक्षरूप में सामाजिक ढांचे में से वह निर्मूल नहीं हो जाती, तबतक उसका अन्त अपूर्ण ही रहेगा, इसलिए यह चतुर्विध कार्यक्रम आवश्यक है, अर्थात: (१) क़ानून द्वारा अस्पृश्यता का अन्त; (२) सामाजिक शिक्षण द्वारा समझाने के तरीक़ों से उसे दूर करना; (३) सामाजिक तथा सामूहिक मनोरंजनों व उत्सवों पर लोकतन्त्रात्मक समवर्ताव के प्रचलन द्वारा; और (४) राज्य और ग़ैरसरकारी संस्थाओं द्वारा आत्मविकास तथा स्वास्थ्य, शिक्षा, आर्थिक उन्नति आदि के लिए प्राप्त अवसरों से लाभ उठाकर। हरिजनों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो जाने तथा उन्हें उचित शिक्षण और आर्थिक सुविधाएँ मिलने से समाज के साथ उनका संपर्क बढ़ेगा और वे घुल-मिलकर समरस हो जायेंगे।

पंच वर्षीय योजना ने केवल परिगणित जातियों के कल्याण-कार्य पर राज्यों द्वारा खर्च करने के लिए १० करोड़ रुपये रखे हैं; साथ ही, योजना के शेष काल में सीधे केन्द्रीय सरकार द्वारा भी ४ करोड़ रुपये खर्च करने के लिए मंजूर किये हैं, जबकि हरिजन-सेवक-संघ ने कम-से-कम ३० करोड़ रुपये का प्रस्ताव एक निश्चित कार्यक्रम के साथ योजना-आयोग के सामने रखा था।

सरकारी नौकरियों में परिगणित जातियों के उम्मेदवारों के लिए एक अमुक परिमाण में जो स्थान सुरक्षित रखे गये हैं, उनके नियमों में खास तौर पर कुछ रिआयतें की गई हैं।

ग्रामों में रहनेवाले हरिजनों के लिए पड़ती ज़मीन और तकावी कर्ज़ देना भी योजना में शामिल किया गया है। जो प्रामाणिक संस्थाएँ अस्पृश्यता-निवारण के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं, योजना द्वारा उदारतापूर्वक उन्हें आर्थिक सहायता दी जायेगी।

योजना में हरिजन-सेवक-संघ का खास उल्लेख करते हुए कहा गया है कि, "हरिजनों के लिए कल्याण-कार्य करनेवाली यह मुख्य संस्था है। संघ की सारी ही प्रवृत्तियाँ हरिजनों के सर्वतोमुखी कल्याण के अर्थ ही होती हैं।" इन गौरवपूर्ण शब्दों में योजना ने हरिजन-सेवक-संघ का जो उल्लेख किया है, इसके लिए हम उसके कृतज्ञ हैं। योजना संत्र को जो भी सहयोग देगी, उसे वह सदा सहर्ष स्वीकार करेगा।

ठक्कर बापा-विद्यालय

हरिजन-सेवक-संघ की जो वार्षिक बैठक ७ अक्टूबर, १६५२ को दिल्ली में हुई थी, उसमें कार्य-समिति को यह अधिकार दिया गया था कि मद्रास के ठक्कर बापा-विद्यालय के लिए, विद्यालय-समिति के विधान के अनुसार, वह ट्रस्टी-मण्डल तथा व्यवस्था-समिति नियुक्त करे और इस संबंध में कार्य समिति के ५ सदस्य, एक विशेष उपसमिति के रूप में, मद्रास जाकर तत्कालीन ट्रस्टियों और व्यवस्था-समिति के सदस्यों से भी मिलें और उनके साथ चर्चा करें। इस निश्चय के अनुसार, सर्वश्री परीक्षितलाल मजमुदार, प्रो० मार्दे, श्यामलाल, वियोगी हरि और का०स०

शिवम् १२ अक्टूबर को मद्रास पहुँचे। विद्यालय का सबने निरीक्षण किया और हिसाब-किताब भी देखा। अध्यक्ष दीवान बहादुर भाष्यम् आयंगार तथा विद्यालय-समिति के कुछ अन्य सदस्यों के साथ चर्चा की, और जिन व्यक्तियों को ट्रस्टी तथा व्यवस्था-समिति के सदस्य नियुक्त करना निश्चय किया गया था, उनके नाम भी उन्हें बतलाये। तदनन्तर उप-समिति ने अपनी विस्तृत रिपोर्ट कार्य-समिति को पेश करदी।

श्री भाष्यम् आयंगार तथा संघ के प्रधान मंत्री के बीच इस सम्बन्ध का पत्र-व्यवहार काफ़ी दिनोंतक होता रहा। प्रधान मंत्री तथा कार्यवाहक मंत्री श्री शिवम् दोबारा मद्रास जाकर १८ दिसम्बर को दीवान बहादुर से मिले। फिरभी विद्यालय का चार्ज कुछ कारणों से नहीं लिया जा सका। तीसरी बार प्रधान मंत्री तथा श्रीशिवम् ने दीवान बहादुर के साथ विद्यालय के सम्बन्ध में मद्रास के मुख्य मंत्री श्री-राजाजी से भेंट की। राजाजी ने सारी स्थिति को सुन-कर अपना यह निर्णय दिया कि विद्यालय का सन् १९४७ से १९५२ तक का हिसाब-किताब दोबारा 'शास्त्री एण्ड शाह कम्पनी' द्वारा जँचवाया जाये, और हरिजन-सेवक-संघ उक्त कम्पनी की सलाह से अन्तरिम काल के लिए किसी योग्य व्यक्ति को व्यवस्थापक नियुक्त करदे और विद्यालय का चार्ज लेले। साथ ही, विद्यालय का जो उचित देना-पावना हो, उसकी जिम्मेदारी संघ अपने ऊपर लेले। तदनुसार, ९ जनवरी को प्रधान मन्त्री ने श्री मातृभूतम् नामक एक अनु-भवी सज्जन को व्यवस्थापक नियुक्त करके अपने सामने विद्यालय का चार्ज दिलवा दिया।

इसके पहले विद्यालय को उसकी पूर्वव्यवस्था-समिति आय की दृष्टि से बहुत-कुछ व्यापारी ढंग पर चलाती थी, पर उससे विद्यालय को घाटा ही हुआ। संघ ने विद्यालय को व्यापारी ढंग पर न चलाने का निश्चय किया है। विद्या-र्थियों के औद्योगिक तथा सामान्य शिक्षण पर और उन्हें सुसंस्कृत बनाने पर ही संघ का मुख्य ध्यान रहेगा।

यह वही उद्योग-शिक्षण-संस्था है, जिसे कि बहुत पहले मद्रास से ६-७ मील दूर कोडम्बाकम् में 'हरिजन-इण्ड-स्ट्रियल स्कूल' के नाम से संघ की ओर से चलाया जाता था। बाद में, 'ठक्कर बापा-विद्यालय' के नाम से मद्रास के त्यागराय नगर में यह संस्था स्थानान्तरित कर दी गई। इसके नये भवन की आधार-शिला गांधीजी ने अपने हाथ से रखी थी। आज इस विद्यालय में लगभग १५० विद्यार्थी बढ़ईगीरी, सिलाई, लोहारगीरी, बेंत का काम और कम्पो-जिंग व छपाई इन उद्योगों का शिक्षण ले रहे हैं।

हमारा "स्मारपत्र"

गत १० दिसम्बर, १९५२ को अ० भा० हरिजन-सेवक संघ ने संघ की उपाध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू के निवास-स्थान पर जलपान तथा हरिजन-समस्या पर चर्चा करने के लिए भारतीय संसद् के कतिपय हरिजन तथा अन्य सदस्यों और कुछ दूसरे लोगों को भी आमंत्रित किया था। माननीय श्री जगजीवनराम, पं० हृदयनाथ कुँजरू, श्री ना० स० काजरोलकर, श्री वी० एस० मूर्ति, श्री पुस्तके, श्री केलप्पन, श्री वैकुण्ठलाल वेमेहता, श्री वेलायुधन आदि सज्जनों ने श्रीमती नेहरू तथा संघ के प्रधान मन्त्री व कार्य-वाहक मंत्री के साथ जलपान के उपरान्त हरिजन-समस्याओं पर काफ़ी देरतक गहराई से चर्चा की। भारत सरकार द्वारा मान्य परिगणित जातियों की सूची में आवश्यक संशो-धन करने के सम्बन्ध में तथा हरिजनों के मकानों व खेती के लिए सरकार से ज़मीन दिलाने आदि विषयों पर विचार-विमर्श हुआ। इस चर्चा में हम लोग जिन परिणामों पर पहुँचे, उनके आधार पर हमने संघ की ओर से एक स्मार-पत्र (मेमोरेण्डम) भारत-सरकार की सेवा में भेजा है। उसमें निम्नलिखित बातों पर खास तौर से सरकार का ध्यान खींचा गया है :—

(१) केन्द्रीय सरकार एक ऐसा क़ानून सामाजिक निर्योग्यता-निवारण के लिए शीघ्र पास करे, जो सभी राज्यों पर एकसमान लागू हो सके और हस्तक्षेप्य (कागनिज़ेबल) भी हो।

(२) प्राय: साधारण तौर से जिस ज़मीन पर हरिजनों की झोंपड़ियाँ बनी हुई हैं, वह उनकी अपनी मालिकी की नहीं हैं। इससे उन्हें ज़मीन के मालिक काफ़ी दबाकर रखते

हैं। अतः वह ज़मीन उनकी अपनी मालिकी की करार देदी जाये, और आगे भी जिस ज़मीन पर वे अपने घर बनायें, वह भी उनकी अपनी मिलकियत मानी जाये।

(३) खेती करनेवाले भूमिहीन हरिजनों को खेती के लिए सभी राज्यों में ज़मीन मुहैया की जाये, क्योंकि अधिकांशतः सच्चे अर्थों में ज़मीन 'जोतनेवाले' हरिजन ही हैं। ज़मीन की मालिकी मिल जाने पर उनकी कितनी ही अयोग्यताएँ अपने आप दूर हो जायेंगी।

(४) हरिजनों का जलकष्ट जल्द-से-जल्द दूर किया जाये। उनकी बस्तियों में, जहाँ अत्यावश्यक हो, कुएँ खुदवाये जाएँ और उनके लिए ज़मीन दी जाये। ये कुएँ सार्वजनिक हों। इस अत्यावश्यक प्रश्न पर समस्त राज्य-सरकारों का ध्यान तुरन्त आकर्षित किया जाये।

(५) हरिजनों की खासकर देहातों में बढ़ती हुई बेकारी दूर करने के लिए उनके उद्योगों को [illegible] दिये जायें, जैसा [illegible] बुनकरों के हस्तउद्योग को दिया है। कल-कारखानों के सर्वग्रास से बचाने के लिए चमड़े के उद्योग को तो तुरन्त आवश्यक संरक्षण दिया जाये। सरकार ग्रामोद्योगों की चीज़ों की ठीक-ठीक बिक्री की व्यवस्था करे, और ऐसे माल को तरजीह भी दे।

बापा का एक महत्वपूर्ण पत्र

[कोई १२ साल पहले स्व० ठक्कर बापा ने १४ अगस्त १९४१ को एक पत्र स्व० किशोरलाल मशरूवाला को लिखा था, जिसे हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं। इस पत्र से पूज्य बापा की प्रान्त-निरपेक्षता स्पष्टतया प्रगट होती है। श्री परीक्षितलाल मजमुदार शुरू से ही बापा के अत्यन्त स्नेहपात्र बन गये थे, फिर भी परीक्षितलाल भाई का यह सुझाव बापा को बिल्कुल नापसन्द आया कि गुजरातियों से मिलनेवाला पैसा गुजरात में ही खर्च हो और वह भी गुजरात हरिजन-सेवक-संघ की मार्फ़त। बापा ने इसी विषय में श्री किशोरलाल भाई को यह पत्र लिखा था—**सं०**]

"प्रिय किशोरलाल,

परीक्षितलाल का १०-८ का जो पत्र आपने बापू के आदेश के साथ भेजा है वह मुझे मिला। इस सम्बन्ध में मैं अपनी राय बापू के सामने रखता हूँ, उसके बाद बापू का जो आदेश होगा, वैसा मैं करूँगा।

मुझे इस बात से मतभेद है कि गुजरातियों का पैसा गुजरात ही में खर्च हो और वह भी गुजरात-हरिजन-सेवक-संघ की मार्फत। यदि यह बात मान ली जाये, तब तो जो पैसा बापू को जहाँ से आवे वहीं भेज देना चाहिए। तब हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान कार्यालय को कहीं से पैसा नहीं मिल सकता। फिर तो उसे बन्द ही करना पड़ेगा। परीक्षितलाल की बात यदि मान भी ली जाये तो गुजरातियों के धन पर उस स्थान का पहला अधिकार है जहाँ वह रुपया कमाते हों। इसका तो कोई अर्थ नहीं है कि चूंकि एक आदमी गुजराती है, चाहे वह वहाँ पैदा भी नहीं हुआ हो, इसलिए उसके दान पर गुजरात का ही अधिकार है। इस हिसाब से तो ग़रीब प्रान्तों तथा केन्द्रीय संघ का कार्य भी नहीं चल सकता। श्री एन. जी. पटेल केनिया में रहते हैं और उनके दान पर परीक्षितलाल अधिकार करना चाहते हैं यह बात तो समझ में नहीं आती। श्री गोपालजी वालजी बम्बई में रहते हैं। पर चूंकि वह गुजराती हैं, इसलिए उनका दान गुजरात-संघ को मिलना चाहिए—यह मुझे ठीक प्रतीत नहीं होता। श्री नगेन्द्र देसाई सिंधिया कम्पनी में कार्य करते हैं। जब भी मैं बम्बई जाता हूँ तो २ या ४ रुपया वह मुझे देते रहते हैं और मैं उसे संघ में दे देता हूँ। पर चूंकि उनका जन्म महुधा में हुआ है, इसलिए उसे भी परीक्षितलाल चाहता है। ३०० रुपया श्री चिम्मनलाल मेहता, (श्री चुन्नीलाल नहीं) से बापू की मार्फत आया। जहाँतक मेरी सूचना है यह सज्जन गुजराती नहीं पंजाबी हैं और बम्बई में व्यापार करते हैं। उन्हें भी परीक्षितलालने गुजराती समझकर उनका पैसा माँगा है। यदि गुजरात-हरिजन-सेवक-संघ का दावा मान लिया जाये, तो बम्बई-संघ का दावा बम्बई के पैसे के लिए क्यों न माना जाय?

फिर यदि तर्क के लिए मान लिया जावे कि गुजरातियों का पैसा गुजरात में खर्च हो तो उससे यह भी अर्थ निकलता है कि किसी अन्य जगह का पैसा गुजरात में नहीं लगना चाहिए। पर इस समय गुजरात के लिए प्रधान कार्यालय क्या खर्च कर रहा है या करनेवाला है उसका ब्यौरा मैं आपको दे देता हूँ :—

४०,००० रु० — हरिजन-आश्रम साबरमती में कन्या-विद्यालय की इमारत के लिए

८,००० रु०— वार्षिक नव स्थापित हरिजन कन्या-विद्यालय के लिए

१,४४० रु०— वार्षिक ४ हरिजन-सेवकों का वेतन

२४० रु०— लगभग वार्षिक एक भंगी-सेवक का वेतन

१२० रु०— गांधी-छात्रवृत्ति

६० रु०— दूसरी छात्रवृत्तियों के लिए

९,८६० रु०—जोड़ सालाना तथा ४०,००० एकमुश्त

इसके अलावा समय-समय पर छात्रों की सहायता भी होती रहती है। यह सब प्रधान कार्यालय के फण्ड से है, जिसमें गुजरात का पैसा नहीं खर्च होता है और इसपर भी गुजरात-हरिजन-सेवक संघ बापू द्वारा आये हुए ६,७ सौ रुपयों को चाहता है!

हमारी तो शिकायत यह है कि बापू की ओर से हमारे पास अब पैसे बहुत कम आते हैं, जिससे हमें कभी-कभी आर्थिक कठिनाई हो जाती है। पर इस समय तो मैं उसके लिए शिकायत नहीं करता हूँ। दूसरी शिकायत बापू से, व्यक्तिगत तौर पर है। जैसा बापू ने इस बार किया है वैसे ही कभी कभी वह एक ओर की दलील सुनकर अपना फ़ैसला दे देते हैं। हमें अपनी दलील पेश करने का मौक़ा नहीं देते और उसके पहले ही निर्णय दे देते हैं।

अब बापू का जो आदेश हो वह यहाँ श्यामलाल के नाम लिखदें, क्योंकि मैं आज बम्बई जा रहा हूँ और वहाँ से दक्षिण को। सितम्बर के अन्त में शायद मैं एक दिन के लिए वर्धा आऊँ।

आपका

अ० वि० ठक्कर"

पिछड़े हुए वर्गों की खास सहूलियतें

और उनकी

काल-मर्यादा

भारत के सभी नागरिकों को संविधान से समान अधिकार प्राप्त हुए हैं। इस संबंध में संविधान के अनुच्छेद १४, १५, १६ तथा १७ खास उल्लेखनीय हैं। अनुच्छेद १४ में सभी व्यक्तियों को विधि (क़ानून) के समक्ष समता और विधियों (क़ानून) द्वारा समान संरक्षण दिया गया है। अनुच्छेद १५ में किसी भी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति इत्यादि के आधार पर विभेद करने का प्रतिषेध किया गया है। अनुच्छेद १६ से राज्याधीन नौकरियों के संबंध में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता रहेगी, और धर्म, मूलवंश, जाति इत्यादि के आधार पर किसी नागरिक के लिए राज्याधीन नौकरियों के विषय में न अपात्रता होगी, न विभेद किया जायेगा। अनुच्छेद १७ से अस्पृश्यता का अंत किया गया है।

इस प्रकार वैधानिक समता तो सिद्ध हो चुकी है, किंतु हिन्दू-समाज में जो जाति-व्यवस्था दीर्घ काल से चली आ रही है, उसमें विषमता होने के कारण अनेक जातियाँ और जनजातियाँ पिछड़ी हुई रही हैं। उनके बारे में अब केवल समान अवसर प्राप्त कर देने से उनका उत्कर्ष शीघ्रता से नहीं होगा; और उनको समाज में समता का स्थान भी शीघ्रता से नहीं मिलेगा। इस कारण भारत के संविधान ने पिछड़ी हुई जातियों को विशेष संरक्षण तथा सहूलियतें या रिआयतें दी हैं।

पिछड़ी हुई जातियों को दिये गये संरक्षण तथा सहूलियतें किस समयतक कायम रहेंगी, इसके बारे में कुछ गलतफहमी पैदा हुई-सी दीखती है। इसलिए इस विषय का मैं थोड़ा-सा विचार इस लेख में करूँगा।

पिछड़ी जातियों या वर्गों के तीन मुख्य विभाग हैं: (१) अनुसूचित जातियाँ, अथवा हरिजन (२) अनुसूचित जनजातियाँ अथवा आदिमजातियाँ, और (३) दूसरे पिछड़े हुए वर्ग।

पिछड़ी हुई जातियों के प्रत्येक विभाग में भिन्न-भिन्न जातियाँ हैं। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की अनुसूचियाँ राष्ट्रपति की स्वाक्षरी से प्रकाशित की गई हैं। इतर पिछड़े हुए वर्गों की अनुसूची अभीतक राष्ट्रपति की स्वाक्षरी से निश्चित नहीं की गई है। संविधान के अनुच्छेद ३४० के अनुसार श्री काका साहब कालेलकर की अध्यक्षता में जो आयोग (कमीशन) नियुक्त हुआ है, उसका प्रतिवेदन प्रस्तुत किये जाने के बाद राष्ट्रपति की स्वाक्षरी से वह भी अनुसूची निश्चित की जायगी। घटक राज्यों ने अपने-अपने काम के लिए दूसरे पिछड़े हुए वर्गों की अनुसूचियाँ बनाई हैं, और उनके अनुसार कार्यवाही भी हो रही है।

पिछड़े हुए वर्गों को जो विशेष संरक्षण अथवा सहूलियतें दी गई हैं, उनके भी तीन प्रकार हैं:

(१) लोकसभा में तथा घटक राज्यों की विधान-सभाओं में रक्षित स्थान, अथवा जगहें;

(२) राज्याधीन नौकरी में रक्षण;

(३) शैक्षणिक तथा आर्थिक उन्नति के लिए छात्र-वृत्तियाँ और सहायताएँ।

: १ :

विधान-सभाओं में रक्षित स्थानों की जो योजना की गई है, वह केवल अनुसूचित जातियाँ (हरिजन) तथा अनुसूचित जन जातियाँ (आदिम जातियाँ) इन दोनों विभागों के लिए ही की गयी हैं। इतर पिछड़े हुए वर्गों के लिए रक्षित स्थानों की ऐसी सुविधा प्राप्त नहीं है।

रक्षित जगहों की जो सहूलियतें हरिजनों और आदिम-जातियों को दी गई हैं, वह लोक-सभा के लिए संविधान के अनुच्छेद ३३० से दी गयी हैं, और घटक राज्यों की विधान सभाओं के लिए संविधान के अनुच्छेद ३३२ के अनुसार दी गई हैं।

रक्षित स्थानों की सहूलियत संविधान के अनुच्छेद ३३४ के अनुसार संविधान के प्रारम्भ से, अर्थात् २६ जनवरी १९५० से दस वर्ष की कालावधि की समाप्ति होने पर बन्द हो जायेगी। किन्तु उस समय जो लोकसभा या विधान सभा विद्यमान होगी, उसका जबतक विसर्जन न हो, तबतक रक्षित स्थानों का प्रतिनिधित्व कायम रहेगा।

रक्षित स्थानों की सहूलियत दस वर्ष समाप्त होने के बाद भी कायम रहनी चाहिए, ऐसा कोई कहेगा तो संविधान के अनुच्छेद ३३४ में संशोधन करना पड़ेगा।

: २ :

भारत-सरकार की अथवा घटक राज्य-सरकारों की नौकरियों में नियुक्तियाँ करते समय, संविधान के अनुच्छेद ३३५ के अनुसार, प्रशासन की कार्य-क्षमता को बाधा न पहुँचते हुए अनुसूचित जातियों (हरिजन) और अनुसूचित जन-जातियों (आदिम जातियों) के दावों पर ध्यान देना चाहिए। इस प्रबंध के अनुसार, भारत-सरकार ने और राज्य-सरकारों ने भी नौकरी की नियुक्तियों में अनुसूचित जातियों के तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए विशिष्ट परिमाण रक्षित किया है। दूसरे पिछड़े हुए वर्गों के लिए संविधान के अनुसार नौकरी में रक्षित स्थान नहीं हैं। यह सहूलियत जो हरिजनों और आदिम जातियों को दी गई है, उसकी किसी प्रकार की काल-मर्यादा संविधान में नहीं है। इस सहूलियत को यदि बन्द करना हो, तो संशोधन करना पड़ेगा।

: ३ :

शैक्षणिक तथा आर्थिक विकास के लिए जो सहूलियतें दी जाती हैं, वह संविधान के अनुच्छेद ४६ के अनुसार दी जाती हैं। यह सहूलियतें अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों, और दूसरे पिछड़े हुए वर्गों के लिए देने की आवश्यकता संविधान के निर्देशक तत्वों (डायरेक्टिव प्रिंसिपल्स) में सन्निविष्ट की गई है। अनुच्छेद ४६ में पिछड़े

हुए वर्गों के बजाय 'दुर्बल लोक-समाज' (वीकर सेक्शन्स) ऐसा कहा गया है। सभी 'दुर्बल लोक-समाजों' को, वह चाहे हरिजन का हो, आदिम जाति का हो अथवा अन्य कोई हो उनको शैक्षणिक तथा आर्थिक विकास के लिए मदद देना संविधान का एक स्थायी आदेश है। उसे किसी प्रकार की काल-मर्यादा नहीं है, और हो नहीं सकती। जबतक 'दुर्बल लोक-समाज' रहेंगे, उनके शैक्षणिक और आर्थिक विकास के लिए मदद देना आवश्यक रहेगा।

भिन्न-भिन्न संरक्षण और सहूलियतें किन-किन जातियों और वर्गों के लिए विहित हैं और वे कबतक जारी रहेंगी इस विषय का संक्षिप्त विवेचन मैंने यहाँ किया है।

वि० न० बरवे

उपाध्यक्षा के प्रवास

हरिजन-सेवक-संघ की उपाध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने अक्टूबर, नवम्बर और दिसम्बर, १६५२ तथा जनवरी और फरवरी, १६५३ में अलवर, रोहतक, हिसार, लखनऊ तथा गंगानगर का दौरा किया।

अपने इन सभी दौरों में श्रीमती नेहरू ने अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-सेवा के प्रश्न को काफी महत्त्व दिया। सभी सार्वजनिक सभाओं में तथा कार्यकर्त्ताओं के बीच में उन्होंने इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर चर्चा की। निर्वासित हरिजनों के पुनर्वास-कार्य को जहाँ-तहाँ देखा, उन्हें आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रोत्साहन दिया, और उनकी समस्याओं को समझा। जो हरिजन तथा कुछ अन्य जातियाँ पहले जरायमपेशा मानी जाती थीं, उनके लिए भी कल्याण-कार्य करने की योजनाएँ तैयार कराईं।

अलवर:—उन्होंने कम्यूनिटी प्रोजेक्ट का उद्घाटन झाड़खेड़ा ग्राम में किया। अलवर ज़िले के ग्रामों की ज़मीनों पर अधिकतर हरिजन शरणार्थी बसाये गये हैं। इधर के १०० गाँवों का उन्नयन-कार्य उन्हें सौंपा गया है। २ अक्टूबर को श्रमयज्ञ में भाग लेते हुए उन्होंने सबके साथ ज़मीन खोदी और मिट्टी ढोई। राजस्थान के पुनर्वास-मंत्री श्री अमृतलाल यादव तथा स्कूल-कालेजों के शिक्षकों व शिक्षार्थियों ने भी श्रमयज्ञ में भाग लिया था।

४ अक्टूबर को सारे राजस्थान में हरिजन-दिवस मनाया गया। प्रातःकाल जो हरिजन-सम्मेलन हुआ, उसमें श्रीमती नेहरू ने भाषण देते हुए कहा कि वह दिन दूर नहीं जबकि जाति-भेद हमारे देश से हट जायेगा। मगर साथ ही हमें यह भूल नहीं जाना चाहिए कि काम केवल दफ्तर की नौकरियों को ही नहीं कहते। मैं चाहती हूँ कि हमारे देश का बच्चा-बच्चा सुशिक्षित, सच्चरित्र, स्वावलम्बी शिल्पकार बने जो श्रम के महत्व को पहचाने। खादी और दूसरे घरेलू उद्योग-धन्धे ही ऐसे ज़रिया हैं, जिनसे हम स्वावलम्बी बन सकते हैं।

रोहतक:—७ जनवरी को श्रीमती नेहरू ने रोहतक के और ८ की सुबह हिसार के शरणार्थी-कैम्प देखे।

डाया गाँव (ज़िला हिसार) में भूदान-यज्ञ के सम्मेलन में भी उन्होंने योग दिया। ६ जनवरी को प्रातःकाल कुमारी सत्यबाला तायल के नेतृत्व में पैदल भूदान-यात्रा में भी भाग लिया।

२७ जनवरी से २६ जनवरीतक उन्होंने लखनऊ में नीति एवं सदाचार-प्रचारक मण्डल की परिषद् की अध्यक्षता की।

५ फरवरी से ७ फरवरीतक गंगानगर में हरिजन-कान्फ्रेन्स में भाग लिया। इस कान्फ्रेन्स का उद्घाटन प्रो० एन० आर० मलकानी ने किया। श्रीमती नेहरू ने हरिजन शरणार्थियों को ५ बस्तियाँ देखीं। दूर से देखकर यह विश्वास सहसा नहीं होता था कि इन झोंपड़ियों में मानव रह सकेगा। देखकर श्रीमती नेहरू का हृदय विदीर्ण हो उठा। समस्याएँ तो उनकी बहुत-सी थीं, मगर ज़मीन और पानी की समस्या मुख्य थीं। इस सम्बन्ध के जो निश्चय हुए वह सरकार को भेज दिये गये। उन लोगों से भी अपेक्षा की गई कि वे चर्खे व खादी को अपनायें और अपने आप पर निर्भर रहें।

मेरे दो संस्मरण

[स्व० ठक्कर बापा]

गांधीजी के सम्बन्ध में मैं अपने दो संस्मरण देने का प्रयत्न करूँगा। ब्रिटिश प्रधान मंत्री मि० रेमज़े मॅक्डानल्ड के हिंदू परिगणित जातियों को मतदान के लिए हिन्दुओं की मुख्य श्रेणी से अलग कर देने के निर्णय के विरुद्ध सन् १६३२ के अपने ऐतिहासिक अनशन के पश्चात्, और हिन्दुओं के दोनों वर्गों के नेताओं के बीच पूना-समझौते पर हस्ताक्षर हो चुकने के बाद, १६३३ में गांधीजी रिहा कर दिये गये। मैंने उन्हें एक पत्र लिखकर यह सुझाव देने का साहस किया कि यदि वह प्रचार के लिए, और विविध रूपों में प्रचलित अस्पृश्यता दूर करने के प्रश्न पर हिन्दू-समाज को शिक्षित और जाग्रत करने के लिए एक देश-व्यापी दौरा करें, तो रूढ़िग्रस्त हिन्दुओं के मानस पर इसका बहुत ज़बर्दस्त असर पड़ेगा। गांधीजी ने मेरे इस प्रस्ताव को उसी क्षण मंजूर कर लिया, और मुझे पूरे १२ महीने के दौरे का विस्तृत ब्यौरा तैयार करने का आदेश दिया। हरिजनों के प्रति उनका प्रेम इतना अधिक था, इतना अथाह था कि उन्होंने बड़ी खुशी से दौरा शुरू कर दिया। प्रवास अक्तूबर १६३३ में मध्यप्रदेश के कुछ स्थानों से शुरू हुआ, किंतु चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की प्रार्थना पर शीघ्र ही वह मद्रास के प्रवास में परिवर्तित हो गया। राजाजी उस समय कोयम्बतूर-जेल में थे। उन्होंने वहाँ से लिखा कि, "यदि अस्पृश्यता आरम्भ में दक्षिण से दूर हो गई, तो परिणामतः वह उत्तर में भी समाप्त हुई सी ही समझिए।"

पूरे ६ महीने, २७० दिनतक यह यात्रा, बीमारी अथवा अन्य किसी दुर्घटनावश एक भी दिन रुके बिना, अबाध गति से चलती रही। न तो पूना में उनकी मोटर गाड़ी पर फेंका गया देसी बम, न देवघर, बिहार में उसके आगे के शीशे पर की गई लाठी-वर्षा उन्हें अपने निश्चय से डिगा सकी। सैकड़ों सार्वजनिक सभाओं में, जिनमें हज़ारों आदमी एकत्र होते थे, उन्होंने भाषण दिये। इस दौरे में इकट्ठे किये गये ताम्बे के पैसे व निकल की इकन्नी से लेकर चाँदी के रुपयों और सोने के गहनों की रकम अन्त में ८ लाख रुपये से अधिक बैठी, जो हरिजन-सेवा के कार्य में खर्च की जानेवाली थी। गांधीजी ने इस तूफ़ानी दौरे का श्रम अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक सहन किया; और यह सब कुछ किया हरिजनों की खातिर जिनके प्रति उनका प्रेम असीम था। यात्रा का अन्तिम भाग क़रीब एक मास उड़ीसा के ग्रामों में पैदल चलकर पूरा किया, और वह भी जुलाई १६३४ में भारी वर्षा हो जाने के कारण तेज़ी से समाप्त करना पड़ा।

एक और संस्मरण देता हूँ, जिससे मालूम होगा कि हरिजन-कार्य को गांधीजी कितना अधिक महत्त्व देते थे। हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान मंत्री के रूप में लगभग ६ वर्ष-तक हरिजन-सेवा का कार्य करने के बाद, मुझे कुछ थकान-सी महसूस हुई और इसलिए मैंने गांधीजी को लिखा कि मुझे अपने पूर्व और उतने ही प्रिय आदिवासियों की सेवा के कार्य पर लौट जाने दिया जाये। गांधीजी का उत्तर अत्यन्त गूढ़ और प्रभावकारी था। उन्होंने कहा—"हरिजन-सेवा-कार्य को हमने एक धार्मिक कार्य के रूप में लिया है, साम्प्रदायिक कार्य के रूप में नहीं, और वह एक मानव कल्याण के महान् लक्ष्य से प्रेरित है। इसके सिवा, हम यह कार्य एक प्रायश्चित्त के रूप में कर रहे हैं। इसलिए तुम्हारे शरीर में जबतक प्राण हैं, तुम इसे छोड़ नहीं सकते। हाँ, एक रिआयत की जा सकती है, और वह यह कि तुम इसके साथ ही आदिवासियों का काम भी कर सकते हो, लेकिन हरिजन-कार्य के बदले में नहीं, क्योंकि वह तो तुम्हारा मुख्य काम है और हमेशा रहना ही चाहिए।" इस उत्तर ने मुझे खामोश कर दिया, और मैं चुपचाप अपने काम में और भी अधिक संकल्प-शक्ति से जुट गया।

विचारणीय

[महाराष्ट्र प्रान्तिक हरिजन-सेवक-संघ के अध्यक्ष काका साहेब बरवे को महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्त्ता श्री अप्पा साहेब सहस्त्रबुद्धे ने गत ३०-१२-५२ को जो एक महत्त्वपूर्ण पत्र लिखा था, उसे, तथा उस पत्र पर काका साहेब बरवे ने १५-१-५३ के 'दलित-सेवक' में जो टिप्पणी लिखी उसे भी हम, अंत में अपनी टिप्पणी के साथ, नीचे उद्धृत कर रहे हैं। —सम्पादक]

"आजकल मैं भूदान-यज्ञ-यात्रा के सिलसिले में रत्नागिरी ज़िले में घूम रहा हूँ, इसलिए महाराष्ट्र प्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघ की जो बैठक पालघर में होनेवाली है उसमें मैं उपस्थित नहीं हो सकूँगा, इसका मुझे दुःख है।

पत्र लिखने का खास कारण यह है कि इधर तीन महीने से मैं गाँवों में पैदल यात्रा कर रहा हूँ। कोल्हापुर ज़िले में पूरा एक मास मैं घूमा। जिस किसी गाँव में ठहरता वहाँ की हरिजन-बस्ती में जाकर हरिजनों के साथ कम-से-कम एक घंटा उनके सुख-दुःख की बातें किया करता था। सोलापुर ज़िले की भी एक-दो तहसीलों में घूमा और वहाँ भी यही कार्यक्रम मेरा चलता रहा। आजकल रत्नागिरी ज़िले में पैदल यात्रा कर रहा हूँ। यहाँ भी रात के समय हरिजन-बस्तियों में जाने का मेरा वैसा ही कार्यक्रम जारी रहेगा।

कोल्हापुर और सोलापुर ज़िले का मेरा अनुभव बहुत दुःखद है। हरिजनों का सारा "वतन" नष्ट हो चुका है, उनकी कहीं भी अपनी ज़मीन नहीं है। हद दर्जे की दरिद्रता के कारण उन्हें नीलाम में लगान से ज़मीन मिलने की संभावना बहुत कम है। दूसरों के खेतों पर भी फ़सल के दिनों में जो थोड़ा-सा काम उनको मिल जाता है, उसके सिवाय उन्हें और कोई काम नहीं मिलता। आर्थिक स्थिति उनकी बहुत गिरी हुई है।

ऐसा लगता है कि अस्पृश्यता-निवारण क़ानून भी केवल क़ानूनी किताबों में बन्द पड़ा है। आर्थिक गुलामी उनकी इतनी ज़बरदस्त है कि सार्वजनिक कुओं पर पानी भरने की हिम्मत वे कर नहीं सकते, और ऐसी ही हालत होटल-प्रवेश और मंदिर-प्रवेश के बारे में भी है। अस्पृश्यता-निवारण क़ानून पास होने के पहले जनता महसूस करती थी कि हरिजनों के बारे में अपना भी कुछ कर्त्तव्य है, पर वह भावना आज जैसे लुप्त हो गई है।

जगह-ज़मीन तो उतनी ही है, मगर आबादी बढ़ गयी है। एक ही घर में तीन-तीन, चार-चार कुटुम्ब रहते हैं। बढ़ती हुई आबादी को देखते हुए ज्यादा ज़मीन देना बहुत ज़रूरी है। हरिजनों में थोड़ी-बहुत जो जागृति हुई है, उससे वे चाहते हैं कि उनके बच्चों को शिक्षा मिले, लेकिन अर्थहीनता के कारण वे गाँवों का प्राथमिक शिक्षण भी अपने बच्चों को नहीं दे पाते।

यह बात नहीं कि देहातों में आजकल केवल हरिजन ही बेकार हैं; सवर्ण भी बेकार हैं। लेकिन जब थोड़ा-बहुत कोई काम होता है तब वह भी जान-बूझकर हरिजनों की अपेक्षा सवर्णों को दिलाने की कोशिश होती है। इससे हरिजनों को पहले की अपेक्षा काम मिलने में दिक्कतें आज ज्यादा बढ़ गई हैं।

आपकी तरफ़ से जो ज़िला-प्रचारक जहाँ-तहाँ काम कर रहे हैं, उनको संघ से ऐसा आदेश मिला है कि वे प्रमुखरूप से अस्पृश्यता-निवारण क़ानून को अमल में लाने का प्रचार करें, और वे लोग इस दिशा में पूरा प्रयत्न कर रहे हैं। लेकिन मेरा ख़याल है कि जबतक हरिजनों का आर्थिक बहिष्कार से मुक्ति नहीं होती, तबतक वे सम्मानपूर्वक नहीं रह सकते, और अस्पृश्यता-निवारण क़ानून से पूरा लाभ भी नहीं उठा सकते। इसलिए हरिजन-सेवक-संघ को सामाजिक मत-परिवर्तन-प्रचार के साथ-साथ हरिजनों की आर्थिक उन्नति

का कार्य भी हाथ में लेना चाहिए या नहीं, इसपर कृपाकर ज़रूर विचार करें। मेरा मत है कि आज संघ की सामर्थ्य भले ही शायद कुछ कम हो और कार्य चाहे कुछ कम भी हो, तो भी हरिजनों की आर्थिक उन्नति पर विचार होना आवश्यक है।

मेरा खयाल है कि हरिजन-सेवक-संघ को सरकार से प्रयत्नपूर्वक हरिजनों के लिए ज़मीन दिलवानी चाहिए। हरेक ज़िले में १०–२० मज़दूर-सहकारी-संघ भी स्थापित करने होंगे, और उनके ही मुखियों की देखरेख में सरकारी निर्माण-विभाग या लोकल बोर्डों की सड़कें बनवाने, पत्थर तोड़ने, कुएँ खोदने आदि का कार्य चलना चाहिए। प्रयत्न पूरा-पूरा यह हो कि ये सारे काम इन सहकारी संघों के मारफत ही हों। मृत पशुओं की चीरफाड़ करना, हड्डियाँ इकट्ठी करना, चमड़ा पकाना व उससे चीज़ें बनाना, हड्डी से खाद तैयार करना और रस्सी बटना, झाड़ू बाँधना, भंगी-काम करना वगैरह धंधों को शास्त्रीय रूप देने का प्रयत्न होना चाहिए, और ये सारे ही काम सहकारी संघों के द्वारा होने चाहिएँ। सामाजिक मत-परिवर्तन के साथ-साथ उनके आर्थिक जीवन और तत्संबंधी उद्योग का विचार और संगठन करने का काम भी हरिजन-सेवक-संघ को अपने हाथ में लेना चाहिए। बैकवर्ड क्लासेज़ विभाग के अधिकारियों को भी इस दृष्टि से इस प्रकार काम करने के लिए मदद करनी चाहिए। यह सब कहाँतक हो सकता है, इसपर आपकी वार्षिक बैठक में विचार हो तो अच्छा होगा।"

काका साहेब बरवे की टिप्पणी

"अण्णा साहेब सहस्रबुद्धे का यह पत्र पालघर में बैठक होने के पश्चात् मिला, इसलिए इसपर बैठक में विचार नहीं हो सका, इसका मुझे खेद है। अण्णा साहेब भूदान-यज्ञ के सिलसिले में जो पैदल यात्रा तीन मास से कर रहे हैं, उसमें वे रोज़ कम-से-कम अपना एक घण्टा हरिजन-बस्तियों को देते हैं और हरिजनों के जीवन के सुख-दुःख में समरस होते हैं, इसके लिए हम उनके बहुत कृतज्ञ हैं। अन्य सार्वजनिक कार्यकर्त्ता यदि इतनी ही तन्मयता दिखाते रहें, तो हमारा बहुत काम हो सकता है।

'महार-वतन' सरकार ने अभी खत्म नहीं किया। माँग ऐसी है कि सरकार महार का वतन खत्म करके वतन की ज़मीन रैयत को देदे, और मज़दूरों को देहातों की परिस्थिति के अनुरूप वह वेतन दे। लेकिन इस प्रश्न को सरकार ने अभी हाथ में नहीं लिया। सब ज़िलों में महार-वतन को ज़मीन नहीं दी गई है, और जहाँ दी गई है वहाँ छोटे-छोटे टुकड़ों में। गाँवों में महारों के लिए कोई नया उद्योग-धंधा नहीं है, और उनकी भी आबादी दूसरी जातियों के समान ही बढ़ रही है, जिससे उनकी आर्थिक अवस्था बहुत गिर रही है, इसमें कोई संदेह नहीं।

अस्पृश्यता-निवारण क़ानून केवल क़ानूनी किताबों में ही बन्द पड़ा है, यह कहना पूर्णतः सही नहीं है। यह सच है कि आर्थिक परावलम्बन के कारण हरिजन लोग सार्वजनिक कुओं पर अपने पानी भरने के हक़ को अमल में नहीं ला सकते। लेकिन ऐसे भी कुछ शिक्षक या तलाठी लोग हैं, जो आर्थिक दृष्टि से गाँवों पर निर्भर नहीं रहते, फिर भी वे अपने हक़ को अमल में नहीं लाते। बहुत दिनों की पड़ी आदतों के कारण अधिकांश लोग समान अधिकार के बारे में दिलचस्पी नहीं दिखाते।

आज महाराष्ट्र के अनेक गाँवों में हरिजन होटलों में जा सकते हैं, और कुओं पर दूसरे लोगों के साथ पानी भी भर सकते हैं। इस संबंध में मैं जल्दी ही विस्तार से लिखनेवाला हूँ। रहने की अड़चन हरिजनों के लिए भी हो गई है, इसका प्रमुख कारण बढ़ती हुई जन-संख्या है। हरिजन-सेवक-संघ के सामने हरिजनों की आर्थिक अवस्था का प्रश्न है और इस संबंध में संघ को क्या करना चाहिए अथवा सरकार से उसे क्या करवाना चाहिए, इस बारे में यदि व्यावहारिक सुझाव आयें, तो उनपर अवश्य विचार किया जायेगा। संघ हरिजनों को ज़मीन दिलवाने के लिए थोड़ी-बहुत मदद कर भी रहा है। अण्णा साहेब का यह सुझाव विचारणीय है कि हरेक ज़िले में मज़दूर-सहकारी-संघ संगठित होने चाहिएँ। इसी प्रकार उनका यह सुझाव

भी विचार करनेयोग्य है कि हरिजनों के परम्परागत उद्योगों को शास्त्रीय रूप देना चाहिए। मगर इसके लिए विशेषज्ञ आदमियों की ज़रूरत है, सिर्फ़ प्रचारक यह काम नहीं कर सकेंगे। इस काम के लिए यदि गांधी-स्मारक-निधि सुयोग्य कार्यकर्त्ता दे, या उनके वेतन देने का आश्वासन दे, तो हरिजन-सेवक-संघ इस दृष्टि से प्रयत्न कर सकता है।

वार्षिक बैठक में तो श्री अण्णा साहेब के सुझाव पर विचार नहीं हो सका, किंतु एक उपसमिति नियुक्त हो चुकी है, जो उसपर विचार करेगी।

श्री अण्णा साहेब सहस्रबुद्धे-जैसे अधिकारी लोक-सेवक ने इन समस्याओं को जो गति दी है, उससे आशा है कि वह सुलझेगी और प्रगति भी अवश्य होगी। श्री अण्णा साहेब को मैं इसके लिए भूरि-भूरि धन्यवाद देता हूँ।"

श्री अण्णा साहेब सहस्रबुद्धे के उठाये हुए प्रश्नों पर काका साहेब बरवे ने जो विचार व्यक्त किये हैं, उनसे बहुत-कुछ सहमत होते हुए भी मैं नम्रतापूर्वक एक ज़मीन के प्रश्न पर अपना थोड़ा मतभेद प्रगट करता हूँ। संभव है कि महाराष्ट्र में यह प्रश्न हरिजनेतरों के प्रश्न की अपेक्षा अधिक भयंकर न हो और बढ़ती हुई जन-संख्या के कारण रहने की ज़मीन की तंगी या अभाव की समस्या वहाँ सबकी लगभग एकसमान हो, मगर दूसरे कई प्रांतों में, खासकर हरिजनों के लिए ही ज़मीन का यह सवाल बहुत अधिक कष्टदायक और भयंकर हो गया है। कितनी ही जगहों में जिन घरों में वे रहते हैं, वह ज़मीन भी उनकी अपनी नहीं होती। जिसकी ज़मीन पर उनके घर बने हुए होते हैं, उससे वे हमेशा आतंकित रहते हैं। इस तरह हर घड़ी दबे रहने के कारण, अपने सार्वजनिक अधिकारों का उपयोग करने की उनमें हिम्मत नहीं होती। खेती के लिए ज़मीन दिलाने के संबंध में थोड़ा पीछे भी सोचा जा सकता है, लेकिन जिस ज़मीन पर उनके घर बने हुए हैं या जिस ज़मीन पर वे बनाना चाहते हैं, वह तो उनकी अपनी 'मालिकी' की होनी ही चाहिए। सरकार पर इस एक अत्यावश्यक प्रश्न के संबंध में हमें तत्काल पूरा ज़ोर डालना है। पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इस जटिल प्रश्न पर कोई खास संतोषजनक विचार नहीं किया गया है। किंतु हमें आशा करनी चाहिए कि ग्राम-निर्माण के सामूहिक प्रश्न के साथ-साथ हरिजनों के मकानों की ज़मीन के प्रश्न को प्रमुखता दी जायेगी। हाल में भारत-सरकार ने जो बेकवर्ड क्लासेज़ कमीशन नियुक्त की है, उसे तो इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर अपना खास ध्यान देना ही चाहिए।

महाकोशल प्रदेश में

महाकोशल का प्रवास मैंने प्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री ल० गो० भट्ट के साथ २ फर्वरी से १२ फर्वरी तक, खासकर छत्तीसगढ़ के इलाकों का किया। जबलपुर में २ तारीख की रात को मैं पहुँचा। ३ तारीख को जबलपुर में कुछ ही घंटे ठहरना था और यहाँ कोई खास कार्यक्रम भी नहीं रखा गया था। सवेरे तीन हरिजन-बस्तियाँ हम लोगों ने तीनेक घंटे में देखलीं।

ठक्कर-ग्राम

ठक्कर-ग्राम नाम की नई सुन्दर बस्ती को पूज्य ठक्कर बापा की प्रेरणा से जबलपुर-कारपोरेशन ने कोई ४ साल पहले बनाया था। इस बस्ती को ३ साल पहले, जब कि यह बन ही रही थी, मैंने देखा था। ठक्कर-ग्राम शहर से बाहर और कुछ दूर है, पर स्थान खुला हुआ है और अच्छा स्वच्छ भी है। इस बस्ती में कुल ५० क्वार्टर हैं। एक बड़ा कमरा, एक छोटा कमरा और आगे हरेक के बरामदा है। पाखाने और स्नानघर भी काफ़ी अच्छे हैं। बस्ती के बीच में एक सुन्दर दालान है, जिसमें, हमें बतलाया गया, प्रौढ़-शिक्षण का केन्द्र चलता है, और जहाँ बस्ती के लोग अक्सर सत्संग और भजन-कीर्तन का कार्यक्रम भी चलाते हैं। बस्ती में कारपोरेशन की तरफ से एक व्यवस्थापक भी नियुक्त हैं, जो कल्याण-कार्य इन लोगों के बीच में चलाते हैं। बस्ती के लोग काम पर गये हुए थे, इसलिए उनसे

तो मिलना नहीं हो सका, पर उन लोगों के वेतन, छुट्टियों और ऋणदात्री सहकारी समितियों के सम्बन्ध में हमने पूछ-ताछ की और यह जानकर थोड़ा सन्तोष हुआ कि कम-से-कम इस बस्ती में रहनेवाले कारपोरेशन के मेहतरों पर से कर्ज़ का भार कुछ-कुछ उतर गया है और शराब पीने की लत भी कुछ कम होती जा रही है।

चाण्डाल भाटा : इस बस्ती में कारपोरेशन के २० क्वार्टर हैं। मगर हालत उनकी अच्छी नहीं। रोशनी का ठीक इन्तज़ाम नहीं है। क्वार्टरों में, कुर्सी बहुत नीची होने के कारण, बरसात के दिनों में पानी अन्दर चला जाता है। १० कुटुम्ब आंध्र देश के यहाँ रहते हैं। ये लोग तथा शहर की दूसरी बस्तियों में भी रहनेवाले आंध्र देश के बहुत-से सफैयों को कई साल पहले, जब जबलपुर के मेहतरों ने हड़ताल की थी, सफ़ाई का काम करने के लिए बुलाकर रखा गया था। यह नहीं कहा जा सकता कि अपने प्रान्त में ये लोग टट्टी-सफ़ाई का काम करते थे या नहीं।

रानीताल की बस्ती : तीसरी बस्ती हमने रानी तालाब के किनारे पर बसी हुई ६० टपरियों यानी झोपड़ियों की देखी। ये सारी ही टपरियाँ टीन के पुराने पत्तरों की बनी हुई हैं, दीवारें भी टीन की और छत पर भी टीन ही। गरमी के दिनों में इनके अन्दर रहना घोर तप करने के लिए मज़बूर होना है। सामने थोड़े फासले पर, जो एक बड़ा-सा इमली का दरख्त है, उसकी छाँहतले गरमियों की दुपहरी में जब लूएँ चलती हैं इन लोगों के बच्चे व औरतें सब बैठकर दिन काटते हैं। टपरियों के पीछे काफ़ी गंदगी भी देखी। इस प्रकार की और भी अनेक बस्तियों को मैंने देश के अनेक भागों में देखा है। इस तरह के दृश्य देखते-देखते अब ऐसा नहीं लगता कि अमुक शहर या कस्बे में ही निरपराध मनुष्यों को नरक की आग में भूननेवाली नर-बस्तियाँ मौजूद हैं। देख लेता हूँ, म्यूनिसिपालिटी के अधिकारियों, मेम्बरों और नागरिकों से उनके बारे में कह-सुन लेता हूँ। वे भी या तो चुपचाप या कुछ बँधे हुए जवाब देकर सुन लेते हैं। उन झोपड़ियों में रहनेवाले आशा बाँध बैठते हैं कि खादी-धारी कुछ बाबू लोग हमारी बस्ती देखने आये थे, हमसे उन्होंने सुख-दुख की बात भी की थी, लिखकर भी कुछ ले गये थे और हमारे लिए ज़रूर वे कुछ-न-कुछ करेंगे। मगर दो-तीन साल बाद फिर जब उन बस्तियों को देखने का संयोग मिलता है, तब प्रायः 'यथापूर्व' ही सब कुछ वहाँ देखता हूँ। जो स्थानीय कार्यकर्त्ता साथ में बस्तियाँ दिखाने जाते हैं, वे भी आश्वासन दे देते हैं कि अवश्य सुधार करवाने और सुवि-धाएँ दिलवाने का प्रयत्न किया जायेगा, पर सारी बातें लग-भग वहीं-की-वहीं रह जाती हैं। ऐसी स्थिति है। नगर-पालिकाओं ने कहीं-कहीं पर इस दिशा में कुछ काम किया भी है, यह मैं मानता हूँ। जब उनके अधिकारी और मेम्बर अपनी असमर्थता बतलाते हैं, तब कुछ हदतक तो वे सही होते हैं। अगर वे अपनी आय बढ़ाने के लिए कोई नया टैक्स लगाने की बात सोचते हैं, तो उन्हें ज़बरदस्त विरोध का सामना करना पड़ता है। राज्य-सरकारों से भी उन्हें पर्याप्त आर्थिक सहायता नहीं मिलती है। पर्याप्त सहायता क्यों नहीं दी जाती, इसका जवाब राज्य-सरकारों के पास भी रहता है। फिर नई बस्तियाँ बसाने के लिए ज़मीन न मिल सकने का सवाल भी सामने रखा जाता है। अगर थोड़े-से क्वार्टर किसी तरह बनवा भी दिये जाते हैं, तो शहर से बिल्कुल बाहर, बहुत दूर, जहाँ से कि सफ़ाई का काम करने-वालों को दौड़ते-हाँफते अपने काम पर रोज़ पहुँचना पड़ता है। यह बात वहाँ की है, जहाँ अधिकारी व मेम्बर इस दिशा में कुछ करना चाहते हैं या करने की बात सोचते हैं। मगर ऐसे भी कितने ही नगर और कस्बे हैं, जहाँ इस दिशा में साधन होते हुए भी कुछ सोचा भी नहीं जाता, करने-कराने की बात तो दूर रही। यदि अधिकारियों, नगर-पिताओं और सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को इन नारकीय बस्तियों का थोड़ा-सा भी अनुभव हो और न हो तो उनमें दो-चार दिन रहकर वे अनुभव लेलें, तो ऐसी बस्तियों को ज़मींदोज़ करा देने और मनुष्य के रहनेलायक स्वच्छ स्थान पर मकान बनवा देने में कुछ अधिक समय नहीं लगेगा और साधन भी निकल आयेंगे। शहरों की सड़कों को बनवाने व उनकी मरम्मत कराने का काम कुछ वर्षोंतक रोका जा सकता है; बाग-बगीचों पर पैसा खर्च न करके भी कोई बहुत बड़ी नागरिक हानि होनेवाली नहीं। बच्चों को पढ़ाने-लिखाने का प्रश्न भी तबतक स्थगित किया जा सकता है और इस प्रकार कितनी ही मदों में से रुपया निकालकर इस अत्यावश्यक काम को नगर-पालिकाएँ तत्काल पूरा करा

सकती हैं, जिसकी उपेक्षा करना नागरिकों के लिए, नगर-पालिकाओं के लिए और सरकार के लिए लज्जा का प्रश्न है। राज्य-सरकारों को भी कमज़रूरी और गैरज़रूरी योजनाओं में से रुपया निकालकर इस निहायत ज़रूरी काम के लिए पूरी मदद देनी ही चाहिए।

इन तीन बस्तियों को देखने के बाद कमर्शियल कालेज, प्रान्तीय प्रशिक्षण-महाविद्यालय तथा हितकारिणी हाई स्कूल इन शिक्षा-संस्थाओं में बुनियादी शिक्षा तथा अस्पृश्यता-निवारण पर मैंने भाषण दिये। विद्यार्थियों और अध्यापकों से अनुरोध किया कि राष्ट्र-निर्माण तथा समाज-संशोधन के इस महान् कार्य में वे भी यथावकाश अपना योग देते रहें।

रात को बिलासपुर जानेवाली गाड़ी चूक जाने के कारण कटनी में ठहरना पड़ा। यहाँ की हरिजन-बस्तियों को मैंने कोई १२ साल पहले देखा था। मालूम हुआ कि जो हालत एक बस्ती की तब थी वैसी ही आज भी है। आम सण्डास की वजह से बस्ती के हरिजनों को काफ़ी कष्ट रहता है। स्थानीय कुछ सज्जनों के साथ अस्पृश्यता-निवारण के बारे में चर्चा की। ऐसा लगा कि इस प्रश्न को जैसे आज राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता भी बिल्कुल भूल गयेहैं और इस काम को बहुत दिनों से छोड़ बैठे हैं। उन्हें सन्तोष हो गया है कि हरिजनों का प्रश्न अब हल हो चुका है और उनके करने-धरने की बात अब कुछ रही नहीं। ऐसी दुःखद स्थिति अनेक स्थानों पर पाई जाती है।

४ फर्वरी

शाम को ५ बजे हम लोग मनेन्द्रगढ़ पहुँचे। यह ८००० की आबादी का क़स्बा है, सुरगुजा ज़िले के अन्तर्गत। क़रीब में कोयले की खानें हैं। पहुँचते ही हम लोगों ने एक भंगी-बस्ती देखा, जो साफ़ और खुली हुई जगह पर बसी है। उनकी सामाजिक अयोग्यताओं के बारे में रात को थोड़ी चर्चा भी की।

यहाँ से कोई २ मील दूर झगड़ाखान देखने को हम लोग रात को गये। सतनामियों और कुछ आदिवासियों के साथ चर्चा की और कोयले की खदान के संचालक की तरफ़ से बनाये गये उनके रहने के छोटे-छोटे झोंपड़े भी देखे। भंगी-बस्ती भी देखी। यहाँ भी प्रायः वेही, मगर कुछ कम, नागरिक अयोग्यताएँ पाईं। एक-दो कार्यकर्त्ताओं को उनके बीच काम करने को प्रेरित भी किया।

५ फर्वरी

मनेन्द्रगढ़ से ३० मील के फ़ासले पर पू राज्य की राजधानी वैकुण्ठपुर में मध्यप्रदेश र उद्योग-विभाग द्वारा संचालित लोकशाला का ने निरीक्षण किया। इस प्रकार की जो अनेक शिक्ष चलाई जाती हैं उनमें से एक यह है। छात्रालय ः खर्च पर लड़के रहते हैं और सिलाई, बढ़ईगीर तरकारी की खेती इन तीन उद्योगों को सीखते व प्रयोग खासा उपयोगी है, मगर चालू काम को देखते यह प्रयोग कुछ अधिक खर्चीला मालूम दिया।

यहाँ से ५० मील चलकर तीसरे पहर हम लोग ज़िले के सदर मुकाम अम्बिकापुर पहुँचे। यहाँ के ह में विद्यार्थियों, अध्यापकों तथा शहर के कुछ नाग सभा में अस्पृश्यता-निवारण और हरिजन-सेवा पर ः यह सारा ही इलाका अधिकतर आदिवासियों का है। सियों के लिए मध्यप्रदेश-सरकार की ओर से यहाँ कार्य भी खासा अच्छा हो रहा है। हरिजनों क बहुत कम है।

शाम को दो भंगी-बस्तियाँ देखीं। रात को ज़िल आफ़िस में हरिजनों के मुखियों के साथ अच्छी त की। भंगियों को छोड़कर बाकी दूसरे हरिजनों में क सामाजिक निर्योग्यताएँ सुनने में नहीं आईं। चमार र खेतों पर मज़दूरी करते हैं। काश्त करने के लिए ज़मीः अपनी नहीं है। भूमिहीनता का यह विकट प्रश्न करी देशव्यापी है। ऐसा लगता है कि यदि खेती कर स हरिजनों को समय पर खेती के लिए ज़मीन न दी ः इससे बेकारी और असन्तोष की भावना थोड़े ही दि भयंकर हो जायेगी। यह कैसी बात है कि जो आद को जोते, बोये और अपना पसीना बहाये, उस ः उसकी मालिकी न हो?

भंगियों ने अपने कम वेतन और समय पर ः मिलने की और ऐसे ही एक-दो दूसरे हक़ों के मा की शिकायत की, पर दो नौजवानों ने उनकी ब काटते हुए कहा कि असली शिकायत तो हमारी यह

हमें सबके समान मनुष्य नहीं समझा जाता, नाई हमारी हजामत नहीं बनाता और होटलों के अन्दर हमें पैर नहीं रखने दिया जाता। उनकी यह शिकायत सुनकर हमें खुशी हुई कि नवयुवकों में, इन पिछड़े हुए इलाकों में भी, आज जागृति तो आ रही है। लेकिन दुःख की बात यह है कि एक तो यहाँ पर काम करनेवालों की बड़ी कमी है, दूसरे मध्य-प्रदेश सरकार का अस्पृश्यता निवारण कानून इन विलीनीकृत राज्यों में लागू नहीं किया गया है। तो भी एक उत्साही कार्यकर्त्ता ने मुझसे कहा कि २-३ हरिजन युवकों को वे अपने साथ किसी दिन चाय की दूकान पर ले जायेंगे और नाइयों से उनके बाल बनाने के लिए भी कहेंगे और अगर वे तैयार नहीं हुए तो दूसरे वैध उपाय भी काम में लायेंगे। देखना है, क्या होता है!

६ फर्वरी

अम्बिकापुर से मोटर से हम लोग शाम को साढ़े पाँच बजे रायगढ़ पहुँचे १२० मील। शहर से बाहर एक भंगी-बस्ती देखने गये। कुल ६० घर उस बस्ती में हैं, जो उनके अपने हैं। सारी बस्ती में केवल एक लालटेन कमेटी ने लगा रखी है, पानी का नल भी एक ही है, जिससे गरमियों में पानी की काफ़ी तकलीफ़ हो जाती है। सफ़ाई कम देखने में आई। १४ बच्चे पास के एक सरकारी स्कूल में पढ़ने जाते हैं।

७ फर्वरी

सरकारी तथा म्यूनिसिपल कमेटी के हाई स्कूलों की संयुक्त सभा में अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-सेवक-संघ के इतिहास पर मैंने अपने भाषण में विस्तार से प्रकाश डाला और विद्यार्थियों व अध्यापकों से अनुरोध किया कि वे हरिजन-प्रवृत्ति में अपना भी यथावकाश योग दें। इधर अक्सर सभी जगह हरिजन-कार्य के बारे में जानकारी देना आवश्यक लगता है। विद्यार्थी तो क्या प्रायः अध्यापक तथा सार्वजनिक कार्यकर्त्ता भी हरिजन-सेवक-संघ के कार्यों के बारे में नगण्य-सा परिचय रखते हैं। शौर्यपूर्ण इतिहास की पाठ्य-पुस्तकें जब तैयार हों, तब हों किन्तु गांधी-युग की मुख्य विचारधाराओं की महत्त्वपूर्ण मोटी-मोटी बातों का ज्ञान तो हमारी सारी ही शिक्षण-संस्थाओं को करा ही देना चाहिए।

चन्द कार्यकर्त्ताओं के बीच भी हरिजन-कार्य के बारे में कुछ चर्चा की। दो हरिजन युवकों से भी बात की और उनके अन्दर अपने समाज को उठाने के लिए मैंने जो तीव्र भावना देखी उससे प्रसन्नता ही हुई। इन लोगों ने अपना एक मंडल संगठित किया है। उसके द्वारा ये लोग दारूबन्दी और चर्खों का प्रचार करते हैं ऐसा उनसे मुझे मालूम हुआ। उनके आवेशपूर्ण उत्साह का सही उपयोग करने के लिए स्थानीय कार्यकर्त्ताओं को मैंने तथा श्री भट्टजी ने कहा।

शाम को हम बिलासपुर पहुँचे। बहुत ऊँचे और मुख्य हरिजन-सेवक स्वर्गीय साम्बैयाजी की रह-रहकर यहां याद आने लगी। सरकंडा नदी के तटों पर किस प्रकार वर्षों उन्होंने नित्य नियमपूर्वक गीता का पाठ करते हुए स्वच्छता-यज्ञ का अनुष्ठान किया था, हरिजनों की किस लगन और निष्ठा के साथ उन्होंने सेवा की थी, ग्राम-उद्योगों के वे व्यावहारिक रूप से कितने बड़े समर्थक थे और विनम्रता की तो मानो मूर्ति ही थे। उनके संस्मरण १६ वर्ष पूर्व के बिलासपुर पहुँचते ही मेरी आँखों के सामने आ गये। सचमुच साम्बैयाजी एक ऊँचे कर्मनिष्ठ साधु थे।

रात को दो हरिजन-बस्तियों को घूमकर देखा—एक मेहतर बस्ती और दूसरी सतनामी व कनौजिया चमारों की। मेहतरों के अपने खुद के मकान हैं। कुम्हारपारे की इस बस्ती में रोशनी की कमी है। इनके बच्चे पढ़ने तो जाते हैं, मगर संख्या को देखते हुए बहुत कम हैं।

सतनामी-बस्ती के बिल्कुल पास एक शराब की भट्टी है, जिसे हटवा देने के लिए बस्ती के सभी लोगों का पूरा प्रयत्न है। मालूम नहीं, गरीब और पिछड़े हुए लोगों के मुहल्लों में शराब की भट्टियाँ और दुकानें रखना सरकार क्यों ज़रूरी समझती है। ठेके से आनेवाली थोड़ी-सी ज्यादा आमदनी के लालच से जान-मानकर गरीबों का इस प्रकार शोषण और नैतिक पतन कराकर सरकार आखिर कौन-सा बड़ा लाभ देखती है। ऐसी ही शिकायत रायगढ़ की मेहतर-बस्ती के लोगों की भी थी।

यह जानकर संतोष हुआ कि सतनामी हरिजनों के ज्यादातर अपने खेत हैं। खेती भी ये लोग खासी अच्छी करते हैं। छूत-छात का बर्ताव भी इनके साथ नहीं किया जाता। रहन-सहन इनका खासा साफ-सुथरा रहता है।

प्रशिक्षण-विद्यालय भी हम लोग देखने गये। प्रार्थना हो चुकी थी। फिर भी प्रशिक्षण-विद्यालय के आचार्य श्री-बेंजमन ने सब शिक्षार्थियों को प्रार्थना-भवन में बैठाकर अस्पृश्यता-निवारण और खादी पर बोलने का मुझे अवसर दिया। साथ ही, दूसरे दिन प्रातःकाल की प्रार्थना में सम्मिलित होने और प्रवचन करने का भी मुझे आमंत्रण दिया।

८ फर्वरी

प्रातःकाल हम लोग बिलासपुर के प्रशिक्षण-विद्यालय की प्रार्थना में सम्मिलित हुए। प्रार्थना के साथ-साथ तकलियाँ और चरखे भी शांत वातावरण में चल रहे थे। आचार्य विनोबाजी का चलाया हुआ यह क्रम बहुत अच्छा लगा। अन्तर में भगवान् का ध्यान, मुख में हरिनाम और कर में कोई-न-कोई उत्पादक काम। बिना कर्म और अर्थ की उपासना निष्फल-सी हो जाती है। सामूहिक प्रार्थना तथा सर्वोदय की भावना पर मैंने प्रार्थना के उपरान्त भाषण दिया और प्रशिक्षण लेकर स्थान-स्थान पर शिक्षण-कार्य में लगजानेवाले भावी शिक्षकों से अनुरोध किया कि वे अस्पृश्यता-निवारण और हरिजन-सेवा का संकल्प लेकर विद्यालय से जायँ।

दोपहर को हम रायपुर पहुँचे और राष्ट्रीय विद्यालय में जाकर ठहरे। यहाँ पर विद्यार्थी खादी शिक्षण लेते हैं। शिक्षण ले चुकने के पश्चात् उन्हें जनपदों में काम मिल जाता है।

तीसरे पहर मेहतर-बस्तियाँ हमने देखीं। एक तो बैजनाथपारा के पास बाँसटाल की बस्ती, और दूसरी बस्ती आमपारा की।

बाँसटाल की बस्ती में म्युनिसिपल कमेटी के ५० क्वार्टर हैं, जो छोटे-छोटे और बे-मरम्मत हालत में हैं। गन्दगी तो आसपास थी ही, रोशनी का भी कोई प्रबन्ध नहीं था। बस्ती के लोगों ने बहुत असंतोष प्रगट किया। हमें यहाँ भी अपने बारे में सफाई देनी पड़ी कि हम लोग न तो म्युनिसिपैलिटी से और न सरकारी तंत्र से सम्बन्ध रखनेवाले आदमी हैं। जो वाजिब शिकायतें और तकलीफें होती हैं उनको हम अधिकारियोंतक पहुँचाभर देते हैं। सवर्ण जनता आप लोगों के साथ छूतछात और असमानता का बर्ताव कहाँतक करती है इसकी जानकारी लेने और उसे दूर कराने का प्रयत्न हरिजन-सेवक-संघ के हमलोग जहाँ-तहाँ कर रहे हैं। हमें बतलाया गया कि छूतछात का बर्ताव उनके साथ लोगों का अब काफी कम हो गया है।

एक हरिजन भाई ने जब पूज्य ठक्कर बापा का एक संस्मरण भक्ति-भावपूर्वक सुनाया तो मैं गद्गद हो गया। उसने कहा कि ठक्कर बापा ने ही खड़े-खड़े कमेटी पर ज़ोर डालकर हमारे सामने की यह पक्की नाली बनवायी थी। यहाँ तो इतना पानी भरा रहता था कि बरसात में निकलना भी हमारे लिए मुश्किल हो जाता था। उसने दुखी होकर यह भी कहा कि जब ठक्कर बापा का स्वर्गवास हुआ, तब यहाँ उनके शोक में हड़ताल भी नहीं हुई थी। पूज्य बापा का स्मरण कितने ही स्थानों पर मेरे प्रवासों में दीन-दलितों ने बड़े भक्ति-भाव से किया है। राज-नेताओं की बड़ी-बड़ी बिजली की प्रचण्ड बत्तियाँ आगे चलकर गुल हो जायेंगी, पर बापा जैसे मूक जन-सेवकों का मिट्टी का दीपक ग़रीबों की झोपड़ियों में बुझने का नहीं।

दूसरी बस्ती आमपारे की हमने देखी। म्यूनिसिपैलिटी ने यहाँ पर अपना जो कर्त्तव्य-पालन किया उसके लिए उसका धन्यवाद करना चाहिए। चार कतारों में २८ नये अच्छे सुन्दर क्वार्टर देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। पक्की टट्टियाँ और स्नान के स्थान की भी व्यवस्था यहाँ संतोषजनक देखी, किन्तु पानी की तंगी रहती है। दूर से पानी इन्हें लाना पड़ता है। पास ही एक कुआँ है, पर उसपर से इन्हें पानी नहीं भरने दिया जाता। रोशनी का भी कोई इन्तज़ाम नहीं है। पर सुनने में आया कि यह तकलीफ कुछ दिनों के बाद दूर हो जायगी।

रायपुर का हरिजन-बोर्डिंग-हाउस का भी निरीक्षण किया। मकान छात्रावास का १९३९ में बना था, जिसकी आधार-

शिला राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने रखी थी। छात्रावास का भवन सुन्दर और स्थान स्वच्छ है। कुल ४४ विद्यार्थी यहाँ रहते हैं। इनमें २८ विद्यार्थी सतनामी जाति के हैं और ६ विद्यार्थी सहीस और महार जाति के। सरकार से प्रतिविद्यार्थी केवल ६ रु० मासिक सहायता मिलती है और ६०० रु० वार्षिक व्यवस्था-खर्च के लिए। ५वीं कक्षा से लेकर कालेज के पहले वर्षतक के विद्यार्थी ये सब हैं। मुझे बतलाया गया कि पहले कताई भी यहाँ पर चलती थी, पर बाद को बन्द कर दी गई। मैंने फिर से व्यवस्थित रीति से कताई चलाने की सलाह दी और विद्यार्थियों से अनुरोध किया कि पढ़ने के साथ-साथ उन्हें साग-तरकारी भी पैदा करनी चाहिए।

शाम को राष्ट्रीय-विद्यालय में प्रार्थना के उपरान्त वस्त्र-स्वावलंबन और अस्पृश्यता-निवारण की प्रवृत्तियों को जहाँ भी वे जनपदों में काम करें वहाँ चलाने का आग्रह रखें ऐसी मैंने शिक्षार्थियों को सलाह दी।

६ फर्वरी

रायपुर से दुर्ग जाना था, पर यह मालूम होने पर कि जिन प्रमुख लोगों के साथ वहाँ चर्चा करनी थी या जिनके द्वारा कार्यक्रम निश्चित करना था वे किसी उपचुनाव के सिलसिले में बाहर गये हुए थे। हमने दुर्ग को छोड़ दिया और सीधे गोंदिया होकर बालाघाट पहुँचे। यहाँ भी कोई खास कार्यक्रम नहीं था; रास्ते में यह स्थान पड़ता था इसलिए यहाँ उतर पड़े और दो हरिजन-बस्तियों को देख डाला। इस क़स्बे में क़रीब ५० स्त्री-पुरुष कमेटी की तरफ़ से सफ़ाई का काम करते हैं। मकान इनके अपने हैं और अपनी ही ज़मीन पर। नागरिक निर्योग्यताएँ सभी जगहों की तरह यहाँ भी पाई। इस बस्ती की स्त्रियों ने बतलाया कि कुछ दिनों पहले एक कुएँ पर एक भंगिन के पानी भरने पर लोगों ने उस कुएँ का पानी लेना ही छोड़ दिया!

महार-बस्ती भी देखी और उनकी निर्योग्यताओं के बारे में पूछ-ताछ की। इन लोगों को वैसे कोई खास सामाजिक बाधाएँ नहीं हैं, ऐसा मालूम हुआ। स्थानीय गणेश-मंदिर में ये लोग दर्शन करने जा सकते हैं। कुआँ इनका अपना है, इसलिए पानी के लिए कभी किसी दूसरे कुएँ पर ये लोग नहीं गये। इसी तरह नाई भी एक इनकी अपनी बिरादरी का आदमी है। २-३ कुटुम्ब काश्तकारी करते हैं और ज़मीन भी उनकी अपनी है। बाकी कुछ तो राजगिरी करते हैं और कुछ लोग मज़दूरी वग़ैरह।

१० फर्वरी

वापस जबलपुर आया और ग्वालियर होते हुए १२ तारीख को दिल्ली पहुँचा।

३ फरवरी से १० फरवरीतक महाकोशल के जिस भाग की जो हमने यात्रा की, उससे सामान्यतः हम इन परिणामों पर पहुँचे:—

१. सुरगुजा और रायगढ़ ज़िले पहले देशी राज्य थे—अन्य देशी राज्यों की तरह राजनैतिक और सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों में बहुत पिछड़े हुए, इसलिए जागृति इधर बहुत कम हो सकी। इस अवस्था में भी जिन चन्द कार्यकर्त्ताओं ने थोड़ा-बहुत काम किया, उसे ग़नीमत समझना चाहिए। मालूम हुआ कि सुरगुजा, रायगढ़ और बस्तर इन तीन राज्यों में अभीतक मध्यप्रदेश-सरकार ने अस्पृश्यता-निवारण क़ानून लागू नहीं किया है। कारण यह बताया जाता है कि इन पिछड़े हुए इलाकों में यदि यह क़ानून लागू कर दिया गया, तो कदाचित् आपस में कटुता पैदा हो सकती है और अव्यवस्था भी। परन्तु जो थोड़े-से काम करनेवाले लोग मिले, उन्होंने और कुछ हरिजनों ने भी अस्पृश्यता-निवारण क़ानून लागू करा देने की माँग की।

२. अन्य राज्यों की तरह स्वभावतः विलीनीकृत भागों तथा कुछ स्थानों के कार्यकर्त्ताओं का झुकाव राजनैतिक बातों की ओर अधिक देखने में आया। इस बात को देखकर कोई खास आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि आज रचनात्मक कार्यक्रम की ओर न्यूनाधिक मात्रा में सारे ही देश में अरुचि और अश्रद्धा देखने में आती है। अधिकांश राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं ने ऐसा मान लिया है कि अस्पृश्यता की समस्या अब रही नहीं है, या ऐसा मानना चाहिए कि हरिजन-कार्य के प्रति कोई खास दिलचस्पी न रखने से इस सम्बन्ध की मोटी-मोटी जानकारी भी उन्हें आज नहीं है। उनमें से कुछ तो

इतना भी नहीं जानते कि हरिजन और आदिवासी ये दोनों भिन्न-भिन्न जातियाँ या वर्ग हैं!

३. हरिजन विद्यार्थी साधारण स्कूलों में छोटे-बड़े सभी स्थानों में, बिना किसी भेद-भाव के, पढ़ते हैं। छात्रालय हरिजनछात्रों का केवल एक रायपुर में है। इसका यह अर्थ नहीं कि अन्य स्थानों के सामान्य छात्रालयों में हरिजन विद्यार्थी सबके साथ रह रहे हैं। अन्य राज्यों की तरह आश्रम के रूप में छात्रालय यहाँ स्थापित किये ही नहीं गये। मराठी मध्यप्रदेश तथा बरार में अपेक्षाकृत शिक्षा के प्रति अधिक जागृति होने के कारण कई छात्रालय देखने में आते हैं।

४. सरकारी सुविधाएँ शिक्षा के क्षेत्र में मध्यप्रदेश में दूसरे राज्यों की अपेक्षा कम मिली हुई हैं। फीस बहुत कम विद्यार्थियों की माफ़ है। छात्रवृत्तियाँ भी कम परिमाण में दी जाती हैं। मालूम हुआ कि इस वर्ष कहीं-कहीं पर पाठ्य-पुस्तकें भी कम वितरित की गई हैं।

५. रायपुर की म्यूनिसिपेलिटी ने जो २८ क्वार्टर भंगी कर्मचारियों के लिए बनवाये, वैसे ही, उसी नमूने के, क्वार्टर दूसरी म्यूनिसिपल कमेटियों को भी आवश्यकता देखते हुए बनवा देने चाहिएँ। बस्तियों में पानी और रोशनी की कमी कई स्थानों पर देखने में आई। जिनपर नगर की सफाई और स्वास्थ्य निर्भर हों उनकी साधारण जीवन-सुविधाओं पर नगर-पालिकाओं को सबसे पहले ध्यान देना चाहिए। यदि उनके पास खर्चने के लिए रुपये की कमी हो तो दूसरे कम ज़रूरी कामों को नगर-पालिकाएँ स्थगित भी कर सकती हैं। पर भंगी कर्मचारियों के क्वार्टरों और सफाई, पानी व रोशनी की सुविधाएँ तो तत्काल कर ही देनी चाहिएँ।

महाकोशल प्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघ का संगठन फिर से किया जा रहा है। सभी स्थानों पर लगन और परिश्रम के साथ काम करनेवाले कार्यकर्त्ता यद्यपि सुलभ नहीं हैं, तोभी जहाँ जो देखने में आते हैं, उनके द्वारा कार्य को संगठित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। यह न समझा जाये कि अस्पृश्यता-निवारण का कार्य केवल कांग्रेसजनों के ही करने का है। यह तो समाज और धर्म के संशोधन का पक्ष-निरपेक्ष कार्य है। इसे सभी ऐसे लोगों का सहयोग अपेक्षित है, जो अस्पृश्यता के किसी भी रूप में विश्वास नहीं करते और हरिजन-सेवा को समाज और राष्ट्र के नव निर्माण में जो अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। ऐसे समाज-सेवक, हर ज़िले और हर तहसील के सामने आकर इस पुनीत कार्य में हमारा हाथ बटायें। हम तो ऐसे अनेक कार्यकर्त्ताओं का सहयोग चाहते हैं, जो प्रमुख रूप से हरिजन-कार्य को ही हाथ में लेलें। हमें आशा है कि महाकोशल में अस्पृश्यता-निवारण और हरिजन-सेवा-कार्य जल्दी ही संगठित रूप से चलने लगेगा।

वियोगी हरि

सामाजिक और धार्मिक रिवाज

हरिजनों के सामाजिक और धार्मिक जीवन का अध्ययन भी काफी दिलचस्प है। जन्म, विवाह और मृत्यु ये जीवन की तीन ऐसी घटनाएँ हैं, जिन्हें सभी मानव-समाजों में महत्त्वपूर्ण माना जाता है। विवाह-संस्था अत्यन्त प्राचीन है और आदिवासियों और हरिजनों सहित सभी पिछड़ी जातियों में उसका अस्तित्व पाया जाता है। इसलिए विवाह संपन्न कराने के लिए हर जाति में किसी-न-किसी प्रकार का समारोह होता है। आर्यों के पुरोहित ने नीची जातियों, जैसे अस्पृश्यों और आदिवासियों के संस्कारों में काम करना स्वीकार नहीं किया। यह उसकी प्रतिष्ठा के विरुद्ध होता। किन्तु आजीविका की खातिर, समय बीतने के साथ, ब्राह्मण पुरोहित कथित नीची जातियों के लोगों के संस्कारों में जाने लगे। अब हम देखते हैं कि कुछ स्थानों में ब्राह्मण महारों, चमारों आदि के यहाँ जाकर शादियाँ कराते हैं। हाँ, वे वैदिक विधि का अनुसरण नहीं करते, बल्कि कुछ सामान्य संस्कृत श्लोकों का उच्चारण करके सन्तोष मान लेते हैं। हिन्दू

क़ानून अथवा धर्मशास्त्र के अनुसार हवन और सप्तपदी विवाह के आवश्यक अंग हैं, किन्तु इन लोगों में उसका पालन नहीं किया जाता। हल्दी का लेप, पाणिग्रहण, दुपट्टा और साड़ी का गठबंधन और आसन की अदल-बदल आदि बातें मंगल गान के बीच होती हैं और विवाह हो जाता है। अगर विवाह में कोई ब्राह्मण उपस्थित होता है, तो दो व्यक्ति दूल्हा और दुलहिन के बीच एक पर्दा पकड़कर खड़े हो जाते हैं और ब्राह्मण कुछ श्लोक पढ़ देता है, जो बहुधा प्रसंग के उपयुक्त भी नहीं होते।

ऊँची जाति के ब्राह्मणों की अधकचरी सेवा को देखकर महारों ने खुद अपने में से ही पुरोहित बना लिये हैं, जो भट या जोशी कहलाते हैं। उनकी अलग ही एक उपजाति बन गई है। भटों और महारों में अन्तर-भोजन तो होता है, किन्तु अन्तर-विवाह नहीं होते। वे ब्राह्मणों की ही भाँति संस्कार कराने की फीस लेते हैं। (यहाँ मैं प्रसंगवश यह उल्लेख करदूँ कि बड़ौदा (गुजरात) में मैंने हेड़ों में भी पुरोहित देखे हैं, जो 'गरोडा ब्राह्मण' कहलाते हैं, किन्तु होते वे भी अस्पृश्य ही हैं।) भटों को अपने पौरोहित्य-कार्य के लिए गाँव दे दिये गये हैं, किन्तु भट सभी जगह नहीं मिलते और उन्हें बिल्कुल आवश्यक भी नहीं माना जाता। पंच भी विवाह करा सकते हैं। किन्तु जिन स्थानों में नया सुधार आन्दोलन फैल गया है, वहाँ अगर ब्राह्मण आने को राज़ी हो तो भी उसे बुलाने का उत्साह नहीं दिखाया जाता। यही बात जाति के भट या बुआ को बुलाने के बारे में देखी जाती है। महारों में संगठित पुरोहिती पंढरपुर में पाई जाती है, जहाँ स्थानीय महार अपने महार तीर्थयात्रियों का नियमित रूप से सत्कार करते हैं, धार्मिक क्रियाएँ कराने की दक्षिणा लेते हैं और महार यात्रियों की वंशावली अपनी बहियों में दरज करते हैं। आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है। पुरोहिती की आवश्यकता थी और जब उच्चवर्ण के ब्राह्मणों ने सेवा करने से इन्कार किया तो महारों ने अपने ही ब्राह्मण बना डाले।

चमारों और मांगों ने संभवतः अपेक्षाकृत बहुत कम संख्या में होने कारण अपना अलग पुरोहित वर्ग नहीं बनाया। खानदेश के दो ज़िलों में, जहाँ ब्राह्मण उनके विवाह-संस्कार में क्वचित् ही उपस्थित होते हैं, गाँवों में चमार और मांग ऐसे मकान के पड़ौस में जाकर बैठ जाते है, जहाँ किसी पटेल के यहाँ शादी हो रही होती है और अपनी सीधी-सादी विवाह-विधि खुद ही पूरी करलेते हैं। जब पटेल के घर में ताली बजती है, तो यह समझ लिया जाता है कि विवाह का शुभ क्षण आ गया। कहीं बाहर भी विवाह का संदेश मान लिया जाता है। बड़े गाँवों में अगर ब्राह्मण नहीं आता है, तो पंच ही विवाह करा देते हैं।

महारों की अधिकतर स्थानों में अपनी देवी होती है। कुछ ज़िलों में उसे आवल बाई और अन्य ज़िलों में मरी आई या लक्ष्मी कहा जाता हैं। उसकी कोई मूर्ति नहीं होती है। कुछ पत्थर या मिट्टी के गोले किसी ताक में या पेड़ के नीचे रख दिये जाते हैं। मंदिर-जैसे स्थान बहुत थोड़े हैं। महारों की नई पीढ़ी आवल बाई अथवा मरी आई की भी कोई परवा नहीं करती।

चमारों और मांगों के कुछ जगहों को छोड़कर अलग मंदिर नहीं हैं।

महारों की प्रायः अपनी चावड़ी होती है—एक छोटी-सी कुटिया, जो एक ओर से खुली होती हैं। यह सवर्ण हिन्दुओं की जैसी ही होती है। यहाँ लोग इकट्ठे होते हैं। चमारों और मांगों की चावड़ी प्रायः नहीं होती।

मुर्दों का दफ़नाना

महार हमेशा अपने मुर्दों को दफ़नाते हैं। मांग भी ऐसा ही करते हैं। चमार अक्सर अपने मुर्दों को जलाते हैं। जलाने की अपेक्षा दफ़नाना सरल पड़ता है।

'महार-वतन'

'महार-वतन' एक प्राचीन संस्था है, जिसका गहराई से अध्ययन किया जाना चाहिए। महार वतनदारों को गाँव के प्रति कुछ महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य करने होते हैं। जैसे, गाँव की सीमा की रक्षा करना, सरकारी लगान वसूल करने और खेतों की पैमायश में सहायता देना आदि। बहुत-से

स्थानों में वतन की भूमि है या भूमि के बजाय वतनदारों को थोड़ा नक़द भत्ता दिया है। गाँव के लोगों की सेवा के बदले में उन्हें बलूता दिया जाता है अर्थात् किसान अनाज देते हैं। समय के प्रवाह के साथ वतन का रूप बिगड़ गया है और अब उसकी कोई इज्जत नहीं की जाती।

इस बात के अनेक चिह्न मिलते हैं कि महार एक प्राचीन जाति है, जो महाराष्ट्र के मैदानों में रहती थी और उनपर काबिज़ थी। बहुत संभवतया दूसरी जाति की विजय के कारण उसका अधिकार छिन गया और उसके साथ पीढ़ियों से अधीन प्रजा के जैसा व्यवहार होता आया है।

बि० न० बरवे

भाषणों में से

हरिजन-कार्य द्वारा सर्वात्मैक्य

[१३ दिसंबर,१९५२ को खामगाँव में विदर्भ-सर्वोदय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए—]

खामगाँव में आज एकसाथ इतने तमाम रचनात्मक कार्यकर्त्ताओं को देखकर अत्यन्त आनन्द होता है। भूदान-यज्ञ के निमित्त आप लोगों ने सर्वोदय-सम्मेलन का जो आयोजन किया वह बहुत उचित हुआ। सर्वोदय की मूल कल्पना भूदान-यज्ञ के अंदर सारी-की-सारी आ जाती है। पूज्य विनोबाजी ने इस अनुष्ठान के सभी गर्भित अर्थों पर अपनी पैदल यात्रा के अनेक प्रवचनों में इतना अधिक प्रकाश डाला है कि संशय के लिए कोई स्थान रह नहीं जाता। स्वराज्य पाने के बाद हम लोगों के अंदर सब बातों में सिर्फ़ सरकार पर ही आधार रखने की जो मानसिक पराधीनता और उससे उत्पन्न जड़ता घर कर बैठी है उसका निवारण करने के लिए ही यह अनुष्ठान आरम्भ हुआ है। जिन राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं ने त्याग और बलिदान की लम्बी साधना देश को स्वतंत्र करने के लिए की थी उनमें से अनेक को सत्ता-मूलक राजनीति ने अपनी ओर खींच लिया और धीरे-धीरे रचनात्मक कार्यक्रम से वे दूर हटते गये। आज तो जैसे चुनावों के अलावा दूसरा कोई काम हमारे लोगों को रहा ही नहीं। इस स्वेच्छा से स्वीकृत अकर्मण्यता से स्वभावतः राग-द्वेष का विषाक्त वातावरण बनता जा रहा है। जैसे-तैसे साधनों से जो ऐहिक लाभ होता है उससे लोभ भी खूब बढ़ रहा है। परन्तु रोज़-रोज़ रोना रोने से काम नहीं चलेगा। परनिन्दा करना ही जिन लोगों का एक धन्धा बन गया उनकी आलोचना करते-करते हो सकता है कि अनजान में हमारा भी नैतिक स्तर गिरने लग जाये। हमारे सामने करने के लिए कोई सर्वोदय का काम रहेगा और उसमें हम लगे रहेंगे तो हमारे चारों ओर का विषैला वातावरण साफ़ हो सकता है ऐसी आशा हम क्यों न करें? हमारे दूसरे साथी यदि विधायक कार्यक्रम में हमारा हाथ नहीं बटा रहे हैं तो इसकी हम रोज़-रोज़ शिकायत न करें। हमारा प्रयास तो यह देखने का रहे कि सही रास्ते पर हम खुद चल रहे हैं या नहीं और रचनात्मक कार्यक्रम पर से हमारा खुद का विश्वास तो नहीं डिग गया है। हम अपने कार्य की सीमा को विस्तृत करने के लोभ में बहुत अधिक न पड़ें। बल्कि प्रयास हमारा यह रहे कि सारी शक्ति लगाकर हम अपने कार्य में, जिसे कि हमने सही माना है, कितनी गहराई-तक डूब सके हैं।

मेरे मित्र डा० मोरे ने विदर्भ में भूदान-यज्ञ के लिए जो पैदल-यात्रा का कार्यक्रम चलाया है उसका सुफल तो आना ही चाहिए। ग्रामों में इस यात्रा से एक लहर, एक चेतना तो आ रही दीखती है। महाराष्ट्र में श्री अण्णा साहेब सहस्रबुद्धे ने जो पैदल यात्रा का कार्यक्रम चलाया उसमें उन्होंने एक यह भी क्रम रखा कि जिस गाँव में वे गये वहाँ के हरिजनों के सुख-दुःख की बातें भी उन्होंने पूछीं और समझीं। पूज्य विनोबाजी ने तो इस महान् यज्ञ का सूत्रपात हरिजनों से ही दो वर्ष पहले किया था। जबतक अस्पृश्यता का हमने समूल नाश नहीं कर डाला, 'सर्वोदय' का हमारा कार्यक्रम अपूर्ण ही रहेगा। सर्वोदय के मूल में तो शुद्ध धर्म

प्रवृत्ति ही समाई हुई है। सर्वात्मैक्य का दर्शन बिना अस्पृश्यता-निवारण किये हम कर नहीं सकते। इसलिए भूदान-यज्ञ के निमित्त जो यात्री देश के विभिन्न भागों में निकलें उनके कार्यक्रम के अस्पृश्यता-निवारण और हरिजन-सेवा मूल अंग होने ही चाहिएँ।

एक-एक दीपक बनकर जाना

[२१ दिसंबर, १९५२ को मदुराई नगर (मद्रास) के हरिजन-छात्रालय में —]

मदुराई नगर में आज मैं ३४ बरस बाद आया हूँ। दक्षिण भारत की तीर्थ-यात्रा जब मैंने १९१८ में की थी, तब यहाँ भी आया था। भारत-प्रख्यात मीनाक्षी-मंदिर जब हरिजनों के लिए खोला गया, तभी से मदुराई व दक्षिण के दूसरे देव-स्थानों को देखने की मेरी बड़ी इच्छा थी। ठक्कर बापा-विद्यालय के काम से मद्रास इधर दो बार आना हुआ। तीर्थ-यात्रा करने के विचार से नहीं, आज तो मुख्यरूप से हरिजन-कार्य के सिलसिले में भारत के प्रायः सभी भागों में मेरा घूमना रहता है। हरिजनों के लिए मीनाक्षी-मन्दिर खुल गया है, तो वहाँ भी दर्शन करने जाऊँगा। मैंने १९२७ से ही, देवस्थानों के प्रति श्रद्धा होते हुए भी, ऐसे तमाम मन्दिरों में जाना छोड़ दिया था, जिनमें कि अमुक वर्ग के दर्शनार्थियों को, धर्म के नाम पर, जाने का निषेध था। आज भी अनेक देवमन्दिरों के द्वार हरिजनों के लिए खुले नहीं हैं। दक्षिण भारत ने तो, जो बहुत अधिक रूढ़िग्रस्त था, हिन्दूधर्म पर लगे इस कलंक को बहुत-कुछ धो डाला है, पर उत्तर भारत के बड़े-बड़े तीर्थस्थानों के मन्दिरों के द्वार आज भी वैसे ही बंद हैं।

तुम्हारे इस सुन्दर छात्रालय में आने से पहले मैं एक महान् हरिजन-सेवक से मिलकर आया हूँ। श्री वैद्यनाथ ऐयर के बारे में पूज्य ठक्कर बापा से काफ़ी सुना था, पर उनसे मिलने का अवसर नहीं मिल पाया था। श्री ऐयर ने और उनके मार्ग-दर्शन में स्वामी आनन्दतीर्थ ने अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-सेवा का यहाँ उल्लेखनीय कार्य किया है। ऐसे ऊँचे जन-सेवकों से तुम लोगों को भी प्रेरणा लेनी चाहिए।

तुम्हारे इस छात्रालय को देखकर बहुत आनन्द हुआ। मेरे मित्र श्री गोपालस्वामी ने मुझे बताया है कि ऐसे ही स्वच्छ और सुव्यवस्थित और भी कई छात्रालय तमिलनाड में हरिजन-सेवक-संघ चला रहा है। तुम लोग भाग्य-शाली हो, जो इस छात्रालय के ऐसे स्वच्छ सुन्दर वातावरण में रहते हो। स्कूलों में जाकर तुम लोग जो विद्यालाभ लेते हो, वही सब-कुछ नहीं है। वह लाभ तो दूसरे विद्यार्थियों को भी मिल जाता है। केवल पैसे के बल पर जो शिक्षा प्राप्त की जाती है, उसे हम पढ़ाई तो कह सकते हैं, पर वह सच्चे अर्थ में शिक्षा नहीं है। इस संस्था में कताई, शरीरश्रम और स्वावलम्बन तथा सबके साथ मिल-जुलकर रहने का जो लाभ मिल रहा है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। मैं चाहूँगा कि जब तुम लोग शिक्षा प्राप्त करके इस छात्रालय से अपने घरों को जाओ, तब यहाँ की इस सुगन्ध को लेकर जाना और इसे वहाँ फैलाना। जिन ग्रामों से तुम यहाँ आये हो, वहाँ तो चारों ओर आज अँधेरा-ही-अँधेरा है। तुमको एक-एक दीपक बनकर वहाँ जाना है, और अज्ञान व जड़ता के अन्धकार को दूर करना है। शिक्षित होकर ग्राम-जीवन से अपने आपको काटकर अलग न कर बैठना। शिक्षित और अशिक्षित के बीच में जो दीवार आज खड़ी है हमें उसे गिरा देना है। एक प्रकार की यह भी अस्पृश्यता ही है, जो खासकर अँग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों के मानस में दुर्भाग्य से आज घर करती जा रही है। ज्ञानपूर्वक शरीरश्रम और स्वावलम्बन के अभ्यास द्वारा ही समाज में फैले हुए तरह-तरह के राष्ट्र-घातक भेद-भावों को तुम दूर कर सकते हो। ईश्वर करे, तुम लोग इस छात्रालय से स्वावलम्बी, सेवापरायण और चरित्रवान बनकर निकलो।

तुम लोगों को राष्ट्रभाषा हिन्दी का ज्ञान अभी बहुत ही कम हुआ है, इसलिए मैंने जो कहा उसका भाषान्तर श्री गोपालस्वामी को करना पड़ा। तुम्हें हिन्दी जल्दी सीख लेनी चाहिए, और मुझे भी थोड़ा-सा तमिलभाषा का परिचय प्राप्त कर लेना चाहिए। अँग्रेजी के प्रति जो आज सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं में 'अति मोह' पाया जाता है, वह तो अब जाना ही चाहिए। देश के विशाल जनसमूह के साथ

समरस होना है, तो वह अँग्रेजी के माध्यम द्वारा नहीं होगा। यह सामर्थ्य तो राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा हमारी विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में ही है।

आरम्भ 'अन्त्योदय' से

[२८ दिसंबर, १९५२ को बख्तावरपुर (दिल्ली राज्य) में कस्तूरबा-प्रशिक्षण-शिविर में—]

गत वर्ष कस्तूरबा-निधि की तरफ़ से चलनेवाले ग्राम-सेविका-केन्द्रों के शिविर में, जो रादौर, ज़िला करनाल, में हुआ था, मैंने हरिजन-कार्य के बारे में काफ़ी विस्तार से चर्चा की थी। इस वर्ष बख्तावरपुर के शिक्षण-शिविर में भी हरिजन-सेवक-संघ की ओर से मैं उसी संदेश को दोहराने आया हूँ। कस्तूरबा-निधि अपनी ग्राम-सेविकाओं के द्वारा विभिन्न केन्द्रों के अधीन अनेक ग्रामों में जो सेवा-कार्य चला रही है, उसमें दूसरे रचनात्मक कार्यों के साथ हरिजन-कार्य भी आ जाता है। यों तो हमारे सारे ही कार्य एक दूसरे के साथ गुँथे हुए हैं। समग्र ग्राम-सेवा और सर्वोदय के कार्यक्रम की मूल कल्पना भी यही है। ग्रामों में प्रशिक्षण लेने के बाद आप लोग जब काम करने जायेंगी, तब वहाँ अस्पृश्यता का निवारण आप न करें, यह हो नहीं सकता है। वस्त्र-स्वावलंबन, ग्राम-सफ़ाई और हरिजन-सेवा इन तीनों कार्यों को हमें परस्पर एक दूसरे का पूरक मानना चाहिए।

पूज्य बा के पुण्य जीवन का आप लोग बारीकी से अध्ययन करें। बापू ने सत्य के जो-जो प्रयोग किये उन सब का अनुसरण बा ने श्रद्धापूर्वक किया था। उनके जीवन से सबसे बड़ा पाठ जो मिलता है वह यह कि जीवन की सार्थकता भोग में नहीं, किन्तु सेवामय त्याग में है। और, नारी के भाग्य में तो भगवान् ने इस दुर्लभ गुण को विशेष रूप से विकसित करना लिख दिया है। नारी द्वारा भगवान् समता की शिक्षा जगत् को न दे, तो और किसके द्वारा दे? पुरुष पिता होकर भी विषमता बरत सकता है, किन्तु नारी को तो किसी भी रूप में विषमता को सहन नहीं करना है। यदि ऐसा करती है तो वह उसके अपने स्वभाव की वस्तु नहीं होनी चाहिए। उसका स्वभाव और स्वधर्म तो करुणामय ही होना चाहिए। वहाँ ऊँच-नीच की भेद-भावना कैसी? पुरुष प्रायः कह बैठते हैं कि हम अस्पृश्यता नहीं मानते, पर करें क्या, हमारे घर की औरतें अस्पृश्यता मानती हैं! क्या आप लोग इस प्रकार का आरोप ओढ़ने के लिए तैयार हैं?

आप लोग तो ग्रामों में धात्री और शिक्षिका बनकर ही नहीं बल्कि 'सेविका' बनकर जा रही हैं। भले ही आप गृह की स्वामिनी कही जायें, पर लोक-सेविका का पद तो गृह-स्वामिनी से कहीं अधिक ऊँचा है। स्वामित्व में जीवन का सारा ही विकास प्रायः रुक जाता है, तहाँ सेवा-भावना में विकास करने का कोई अन्त ही नहीं। संयोग से यह दुर्लभ अवसर आपको मिला है। इससे करुणा और समता का जो झरना रुक गया था वह खुल जाना चाहिए। इसके लिए आपको कुछ कठिन साधना करनी होगी। सेवा-परायण बनना है, तो जीवन में संयम और वैराग्य को स्थान देना होगा। वैराग्य शब्द से चौंकने की आवश्यकता नहीं। ऐहिक या दैहिक सुखों के प्रति विराग-भावना नहीं आयेगी, तो सर्वोदय की साधना बहुत दुष्कर हो जायेगी। संयम और वैराग्य को आजके भोगप्रधान युग ने बदनाम-सा कर रखा है। उपनिषद्-काल और बौद्धकाल की नारियों की जीवन-कथाएँ आप देखें, थेरियों की गाथाएँ ज़रा पढ़ें। अनित्य दैहिक सुखों को लात मारकर ही उन्होंने अपनी करुणा और सेवा का अमित दान जगत् को दिया था। उस प्रकार की साधना आज भी असम्भव नहीं है।

सेवा-केन्द्रों से अथवा प्रशिक्षण-शिविरों से निकलने के बाद आप लोग एक बार खूब गहराई में उतरकर सोचें कि आपको अपना जीवन किस पथ पर ले जाना है। जल्दी में कोई निश्चय न करें। खूब सोच-समझकर निर्णय करें और तब जन-सेवा की राह पर पैर रखें। यह राजनीति का क्षेत्र नहीं है। आपको कोई फूलमालाएँ पहनाने नहीं आयेंगे, जयकार भी नहीं होंगे, आपकी सेवा की तो बल्कि लोग उपेक्षा करेंगे, शायद दुतकारें भी और गालियाँ भी दें। 'भंगिन' भी आपको कहेंगे, पर आपको तो अपनी निःस्वार्थ मूक सेवा द्वारा दुतकारने और गालियाँ देनेवालों के हृदयों को भी जीत लेना है। आदर न पाकर, आदर पाने की

इच्छा को भी छोड़कर ग्रामों में उपेक्षितों और पीड़ितों की सेवा करनी है। सर्वोदय का आरम्भ 'अन्त्योदय' से करना होगा और इस प्रकार, मुझे विश्वास है कि, अस्पृश्यता-निवारण का काम पुरुषों की अपेक्षा आप लोग जल्दी और शांतिपूर्वक कर सकेंगी।

बापा की पुण्य तिथि

[१६ जनवरी, १६५३ को हरिजन-निवास, दिल्ली में]

आज इस १६ जनवरी को, बापा को अपना नाशवान् शरीर छोड़े पूरे दो वर्ष हो गये। महापुरुषों की जन्म-तिथियों और मरण-तिथियों को हम यों हरसाल मनाते रहते हैं। यह एक चलन बन जाता है, और चलन अक्सर कालान्तर में जड़वत् हो जाता है। कभी-कभी तो इन पवित्र तिथियों को मनाने का हमारा प्रकार मूल भावना से बिल्कुल अलग और विपरीत भी हो जाता है। फिर, ऐसी कितनी ही तिथियों को महाकाल हमारी तख्ती पर से पोंछ डालता है। कुछ ही तिथियाँ धुँधली-धुँधली रेखाओं में लिखी रह जाती हैं।

इन तिथियों का महत्त्व इतना ही तो है, कि जब वे आती हैं, हमें उन महापुरुषों का स्मरण करा देती हैं। महापुरुष अर्थात् ऐसे नाम और रूप जिनमें कुछ दैवी गुणों का विकास हुआ था। सो, इन तिथियों का इतना ही अर्थ और प्रयोजन है कि हम अपने उस-उस दिन अमुक-अमुक दैवी गुणों का स्मरण करें और उन्हींके अनुसार अपने जीवन में स्वयं आचरण व वैसी साधना भी करें। इस प्रकार जयंतियों और पुण्य तिथियों का मनाना हुआ जीवन्त; अन्यथा जड़वत्।

तब, बापा के किन दैवी गुणों का पुण्य स्मरण करने के लिए आज हमलोग, कार्यकर्त्ता और सब विद्यार्थी, यहाँ पर इकट्ठा हुए हैं। थोड़े में कहा जाय, तो बापा के वे गुण थे— उनकी सतत कार्य-निष्ठा, उनकी सात्विकी सरलता और प्रत्येक विचार और कार्य में दीखनेवाली उनकी जागरुकता और प्रामाणिकता। उनके इन दैवी गुणों ने ही उन्हें दीन-दुर्बलों, असहायों, पीड़ितों, और उपेक्षितों का बापा बनाया था। राजनेता चकाचौंध पैदा करनेवाले तेज प्रकाश को आकर फैंकते हैं। उन्हें साधारण जन चकाचौंध में पहचान भी नहीं पाते। तहाँ, बापा-जैसे मूक सेवक के हाथ में निष्काम सेवा का एक सादा-सा दीपक होता है, जिसके उजाले में दीन-दुखीजन अपने त्राता को झट से पहचान लेते हैं, और उसके साथ अपने पिता के जैसा प्रेमल नाता जोड़ लेते हैं। वे कभी उसे भूलते ही नहीं, यद्यपि उनके पास कोई लिखा हुआ इतिहास नहीं होता जिसे कि वे रट सकें। इतिहास के पन्नों में लिखे बड़े-बड़े राजनेताओं को साधारण जनता कभी की भूल चुकी, मगर अपने अन्तर पर अंकित राम, कृष्ण और बुद्ध व ईसा को वह भुला नहीं सकी। माना कि इन महापुरुषों के गुणों को बहुत ही कम अपनाया गया, खासकर सभ्य और समझदार कहे जानेवाले वर्गों के द्वारा,—किन्तु सामान्य श्रद्धालु आज भी उनकी स्मृति को अन्धे की लकड़ी की तरह पकड़े हुए हैं।

पिछला सिंहावलोकन किया जाये तो ऐसा लगता है कि गांधी और बापा जैसे महापुरुषों को आगे चलकर उपेक्षित जनसाधारण ही शायद याद रखें। भूतल पर उतरते भी ऐसे महापुरुष इन्हीं उपेक्षित जनों के लिए हैं।

कोई पौने दो वर्ष हुए, जब मैं हरिजन-कार्य के सिलसिले में उड़ीसा गया था। कटक शहर की एक बस्ती में एक बूढ़े हरिजन को एक कुएँ से पानी निकालते हुए मैंने देखा। घड़े का पानी मटमैला था और गन्दा, जिसपर छोटे-छोटे कीड़े तैर रहे थे। मैंने पूछा कि क्या यह पानी पीने के काम में आयेगा? जवाब मिला. "इसे ही छान-छानकर बस्ती के हम सब लोग पीते हैं। पानी कुएँ में बहुत थोड़ा रह गया है, कोई दूसरा कुआँ तो पास में है नहीं कि जिसके पानी से हम अपनी प्यास बुझायें। अन्दर से कुआँ टूट भी गया है। इसे ठीक कराना भी हमारे लिए कठिन है।" मेरे साथ एक मिनिस्टर महोदय भी थे। वे उसी नगर के थे, पर उनकी तरफ ध्यान न देकर उस बुड्ढे हरिजन ने गले को साफ़ करते हुए कहा—"हमारी खोज-खबर रखनेवाला तो एक वह ठक्कर बापा था। पर वह तो, सुना है, दुनिया से कूच कर गया।" सामने उसके उसीके नगर का एक मिनिस्टर खड़ा है, पर उसे वह पहचानते हुए भी जैसे पहचानता नहीं है, और सैकड़ों मील पर रहनेवाले और अब तो दुनियां से भी चले जानेवाले बापा को गला भरकर वह याद कर

रहा है। हमें लगा कि आखिरी दिनों में जिस विधान-सभा में बापा गये थे वह उन्हें भूल जायेगी, बल्कि भूल गई है, और उनको बड़े समारोह के साथ जो "अभिनन्दन ग्रन्थ" दिल्ली में बड़े-बड़े राजनेताओं के हाथ से अर्पित किया गया था, उसके पन्नों की स्याही भी पुँछ जायेगी। हरिजन-सेवक-संघ और आदिमजाति-सेवक-संघ भी उन्हें शायद भूल जायें। मगर उस कटक की बस्ती के उस बुड्ढे हरिजन और उसीकी तरह हज़ारों दीन-दुर्बलों और पीड़ितों के हृदय पर से बापा की स्मृति मिटनेवाली नहीं। क्योंकि बापा ने अपने सरल सकरुण हृदय में जिस धर्म-निष्ठा के साथ दीन-दुखियों को स्थान दे रखा था वह निष्ठा, वह भक्ति-भावना, वह सेवा-साधना केवल अभ्यास की वस्तु नहीं थी, वह दैवी सम्पदा तो उनके तपःपूत जीवन को भगवान् ने अपनी प्रसादी के रूप में दी थी।

बापा के इन दैवी गुणों का हम आज पवित्र स्मरण करें, और संकल्प करें, कि हमारा जीवन व आचरण इन गुणों के अनुरूप बने। सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र में हम पैर रखें, तो बहुत सोच-समझकर रखें। किसी भौतिक लाभ के लोभ में न पड़ें। जो भी कुछ सेवा करें उसके बदले में भौतिक सुख पाने की इच्छा न करें। व्यक्तिगत मानापमान को सेवा-मार्ग में रोड़े न अटकाने दें। किसी हेतु से की गई लोक-सेवा दुःख का कारण भी बन सकती है, क्योंकि उसके मूल में मोह जो होता है। बापा ने जीवनभर जो जन-सेवा की, उसमें उन्होंने साम्प्रदायिक, राजनैतिक या दूसरा किसी भी प्रकार का हेतु नहीं रखा था। बापा का और बापू का नाम स्मरण करनेवाले हमलोग चाहे संख्या में कितने ही कम अंत में रह जायें, ऐसी ही निष्काम दृष्टि से सेवा-कार्य में लगे रहें, यही आज हम सबकी भगवान् से प्रार्थना होनी चाहिए।

रैदास-जयन्ती

[२८ जनवरी, १९५३ को लखना (इटावा ज़िला) में रैदास-जयन्ती के अध्यक्ष-पद से—]

यह जानकर और देखकर हर्ष होता है कि इधर कुछ वर्षों से संत-प्रवर रैदास की जयन्ती कितने ही स्थानों पर बड़े समारोह के साथ मनाई जाती है। महाराष्ट्र में जो स्थान भक्त चोखा मेला का है, वही लगभग सारे उत्तर भारत में संत रैदास का है। बड़ी ऊँची रहनी के महात्मा थे यह। पाँच सौ बरस पहले परमार्थ की दौलत दोनों हाथों लुटाई थी इस सत्यलोक के भण्डारी ने। वर्णाश्रम के अभिमान को छोड़-छोड़, बड़ों-बड़ों ने रैदास महाराज के चरणों की धूलि माथे पर चढ़ाई थी। नाभाजी के शब्दों में रैदास की विमलवाणी जीव की सन्देह-ग्रन्थि को खण्ड-खण्ड कर देनेवाली है।

रैदासजी का चोला-परिचय, उनकी 'सन्देह-ग्रन्थि-खंडिनी' वाणी पर ध्यान न देकर, प्रायः दो प्रकार से दिया जाता है। एक तो यह कि रैदासजी पूर्वजन्म में भी स्वामी रामानन्द के ही शिष्य थे, और जन्म के ब्राह्मण। अपराध उनसे भूल में यह हो गया कि एक दिन वे एक ऐसे बनिये के घर से सीधा ले आये, जिसका लेन-देन एक चमार के साथ रहता था। गुरु अंतर्यामी थे। भगवन् ने जब उस दिन भोग को ग्रहण नहीं किया, तो ध्यान में स्वामीजी सब जान गये कि ब्रह्मचारी किस घर से भिक्षा लाया था। शाप दे दिया कि अगला जन्म उसका चमार के घर में होगा। सो काशी में उस ब्रह्मचारी ने चमार-कुल में जाकर अवतार लिया। माता क्योंकि चमारिन थी, इसलिए उसके अछूत स्तनों को नैष्ठिक ब्रह्मचारी ने तीन दिनतक मुँह नहीं लगाया। स्वामी रामानन्दजी के चेताने पर शिशु ने माता के स्तनों का दूध पिया। आगे कथा आती है कि अपना असली परिचय देने के लिए रैदासजी ने एक बार अपनी देह को चीरकर जनेऊ भी काशी में दिखला दिया था। इस सबका यही अर्थ हुआ कि ब्राह्मण-समाज यह मानने को तैयार नहीं हुआ कि 'मृत ढोर ढोवन्त कुल' में जन्म लेनेवाला चमार भी एक ऊँचा भगवद्भक्त हो सकता है। और यदि हुआ तो इस कारण कि पूर्वजन्म का ब्राह्मण था वह!

दूसरे, रैदासी पन्थाइयों ने भी परम्परा से रैदासजी के सहज चरित्र और निर्मल वाणी को न छूकर अतिरंजित चमत्कारों से उन्हें ढक दिया। केवल रैदासजी को ही नहीं, दूसरे भी अनेक संतों को ऐसी ही अद्भुत दृष्टि से देखने का उनके अनुयायियों का प्रयत्न रहा है।

आज, एक तीसरी भी दृष्टि सामने आ गई है। ऐसे बुद्धिवादियों की दृष्टि से मेरा आशय नहीं है, जो संतों की

महत्ता पर विश्वास ही नहीं लाते। वे तो हर युग के संतों की खिल्ली ही उड़ायेंगे। मतलब ऐसे उत्कट आन्दोलकों से है, जो सन्तों के नाम का उपयोग भी राजनैतिक हेतुओं के साधने में करना चाहते हैं। वे राजनैतिक जागरण और संगठन की धुन में इस मोटी बात को भी भूल जाते हैं कि सन्तों की सारी जीवन-साधना हर प्रकार के हेतुगत, वर्ग-गत और संप्रदायगत भेदभावों का उन्मूलन कर देने के लिए हुआ करती है। सन्तों की निर्मल दृष्टि सभी प्रकार के असत्यमूलक भेदों को भेदकर उस पार, एकदम परे, अगह सत्य को गह लेती है।

संतों के ये दिन हम ऐसे वातावरण को उपजा और बाँधकर मनायें, जिसमें आज के इस घृणोत्पादक और विद्वेष प्रचारक वायुमण्डल में उनकी जीवन-साधना का ध्यान कर, कुछ ही क्षणों के लिए सही, सत्य और प्रेम की अनझाँकी झलक हम पा सकें। वहाँ केवल संतवाणी का कीर्तन हो, दूसरे कोई नारे न लगाये जायें, और सब पक्षों के लोगों का प्रीति-सत्संग हो, कोई 'मीटिंग' नहीं।

आप लोगों ने यहाँ आज जो आयोजन किया है, उसे बहुत-कुछ शुद्ध रखने का प्रयत्न हुआ है। समाज के अनेक अंगों और पक्षों के लोग यहाँ इकट्ठे हुए हैं, थोड़ा भजन-कीर्तन भी हुआ है। फिर भी कुछ राजनैतिक पुट तो आ गया। सरकार का जहाँ यशोगान हुआ, तहाँ उसकी थोड़ी भर्त्सना भी की गई। इस प्रकार के विचार व्यक्त करने का यह स्थल नहीं है। ऐसे पवित्र स्थल और पवित्र अवसर पर जो भाई-बहिन आयें, वे सब अपने दिल से हर तरह की अस्पृश्यता की दुर्भावना निकालकर और जीवमात्र के प्रति प्रेम-भावना लेकर ही आयें। अन्य स्थान और अन्य अवसर तो राजनैतिक या अन्य प्रकार के विचार प्रगट करने के लिए हैं ही। मुझे गांधीजी का एक संस्मरण याद आ रहा है। संवत् १९९५ की बात है। हमारे दिल्ली के हरिजन-निवास में प्रार्थना-मंदिर की आधार-शिला गांधीजी के हाथ से रखी जानेवाली थी। उस दिन उनका मौन-दिवस था। कुछ बहिनों ने ज्योंही हमारी प्रार्थना के बाद एक राष्ट्रीय गीत गाना शुरू किया कि गांधीजी ने हाथ के इशारे से उसे बन्द करा दिया और कागज़ के एक टुकड़े पर लिख-कर कहा कि यह अवसर तो केवल भगवान् के गुणानुवाद करने का है। यहाँ तो तुलसीदास या सूरदास के भजन ही होने चाहिएँ। ऐसा कोई भजन कांग्रेस की उन स्वयंसेविकाओं को याद नहीं था। तब हरिजन-निवास के विद्यार्थियों ने दो भजन और गाये। आशय यह कि सब-कुछ यथास्थान और यथाअवसर ही शोभा देता है।

यह सही है कि संतों की दिखाई प्रेम-प्रीति की राह छोड़कर हम आज उलटी ही दिशा में भटक गये हैं। अपनी ही देह के एक अंग को हमने 'अस्पृश्य' मान लिया, मानवता का तिरस्कार किया और अपने सिरजनहार के प्रति द्रोही बन गये। स्वाभाविक है कि तिरस्कृत वर्ग जाग्रत होकर क्षुब्ध हो उठे, और अपने असंतोष को ऐसे अवसरों पर भी प्रगट कर बैठे। परन्तु चोखामेला, नन्दनार या रैदास जैसे सन्त तो तथाकथित सवर्ण-अवर्ण सभीके एकसमान आराध्य रहे हैं। सवर्ण कहलानेवाला धर्मच्युत समाज अपने इन संत-महात्माओं के प्रेममूलक अभेदात्मक ज्ञानोपदेश पर चलने लग जाये, तभी ऐसी जयन्तियों का मनाना सार्थक होगा।

सामाजिक समानता पहले

[३ फर्वरी १९५२ को कटनी (महाकोशल) के सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं के समक्ष—]

बहुधा कितने ही स्थानों के एसे लोगों से, जिन्हें कि सार्वजनिक कार्यकर्त्ता कहा जाता है, जब मिलना होता है, तब मैं उन्हें अनेक विषयों पर चर्चा करते हुए पाता हूँ—विविध चुनावों और स्थानीय दल-बन्दियों के सम्बन्ध में तो खास करके। पर खादी और हरिजन-कार्य के बारे में चर्चा करना तो जैसे उन्होंने आज बिल्कुल छोड़ दिया है। बात उठाने पर भी कोई खास दिलचस्पी वे नहीं दिखाते। तब इसके दो ही अर्थ हो सकते हैं। या तो उनके यहाँ अस्पृश्यता का प्रश्न रहा नहीं, इसलिए चर्चा का विषय भी समाप्त हो गया, या फिर उसमें आज उन्हें कोई खास सार की बात नहीं दीखती। असली या कभी-कभी वैसी दीखनेवाली खादी को तो फिर भी, कम संख्या में ही सही, अभी भी वे पहने हुए हैं। मगर अस्पृश्यता-निवारण की बात से जैसे कोई

वास्ता ही नहीं रहा। जब इस बारे में कुछ प्रश्न पूछे जाते हैं या कुछ काम करने के लिए कहा जाता है, तब प्रायः या तो वे उसे चुपचाप सुन लेते हैं, काम हाथ में लेने से ना भी नहीं करते, या कुछ लोग हिम्मत से अपने अज्ञान को छिपाते हुए यह भी कह देते हैं कि अस्पृश्यता का सवाल उनके यहाँ अब रहा ही नहीं। बतलाते हैं कि, "हरिजन हमारे यहाँ आज चाहे जहाँ उठ-बैठ सकते हैं; सबके साथ चाय पीते हैं, नाई उनके बाल बनाते हैं; और वे मंदिरों में भी, उनका मन होता है तो, देव-दर्शन कर भी आते हैं; और राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता उनके साथ खाते-पीते तो हैं ही।" यह हकीकत सुनकर खुशी तो होती है, होनी ही चाहिए। पर साथ ही, इन सब बातों पर सहसा विश्वास करने में कुछ हिचकिचाहट भी होती है। कुछ गहरे उतरकर जब तफ़सील के साथ पूछ-ताछ की जाती है और एकाध कार्यकर्त्ता अपने अनुभव के आधार पर जब बतलाने लगता है कि, "नहीं, ऐसी बात नहीं है, हरिजनों को आज भी सार्वजनिक कुओं पर नहीं चढ़ने दिया जाता; जानने पर कि वह हरिजन है नाई उसके बाल नहीं बनाता; और इसी तरह मालूम होते हुए उसे सबके साथ चाय नहीं पिलायी जाती; और मंदिर में भी कभी उसे जाते हुए नहीं देखा है; कुछ राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता कभी-कभी हरिजनों के साथ खा-पी अवश्य लेते हैं, पर ऐसे भी कुछ कार्यकर्त्ता हैं और कुछ पदाधिकारी भी जो उनके हाथ का छुआ खाना तो दूर पानी भी शायद नहीं पीते।" तब यह दूसरी हक़ीकत सुनकर मन स्वभावतः खिन्न हो जाता है। यह बात नहीं कि पहले प्रकार की हक़ीकत जान-मानकर असत्य बतलाई गई थी। उसके मूल में बहुत हदतक उन कार्यकर्त्ताओं का अज्ञान रहा होगा। मन में यह मानकर कि स्वराज मिल जाने पर उसकी प्राप्ति के पूर्व-साधनों का आज कोई खास अर्थ नहीं रहा है और गांधीजी ने और ठक्कर बापा ने जितना कुछ काम अस्पृश्यता-निवारण के लिए किया था, वह बहुत काफ़ी है, उसका यथेच्छ परिणाम भी हुआ है, और सरकार तो इस दिशा में काम कर ही रही है, इसलिए ऐसी बातों की तफ़सीलवार जानकारी रखना और उनपर चर्चा करना या उनमें दिलचस्पी लेना यह सब बेकार-सा ही है।

मगर साथ ही, ऐसे भी कुछ कार्यकर्त्ता कहीं-कहीं पर मिल जाते हैं, जो हरिजन-कार्य तथा खादी-कार्य के प्रति पहले की जैसी ही आस्था रखते हैं और कांग्रेस के कार्यक्रम में इन रचनात्मक कार्यों का पूरा-पूरा स्थान और महत्त्व समझते हैं। पर ऐसे कार्यकर्त्ता बहुत ही थोड़े कहीं-कहीं पर ही देखने में आते हैं। उन लोगों के निष्ठापूर्वक प्रयत्न से उन-उन क्षेत्रों में अस्पृश्यता-निवारण का काम सन्तोषकारक रूप से हो रहा है। ऐसे निष्ठावान सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं की संख्या बढ़नी ही चाहिए, यदि राष्ट्र में सामाजिक समानता को हमें जल्द-से-जल्द लाना और दृढ़ता से स्थापित करना है। बिना सामाजिक समानता के आर्थिक समानता को बहुत अधिक महत्त्व नहीं देना चाहिए। कोरी आर्थिक समानता में अनीति के प्रवेश करने का भय हो सकता है। सामाजिक समानता स्थापित करने के लिए ही गांधीजी ने अस्पृश्यता-निवारण की प्रवृत्ति पर इतना अधिक बल दिया था, और उसकी खातिर १९३२ में तो अपने प्राणों की भी बाज़ी लगा दी थी। खादी और हरिजन-कार्य को भुलाकर या उनके मूल्यों को कम आँककर हम लोग गांधी जी के प्रति 'सर्वोदय' के इन दिनों में भला किस तरह श्रद्धा प्रगट कर सकते हैं? विविध चुनावों के ही व्यसन में बुरी तरह फँसे रहने से राष्ट्र के नैतिक प्रश्नों की तरफ़ से आपका ध्यान बिल्कुल हट रहा है, यह राष्ट्र के लिए और आपके लिए भी बहुत घातक है।

गांधी-युग का भी इतिहास जानो

[५ फर्वरी, १९५२ को अंबिकापुर (महाकोशल) के हाईस्कूल के विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए—]

तुम लोगों ने भारत के और विदेशों के भी इतिहास के अवश्य कुछ पन्ने पढ़े होंगे। यह बात दूसरी है कि इतिहास की प्रायः उन्हीं घटनाओं को अक्सर तुम्हें रटाया गया है, जो या तो अनावश्यक हैं, या बहुत हदतक ग़लत तौर पर जान या अनजान में लिखी गयी हैं। तुम लोगों ने विभिन्न काल-विभागों के अनुसार इतिहास को पढ़ा है, और अधिकतर ऐसे ही अध्यायों को, जिनमें युद्ध और अशान्ति का बहुत वर्णन किया गया है, मानो समाज में हमेशा से इतना ही कुछ रहा है कि एक राजा या राज्य दूसरे राजा या राज्य पर

हमला करे, खून की नदियाँ बहाने में कमाल दिखाये जायें और अनेक उठते व गिरते राजवंशों का उनमें वर्णन हो। समाज में प्रेम और शांति स्थापित करनेवाले महापुरुषों के प्रयासों और साधनों का वर्णन उनमें शायद ही कहीं कुछ मिलता है। मगर, विद्यार्थियों, विश्वविद्यालयों द्वारा नियत पाठ्यक्रम की पुस्तकों के साथ-साथ तुम्हें देश और विदेशों के लिखित या अलिखित ऐसे इतिहासों का भी अध्ययन करना चाहिए, जिनमें उन महापुरुषों और अनुकरणीय युग-घटनाओं का उल्लेख हो; जिनकी बदौलत मानव-समाज में सत्य, प्रेम और शांति का संचार समय-समय पर हुआ है।

तुम लोगों को बहुत पुराने नहीं, अभी कल के ही भारतीय इतिहास से भी वंचित रखा जा रहा है, यह कितने दुःख की बात है। अनेक राजवंशावलियों और बड़ी-बड़ी लड़ाइयों को तो तुम्हें रटाया और पढ़ाया गया है, परन्तु गांधीजी ने असत्य और हिंसा के विरुद्ध जो महायुद्ध लड़ा, उसकी मोटी-मोटी बातों की भी जानकारी तुम्हें नहीं कराई गई। इतना ही तुम लोग जानते हो कि महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने हिन्दुस्तान से अँग्रेजों को विदा कर दिया और आज हमारे अपने ही लोग पूरी स्वतंत्रता के साथ राजशासन चला रहे हैं। १५ अगस्त और २६ जनवरी के ये दो दिन तुम्हें हर साल इतिहास के इस एक पन्ने की याद दिला जाते हैं; इसके आगे शायद ही तुम लोगों में से किसीको गांधी-युग की दूसरी बड़ी-बड़ी घटनाओं का कुछ ज्ञान हो। तुम उन्हें नहीं जानते, क्योंकि तुम्हें न बतलाया जाता है न पढ़ाया जाता कि गांधीजी ने लगातार ३० वर्षों तक भारत में ही नहीं सारे संसार में सत्य और प्रेम का राज्य स्थापित करने के लिए कितना घोर तप किया और मानवजाति को असत्य और द्वेष की आग में जलने से, अपने प्राणों को भी चढ़ाकर, कितना बचाया। तुम लोगों से जब खादी, स्वदेशी और अस्पृश्यता-निवारण की प्रवृत्तियों के बारे में पूछा जाता है, तो तुम्हें वर्तमान काल के इतिहास की इतनी बड़ी-बड़ी घटनाओं की भी जानकारी नहीं होती। तुम्हारे ही क्या, तुम्हारे अध्यापकों के भी तन पर खादी नहीं दीख रही है। तुम लोगों को इतना भी शायद पता नहीं कि उन जातियों को, जिन्हें अछूत या आज हरिजन कहते हैं, आगे बढ़ने में क्या-क्या रुकावटें और तकलीफें हैं और गांधीजी ने उनके लिए क्या-क्या काम किया और भारतीय संविधान में उन्हें दूर करने व सबके समान नागरिक अधिकार दिलाने के लिए क्या कानून बनाया गया है। हरिजन-सेवक-संघ के सम्बन्ध में भी तुम्हें शायद ही कभी कुछ बतलाया गया हो। तुम विद्यार्थियों को देश की बड़ी-बड़ी ऐतिहासिक घटनाओं से इस प्रकार जो अन्धेरे में रखा जाता है, इस शैक्षणिक अपराध की जिम्मेदारी असल में राज्यों के तथा केन्द्रीय शिक्षा-विभाग पर है।

तो, थोड़े में, अस्पृश्यता-निवारण की प्रवृत्ति और हरिजन-सेवक-संघ का इतिहास मैं बतला देता हूँ। १६३२ में, जबकि तुम लोगों में से किसीका जन्म भी नहीं हुआ होगा, गांधीजी ने पूना की जेल में इस बात पर आमरण अनशन किया था, कि उस समय के ब्रिटिश प्रधान मंत्री ने अपना साम्प्रदायिक निर्णय देते हुए अछूतों के पृथक् निर्वाचन की सिफारिश की थी। इससे हिन्दू-समाज से उनका बिल्कुल संबंध-विच्छेद हो जानेवाला था। गांधीजी मानते थे कि हिन्दूधर्म पर छुआछूत एक बहुत बड़ा कलंक है, और छूआछूत रहेगी तो हिन्दूधर्म नष्ट हो जायेगा। देश के बड़े-बड़े नेताओं ने काफी बहस करने के बाद एक ऐसे समझौते पर हस्ताक्षर किये, जिसके अनुसार अछूतों को संयुक्त निर्वाचन-पद्धति से केन्द्र में और विविध प्रान्तों में ब्रिटिश मंत्री द्वारा दी गई जगहों से भी ज्यादा जगहें दी गईं। साथ ही, सवर्ण हिन्दुओं ने अस्पृश्यता का अन्त कर देने की प्रतिज्ञा भी की। फलतः प्रधान मंत्री द्वारा अपना फैसला रद कर देने पर गांधीजी ने अपना अनशन तोड़ दिया। सारे देश में छूआछूत को खत्म कर देने के लिए एक ज़बरदस्त लहर पैदा हो गई। उसके तुरन्त बाद हरिजन सेवक-संघ स्थापित किया गया। महात्मा गोखले के साथी स्व० ठक्कर बापा ने १६ वर्षोंतक लगातार संघ का बड़ी लगन और मेहनत से काम चलाया और गांधीजी के दिखाये मार्ग पर चलकर हरिजनों की भारी सेवा की। दक्षिण भारत के बड़े-बड़े मंदिर हरिजनों के लिए खोल दिये गये। कुएँ-तालाब भी कितने ही स्थानों के

उनके लिए खुल गये। स्वतंत्रता मिलने पर हमारे देश का जो संविधान बना उसमें क़ानूनन अस्पृश्यता का सर्वथा अंत कर दिया गया। छूआछूत दूर करने के लिए हरिजन-सेवक-संघ ने और केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों ने खासा प्रयत्न किया है और आज भी काम हो रहा है, फिर भी अभी बहुत-कुछ काम करने के लिए पड़ा है। हरिजनों में आज धीरे-धीरे अपने अधिकारों के प्रति जागृति आ रही है यह एक शुभ चिह्न है। यद्यपि उन्हें भी संविधान द्वारा समान नागरिक अधिकार दे दिये गये हैं, तो भी ठीक तरह से उसपर अभीतक अमल नहीं हो रहा। देहातों में और प्रायः छोटे-बड़े कस्बों व शहरों में सब कुओं पर सबके साथ उन्हें पानी नहीं भरने दिया जाता, होटलों में सबके साथ बराबरी से वे चाय नहीं पी सकते, बहुत सारे मंदिरों के द्वार भी उनके लिए बन्द हैं, और और भी अनेक रुकावटें उनके आगे बढ़ने में पहले की जैसी ही अक्सर जहाँ-तहाँ देखने में आती हैं। यह हमारे राष्ट्र के लिए और खासकर हिन्दूसमाज और हिन्दूधर्म के लिए बड़े दुःख और लज्जा की बात है।

तुम लोगों ने थोड़े में अपने राष्ट्र के वर्तमान या गांधी-युग के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय सुन लिया। इस इतिहास के और भी अध्ययन करनेयोग्य कई अध्याय हैं। यह हमेशा याद रखो कि इतिहास केवल पढ़ने का ही विषय नहीं हुआ करता, उससे तो सबक़ लिया जाता है और इतिहास में जो अच्छी-अच्छी बातें होती हैं, उनपर अपने जीवन में आचरण करना होता है। अस्पृश्यता-निवारण और हरिजन-सेवा की इस राष्ट्र-निर्माणकारी प्रवृत्ति में तुम लोग भी योग दे सकते हो, भाग ले सकते हो। छुट्टियों में हरिजन बस्तियों में जाओ, उनके बच्चों के साथ अपने सगे भाई-बहनों की तरह प्रेम का बर्ताव करो, उनके साथ खेलो, प्रीति-भोज भी कभी-कभी वहाँ जाकर करो, खासकर सामाजिक और राष्ट्रीय त्यौहारों पर, और उन्हें अपने घरों पर भी ऐसे अवसरों पर अपने साथ ले जाओ। छोटे बच्चों को, वहाँ तुम गरमी की छुट्टियों में पढ़ा भी सकते हो, पुस्तकें भी उन्हें दे सकते हो। बस्तियों की सफ़ाई भी तुम कभी-कभी जाकर करो, अपने घर के और मोहल्ले के लोगों को प्रेम और दलील के साथ समझाओ कि वे हरिजनों के लिए सार्वजनिक कुएँ और दूसरे स्थान खोल दें। दिल से अगर तुम चाहो तो इस महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम में अपना बहुत बड़ा योग दे सकते हो। विद्यार्थी-अवस्था नये-नये नारों पर जीनेवाले राजनैतिक आन्दोलनों में भाग लेने के लिए नहीं है। वहाँ जाकर तुम बहक भी सकते हो, पर अस्पृश्यता-निवारण या हरिजन-सेवा जैसी सामाजिक कल्याण की प्रवृत्तियों से तुम्हें अनुशासन और दूसरों के लिए जीने का ऊँचे-से-ऊँचा शिक्षण और दुर्लभ अवसर मिलता है। मेरा हार्दिक अनुरोध है कि राष्ट्र-निर्माण की इस बहुत बड़ी प्रवृत्ति में तुम लोग हमारा हाथ बटाओ, हमें हर तरह से अपना योग दो।

हरिजन-सेवा ही हरि-सेवा

[१८ फर्वरी, १९५३ को आबू के रघुनाथजी-मन्दिर के पाटोत्सव में बोलते हुए—]

• श्री रघुनाथजी मन्दिर के पाटोत्सव पर मुझे आप लोगों ने आमन्त्रित किया, इसका मैं बहुत-बहुत आभार मानता हूँ। रामानन्दी विरक्त वैष्णवों के इस सुन्दर स्थान में आकर ३०-३२ वर्ष पहले के वे दिन मुझे याद आ गये हैं, जब चित्रकूट, अयोध्या और जनकपुर में वैरागियों के स्थानों में महीनों रहने का संयोग आया था। यों तो चारों ही संप्रदायों से मेरा थोड़ा-थोड़ा परिचय रहा। हरिजन-सेवा की प्रेरणा मूलतः भागवत-भावना से ही मुझे मिली है, और पीछे बौद्ध धर्म से भी मैंने यही प्रेरणा पायी। बाद के संप्रदायवादों ने भागवत धर्म की समत्व-भावना को व्यवहारतः विलुप्त कर दिया। अन्य धर्मों में भी कालान्तर में लगभग ऐसे ही विपरीत परिवर्तन हो गये। दीपक की लौ पर सोने की खोल चढ़ाकर उसे प्रतिष्ठित कर दिया गया। जिस भेद-भावना को रामानन्द स्वामी और चैतन्यदेव ने प्रेम-भक्ति की तीक्ष्ण धारा में बहा दिया था उसे खोज-खोजकर फिर वापस लाया गया, और धर्म-सिंहासन पर उसे प्रतिष्ठित कर दिया गया। वैष्णवों ने 'ब्रह्म-सम्बन्ध' जोड़ा, और 'मानव-सम्बन्ध' तोड़ लिया; और भिक्खु-संघ भी सांप्रदायिक संगठन के फेर में पड़कर उस मानव-प्रतिष्ठा को

भूल बैठा, जिसका उपदेश बारंबार तथागत ने दिया था। घर-घर में आग लग गई।

कबीर और रैदास ये दोनों स्वामी रामानन्दजी के पट्टशिष्य थे। भक्तमाल में नाभाजी ने इनका अत्यन्त भक्तिपूर्वक स्मरण किया है। किन्तु रामानन्दी वैष्णवों ने फिर भी इन दोनों महान् भक्तों की वाणी को विशेष महत्त्व अपने संप्रदाय में नहीं दिया। क्या इसीलिए कि कबीर ने तमाम प्रचलित रूढ़ियों का, जात-पाँत का, छूतछात का, तीर्थों के पानी व पत्थर का, और पंडों-पुजारियों का प्रबल खंडन किया था? मिथ्याचारों और पाखण्डों पर कबीर ने जो करारे प्रहार किये, उनसे यदि कुछ भी पाठ लिया गया होता; इसी प्रकार मानवमात्र को आलिंगन देनेवाली चैतन्यदेव की प्रेमधारा में अवगाहन होता रहता, तो आज वैष्णव-समाज भी, साधु-मण्डल भी मानव-समता की संस्थापना में प्राण-पण से लगा होता। मैं अपनी ओर से ही नहीं, हरिजन-सेवक-संघ की ओर से भी साधु-समाज से सविनय अनुरोध करूँगा, कि अस्पृश्यता-निवारण के भगवत्-कार्य को वह अपने हाथ में लेले। आज भी बहुत-कुछ श्रद्धा-भक्ति जनता की साधु-संतों पर है। जनसाधारण पर, खासकर ग्रामों के लोगों पर उनका आज भी खासा प्रभाव है। समाज में से वैर और विष को निकालकर समता की संजीवनी हमारे साधु-संत ही जनता को वितरण कर सकते हैं। आर्थिक समता तो दूसरे लोग भी देश में स्थापित कर सकते हैं, किन्तु धर्मको कुंदन-सा शुद्ध करनेवाली सामाजिक समता की स्थापना तो वैरागी, यति और भिक्खु ही कर सकते हैं। हमारे सद्भाग्य से इस सभा में 'भारत-पारिजातम्' महाकाव्य के यशस्वी प्रणेता स्वामी भगवदाचार्यजी उपस्थित हैं। गांधी-चरित को संस्कृत में गाकर इस यशोधन वैष्णव ने आपके संप्रदाय को बहुत बड़ी सेवा की है। स्वामीजी के सुलझे हुए स्वानुभूत विचारों पर आप सब लोग गहराई से चिंतन करें, और उनका अनुसरण करते हुए भारतीय समाज में मानव-समता को प्रतिष्ठित करने में अपने आपको अर्पित करदें। मानव-सेवा ही सच्ची भगवत्-सेवा है। प्राचीन भागवतों ने भी यही किया था, इसी विष्णु-महायज्ञ को।

[श्री वियोगी हरि द्वारा दिये विभिन्न भाषणों में से उद्धृत अंश—**हरिकृष्ण शास्त्री**]

तामिलनाड में हरिजन-कार्य

दक्षिण भारत में अस्पृश्यों के लिए—उन दिनों उन्हें 'अस्पृश्य' ही कहा जाता था—बहुत पहले काम शुरू हो गया था। स्व० डाक्टर ऐनी बेसेन्ट, श्री राजाजी और स्व० श्री टी० सदाशिव ऐयर इस आन्दोलन के अध्वर्यु थे। यह बात सर्वविदित है कि राजनैतिक आन्दोलन में पड़ने के बहुत पहले से ही अस्पृश्यता-निवारण तथा मद्य-निषेध इन दोनों प्रवृत्तियों के साथ राजाजी का घनिष्ठ संबंध था। राजाजी जब सलेम शहर की म्युनिसिपैलिटी के अध्यक्ष थे, तब उन्होंने शहर को पानी मुहैया करने के लिए हरिजनों को नियुक्त किया था। जनता ने इसका काफी विरोध किया था, पर पीछे उसे शांत हो जाना पड़ा। मद्रास-सरकार ने भी इस मामले में दिलचस्पी ली थी। हरिजनों को ऊँचा उठाने में तत्कालीन सरकार का इरादा चाहे जो रहा हो, पर अंग्रेज अफसरों ने तथाकथित दलित-जातियों के सुधार के लिए जो काम शुरू किये थे, उनका उल्लेख मुझे करना ही चाहिए। हरिजन बच्चों की शिक्षा के लिए तब अलग स्कूल खोले जाते थे और उनकी सारी व्यवस्था केवल हरिजनों के ही हाथ से कराई जाती थी, या मुसलमानों के हाथ से, जो छूतछात नहीं मानते थे। बच्चों को किताबें, कपड़े और छात्रवृत्तियाँ भी दी जाती थीं, और कुओं का खुदवाना भी कार्यक्रम में शामिल था। नाममात्र के मूल्य पर मकान बनाने तथा खेती करने के लिए भी ज़मीन दी जाती थी। जहाँतक इस प्रान्त का सम्बन्ध है, व्यवस्थित रीति से यह काम यहाँ चल रहा था। इससे हरिजनों को लाभ तो हुआ, पर इससे उनकी अस्पृश्यता दूर नहीं हुई, वे अस्पृश्य ही रहे। अस्पृश्यता की जड़ों को हिलाने का सारा श्रेय तो एक गांधीजी को ही दिया जा सकता है। यद्यपि गांधीजी के चतुर्विध रचनात्मक कार्यक्रम का एक अंग अस्पृश्यता-निवारण भी था, तोभी उसे जितना महत्त्व मिलना चाहिए था वह १९३२ में

उनके ऐतिहासिक अनशन शुरू करनेतक नहीं मिला पाया था। इस अनशन ने इस महत्त्वपूर्ण समस्या पर भारत का ही नहीं, प्रत्युत सारे संसार का ध्यान केन्द्रित कर दिया। इस प्रश्न पर गांधीजी के साथ जो लोग सहमत भी नहीं थे, वे भी इसके विरुद्ध नहीं गये, जाने का साहस भी नहीं किया। कितने ही राजनैतिक सम्मेलनों में उच्चवर्ग के हिन्दुओं ने खुल्लमखुल्ला हरिजनों के साथ खाना खाया, जिसकी स्वप्न में भी पहले उन्होंने कल्पना नहीं की थी। यह एक ऐसी क्रान्ति थी, जिसने चुपचाप अपना काम कर दिखाया। सहभोज का प्रश्न सहज ही हल हो गया, और यहाँतक कि जब रेलवे-स्टेशनों पर से पृथक् भोजनालय हटा दिये गये, तो उसपर किसीने ध्यान भी नहीं दिया।

इस आन्दोलन का मनोवैज्ञानिक प्रभाव समाज पर काफी पड़ा, किन्तु अस्पृश्यता-निवारण का सच्चा कार्य तो हरिजन-सेवक-संघ की स्थापना होने पर हुआ। संघ का नाम शुरू-शुरू में "सर्वेंट्स आफ अनटचेबल्स सोसाइटी" अर्थात् अस्पृश्य-सेवक-मण्डल था। कहने की आवश्यकता नहीं कि राजनैतिक विचार के लोगों ने, जिनमें अधिकांश कांग्रेसजन थे, और दूसरे भी, जो कि गांधीजी के अनुयायी थे, इस काम को हाथ में ले लिया। विदेशी सरकार ने हिन्दू-समाज से हरिजनों को अलग रखने की जो भेदक नीति अख़्तयार की थी उसे गांधीजी के सफल अनशन ने हमेशा के लिए असफल कर दिया और संसारभर के विचार-शील लोगों की आँखें खोलदीं।

गांधीजी के अनुयायी भी इस समस्या में निहित दूर-दर्शिता और महत्ता को तबतक नहीं समझ पाये थे, जबतक कि हमारे देश पर शासन करनेवालों ने भारत को छोड़ देने और उसे हमारे हाथों में सौंप देने का निश्चय नहीं किया था। हम लोगों में से जिन्होंने देश के विभाजन की भयंकरता और उसके परिणामों को ध्यान से देखा, वे आसानी से उस ऐतिहासिक अनशन के फलितार्थ को अनुभव कर सकते हैं। राष्ट्रपिता ने यदि दूरदर्शिता से काम न लिया होता, तो जो दुष्परिणाम आते, उनकी कल्पना भी तब हममें से किसीको नहीं हो सकती थी।

अस्पृश्य-सेवक-मण्डल का उद्घाटन तामिलनाड में सद्भाग्य से राजाजी ने जेल से मुक्त होते ही १९३२ के अक्तूबर में किया। १९३२ से १९३४ तक यद्यपि कोई खास आयोजित काम नहीं हुआ, फिर भी कार्यकर्ताओं ने बड़े उत्साह से हर जगह अस्पृश्यता-निवारण का प्रचार-कार्य किया। हरिजन-बस्तियों में वे जाते, बच्चों को मिठा-इयाँ बाँटते, उन्हें अपने हाथ से नहलाते और बस्तियों की सफाई भी किया करते थे। कभी-कभी कपड़े इत्यादि की भी मदद लोगों को दिया करते थे। कुछ स्कूल भी इस अर्से में खोले गये और भजन-कीर्तन के भी कार्यक्रम रखे गये। गांधीजी द्वारा अखिल भारतीय हरिजन-प्रवास करने और उसमें ८ लाख रुपये इकट्ठे होने से पहले कोई आयो-जित कार्यक्रम हाथ में नहीं लिया जा सका। उसके बाद ही नियमित रूप से तामिलनाड के दसों जिलों में संगठित कार्य शुरू किया गया। स्कूल और छात्रालय चलाये गये, हरिजन-मोहल्लों में भजन-कीर्तन के आयोजन किये गये, उनकी बस्तियों में कुएँ खुदाये गये और विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियाँ दी गईं। वार्षिक ३०,००० रुपये से हमने काम शुरू किया था। आज हमारा बजट ३,५०,००० रुपयेतक पहुँच गया है। हमारे कार्यक्रम की बदौलत स्थिति में स्पष्ट ही खासा अन्तर देखने में आता है। हमने जो अलग स्कूल शुरू-शुरू में खोले थे, वे साधारण स्कूलों में धीरे-धीरे परिणत हो गये और उन्हें या तो म्युनिसिपैलिटियों और ज़िला-बोर्डों ने या गवर्नमेंट ने अपनी व्यवस्था के अधीन ले लिया; मगर छात्रालयों को हमने बढ़ाया है, क्योंकि हमारा खयाल है कि उनके द्वारा हम नवयुवक विद्यार्थियों के जीवन-क्रम को सही दिशा में मोड़ सकते हैं और समाज और राष्ट्र के लिए उन्हें उपयोगी बना सकते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस काम में हमारी अधिक-से-अधिक शक्ति लग रही है। इसमें संदेह नहीं कि इस दिशा में काम करने के लिए अब भी बहुत बड़ा क्षेत्र पड़ा है। पर हमें लगता है कि अनेक कारणों से हम अपनी इन महत्त्वाकां-क्षाओं को पूरा नहीं कर पा रहे हैं। फिर भी अपने सिद्धांतों को बग़ैर छोड़े हरिजन छात्र-छात्राओं को आदर्शों में ढालने का

प्रयत्न हम अधिक-से-अधिक कर रहे हैं। सरकार से हमें काफी अच्छी आर्थिक सहायता मिलती है; पर यह एक ऐसा भी कारण है कि जिससे तुरन्त अपने आदर्शों पर अमल कराने में हम कभी-कभी असमर्थता महसूस करते हैं।

मैंने ऊपर कहा है कि मद्रास-सरकार शुरू से ही इस काम में मदद देती रही है। बजट में हरिजन-उत्थान के लिए चंद लाख रुपये शुरू में उसने रखे थे। आज एक करोड़ ग्यारह लाख रुपये वार्षिक वह सिर्फ हरिजन-कल्याण-कार्य पर खर्च कर रही है। सरकारी और ग़ैर सरकारी ढंग पर बहुत-सारा काम हो रहा है, फिर भी कार्य को बढ़ाने की ही नहीं, बल्कि कार्य-पद्धति को सुधारने और अंतर्निरीक्षण करने की अभी बहुत गुंजाइश है।

अन्त में, मैं दो छोटे-छोटे किस्सों का उल्लेख करूँगा, जो हरिजन-कार्य के आरम्भ-काल से सम्बन्ध रखते हैं।

१९३७ के साल की बात है। डा० टी० एस० एस० राजन्, जो उन दिनों तामिलनाड-हरिजन-सेवक संघ के अध्यक्ष थे, अस्पृश्यता के प्रश्न पर केन्द्रीय धारा-सभा के सदस्य चुने गये। उनके विपक्षी सज्जन अस्पृश्यता के एक कट्टर समर्थक थे। डा० राजन् को राजाजी के चित्र का अनावरण करने के लिए सलेम बुलाया गया था। सद्भाग्य से मैं भी उनके साथ गया था। तत्कालीन मद्रास-सरकार के मन्त्री श्री-पी० टी० राजन् ने इस समारम्भ की अध्यक्षता की थी। जलसा खत्म हो जानेपर हमलोग भोजन की प्रतीक्षा कर रहे थे। ज्योंहीं भोजन करने की सूचना मिली, हम लोग— डा० राजन् और मैं और ड्राइवर, जो हरिजन था, अन्दर जाने लगे। रास्ते में मिनिस्टर साहेब के ड्राइवर ने, जो सवर्ण था, उसे टोका। हमारे ड्राइवर को वह बराबर ध्यान से देख रहा था कि वह कहाँ जा रहा है। अन्त में, उसे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि डा० राजन् और उनका हरिजन ड्राइवर बड़े-बड़े अफसरों की पंक्ति में, जिसमें उनका मालिक भी शामिल था, सबके साथ बैठा हुआ खाना खा रहा है। किन्तु सवर्ण तथा मिनिस्टर साहेब का ड्राइवर होते हुए भी वहाँतक उसकी पहुँच नहीं होसकी! हमलोग जब भोजन कर चुके, तब वह मेरे पास आया— डा० राजन्तक तो जा नहीं सकता था— और मुझसे पूछा कि भोजनालय में आप एक हरिजन को कैसे ले गये, और उसे अपनी पंक्ति में बैठाकर कैसे खिलाया? मैंने कहा, "गांधीजी की बदौलत, जिन्होंने कि इस देश में असम्भव को भी संभव कर दिखाया है।" उसने मुझे जवाब दिया, "अजी, और कोई अवसर होता, तो ऐसी बात से खून खच्चरतक की नौबत आ सकती थी, पर आज यह एक अनहुई बात हमारी बिलकुल आँखों के सामने हुई है।"

दूसरी कहानी खुद मेरे गाँव की है। मेरी हिमाकत थी कि मैंने हरिजन लड़कों के लिए वहाँ एक छात्रालय चलाने की बात सोची। बाधाएँ इसमें दो थीं। एक तो यह कि मेरा गाँव एक बहुत ही रूढ़िचुस्त गाँव था; दूसरी यह कि ऐसी कोई जगह मिल नहीं रही थी जहाँ पर छात्रालय के लिए मैं एक छप्पर डाल सकता। किसी सवर्ण हिन्दू के पड़ोस में हरिजन लड़कों के रखने का तो तब कोई प्रश्न ही नहीं आता था। स्कूल वह एक स्थानीय मंदिर का था। ज़मीन के एक टुकड़े को मैंने पट्टे पर ले लिया और शुरू में १२ लड़कों के रहने को एक छप्पर डलवा दिया, हालांकि यह जगह दूर थी। पर कुछ मुसलमान उसके पड़ोस में रहते थे। कुछ ज़मीन की माँग मैंने सरकार से भी कर रखी थी। मुझे मालूम हुआ कि मेरी इस कार्रवाई पर गाँव के लोग काफ़ी रुष्ट हैं। छात्रालय शुरू होने के कुछ दिनों बाद एक दिन शाम को एक-दो मुसलमानों ने धमकाया और कहा कि तुम यह सब कर क्या रहे हो? क्या सारे समाज को भ्रष्ट करके एकमेक कर देना चाहते हो? मैं उनकी बात पर हँसने लगा, कुछ कहना ही चाहता था कि एक दूसरे आदमी ने मुझे वहाँ से चले जाने के लिए कहा, और वह बोला, "अच्छा हम तुम्हें देख लेंगे।" मैं त्रिची चला आया। दूसरे दिन मेरे पास खबर पहुँची कि छात्रालय का छप्पर जला दिया गया है, मगर खुशनसीबी से लड़कों का कोई नुकसान नहीं हुआ। मैं तुरन्त वहाँ पहुँचा, और पुलिस की मदद से पड़ोस के मुसलमानों को खूब धमकाया। वे ठंडे पड़ गये। इसके बाद फिर कोई वैसी घटना नहीं हुई। आज वही छात्रालय उसी जगह पर, मगर एक बड़े अहाते में, दो बड़े-बड़े दो मंज़िले भवनों में खड़ा है, कोई पौन एकड़ ज़मीन पर। कोई पचास हजार रुपया छात्रालय के भवनों पर खर्च हुआ, जिनमें ८० विद्यार्थी आज रह रहे हैं।

ला० ना० गोपालस्वामी

हरिजनों की समस्याएँ

[कांग्रेस के गत अधिवेशन के अवसर पर हैदराबाद में भारतीय दलित वर्ग संघ के सम्मेलन के अध्यक्ष-पद से श्री नारायणराव स० काजरोलकर ने जो अभिभाषण दिया था, उसके महत्त्वपूर्ण अंश हम नीचे उद्धृत करते है—सं०]

देश में अछूतपन कब से प्रारम्भ हुआ इस संबंध में निश्चित मत प्रकट करना कुछ कठिन-सा है, पर उसका संबंध वर्ण-व्यवस्था से है यह मानना भूल नहीं होगी। वर्णव्यवस्था का मूल उद्देश्य समाज को उस समय चार अलग-अलग टुकड़ों में बाँटना था और हर टुकड़े को उचित कार्य सौंपा गया था। यह व्यवस्था उस समय शायद इस विचार से चालू की गई थी कि लोग विशेष योग्यता के साथ काम करें और स्वभावतः उसका परिणाम सर्वसाधारण समाज का कल्याण होने में होगा। किन्तु समय की गति के कारण और विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक स्वार्थों के बीच संघर्ष का परिणाम उक्त व्यवस्था का पतन होकर समाज में एक कड़ी लौहशृंखला का निर्माण होने में हुआ, जो कुछ स्वार्थी लोगों के हित में थी और बुद्धिमान वर्गों की उपयोगिता और महत्त्वाकांक्षाओं को दबाती थी। हमारे अपने लोगों को ऐसे कामों में संतुष्ट रहना पड़ा, जो एक तो गन्दे थे और जिनका उचित पुरस्कार भी नहीं मिलता था।

अछूतपन के व्यवहार को 'हिन्दुत्व पर कलंक' यह हमारे उपकर्त्ता महात्मा गांधी ने जो नाम दिया है वह बिलकुल ठीक और उचित है। असंख्य अयोग्यताओं का मुकाबिला हरिजनों को क़दम-क़दम पर करना पड़ता था। क़सबों और नगरों में स्थिति अब कुछ कुछ सुधर गई है, पर अबभी कई गाँवों में हरिजनों के साथ वही अमानुष व्यवहार किया जाता है। राजा राममोहनराय, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी-दयानन्द सरस्वती, श्री सयाजीराव गायकवाड, श्रीविट्ठलरामजी शिंदे तथा श्री ठक्कर बापा जैसे देशभक्तों ने हमारा प्रश्न उठाया और हमारे कष्ट और दुःख कम करने का प्रयत्न किया। किन्तु जबतक इस संबध में महात्मा गांधी ने अपना सामाजिक युद्ध नहीं छेड़ा इस दिशा में विशेष प्रगति नहीं हो सकी। अछूतपन के आचरण से होनेवाले सामाजिक अन्यायके कारण वे बुरी तरह दुखी थे। गांधीजी ने जब इस समस्या को अपने हाथ में लिया, जादू की तरह यह समस्या राष्ट्रीय महत्त्व की बन गई और उनकी ही प्रेरणा से अछूतपन का मिटाना कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम का एक अटूट अंग बन गया।

हम हरिजनों को जो विशेष राजनीतिक सुविधाएँ दी गई हैं, वे दस वर्ष की अवधि पूरी होते ही समाप्त हो जायेंगी। संविधान के निर्माता तथा भारत की जनता हमसे आशा करती है कि हम इस अवधि में दूसरों के स्तर तक पहुँच जायें। यदि ये विशेष सुविधाएँ आज ही समाप्त कर दी जायें, तो व्यक्तिशः मुझे प्रसन्नता ही होगी, क्योंकि उनके रहने से हमारी आत्मतुष्टि की भावना को बल मिल सकता है। विशेष सुविधाएँ और जनतन्त्र ये दोनों परस्पर-विरोधी बातें हैं। जनतन्त्र में सबको समान अवसर होता है। किन्तु इस संबंध में एक बात ध्यान देने की है कि जनतन्त्र की सफलता के लिए इतना ही आवश्यक नहीं कि प्रत्येक नागरिक को समान अवसर प्राप्त हो, बल्कि यह भी आवश्यक है कि हर नागरिक की ऐसी परिस्थिति हो कि संविधान द्वारा प्राप्त अवसर का वह उपयोग कर सके। अतः सभी नागरिक एक ही पटरे पर खड़े हों और पुरानी परम्पराओं और रूढ़ियों का बोझ किसी एक विशेष पर न डाला जाय। साथ ही, यह भी उचित होगा कि हम अपनी प्रगति का समय-समय पर सिंहावलोकन भी किया करें, जिससे भविष्य की योजनाएँ बनाई जा सकें। यदि हम दस वर्ष की निश्चित अवधि के मुपहले ही देश को यह बताने के लिए प्रस्तुत हों कि प्राप्त विधाओं को संगठितकर हम इस स्थिति पर पहुँच चुके

है कि अब अपने पैरों पर खड़े हो सकते हैं और समान स्तर पर दूसरों के साथ प्रतियोगिता में भी आ सकते हैं, तो उससे देश में हमारी प्रतिष्ठा, हमारी इज्जत की ही वृद्धि होगी।

× × ×

गाँवों में हरिजनों की अवस्था बहुत ही दयनीय है। संविधान में जो मूलभूत अधिकार हमें दिये गये हैं, वे हमारे बहुत-से भाइयों और बहनों के लिए कागज पर प्रकट हुई केवल शुभेच्छा की तरह ही रह जाते हैं। अछूतपन के व्यवहार से उत्पन्न सामाजिक अयोग्यताओं को नष्ट करने के उद्देश्यसे यद्यपि कई प्रांतों में क़ानून पास किये गये हैं, किन्तु उनसे विशेष लाभ नहीं उठाया जा सका। क्योंकि गाँवों में रहनेवाले हरिजन इतना साहस नहीं बटोर पाते कि वे अपने उचित अधिकारों और उनकी रक्षा के निमित्त बने क़ानूनों को कार्यान्वित करने का बल दे सकें। कोई भी सामाजिक क़ानून सफलता के साथ तभी कार्यान्वित हो सकता है, जब जनता का सक्रिय सहयोग उसे प्राप्त हो। साधारणतः अमानुष व्यवहार के बहुत ही कम उदाहरण प्रकाश में लाये जाते हैं। अमानुष अत्याचारों का जो शिकार बनता है वह उन्हें चुपचाप इस डर से सहन करता जाता है कि शोषक के अधिक क्रोध का कहीं उसे और शिकार न बनना पड़े। यदि हम चाहते हैं कि यह बुराई समाप्त हो, तो इस प्रकार के अपराधों को दण्डनीय मानना होगा और ऐसे क़ानून कार्यान्वित करने का काम जिनपर सौंपा जाय उन्हें अधिक जागरूक और अपने दायित्व के प्रति अधिक सचेत रहना होगा। उन्हें किसी प्रचारक की सी लगन से काम करना होगा।

× × ×

हमारे देश में हरिजन मेहतरों की दशा बहुत ही बुरी है। यद्यपि उनका कार्य किसी भी क्षेत्र में, चाहे वह सार्वजनिक हो या निजी, स्वास्थ्य और सफाई बनाये रखने के लिए सबसे अधिक आवश्यक है, किन्तु उन्हें अब भी बहुत-से लोग सामाजिक मापदण्ड में सबसे नीचे का समझते हैं। शायद संसार में भारत ही एक ऐसा देश है, जहाँ सफाई-जैसा समाज की रक्षा का काम किसी जाति विशेष के लोगों को सौंपा जाता है। इसका परिणाम काम की गिरावट होने में तो हुआ ही है, मेहतरों का आत्म-सम्मान भी उससे नष्ट हुआ है।

मेहतरों के काम के संबंध में राष्ट्रीय सद्बुद्धि जगाने का श्रेय सबसे पहले महात्मा गांधी तथा उनके शिष्य श्री विनोबाजी व श्री अप्पासाहब पटवर्धन जैसे लोगों को प्राप्त है। हाल में ही बम्बई-सरकार ने श्री काकासाहेब बरवे की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्ति की थी जिसे मेहतर किन परिस्थितियों में जीवन बिताते हैं, इसकी जाँच का काम सौंपा गया था। समिति ने इस प्रश्न के सभी पहलुओं पर विचारकर एक रिपोर्ट तैयार की, जिसमें अनेक विचारपूर्ण सुझाव हैं। मेले के कुण्डों को हाथ से उठाने की पद्धति यथासंभव समाप्त करने की सिफारिश कर समिति ने इस काम के लिए कई दूसरे उपाय भी सुझाये हैं। समिति ने कहा है कि यदि आवश्यक हो तो क़ानून बनाकर भी टोकरी, बालटी, अथवा पीपे में मैला ले जाने की वर्तमान पद्धति पर रोक लगा देनी चाहिए। यह रिपोर्ट सरकार ने प्रकाशित की है। मेरा आप सबसे, स्थानीय संस्थाओं तथा विधान-सभाओं के सदस्यों से अनुरोध है कि वे उस रिपोर्ट को पढ़ें और प्रयत्न करें कि इस जंगली और घृणित पद्धति का उन्मूलन करने के लिए सरकार की ओर से तुरन्त कार्रवाई हो।

× × ×

हरिजन-सेवक-संघ सराहनीय कार्य कर रहा है। किन्तु हरिजन-सेवक-संघ के पास धन और जन के साधन इतने अपर्याप्त हैं कि उससे अधिक काम नहीं हो पाता।

× × ×

संसार प्रगति के रास्ते पर है। यह एक पुरानी कहावत है कि 'समय किसीके लिए नहीं रुकता।' हममें से बहुतों में किसी पर अवलम्बित रहने, असहाय होने तथा अपने को दूसरों से अयोग्य समझने की जो भावना जड़ कर बैठी है, उसे हटाकर उसके स्थान पर प्रसन्नता, साहस और आत्म-विश्वास की भावना का निर्माण हमें करना होगा। यदि हम सभी प्रकार के लोगों के साथ बिना किसी झिझक के मिलें-जुलें, तो पहले की दुर्भावना निश्चित ही दूर हो जायगी और परस्पर के सम्बन्ध में एक नया दृष्टिकोण उत्पन्न हो जायगा।

मैं सरकारों तथा अन्य संस्थाओं से अपील करता हूँ

कि वे हरिजनों को नगर और गाँवों के मध्य बसाने की बात को प्रोत्साहन दें। वर्तमान अलगाव की पद्धति तो नष्ट होनी चाहिए।

× × ×

हम हरिजनों की अधिक आबादी गाँवों में है। बहुत ही कम संख्या में लोग बड़े कस्बों और नगरों में आकर बसे हैं। गाँवों में हमारी आजीविका का साधन खेतों में मज़दूरी या दस्तकारी के छोटे-मोटे काम करना है, इस पेशे में साल के कुछ महीनों में ही काम मिलता है और उसके बदले में जो कुछ प्राप्त होता है उससे जीवन की मामूली आवश्यकताएँ भी पूरी नहीं होतीं। उत्पादन के लिए जबतक मशीनों का उपयोग नहीं होता था, हमारी ग्रामीण आबादी को खेती का मौसम न होनेपर ग्रामोद्योग में कुछ पूरक काम मिल जाता था। किन्तु बड़े उद्योगों के बीच गहरी प्रतियोगिता के कारण ग्रामोद्योग धीरे-धीरे नष्ट हो रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप सर्वसाधारण हरिजन की छोटी-मोटी आय उसके मामूली जीवन-निर्वाह के लिए अब काफ़ी नहीं होती। जैसे ही साल बीतते हैं उसके कर्ज़ का बोझ भी बढ़ता जाता है और उसे और उसके कुटुम्बियों को सारा ही जीवन ग़रीबी में बिताना पड़ता है। ग़रीबी और आर्थिक पराधीनता का ही यह सीधा परिणाम है कि किसी भी ग्रामीण हरिजन में अत्याचार और अन्याय के विरुद्ध सिर उठाने का साहस नहीं होता। हम पाशविक अत्याचारों की कहानियाँ सुनते हैं, किन्तु प्रकाश में आनेवाला अंश वास्तविक घटना का बहुत ही छोटा हिस्सा होता है। निरी असहायता के कारण बहुत-से लोग चुपचाप सब-कुछ सहन करते हैं। इस प्रकार विनाश निकट आता जा रहा है।

× × ×

जैसा कि आप सभी जानते हैं कि हममें से बहुत-से लोग भूमिहीन खेतिहर मज़दूरों का काम करते हैं। उन्हें इस आर्थिक गुलामी से मुक्त करने की दृष्टि से सरकार को चाहिए कि ऊसर ज़मीन बाँटते समय वह हरिजनों को प्राथमिकता दे। पर केवल ज़मीन देने से ही अन्न पैदा नहीं होगा। उन्हें नक़द सहायता भी दी जानी चाहिए, जिससे कि साहूकारों के चंगुल में आये बिना वे अपने जीवन का प्रारम्भ नये सिरे से कर सकें। इस सम्बन्ध में हमारी दृष्टि स्वभावतः आचार्य विनोबा भावे की ओर दौड़ती है। उन्होंने हमारे सामने एक बिल्कुल नया आदर्श रखा है, और वह है भूमिहीनों में भूमि का वितरण। दान मिली भूमि में से एक तिहाई भूमि उन्होंने हरिजनों के लिए सुरक्षित रखी है। हम उनके कार्य की पूरी सफलता चाहते हैं।

अछूतपन पूरी तरह मिटाने के लिए क्या-क्या बातें आवश्यक हैं उनमें से दस मुख्य बातों को ही मैं कहूँगा :—

१. जातियों तथा उपजातियों की पद्धति तुरन्त समाप्त हो।

२. सभी हरिजन बालक-बालिकाओं को प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा दी जाय। इस कार्य के निमित्त सभी राज्यों का सम्मिलित एक दसवर्षीय कार्यक्रम हो और उसका बिना किसी अपवाद पालन किया जाय। सभी स्वस्थ हरिजन स्त्री-पुरुषों को साक्षर बनाया जाय।

३. उच्च शिक्षा के लिए देश और विदेशों में हरिजन विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियाँ दी जायँ।

४. गाँवों और नगरों में हरिजनों की अलग बस्ती की वर्तमान पद्धति समाप्त की जाय। गृह-निर्माण की एक योजना बनाई जाय और वह निश्चित समय के अंदर—मान लीजिए कि आठ वर्ष—कार्यान्वित की जाय, जिससे कि हम दूसरों के साथ समान स्तर पर आकर मिल-जुलकर रह सकें।

५. उल्लिखित मकानों की योजना कार्यान्वित होनेतक वर्तमान हरिजन-बस्तियों में सफ़ाई और स्वास्थ्य की सुविधाएँ दी जायँ।

६. सभी हरिजन मज़दूरों को आर्थिक न्याय मिले।

(क) सभी हरिजन युवा स्त्री-पुरुषों का रिकार्ड रखा जाय और उन्हें उचित काम अवश्य दिया जाय। उनमें से यदि कोई योग्य न हो तो उसे राज्य के खर्च पर ट्रेनिंग दी जाय।

(ख) हल जोतनेवाला अथवा जोत सकनेवाला प्रत्येक हरिजन अपनी भूमि का मालिक बन सके। पड़ती भूमि

खेतिहर मज़दूरों को, जो अधिकतर हरिजन हैं, जोतने-बोने दी जाय और इस कार्य में उन्हें आर्थिक सहायता भी दी जाय।

(ग) सरकारी तथा ग़ैर सरकारी संस्थाओं द्वारा हरिजनों को कृषि तथा औद्योगिक कार्यों के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

७. अत्यधिक ब्याज पर ऋण देना रोकने के लिए एक क़ानून बनाया जाय और वर्तमान ऋणों को मिटाने के लिए ऋण-निराकरण बोर्ड बनाये जायें जिससे कि हरिजन साहूकारों के चंगुल से मुक्त हो सकें।

८. सरकारी नौकरियों में हरिजनों के लिए जो अनुपात आज निश्चित है उसका पूरा-पूरा पालन किया जाय।

९. सभी प्रशासकों को आदेश दिया जाय कि संविधान तथा क़ानून की जिन धाराओं में हरिजनों को अधिकार और अवसर की समानता दी गई है, उन्हें सचाई के साथ अमल में लाया जाय।

१०. केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारें एक-एक ऐसा अलग मंत्री नियुक्त करें जो समय-समय पर प्रांतों और ज़िलों से उन मामलों की रिपोर्ट प्राप्त करने पर बल दिया करें, जिनमें संविधान की उक्त धाराओं का पालन नहीं हो सका है। वह मंत्री हरिजनों के अधिकारों की तो रक्षा करे ही, सरकारी तथा निजी संस्थाओं के द्वारा हरिजनों के कार्य की जो प्रगति हुई है उसकी भी रक्षा करे।

एक गांधी-मार्ग ही

[गत २८ दिसम्बर, १९५२ को बम्बई-सरकार के मंत्री श्री जी. डी. तपासे ने भड़ोच ज़िले के डेरोल गाँव की हरिजन-परिषद् में जो भाषण दिया था, उसके कुछ अंश ३१ जनवरी, १९५३ के 'हरिजन-सेवक' में उद्धृत हुए हैं। उन उद्धरणों में से एक महत्त्व का अंश हम नीचे देते हैं— सं०]

"मैं देख रहा हूँ कि आप लोग दूर-दूर से यहाँ पधारे हैं। मैं मानता हूँ (मेरा दावा है) कि आप लोग यहाँ सिर्फ़ तमाशा देखने के लिए नहीं आये हैं, बल्कि इस मौक़े पर अपनी कठिनाइयों के बारे में विचार करके उन्हें दूर करने की कोशिश कैसे की जाय यह सोचने के लिए इकट्ठा हुए हैं। आगे क़दम कैसे बढ़ाया जाय, यह तय करने की दृष्टि से यह विचार ज़रूरी है। खाली सुनने से कोई काम नहीं होगा; वह वक़्त अब गुज़र गया है। धमकी से भी कोई काम फतह होनेवाला नहीं है। मैंने अखबार में पढ़ा है कि दो या तीन वर्षों के बाद और ज्यादातर अगले चुनावतक—हरिजनों की हालत में यदि पूरी तरह से सुधार न हुआ, तो हम लोग बड़ा आन्दोलन करेंगे, राज्यतंत्र को तोड़ डालेंगे। इस तरह की धमकी से हम लोग डरनेवाले या दबनेवाले नहीं हैं। अपना काम करने, फ़र्ज़ अदा करने के लिए हम ज़ोरों से कोशिश करते ही रहेंगे। फ़र्ज़ अदा करते समय क़ुरबान भी होना पड़े तो बेहतर है। दूसरा एक पक्ष अक्लमंदी से कहता है कि हरिजनों के बारे में काफ़ी काम हो चुका है, अब इससे ज्यादा कुछ भी करने की जरूरत नहीं है; सबकी तरक्की में और देश की उन्नति में ही हरिजनों की उन्नति होनेवाली है। ऐसी समाधानवृत्ति की आवाज़ निकालने से और धमकियाँ देने से काम नहीं बनेगा। हमने हरिजनों के बारे में कुछ किया नहीं यह कहना ग़लत है, और हमने सब-कुछ किया है या आगे कुछ करने की ज़रूरत नहीं है, यह दावा भी उतना ही ग़लत है। अब भी हरिजनों के उद्धार के लिए आगे क़दम बढ़ाना सबका धर्म है। आप लोगों से मेरा नम्रतापूर्वक कहना है कि क़दम उठाकर आगे बढ़ें।

"कहाँ जाना है और कौन से मार्ग से जाना है, यह बड़ा पेचीदा सवाल आपके सामने खड़ा होगा। कहाँ जाना है और कौन-से रास्ते से जाना है, यह आपको और सारे संसार को हमारे राष्ट्रपिता महात्माजी ने साफ़-साफ़ बतला दिया है। वे जो बात कहते थे, उसीपर चलते भी थे। प्रेम, शांति और अहिंसा के मार्ग से हम आज़ादी की मंज़िल पर पहुँच गये हैं, देश को स्वतंत्रता मिल गई है। आप

क़ानून से आज़ाद हो गये हैं। फिर भी दुःख से कहना पड़ता है कि कई स्थानों पर व्यवहार में आप लोगों को आज़ादी नहीं मिली है। लेकिन अब संविधान द्वारा दी गई आज़ादी को और मूलभूत अधिकारों को व्यवहार में लाने के लिए हरिजनभाई अधीर हो गये हैं। अधीरता के कारण उनकी व्यथा बढ़ गई है। हरिजन भाइयों से भी मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि वे अपने अधिकारों को अमल में लाने के लिए न्याय्य, वैधानिक तथा शान्तिपूर्ण मार्गों को अपनायें। झगड़े की झंझट में पड़ने से न उनका फ़ायदा होगा, न देश का। इस समय देश संक्रमण की हालत में है, और ऐसे मौक़े पर वह सभी लोगों से सहायता चाहता है। मुझे आशा है कि आप सब लोग महात्माजी के द्वारा दिखाये गये मार्ग पर चलकर अपनी और अपने देश की उन्नति करेंगे।

विभिन्न राज्यों में हरिजन-कार्य

तामिलनाड

अस्पृश्यता-निवारण क़ानून के मातहत मदुराई ज़िले व मेलूर के सघन क्षेत्रों में नीचेलिखे अनुसार मामले चलाये गये :—

नवम्बर, १९५२

१	कोटागुडी	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया
२	पीरनमलाई	जिस गिलास में एक हरिजन ने पानी पिया था, उसे तोड़ डाला गया
३	तेढकूतेरू	एक तालाब पर एक हरिजन स्त्री के घड़े कुछ सवर्णों ने फोड़ दिये
४	कीलवलावू	गिलास में पानी देने से इन्कार किया
५	सरूवलूपट्टी	चाय की दो दूकानों पर गिलास में चाय देने से इन्कार किया गया
६	मीनाक्षीपुरम्	प्रवेश-निषेध पर
७	मीनाक्षीपुरम्	नारियल की नरेली में चाय दी गयी
८	रासिंहपुरम्	गिलास में चाय देने से इन्कार किया
९	शंकरपुरम्	प्रवेश-निषेध पर
१०	बोडिनायक्कनुर	गिलास में चाय देने से इन्कार किया
११	मेलूर के अन्तर्गत नातम् गाँव में	काफी देने से इन्कार करने पर एक दूकानदार पर मामला चलाया गया

सभाएँ

मदुराई, विक्रमांगलम्-चावड़ी, रासिंहपुरम्, शंकरपुरम् और बोडिनायक्कनुर में स्वामी आनन्दतीर्थ, श्री पालिनी स्वामी, श्री मूतूतेवर तथा अन्य हरिजन-कार्यकर्ताओं ने अस्पृश्यता-निवारण पर विभिन्न सभाओं में भाषण दिये।

दंड दिये गये

१. मेलूर के एक चाय के दूकानदार पर २० रुपया जुर्माना

२. कीलवलावू के एक नाई पर १५ रुपया जुर्माना

३. मालम्पट्टी के दो चाय के दूकानदारों पर १५-१५ रुपया जुर्माना

४. तेढकूतेरू की एक स्त्री पर, जिसने एक तालाब पर हरिजन स्त्रियों को बाधा पहुँचाई थी, १५ रुपया जुर्माना

दिसम्बर, १९५२

अस्पृश्यता-निवारण क़ानून के मातहत नीचेलिखे अनुसार मामले चलाये गये :—

१	शंकरपुरम्	नारियल की नरेली में दूकानदार ने चाय दी
२	सूरिलीमलाई	चाय के एक दूकानदार ने मारने की धमकी दी
३	बोडिनायक्कनुर	दूकानदार ने गिलास में चाय देने से इन्कार किया
४	नीलकोटाई	दूकानदार ने गिलास में चाय देने से इन्कार किया
५	वेल्लारीपट्टी	नारियल की नरेली में चाय दी
६	वेल्लारीपट्टी	केले के पते के दौने में चाय दी
७	तुम्बपट्टी	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया

८	तिरुवत्तूर	चाय के दूकानदार ने दूकान के अंदर नहीं आने दिया
९	तेट्कूतेरू	नारियल की नरेली में चाय दी गयी
१०	इड्डैयापट्टी	,, ,,
११	कोटागुडी	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया
१२	पल्लापट्टी	नारियल की नरेली में चाय दी गयी
१३	वड्डगापट्टी	,, ,,
१४	वड्डगापट्टी	,, ,,
१५	लिंगावडी	,, ,,
१६	लिंगावडी	,, ,,

सभाएँ

शंकरपुरम्, मैलूर, मनीगरमपट्टी और नातम् में स्वामी आनन्दतीर्थ, श्री वैद्यनाथ ऐयर, श्री एन. एस. वेंकटाचलम् तथा दूसरे हरिजन-कार्यकर्त्ताओं ने हरिजन-दिवस तथा अन्य अवसरों पर अस्पृश्यता-निवारणसम्बन्धी भाषण दिये।

उल्लेखनीय

१. इड्डैयापट्टी में ३ नवम्बर को स्वामीजी कुछ हरिजनों को स्थानीय काफी-दूकानों पर अपने साथ ले गये। एक होटल में एक हरिजन ने सबके साथ बिना किसी बाधा के खाना भी खाया।

२. मदुराई में ७ नवम्बर को श्रीमीनाक्षी-मन्दिर में स्वामी आनन्दतीर्थ बहुत-से हरिजनों तथा दूसरे लोगों को लेकर दर्शन करने गये। शाम को हरिजनों की एक सभा हुई, जिसकी अध्यक्षता मदुराई-म्यूनिसिपैलिटी के उपसभापति ने की। **सभा में इस आशय की निश्चय हुआ कि मरघट की वह ज़मीन, जो काम में नहीं लाई जा रही है, हरिजनों को मकान बनाने के लिए दे दी जाये, और जो झोंपड़ियाँ उन्होंने उस ज़मीन पर बाँध ली हैं, उनको गिराया न जाये।**

३. कीलवलावू गाँव में २० नवम्बर को नाइयों की दूकानों पर कुछ हरिजनों को भेजा गया। नाइयों ने बाल उनके बना दिये। हाल में एक नाई पर १५ रुपया जुर्माना होचुका था, इसलिए अब हरिजनों के बाल बनाने से इन्कार करने की हिम्मत नाई नहीं करते।

४. शालावन्दन गाँव में २४ नवम्बर को एक नाई ने हरिजनों के बाल बनाने से इन्कार किया, लेकिन बाद को उसने माफ़ी माँग ली और हरिजनों के बाल बना दिये।

५. चोक्कानाथपुरम् और रासिंहपुरम् में २६ नवम्बर को पहले तो चाय की दूकान के अन्दर हरिजनों को आने नहीं दिया गया, किन्तु बाद को उन्हें दूकानों के अन्दर स्वामी आनन्दतीर्थ तथा अन्य कार्यकर्त्ताओं के साथ चाय पिलाई गई। दूकानदारों ने वचन दिया कि वे हरिजनों को अपनी दूकानो में चाय पिलाने से इन्कार नहीं करेंगे।

६. रंगनाथपुरम् की एक हरिजन-बस्ती और एक सार्वजनिक कुएँ की सफाई कुछ विद्यार्थियों के साथ ३० नवम्बर को स्वामी आनन्दतीर्थ ने की। ठक्कर बापा-जयन्ती के सिलसिले में प्रीति-भोज का आयोजन भी छात्रालय में किया गया। स्वामीजी ने विद्यार्थियों को सामाजिक निर्योग्यता-निवारण के लिए गांधी-मार्ग पर चलने की सलाह दी। शाम को धर्मतपट्टी की चाय की दूकानों पर हरिजनों को भेजा गया। बिना किसी बाधा के उन्हें चाय पिला दी गयी।

७. बल्लालपट्टी गाँव में एक ही कुएँ पर बिना किसी भेदभाव के सवर्ण और हरिजन पानी भरने लगे हैं।

८. केरिंगकुट्टई (रामनाद ज़िला) में देखा गया कि कुछ सवर्ण हिन्दुओं ने वहाँ के एक ज़मींदार को भड़काया कि हरिजनों को जोतने के लिए ज़मीन न दी जाये, क्योंकि उन्होंने एक सार्वजनिक तालाब पर नहाने का अपराध किया था। उस ज़मींदार को समझाया गया कि उसे ऐसी भूल कदापि नहीं करनी चाहिए।

९. कीलय्युर गाँव का नाई अब हरिजनों के बाल बनाने से इन्कार नहीं करता, क्योंकि उसपर ५ रुपया जुर्माना हो चुका है।

१०. केरिंगकुट्टई के तालाब पर हरिजन और सवर्ण एकसाथ अब नहाने लगे हैं।

११. मैलूर के हरिजन-सेवक श्री रामस्वामी को २६ नवम्बर को यह पता चला कि कैलमपट्टी गाँव में हरिजनों को इसलिए नहीं प्रवेश करने दिया गया कि वे लोग कमीज़ें पहनकर आये थे! वहाँ एक सभा की गयी, और सवर्ण

लोगों को समझाया गया व चेतावनी भी दी गई कि हरिजनों के कर्माङ्ग पहनने पर उन्हें आपत्ति नहीं करनी चाहिए, और न इसपर कि वे सार्वजनिक कुओं और तालाबों से पानी भरना चाहते हैं। होटलों में हरिजनों के साथ कोई भेदवाला बर्ताव नहीं किया गया।

१२. ओलकुडई-काफ़ क्लब के मालिक पर १५ रु० जुर्माना इस अपराध पर किया गया कि उसने हरिजनों को दूकान के अन्दर काफ़ी पिलाने से इन्कार किया था।

१३. [illegible] के मंत्र-[illegible] आनन्दतीर्थ दो हरिजन युवकों के साथ पहुँचे। हरिजन-बस्ती में उन्होंने संघ की प्रवृत्तियों को समझाया। बाद में दो हरिजन लड़कों को एक चाय की दूकान पर भेजा और स्वयं भी एक हरिजन लड़के को लेकर चाय की दूसरी दूकान पर स्वामीजी गये। दूकान में घुसते ही कुछ लोगों ने आकर उन्हें धमकाया और दूकान से बाहर निकाल दिया। गाँव के मुनसिफ़ के घर में जाकर स्वामीजी ने शरण ली और वहाँ से पुलिस को इत्तला भेजी। पुलिस-इन्सपेक्टर ने आकर ५ आदमियों को गिरफ़्तार कर लिया। बाद में दूसरे होटलों में हरिजनों को प्रवेश करने दिया गया।

१४. मैलूर की हरिजन-बस्ती को ७ दिसम्बर को साफ़ किया गया, जिसमें श्री वैद्यनाथ ऐयर ने भी भाग लिया। भंगियों का एक एसोसिएशन भी उस दिन खोला गया। हरिजन-छात्रालयों में सभाएँ हुईं और शाम को सार्वजनिक सभा भी हुई। रात को भंगियों के लिए एक प्रौढ़-शिक्षण-केन्द्र खोला गया।

१५. सरगूवलयपट्टी गाँव में इस बार कोई शिकायत नहीं पाई गई; मगर काँच के गिलास चाय-काफ़ी की सभी दूकानों पर से हटा लिये गये। तालाब से हरिजन पानी भी अब ले सकते हैं।

१६. नवीनीपट्टी गाँव में भी हरिजन तालाब से पानी ले सकते हैं।

१७. तुम्बपट्टी में १४ दिसम्बर को स्थानीय शिव-मंदिर में एक ईसाई हरिजन ने पुनः हिन्दूधर्म में प्रवेश किया और वहाँ उसका फिर से वही नाम रखा गया, जो कि पहले था। गाँव के बड़े-बड़े लोगों ने इस समारोह में भाग लिया।

१८. रुवट्टूर गाँव में अब कोई निर्योग्यताएँ नहीं रही हैं।

१९. तेनकुनेरू गाँव में १७ दिसम्बर को एक वृद्ध हरिजन एक चाय की दूकान पर भेजा गया। उसके बतलाने पर भी कि वह जाति का पारिया है, उसे दूकान के अन्दर दो दूकानदारों ने आने दिया, मगर एक दूकानदार ने उसे दूकान के बाहर बैठाकर नारियल की नरेली में चाय दी। यह मामला पुलिस में दर्ज करा दिया गया।

२०. मैलूर में २३ दिसम्बर को श्री गणपति-मंदिर में स्वामी आनन्दतीर्थ हरिजनों को लेकर पूजा करने गये। पूजा में कोई बाधा उपस्थित नहीं की गयी।

राजस्थान

लगभग सारे जोधपुर शहर के होटल-मालिकों, बाल काटने की दूकानवालों को और प्याऊवालों को अपील की गई कि वे हरिजनों के साथ समान व्यवहार करें।

होटल के मालिकों, बाल काटनेवालों, और प्याऊवालों के जवाब का कुछ दिनोंतक इन्तज़ार किया जा रहा है, ताकि उन्हें सोचने का कुछ अवकाश मिल सके। कुछ दिनों के बाद एक और अन्तिम अपील प्रकाशित की जायेगी जिसे होटल-मालिकों, नाइयों और प्याऊवालों को नोटिस देना समझा जा सकेगा।

२६ जनवरी के दिन सिन्ध-राजपूताना होटल में दो हरिजनों ने प्रवेश किया। प्रवेश के पहले, होटल-मालिक से शान्तिपूर्वक बातचीत की गई। मैनेजर व मालिक की रज़ामंदी के साथ पहली बार इस होटल में प्रत्यक्ष रूप में हरिजनों को प्रवेश मिला है। यहाँ कुल ४ होटल हरिजनों के लिए अबतक खुल गये हैं।

जो अबतक हरिजनों के लिए होटल खुले हैं, उनके मालिकों का कहना है कि हरिजनों को सारे शहर के होटलों

में आना चाहिए, केवल इनमें ही क्यों और दूसरों में किसलिए नहीं? उनका यह भी कहना है कि इस प्रकार समस्त होटलों में हरिजनों के न जाने से उन चार होटलों की बिक्री पर बुरा असर पड़ रहा है। 'जगदीश-होटल' अभी हरिजनों के लिए नहीं खुला है। इस होटल का मालिक एक रूढ़िचुस्त सवर्ण है।

संघ का कार्यक्रम

राजस्थान-हरिजन-सेवक-संघ ने नीचेलिखे अनुसार अपना कार्यक्रम निश्चित किया है :—

१. सवर्ण लोगों का मत-परिवर्तन कर छुआछूत को मिटाना।

२. स्थान-स्थान पर हरिजन-सेवक-समितियों को संगठित कर उनके द्वारा हरिजन-कार्य चलाने की व्यवस्था करना।

३. हरिजनों के लिए संस्कार-केंद्र चलाकर उनका सांस्कृतिक विकास करना।

४. हरिजनों के नवयुवक-मंडल, क्लब, खेलकूद और भजन-मंडलियों का संगठन करना।

५. जलकष्ट-निवारण के लिए सार्वजनिक स्थानों पर उनको पानी भरने की सुविधा दिलानी और प्याउओं पर से नालियाँ हटवानी।

६. हरिजन-बस्तियों में भी सब मोहल्लों की भाँति सफ़ाई, रोशनी आदि का प्रबन्ध करवाना।

७. मद्य-सेवन तथा अन्य सामाजिक बुराइयों को दूर करवाना।

८. सरकारी और अर्द्ध सरकारी संस्थाओं में हरिजनों को उचित प्रतिनिधित्व दिलवाना।

९. धर्मशालाओं, होटलों, नाइयों की दूकानों आदि पर उनके प्रवेशसम्बन्धी अवैध प्रतिबन्ध हटवाने की कोशिश करना।

१०. हरिजनों के अन्य स्थानीय कष्टों के निवारण का प्रयत्न करना।

११. हरिजन बालकों को स्थानीय पाठशालाओं में दाखिल करवाना।

१२. शिक्षण-संस्थाओं में पढ़नेवाले हरिजन विद्यार्थियों का शिक्षा-शुल्क माफ़ कराने और उनको सरकारी छात्र-वृत्तियाँ दिलवाने का प्रयत्न करना।

१३. जो हरिजन छात्र सरकारी होस्टलों में रहकर आगे पढ़ना चाहें, उन्हें वहाँ दाखिल कराना।

१४. चौथी श्रेणी-उत्तीर्ण हरिजन छात्र यदि औद्योगिक शिक्षण प्राप्त करना चाहें, तो उनके लिए औद्योगिक शिक्षा का प्रबन्ध कराना।

१५. हरिजनों को नौकरियों में उचित स्थान दिलवाना और उनके वेतन आदि को दूसरों के स्तरतक पहुँचवाना।

१६. हरिजनों के मकानों व खेती के लिए भूमि दिलाने की व्यवस्था कराना।

१७. हरिजनों के सहायक उद्योग-धन्धों की जाँच और उनके विकास के लिए प्रयत्न करना।

१८. उद्योग-धन्धों के सहायतार्थ समितियाँ स्थापित करने के लिए उत्साहित करना।

१९. हरिजन-ऋण-निवारिणी सहकारी समितियों का संगठन और उनकी ऋण-मुक्ति के लिए प्रयत्न करना।

दिल्ली

१. उवास—मदनपुर ग्राम के हरिजनों की इस शिकायत पर कि उनपर नाजायज़ कर लगाया जा रहा है, हरिजन-सेवक श्री बलजीतसिंह संघ के आदेश से उक्त ग्राम में जाँच करने गये। उनके प्रयत्न से इस प्रकार का कोई कर नहीं लगाया गया।

२. मुबारकपुर ग्राम के हरिजनों की कुछ ज़मीन ज़मींदारों ने छीन ली थी। हरिजन-सेवक के प्रयत्न के फलस्वरूप झगड़ा ख़त्म हो गया, और ज़मीन हरिजनों को मिल गई।

३. इसी प्रकार ग्राम चिराग़ के हरिजनों की कुछ ज़मीन ज़मींदारों ने दबा ली थी; वह ज़मीन भी हरिजनों को दिला दी गई।

४. मदनपुर ग्राम के हरिजनों और ज़मींदारों के बीच जो मार-पीट हुई थी, उसका फैसला करा दिया गया और दोनों पक्षों में मेल हो गया।

५. खेड़ा कलां के हरिजनों व ज़मींदारों के बीच मेल कराने का प्रयत्न किया गया। पुलिस से भी कुछ मदद ली गयी।

पंजाब तथा पेप्सू

संघ के संगठन-मंत्री श्री महाराजनाथ ने गत नवंबर और दिसम्बर मास में करनाल, रोहतक और गुड़गाँव पंजाब के इन तीन ज़िलों के तथा पेप्सू के भी नीचेलिखे ग्रामों का दौरा किया। सवर्ण और हरिजन-मुखियों से वे मिले, हरिजन समस्या पर उनके साथ चर्चा की, हरिजनों की आर्थिक तथा सामाजिक तकलीफ़ों की जाँच की और जहाँ काम करने की इच्छा रखनेवाले व्यक्ति मिले, वहाँ संघ की समितियों का संगठन भी किया :—

रोहतक—सोनीपत, मुरथल, कुमसपुर, हरसना कलां, बेनापुर, सराहना, कालूपुर, बड़वासनी, कसुराली, बापरपुर, बड़ोली, गरजपुर और कौएंड।

करनाल—करनाल, औगएड, कलाडी, नीसिंग, गौएडर, पानीपत, कबरी, गढ़ी सिकन्दपुरी, नौहारा, ककराना, आसन, फर्दपुर, मोहम्मदपुर, सठाना और बोली।

गुड़गाँव—गुड़गाँव, भरोरा, फाजिलपुर, बादशाहपुर सोना, दौलताबाद, धीरपुर, धनकोट, गढ़ी हरस्वरूप, सुलतानपुर और फरूखनगर।

पेप्सू—दादरी, बरनाला, मलेरकोटला और संगरूर।

उल्लेखनीय

१. कौएड गाँव, ज़िला रोहतक में श्री महाराजनाथ ने सवर्ण हिन्दुओं से जब छूआछूत छोड़ने के लिए कहा, तो उन्होंने जवाब दिया—"तुम कांग्रेसवाले अछूतों को सिर पर चढ़ा रहे हो। तुमने उनको बिगाड़ दिया है। तुम कहते एक बात हो और करते दूसरी बात। तुम लोग पाखण्डी हो। क्या तुम किसी अछूत के हाथ का खाना खा सकते हो, तो मँगाया जाये?" श्री महाराजनाथने उसी क्षण हरिजनों के घर से खाना मँगवाया और उनके हाथ से रोटी खाई। जो सवर्ण हिन्दू वहाँ खड़े थे, उनसे भी कहा कि 'आइए, हमारे साथ खाइए।' पर उनमें से एक भी तयार नहीं हुआ। सिर्फ़ एक फौजी सिपाही ने उनके साथ खाना खाया।

२. करनाल में हरिजनों ने कहा कि, "पहले कुछ आर्य-समाजी कभी-कभी हमारी बस्तियों में आ जाया करते थे, पर इधर अब कोई नहीं आता। पारसाल चुनावों के दिनों में बड़े-बड़े वायदे किये गये थे कि छूआछूत चुनाव के बाद ग़ैरक़ानूनी करार दे दी जायगी, पर हुआ-गया कुछ नहीं।

३. करनाल के कई गाँवों में हरिजनों में राजनैतिक जागृति देखी। हरिजन लम्बरदारों के चुनाव में उन्होंने काफ़ी दिलचस्पी ली। हाल में पंजाब-सरकार ने इस प्रकार का एक हुक्म जारी किया है कि १०० हरिजनों के पीछे एक हरिजन लम्बरदार चुना जायेगा। इससे अपने गाँव के इन्तज़ाम में वे उचित हिस्सा ले सकते हैं। लम्बरदार की बात पुलिस भी सुनती है और उसे खास गवाह माना जाता है। हरि-नों को काफ़ी आशा बँध गयी है कि हमारी के जाति लम्बरदार जहाँ-जहाँ होंगे, वहाँ हमारे साथ कोई अन्याय नहीं कर सकेगा।

४. जालन्धर में २७ दिसम्बर १९५२ को पंजाब-हरि-जन-सेवक-संघ की कार्य-समिति की बैठक लाला अचिन्त-रामजी की अध्यक्षता में हुई। बैठक में निश्चय हुआ कि जिन सार्वजनिक कुओं पर हरिजनों को नहीं चढ़ने दिया जाता उनपर उनको पानी भरने के लिए ले जाया जाये। यह भी निश्चय हुआ कि पंजाब-हरिजन-सेवक-संघ ने अबतक जो काम किया है, उसकी रिपोर्ट प्रकाशित की जाये।

५. पटियाला में २८ दिसम्बर को कुछ प्रभावशील व्यक्तियों और प्रमुख आर्यसमाजियों की एक समिति बनाई गई, जो ऐसे तमाम सार्वजनिक कुओं का पता लगायेगी, जिनपर से हरिजनों को पानी नहीं भरने दिया जाता। इस समिति में कुछ हरिजनों को भी लिया गया है।

१५ दिन बाद यह देखा गया कि हरिजनों ने सार्व-जनिक कुओं से पानी भरने के लिए कुछ भी उत्साह नहीं दिखाया। उनके मोहल्लों में अपने खुद के कुएँ हैं, इसलिए

...के कुओं पर पानी भरना और खामखां सवर्णों से झगड़ा मोल लेना उन्हें अनावश्यक मालूम दिया, फिर भी अस्पृश्यता निवारण की दृष्टि से कुछ कुएँ निश्चित कार्यक्रम के अनुसार चुन लिये गये। मगर राजनैतिक दलबन्दियों की वजह से मौजूदा परिस्थितियों में इस काम को हाथ में लेना बहुत कठिन मालूम दिया।

३. मलेरकोटला में यह जानकर कि वहाँ के कुछ हरिजनों ने अपने निज के उपयोग के लिए जो एक कुआँ खोदा और बाँधा है, उसपर कुछ ब्राह्मण और जैन कीचड़ व मिट्टी डालते रहते हैं और पानी को गन्दला करते हैं, श्री महाराजनाथ वहाँ गये और तहसील के अधिकारियों से मिले। अधिकारियों ने इस मामले में दिलचस्पी ली, और शरारत करनेवालों को धमकाया कि अगर इस तरह की कारवाई वे आगे करेंगे, तो उनपर भारी जुर्माना किया जायेगा।

मलेरकोटला में श्री अमरनाथ जैन के सभापतित्व में संघ की शाखा भी स्थापित की गयी।

७. बरनाला (पेप्सू) के घूरी गाँव में मालूम हुआ कि वहाँ बाजीगर हरिजनों के १०१ परिवार काफ़ी तकलीफ़ में हैं और मदद चाहते हैं। संगठन-मंत्री ने घूरी के रेलवे-स्टेशन के एक तरफ़ उन परिवारों को झोंपड़ियों में रहते हुए देखा। उन्होंने बतलाया कि गत चुनावों के शिकार बनकर वे इस हालत में एक साल से रह रहे हैं। ये लोग पाकिस्तान से आये हुए शरणार्थी हैं। बतलाया गया कि गाँववालों की मरज़ी के खिलाफ़ उन्होंने कांग्रेस के उम्मेदवार को अपनी राय दी थी। इसपर गाँववालों ने उनका बहिष्कार कर दिया। यहाँतक कि उनको उनके घरों से बाहरतक नहीं निकलने दिया। उन्होंने बतलाया कि कुछ दिनों बाद एक रात को उन्हें लूटा भी गया और उनके घरवालों को बुरी तरह सताया गया। स्त्रियों के साथ भी बुरा बर्ताव हुआ। उन पीड़ितों को सलाह दी गयी कि सारा क़िस्सा वे लिखकर दे दें, उसके बाद ही कुछ कार्रवाई कराई जा सकेगी। मगर वे अपनी शिकायतें लिखकर देने के लिए तैयार नहीं हो रहे थे, इस डर से कि कहीं उन्हें उनकी मौजूदा झोंपड़ियों से भी बाहर न निकाल दिया जाये। पर काफ़ी तसल्ली दिलाने पर, अन्त में उन्होंने अपनी कुछ बातें लिखकर देदीं। तात्कालिक आवश्यकता तो यही मालूम दी कि उनको किसी ठीक जगह पर सबसे पहले बसवा दिया जाये।

८. रिवाड़ी (गुड़गाँव) में भी सार्वजनिक कुएँ खुलवाने का काम हाथ में लिया जानेवाला था, मगर २४ जनवरी को बतलाया गया कि रिवाड़ी शहर में हरिजन खुद ही दूसरों के कुओं पर से पानी भरने के लिए तैयार नहीं हैं। कार्यकर्त्ता भी म्यूनिसिपैलिटी के चुनावों में बहुत व्यस्त थे, इसलिए उनसे भी सहयोग नहीं मिल सका।

यहाँ पर कालेज में पढ़नेवाले १० विद्यार्थी किराये के घरों में रहते हैं, कारण कि कालेज के होस्टल का भारी खर्चा वे उठा नहीं सकते।

९. सोनीपत (रोहतक) में ५ फरवरी को संगठन-मंत्री ने जाकर कम्यूनिटी प्रोजेक्ट के उच्च अधिकारी से मिलकर उन्हें इस बात के लिए तैयार कराया कि हरिजन-बस्तियों के कुओं की मरम्मत पर जितना खर्च होगा, उसका आधा वे प्रोजेक्ट के खाते से दे देंगे, बाक़ी का खर्च व श्रम हरिजनों को खुद करना पड़ेगा। यदि सहकारी समितियाँ बनाकर खास धन्धे चलाने के लिए हरिजन लोग क़र्ज़ चाहेंगे, तो वह भी प्रोजेक्ट की तरफ़ से दिया जायेगा।

१०. संगरूर (पेप्सू) में संघ की समिति के अध्यक्ष-पद पर श्री लक्ष्मीनारायण को नियुक्त किया गया।

भोपाल

भोपाल राज्य में पुनर्संगठित हरिजन-सेवक-संघ लगभग ढाई वर्ष से, बहुत अनुकूल परिस्थितियाँ न होने पर भी, यथासाधन और यथाशक्ति काम कर रहा है। अस्पृश्यता-निवारणसम्बन्धी तथा आर्थिक और शैक्षणिक समस्याओं की तरफ़ संघ ने समय-समय पर भोपाल-सरकार का ध्यान खींचा है। नीचेलिखे मुद्दों पर संघ ने अनुरोधपूर्वक माँगें की हैं कि कम-से-कम इतनी सुविधाएँ तो हरिजनों को मिलनी ही चाहिएँ।

ज़मीनें : अपनी निर्धारित नीति के अनुसार सरकार

हरिजनों को जो ज़मीनें दे रही है वह सराहनीय है। सरकार को तुरन्त इन दो बातों पर ध्यान देना चाहिए—एक तो यह कि हरिजनों से पड़त ज़मीनों के नम्बर पेश करवाने की शर्त खत्म कर देनी चाहिए, क्योंकि इसकी वजह से वे बेहद परेशान होते और ठगे जाते हैं, और दूसरी यह कि ज़मीनें देने की गति में और भी तेज़ी आनी चाहिए।

तकावी : तकावी और इसी प्रकार की दूसरी रकम का एक तिहाई भाग हरिजनों पर खर्च करना चाहिए।

शिक्षा : हरिजनों की शिक्षा पर खर्च करने के लिए यद्यपि इस वर्ष काफ़ी अधिक रकम रखी गयी है, तथापि मेरिट पर छात्रवृत्तियाँ देना अभी ठीक नहीं है। राज्य में हरिजनों की शैक्षणिक अवस्था अभी ऐसी नहीं हुई है कि उनकी किस्म सुधारने पर ज़ोर दिया जाये, बल्कि अभी संख्या-वृद्धि पर ही बल देने की आवश्यकता है। इसी प्रकार छात्रवृत्ति-वितरण में अखरनेवाली देरी दूर कर देनी चाहिए। राष्ट्रभाषासम्बन्धी एकाध केन्द्र खोलने तथा छात्रावासों या आश्रमों की स्थापना करने से हरिजनों को अधिक शैक्षणिक लाभ पहुँच सकता है

मज़दूरी : गाँवों में अधिकांशतः हरिजन लोग ही मज़दूरी करते हैं। मज़दूरी जैसी कुछ दी जाती है, वह सर्व-विदित है। इस सम्बन्ध में न्यूनतम वेतन-विधान राज्य में लागू करने की सम्भावनाओं पर तुरन्त विचार किया जाये।

नगरा-पालिकाएँ : सिर पर मैला उठाने की प्रथा-अस्पृश्यता मानने से भी अधिक कलंकरूप है। इसे किसी सभ्य तरीक़े में परिवर्तित करने का आश्वासन यद्यपि बहुत दिनों से मिला हुआ है, तथापि वह अमल में नहीं आ रहा, यह दुःख की बात है। भोपाल शहर में जैसे मेहतर भाइयों का प्राविडेंट फण्ड जमा होने लगा है, उसी प्रकार कम-से-कम सीहोर में भी जमा होना चाहिए। इसी प्रकार टाउन एरियों में काम करनेवाले सब मेहतरों की तनख्वाह (वेतन की सबसे ऊँची दर पर, जो १८ रु० है।) अवि-लम्ब एकसमान कर देनी चाहिए। यह नहीं चलने दिया जाये कि एक जगह तो ६ रु० मासिक वेतन दिया जाये और दूसरी जगह १८ रु०।

चौकीदार : राज्य में लगभग तीन हज़ार गाँव हैं और क़रीब इतने ही चौकीदार भी, जो आमतौर से सब हरिजन हैं। सरकार इनको कुछ थोड़ी-सी ज़मीन और कुछ अनाज-वसूली के अधिकार देती है, जिससे ये अपना गुज़ारा चलाते हैं। अनाज-वसूली ठीक तरह से नहीं होती, ऐसी आम शिकायत है। अच्छा यह होगा कि अनाज-वसूली लगान में बढ़ाई जाये और चौकीदारों को बदले में सरकार से समयानुकूल मुआवज़ा (मासिक वेतन के रूप में) दिया जाये।

प्रतिनिधित्व : नगर-पालिकाओं, टाउन एरियों तथा ग्राम-पंचायतों आदि में इन जातियों को उचित प्रतिनिधित्व मिलना ही चाहिए।

गृह-निर्माण : जो रकम इसके लिए बजट में स्वीकृत है, उसका उपयोग करना चाहिए। भोपाल और सीहोर में इसका उपयोग किया भी जा रहा है।

अयोग्यता-निवारण क़ानून : इस क़ानून के अन्तर्गत चलनेवाले मामले पुलिस-हस्तक्षेप-योग्य होने बहुत ज़रूरी हैं।

उद्योगशाला के छात्र : हरिजन उद्योग-शाला, दिल्ली से जो विद्यार्थी विभिन्न उद्योग सीखकर आये हैं, उनको सीने की मशीनें, चमड़े के काम का सामान आदि देने की बात काफ़ी अर्से से शासन के विचाराधीन है, पर वह अभी-तक उनको मिला नहीं है। यह खेद की बात है।

धन्धे : चमड़ा पकाने आदि के कारखाने तथा खादी-उत्पत्ति-केन्द्र स्थापित करने की बड़ी उज्ज्वल संभावनाएँ राज्य में विद्यमान हैं, जिनसे कि हरिजनों को काफ़ी लाभ पहुँच सकता है।

कर : चमड़ा पकाने की चीजों तथा सिराडी सम्बन्धी करों की जाँच हरिजनों के हित में करना आवश्यक है, खासकर भोपाल व सीहोर में, जहाँ म्यूनिसिपैलिटी की चुंगी लगने से यह और भी बोझीले हो जाते हैं।

शराब-बन्दी : कम-से-कम किसी एक तहसील से ही इसका श्रीगणेश तो करना ही चाहिए, क्योंकि शराबबन्दी हरिजनों के हित में एक बहुत बड़ी बात है।

नौकरियाँ : इनका प्रतिशत शीघ्र पूरा करने का प्रयास होना चाहिए। अगर उम्र के समान ही पुलिस के सिपाहियों की भर्ती में इन लोगों को कद व सीने के नाप में कुछ सहूलियतें दी जायें; तो यह एक बड़ी बात होगी।

कुप्रथाएँ : चेन्या, चेणटल्या, झंडा, कुरयाई, बराया, खेरा, नेजा, बन्धेज आदि नामों से प्रचलित कुप्रथाओं की सख्ती से रोकथाम होनी चाहिए।

कर्ज़दारी : इन जातियों की कर्ज़दारी की जाँच-पड़ताल करने के बारे में एक कमीशन नियुक्त किया जाये।

'हाली' प्रथा : यह प्रथा, जिसमें 'हाली' का क्रय-विक्रय होता है, हर कीमत पर समाप्त करवा दी जानी चाहिए।

"हरिजन-दिवस" : सरकारी स्तर पर प्रतिवर्ष एक दिन 'हरिजन-दिवस' के रूप में ज़रूर मनाया जाये। पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार राज्यभर में उस दिन को मनाने में सारा शासनतन्त्र जुट जाये, और उसमें सबका सहयोग लिया जाये।

एकाधिकार : हड्डियों के ठेके के 'एकाधिकार' को समाप्त करने में उचित कार्यवाही करना अत्यावश्यक है।

मध्यभारत

"हरिजन-सेवा" के मतांक में मध्यभारत के हरिजनों पर हुए अनेक अत्याचारों और हत्याकाण्ड का उल्लेख किया गया था, और राज्य-सरकार पर तत्काल आवश्यक कार्रवाई करने के लिए जोर डाला गया था कि डाकुओं के त्रास से हरिजनों को वह हर तरह से बचाये और आतंकित क्षेत्रों में जल्दी ही शांति व व्यवस्था स्थापित करे। डाकुओं का मुकाबला करने के लिए सरकार ने तो अपने ढंग से क़दम उठाया ही और उसमें उसे साधारणतया कुछ सफलता भी मिली ; साथ ही, मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ ने केन्द्रीय संघ की सलाह से एक सद्भावना-प्रचारक-मंडल भी नियुक्त किया, जिसने २५ अक्टूबर से १८ दिसम्बर, १९५२ तक भिण्ड, मुरैना, गिर्द और शिवपुरी इन ४ ज़िलों के कोई ५० ग्रामों का दौरा किया। वहाँ के पटेलों, सरपंचों व अन्य नागरिकों के साथ चर्चा की और सार्वजनिक सभाएँ भी कीं। इस मण्डल ने मध्यभारत-हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान मंत्री श्री कृ० वा० दाते के नेतृत्व में जिन आतंकित क्षेत्रों का दौरा किया, उनका विवरण नीचे दिया जाता है ;—

तारीख	गाँव व ज़िला	विवरण
२५ अक्टूबर	अमलौर (गिर्द)	नागरिकों की सभा
२८ ,,	हेतमपुर (मुरैना)	पंचों की सभा
२९ ,,	मुरैना ,,	,,
३० ,,	जिगनी ,,	,,
३१ ,,	जौरा ,,	,,
१ नवम्बर	पहाड़गढ़ ,,	,,
२ ,,	सुजानगढ़ी ,,	,,
३ ,,	बागचीनी ,,	,,
४ ,,	मुरैना ,,	केन्द्र-सरपंचों की सभा
५ ,,	नूराबाद ,,	पंचों की सभा
७ ,,	गोहद (भिंड)	,,
८ ,,	नौनेरा ,,	,,
९ ,,	गौरमी ,,	,,
१० ,,	भिण्ड ,,	हरिजन लोगों से मिले
११ ,,	रौन ,,	,,
१२ ,,	मिहौना ,,	पंचों की सभा
१३ ,,	लहार ,,	,,
१४ ,,	दबोह ,,	,,
१४ ,,	एँडोंरी ,,	,,
	आलमपुर ,,	हरिजन लोगों से मिले
१८ ,,	घाटीगाँव (गिर्द)	पंचों की सभा
१९ ,,	रिठौरकलां (मुरैना)	,,
	पिपाई, छोलो को सराय, ग्राम मुरैना, रसीलपुरा,	

		मुन्द्रावजा, भुरावली, कैलारस, अम्बाह	गाँव देखे
२०	,,	मितरवार (गिर्द)	पंचों की सभा
२१	,,	देवरी ,,	,,
२२	,,	कडैया ,,	,,
२३	,,	डबरा ,,	,,
२४	,,	पिछोर ,,	,,
२५	,,	आंतरी ,,	,,
२७	,,	बेहर ,,	,,
२६	,,	भांडेर ,,	,,
३०	,,	सालौन ,,	,,
४ दिसम्बर		चोरपुरा (शिवपुरी)	,,
		नरवर ,,	जनता की सभा
५	,,	मगरौनी ,,	,,
६	,,	बदरवास ,,	पंचों की सभा
७	,,	करेरा ,,	सूचना नहीं पहुँची थी
८	,,	बैराड़ ,,	जनता की सभा
९	,,	खनियाधाना ,,	,,
१०	,,	ठाकुरपुरा ,,	शालाएँ देखीं
		शिवपुरी	,,
		देवरी	गाँव देखे व हरिजनों से मिले
		पिरौठा	,,
१६	,,	पौरसा (मुरैना)	पंचों की सभा
१७	,,	सांकनी (गिर्द)	,,
१८	,,	हरसी (गिर्द)	सहरिया लोगों की बस्ती देखी

ऊपर के इन सभी स्थानों पर सभाओं के अलावा मंडल ने पाठशालाओं का निरीक्षण किया, हरिजन-बस्तियाँ देखीं और हरिजनों की अड़चनों को भी सुना।

सद्भावना-प्रचारक मंडल का हरिजनों, सवर्णों तथा सरकार पर भी अच्छा प्रभाव पड़ा। हरिजनों में थोड़ा साहस आया और सवर्ण प्रजा को महसूस हुआ कि आतंकित ग़रीब हरिजनों की रक्षा उन्हें हर तरह से करनी चाहिए। जिन ग्रामों में आपस में, किसी-न-किसी कारण से, मनमुटाव हो गया था, उसे दूर करने का भी मंडल ने प्रयत्न किया, कई स्थानों पर उसे सफलता भी मिली। कुछ स्थानों पर देखा गया कि पुलिस की व्यवस्था वहाँ बहुत अच्छी है। कितने ही ग्रामों की सभाओं में अधिकारियों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों के भी भाषण हुए। कई गाँवों में पंचों तथा अन्य लोगों ने अत्याचारों को रोकने की प्रतिज्ञा भी ली। मंडल को प्रायः हर जगह लोगों का सहयोग मिला। सद्भावना-प्रचार के साथ-साथ मण्डल का ध्यान जिन ख़ास बातों पर गया, वे ये हैं:—

१ बदरवास ग्राम (ज़िला शिवपुरी) में जाटव लोगों का कुआँ बहुत ही ख़राब हालत में है और गिर रहा है। उनके मोहल्ले का रास्ता भी बहुत बुरी हालत में है। यदि सरकार से उन्हें कुछ रुपया मिल जाये, तो कुएँ व रास्ते को अपने परिश्रम से वे दुरुस्त करने को तैयार हैं।

२ समूहाना गाँव के २२ चमार-परिवारों ने अत्याचारों से घबराकर गाँव छोड़ दिया है, और एक दूसरे बगसोड़ी गाँव में जाकर वे बस गये हैं। इन लोगों को यहाँ पानी का बहुत कष्ट है। एक मील दूर एक नाले से पानी लाकर ये पीते हैं।

३ शिवपुरी ज़िले के देहाला गाँव के लोगों ने ३ अगस्त को सामूहिक पचायत करके हरिजनों का बहिष्कार करना तय किया था, और ३-४ दिन बाद चमारों पर वहाँ हमला भी किया गया।

४ गिर्द ज़िले के देवरी गाँव में मालूम हुआ कि—

(१) चमार लोग जो मरे जानवरों को गाँव से उठाते हैं, उसके बदले में जिसका जानवर मरता है, उसे दो जोड़ी जूती तो देते ही हैं, साथ ही, ज़मींदार को जोंत, सांठे और जूतियाँ जब भी टूटें देनी पड़ती हैं।

(२) चमारों को दो कोसतक जब चाहें तब सामान उठाने या गाड़ी ले जाने को भेजा जाता है।

(३) घास कटकर जब आता है, तब ज़मींदार के घर में चमारों को बेगार में उसे जमाना पड़ता है।

(४) इनके यहाँ का खेतों का काम जबतक पूरा नहीं हो जाता, वे दूसरे गाँव में मज़दूरी करने नहीं जा सकते, दिनभर की मज़दूरी के उनको केवल ५ आने देते हैं।
(५) बरसात में रोज़ाना एक-एक गट्ठा हरा घास लाकर तीनों जमींदारों के यहाँ डालना पड़ता है।
(६) चमारों की औरतों को ज़मींदारों के घरों का गोबर उठाना व पाथना पड़ता है।

५. गिर्द ज़िले के अमरगढ़ गाँव में २०० हरिजनों की बस्ती है, पर कुआँ वहाँ एक भी नहीं। पानी काफ़ी दूर से लाना पड़ता है।

६. गिर्द ज़िले के १४ गाँवों से शंकरसिंह गूजर डाकू ने ज़बरन चंदा, प्रतिघर दस रुपये के हिसाब से, वसूल किया है।

७ कडैया (गिर्द) गाँव में हरिजनों को एक शरारती जागीरदार काफ़ी सता रहा है। शराब पीकर ऊधम मचाना, स्त्रियों को छेड़ना और घर का काम बेगार में कराना, न करने पर घर जलानेतक को तैयार हो जाना, ऐसी वारदातें यहाँ सुनने में आईं।

यहाँ के हरिजनों को सरकार ने ४५० बीघा ज़मीन दी है; और भी ४०० बीघा ज़मीन देने का वचन दिया है।

जाटव लोग चमड़े का काम करते हैं, जिसके लिए एक व्यापारी से रुपया भारी ब्याज पर उन्हें लेना पड़ता है। वे अपनी एक सहकारी सोसाइटी बनाना चाहते हैं।

८ पिछोर (गिर्द) ग्राम में मालूम हुआ कि जाटवों का जो कुआँ है, उसके रास्ते पर सवर्ण लोग अक्सर बागड़ लगा देते हैं, जिससे औरतों को आने-जाने में बहुत अड़चन आती है।

हलवाई लोग हरिजनों को दूकान पर खाने-पीने की चीज़ें बैठकर नहीं खाने देते।

जाटवों के ४२ घरों में चमड़े का काम होता है। जो ३० जाटव परिवार चमड़े का काम नहीं करते, वे चमड़े का काम करनेवालों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। आपस का व्यवहार भी धीरे-धीरे बन्द होता जा रहा है।

९. बेहर (गिर्द) गाँव में सरकारी पाठशाला एक मंदिर में लगती है, जिसमें हरिजन छात्र बिना किसी भेद-भाव के सबके साथ बैठकर पढ़ते हैं।

जाटवों के कुएँ से मेहतर लोग भी यहाँ पानी भरते हैं। एक मेहतर तो सवर्णों के कुएँ से भी पानी भरता है, कारण कि वह कुआँ उसके घर के पास है।

इस गाँव के हरिजनों ने मण्डल के सदस्यों का सत्कार किया और जलपान भी कराया।

१० मांडेर (गिर्द) गाँव में मालूम हुआ कि—
(१) आस-पास के कई गाँवों में अहीर ठाकुर लोग हरिजनों से बेगार लेते हैं।
(२) गोंदन गाँव के चमार लोग मुर्दार मवेशी उठाना नहीं चाहते। उठाते हैं तो बिरादरी के लोग जाति से अलग कर देते हैं, और नहीं उठाते तो गाँव के लोग मारते-पीटते हैं।
(३) मरसै गाँव में हरिजन पंच को सब पंचों के साथ नहीं बैठने दिया जाता।

उत्तरप्रदेश (प० शाखा)

उत्तर प्रदेश की पश्चिमी शाखा के अध्यक्ष प्रो० रामशरणजी ने देहरादून, सहारनपुर, मेरठ, बुलन्दशहर, बिजनौर, अलमोड़ा, नैनीताल, रामपुर, गढ़वाल, मुजफ्फरनगर, अलीगढ़, बदायूँ, टेहरी गढ़वाल, बरेली और पीलीभीत इन ज़िलों के साथ सम्पर्क स्थापित किया। जिन ज़िलों का संगठन शिथिल पाया, वहाँ फिरसे संघ की समितियाँ बनाईं और कई ज़िलों में बनाने का प्रयत्न किया।

बिजनौर और सहारनपुर के ज़िलों में देखा कि वहाँ कई जगहों में हरिजनों को पानी का भारी कष्ट है। पानी इधर काफ़ी गहराई पर मिलता है। कहीं-कहीं पर लोगों ने श्रम और कुछ अपना पैसा लगाकर कुएँ खोदे हैं, पर धनाभाव के कारण काम पूरा नहीं हो सका। पीने का पानी मीलों से लाना पड़ता है। यथाप्राप्त साधनों से इस सम्बन्ध में संघ ने काम करने का विचार किया है।

मुरादाबाद ज़िले के हसनपुर क़स्बे में शिवरात्रि के अवसर पर हरिजनों द्वारा कामरों में लाये जल को शिव-

मंदिर में चढ़ाने पर सवर्णों ने आपत्ति की। समझाने पर भी वे नहीं माने, तब सामाजिक निर्योग्यता-निवारक क़ानून की शरण लेनी पड़ी। हाकिम परगना की मौजूदगी में कार्यकर्त्ताओं ने हरिजनों के हाथ से शिवजी पर जल चढ़वाया। बाद में, सवर्णों ने मंदिर का ही बहिष्कार कर दिया। क़स्बे में हड़ताल भी करादी।

प्रधान मंत्री के दौरे

संघ के प्रधान मंत्री ने दिसम्बर, १९५२ तथा जनवरी व फर्वरी, १९५३ के गत तीन महीनों में निम्नलिखित स्थानों का दौरा किया:—

तारीख	स्थान	कार्य
१२ दिसम्बर से १४ दिसम्बरतक	खामगाँव (विदर्भ)	सर्वोदय-सम्मेलन का उद्घाटन तथा विदर्भ-हरिजन-सेवक-संघ का पुनर्संगठन
१५ दिसम्बर	अकोला	हरिजन-कार्य
१६ ,,	अमरावती	हरिजन-कार्य
१६ ,,	वर्धा	राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति का कार्य
१७ ,,	मद्रास जाते हुए रेल में	
१८ व १९ दिसम्बर	मद्रास	ठक्कर बापा-विद्यालय का कार्य
२० दिसम्बर	मदुराई	ठ० बा० विद्यालय का कार्य तथा छात्रालय-निरीक्षण
२१ ,,	मद्रास	ठ० बा० विद्यालय का कार्य
२२ व २३ दिसम्बर	मद्रास से दिल्ली जाते हुए रेल में	
३१ दि० व १ जनवरी	मद्रास जाते हुए रेल में	
२ जनवरी से ९ जनवरीतक	मद्रास	ठ० बा० विद्यालय का कार्य और उसी सिलसिले में राजाजी से भेंट तथा उनके दिये निर्णय के अनुसार विद्यालय का चार्ज लेना
१० जनवरी	बम्बई	जाते हुए रेल में
११ ,,	,,	फुटकर काम
१२ ,,	बम्बई से दिल्ली जाते हुए रेल में	
२७ व २८ जनवरी	पुठियाँ व लखना गाँव (ज़िला इटावा)	रैदास-जयन्ती के सिलसिले में
१ फरवरी	महाकोशल के प्रवास पर जाते हुए रेल में	
२ व ६ फरवरी	जबलपुर	हरिजन-बस्तियाँ देखना व शिक्षण-संस्थाओं तथा कार्यकर्त्ताओं के बीच ह० का० पर चर्चा
३ फरवरी	कटनी	कार्यकर्त्ताओं के साथ चर्चा
४ ,,	मनेन्द्रगढ़	हरिजन-कार्य
५ ,,	अम्बिकापुर	,,
६ ,,	रायगढ़	,,
७ ,,	बिलासपुर	,,
८ ,,	रायपुर	,,
९ ,,	बालाघाट	,,
१० ,,	दिल्ली वापस जाते हुए रेल में	
११ ,,	ग्वालियर	फुटकर काम
१७ से २० फरवरीतक	आबू	रामानन्दी वैष्णवों के साथ हरिजन-कार्यसंबन्धी चर्चा तथा शिक्षण-संस्थाओं में ह० का० पर भाषण

ठक्कर बापा की

पुण्यस्मृति में

"जो किसी भी बात में हमसे अलग नहीं है, और जो अनेक तरह से समाज की भारी सेवा कर रहा है, ऐसे मानवजाति के एक बड़े जनसमूह को निकाल बाहर कर देने का घोर पाप हमने किया है। इस पाप में से हिन्दू-धर्म जितनी जल्दी निकल जाये उतना ही उसकी बड़ाई और प्रतिष्ठा है

"जैसे एक रत्ती संखिया से लोटाभर दूध बिगड़ जाता है, उसी प्रकार अस्पृश्यता से हिन्दू-धर्म भ्रष्ट हो जाता है। अस्पृश्यता की रूढ़ि में धर्म नहीं, किन्तु अधर्म है।

"इस जन्म में मुझे मोक्ष न मिले, तो मेरी आकांक्षा है कि अगले जन्म में किसी भंगी के घर मेरा जन्म हो।" गांधीजी

मई, १९५३

वर्ष २—अंक ३

वार्षिक मूल्य २ रुपये
एक प्रति. ८ आने

सं०—वियोगी हरि

ह रि ज न - से वा

हरिजन-सेवक-संघ

की

त्रैमासिक मुख-पत्रिका
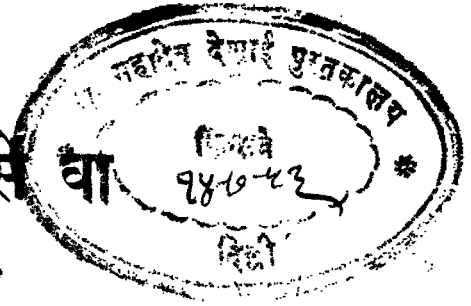
दूसरा वर्ष] — मई, १९५३ — [तीसरा अंक

सं पा द की य

मेरी बीमारी

गत ३ अप्रैल की शाम को ५ बजे, जब मैं राजघाट की साप्ताहिक प्रार्थना में सदा की भाँति सम्मिलित होने जा रहा था, यकायक पहली ही बार मुझे हृदय का दौरा हुआ। समझ में नहीं आया कि वह हृदय का दौरा था। ईश्वर की कृपा से कोई विशेष कष्ट नहीं हुआ। मगर डाक्टर ने ८ सप्ताह का पूर्ण विश्राम लेने की सलाह दी। शारीरिक तथा मानसिक काम करने पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया। मेरे सम्मान्य बुजुर्गों और स्नेही मित्रों ने भी ऐसी ही सलाह दी। तभी से हरिजन-निवास में बिस्तरे पर पड़ा हुआ हूँ, और अपने परिजनों, साथियों व विद्यार्थियों से अपनी प्रकृति के विरुद्ध भी निःसंकोच सेवा ले रहा हूँ।

बराबर तब से सलाह दी जा रही है कि प्रकृति द्वारा दी गई इस चेतावनी के बाद मुझे भविष्य में बहुत सँभलकर चलना होगा, काम की दौड़-धूप कम कर देनी होगी। प्रकृति द्वारा निर्दिष्ट नियमों का ज्ञान या अनजान में ज़रूर मैंने भंग किया होगा, तभी तो यह चेतावनी आई। यदि जीवन के शेष दिनों में इस शरीर से कुछ सेवा-कार्य करना है, तो सँभलकर तो चलना ही होगा। पर हरिजन-सेवा जैसे स्वधर्मपालन का लोभ कैसे संवरण करूँ? दो महीने में कुछ भी प्रत्यक्ष सेवा-कार्य नहीं कर सका, इसका मुझे कम पछतावा नहीं हो रहा। ११ अप्रैल को मैंने मैसूर तथा कर्णाटक जाना निश्चित कर लिया था, और १ मई से १५ तक मद्रास का कार्यक्रम रखा था। वह न हो सका। इसका भी पश्चात्ताप है। क्षमा-प्रार्थी भी हूँ। अनेक ऐसे प्रश्न सामने पड़े हुए हैं जिनकी ओर से आँख या कान बन्द कर लेना और शून्यवत् होकर एक जगह पर पड़े रहना अप्रिय लगता है। फिर भी बड़ों और छोटों का आदेश मानकर ज़बरदस्ती का यह विश्राम ले रहा हूँ। ईश्वर की कृपा से, मैं आशा करता हूँ, कि, मर्यादित रूप में ही सही डेढ़ या दो महीने बाद काम करनेयोग्य स्वस्थ हो जाऊँगा।

मेरे अनेक सम्मान्य और स्नेही मित्रों ने मेरे स्वास्थ्य के विषय में जो प्रेम-पूर्वक चिन्ता प्रगट की उसके लिए उन सबका मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

"हरिजन-सेवा" के इस अंक के लिए मैं केवल दो-तीन संपादकीय टिप्पणियाँ ही लिख सका हूँ। शेष सारा सम्पादन श्रीयुक्त धर्मवीर शास्त्री ने किया है। वि० ह०

हरिजन और हरिजन-सेवक

इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध हरिजन-आश्रम के अध्यक्ष ...श्रम शंकरशरण का "हरिजन और हरिजन-सेवक" शीर्षक एक महत्वपूर्ण लेख पत्रों में पिछले दिनों प्रकाशित हुआ है। हरिजन-सेवकों के लिए तो यह लेख सचमुच एक चुनौती है।

कुछ वर्ष पहले इलाहाबाद के हरिजन-आश्रम के रचनात्मक कार्यकर्त्ताओं की एक बैठक हुई थी। इसमें बिहार के सुलझे हुए हरिजन-नेता श्री जगलाल चौधरी ने एक यह प्रश्न रखा था कि, "हिन्दूधर्म के हरेक अनुयायी के लिए मंदिरों के द्वार खुल जाने पर, क्या गवर्नमेन्ट पुजारी को रोक सकती है कि किसी हरिजन के प्रवेश करने के तुरन्त बाद वह उस मंदिर को न धोये?"

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए सुयोग्य लेखक ने शिक्षित हरिजनों से, जिनकी संख्या अब काफी बढ़ती जा रही है, पूछा है या उनसे ही इस प्रश्न का उत्तर माँगा है कि ऐसी परिस्थिति लाने में वे खुद क्या मदद दे रहे हैं, जिससे कि हरिजनों के प्रवेश के बाद मन्दिरों को धुलवाने की ज़रूरत न पड़े। क्या सफ़ाई के लिए उनकी ओर से कोई ऐसा प्रचार हो रहा है कि साल में कम-से कम ८ महीने ही दिनों में २ या ३ बार नहाने से भी किसीको, यहाँतक कि बच्चों को ज़रा-सा भी नुकसान नहीं होता?

सेवा-भावी अनुभवी लेखक ने शिक्षित हरिजनों से जो इस सिलसिले में प्रश्न किया है, उसका उत्तर देने से पहले क्या कुछ इस प्रकार के प्रश्न नहीं रखे जा सकते? जैसे, हम यह कैसे मानलें कि हरिजन प्रायः बहुत ही कम नहाते हैं और स्वेच्छा से, ज़रूरी साधनों के होते हुए भी गंदे रहते या रहना चाहते हैं? क्या सभी स्थानों पर नियमित रूप से उन्हें, खासकर खेतों और खानों में तथा पाखानों की सफ़ाई करनेवालों को समय पर पर्याप्त पानी निर्बाध रूप से मिलता है? क्या इतने कपड़े उनके पास होते हैं, जिनको वे रोज़ धोकर साफ़ रख सकें? और कहीं-कहीं पर सवर्णों से भी अधिक साफ़ रहनेवाले हरिजनों को, यह पता लग जाने पर कि वे हरिजन हैं, क्या सभी मन्दिरों में जाने दिया जाता है? यदि किसी हरिजन-मंत्री या बड़े अधिकारी को प्रवेश करने भी दिया गया तो क्या उसके चले जाने के बाद मन्दिर को धोया नहीं गया? काशी-विश्वनाथ-जैसे किसी मन्दिर के सामने के रास्ते पर झाड़ू देनेवाले जाने पहचाने भंगी के माथे पर भस्म लगा दी जाय और उसे अच्छे स्वच्छ वस्त्र पहना दिये जायें, तो क्या उसे वहाँ के पुजारी मन्दिर में प्रवेश करने देंगे? यह और बात है कि बगैर जाने हुए कितने ही हरिजन अनेक सवर्णों की तरह मैले कपड़े पहने हुए भी उन मन्दिरों में भी चले जाते हैं, जिनके द्वार हरिजनों के लिए बन्द हैं। क्या किसी सवर्ण को, यह जानते हुए कि वह सवर्ण है, बिना नहाये-धोये और गंदे कपड़े पहने हुए मन्दिरों में जाने से पुजारी रोकता है और उसके प्रवेश के बाद क्या मन्दिर को धोता है?

हम यह मानते हैं कि हरिजन-सेवा को पैतृक सम्पत्ति के रूप में पानेवाले श्री शंकरशरणजी हरिजनों में स्वच्छता का सुन्दर वातावरण देखना चाहते हैं, जिससे कि अस्पृश्यता माननेवाले सवर्ण यह कारण या बहाना सामने न रख सकें कि गन्दे रहने के कारण मन्दिरों तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों का उपयोग उन्हें समान रूप से नहीं करने दिया जाता। यह कोई नहीं चाहेगा कि आवश्यक साधन सुलभ होते हुए भी कोई व्यक्ति या समाज --फिर वह हरिजन हो या सवर्ण—अस्वच्छ या गन्दा रहे। यदि किसी स्थान के तथाकथित सवर्ण भी जाड़े के सारे दिनों में मुश्किल से दो या तीन बार नहाते हैं और नियम से रोज़ दातून भी नहीं करते तो उनकी देखा-देखी हरिजनों को ऐसा नहीं करना चाहिए! प्रस्तुत प्रश्न तो केवल यह है कि चूंकि अमुक दर्शनार्थी मैले कपड़े पहने हुए था और गन्दा था और यह पता लगने पर कि वह हरिजन था, इसीलिए क्या उसके प्रवेश के बाद मन्दिर को धोया गया? अतः शिक्षित हरिजनों के प्रति लेखक द्वारा रखा गया प्रश्न श्रीजगलाल चौधरी के उक्त प्रश्न का सही उत्तर मानने में हमें संकोच होता है। सही स्थिति और सही वातावरण तो वह होगा जिसमें सभी दर्शनार्थियों को—यह जानते हुए कि उनमें हरिजन भी हैं और सवर्ण भी—बिना किसी भेद-भाव के मन्दिरों में जाने

में मौजूद हैं, जो लक्ष्य के प्रति सच्चे और अपने गुरु के प्रति ईमानदार रहकर काम में लगे हैं। मगर उनका स्थान लेनेवाले नवयुवक आज कहाँ हैं? वकीलों और विश्वविद्यालय-यूनियनों में इसके प्रति कुछ भी उत्साह नहीं दिखाई देता, क्योंकि शहरों में हालात काफ़ी सुधर गये हैं। मान लिया गया है कि हरिजन जबतक कमज़ोर और निस्सहाय थे उनकी सेवा की ज़रूरत थी।

चूंकि शहरों के स्कूल-कालिजों में हरिजनों को कुछ खास सुविधाएँ और विशेषाधिकार प्राप्त हो गये हैं, इसलिए कुछ लोगों में यह भावना पैर जमा रही है कि आज का हरिजन वर्ग प्राचीन काल के ब्राह्मणों के समान विशेषाधिकार-प्राप्त वर्ग है। संसद् और विधान-सभाओं तथा सरकारी नौकरियों में उनके लिए स्थान सुरक्षित हैं। शिक्षा तो मुफ़्त है ही, ऊपर से वज़ीफ़े या छात्रवृत्तियाँ उन्हें दी जाती हैं। जब कि दूसरे विद्यार्थी सख्त मुसीबतें उठा रहे हैं, और शिक्षा का खर्च चलाने में असमर्थ हो रहे हैं, हरिजन विद्यार्थी तुलनात्मक दृष्टि से मज़े की ज़िन्दगी बिता रहे हैं।

मेरी समझ में यह धारणा ग़लत है। सदियों से वे दबाये गये हैं। जो भी विशेष सुविधाएँ उन्हें मिल रही हैं उनके प्रति हिन्दू समाज द्वारा सदियोंतक दिखाई गयी उपेक्षा-वृत्ति का परिमार्जनमात्र समझना चाहिए। दूसरे विद्यार्थियों के बराबर उन्हें थोड़े समय में लाने का हमारी सदिच्छा का वह एक रूप है। परिवार में जैसे बच्चों को विशेष प्यार और सहूलियतें होती हैं, उसी तरह समाज के कमज़ोर भाई-बहनें विशेष सलूक के हक़दार हैं।

इस सम्बन्ध में हरिजन-सेवकों का द्विविध कर्त्तव्य है। उपर्युक्त भावना का शिक्षित लोगों में प्रचार करना और जनता में, खासकर गाँवों में जहाँ हरिजनों की आबादी अधिक है, समता और प्रेम को फैलाना उनका प्रथम कर्त्तव्य है।" **वि० ह०**

तो फिर भंगी का क्या होगा?

[अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी पू० गांधीजी के महत्त्व-पूर्ण लेखों को 'हरिजन-सेवक' से 'हरिजन-सेवा' में उद्धृत करने का हमने निश्चय किया है। आशा है, इससे हरिजन-सेवा को बल और हरिजन-सेवकों को प्रेरणा मिलेगी —सं०]

एक अंग्रेज मित्र भारत में आनेवाली दो अंग्रेज महिलाओं के सम्बन्ध में लिखते हैं :—

"उन दोनों को यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गयी है कि हरिजनोत्थान के कार्य में अपनी सद्भावना के चिह्न-स्वरूप वे अपनी टट्टी खुद ही साफ़ करें, चाहे इस काम में कुछ स्थानीय सवर्ण हिंदुओं द्वारा, जिनकी सहकारिता और मित्रता प्राप्त करने की कोशिश वे करेंगी, उन्हें तकलीफ़ ही क्यों न उठानी पड़े। वे यह भी महसूस करती हैं कि स्थानीय भंगियों के कारण वे मुसीबत में पड़ सकती हैं, क्योंकि बहुत संभव है कि वे भंगी इस बात की शिकायत करें कि उनका अच्छा पेशा और अच्छी मज़दूरी मारी जा रही है। तब इस सवाल का ठीक-ठाक जवाब क्या है? मान लीजिए कि सारे भारत के हज़ारों और लाखों सवर्ण हिंदू और दूसरे लोग अपनी टट्टियाँ स्वयं साफ़ करने का निश्चय इसलिए करलें कि उन्हें प्रायश्चित्त करना है, और इस बात का स्पष्ट प्रमाण देना है कि वे अपने आपको भंगियों से अच्छा नहीं समझते, तो बहुत-से भंगियों की रोज़ी मारी जायेगी। इसी तरह टट्टियों की सफ़ाई की पद्धति में सुधार कर दिया जाये और गटरें अच्छी बना दी जायें, तो उनकी कमाई क्या कम नहीं हो जायेगी? ज्यों-ज्यों समाज का विकास होता जाता है, लोग बिना काम-धंधे के होते चले जाते हैं, यह उसी पुरानी कहानी का नया रूप है। मुझे याद नहीं पड़ता कि इस सम्बन्ध में आपकी या किसी दूसरे की चर्चा मैंने 'हरिजन' में पढ़ी हो। आप

वह स्थल मुझे बतायें, जहाँ आपने इसके बारे में कुछ चर्चा की हो; अथवा 'हरिजन' में आप इस विषय में अपना मत लिखें।"

यह सच है कि एक कठिनाई के रूप में इस प्रश्न की चर्चा मैंने 'हरिजन' में नहीं की है। यह कठिनाई अभीतक सामने आई ही नहीं थी। साबरमती में जो आश्रम था, उस और उसकी वर्धा-शाखा में तथा और भी कई स्थानों में आश्रम-वासी अपनी टट्टियाँ खुद ही साफ़ कर लेते हैं, और इससे स्थानीय भंगियों को तनिक भी असुविधा नहीं होती। शुरू-शुरू में, साबरमती में भंगी रखे गये थे और उन्हें थोड़ा-सा वेतन दिया जाता था। दो घण्टे के काम के लिए उन्हें अधिक वेतन देना सम्भव भी नहीं था, और उनका काम अच्छे-से-अच्छा करने पर भी यथेष्ट संतोषजनक नहीं होता था। न तो स्वच्छता से वे टट्टी साफ़ करने की रीति जानते थे, और न सुगमता से इसे सीखते ही थे। पाखाने की सफ़ाई का पेशा कुछ बहुत प्राचीन समय से नहीं चला आ रहा है। अबतक मैंने जितने प्रमाण इकट्ठे किये हैं, उनसे तो यही पता चलता है, कि मुसलमानों के इस देश में आने से पहले अपने यहाँ भंगी का पेशा करनेवाले लोग नहीं थे। हिन्दू सामाजिक व्यवस्था ग्रामजीवन के आधार पर रची हुई होने के कारण, तब इस तरह की सफ़ाई के पेशे की ज़रूरत नहीं थी, मगर इस समय, जब कि शहर तेज़ी के साथ बढ़ते जा रहे हैं, टट्टियों की सफ़ाई का काम अत्यन्त आवश्यक हो गया है। पर इससे मेरा यह मतलब नहीं है, कि हिंदू-काल में गाँवों की सफ़ाई आदर्श या संतोषजनक रूप में होती थी। इसके विपरीत, पता तो यह चलता है कि सफ़ाई बहुत-कुछ अव्यवस्थित ही होती थी। पश्चिम में सफ़ाई के जिन वैज्ञानिक उपायों का विकास हुआ और होता जा रहा है, वह हाल ही में हुआ है और है भी बहुत ही लाभदायक।

चूँकि मेरा यह मत है, इसलिए मैं तो दोनों अंग्रेज़ बहनों के इस निश्चय का स्वागत ही करूँगा, कि वे अपनी टट्टियाँ खुद साफ़ करें। अगर मैं उनके स्थान में होऊँ और मेरे पड़ोस के भंगी बेकार हो जायें, तो मैं उनसे दूसरे काम-धंधे करने को, और यदि उनकी इच्छा हो, तो उनसे पाखाना साफ़ करने की नीरोगी और स्वच्छ रीति सीखने को कहूँ। वे दूसरा काम करने को उद्यत हों या न हों, पर वे अपने मन में यह भाव बहुत दिनोंतक नहीं रख सकते कि उन बहनों की टट्टियाँ साफ़ करने के लिए उनसे नहीं कहा गया और इस प्रकार उनकी हानि हुई, क्योंकि उन बहन से मैं आशा रखूंगा कि वे हरिजनों की उन्नति के लिए और दूसरे उपायों का सब तरह से प्रयत्न करेंगी। कठिनाई केवल तभी होती है, जब हरिजनों को आश्रित समझकर, या स्वार्थवृत्ति से काम किया जाता है। ऐसी दशा में सदा कठिनाई पड़नी ही चाहिए। उदाहरण के लिए अगर मैं अपने भंगी के साथ कभी-कभी कुछ काम इस तरह करूँ कि उसका। स्पर्श न हो और सार्वजनिक सभाओं में कहदूँ, कि अपने भंगी के साथ-साथ मैंने टट्टीतक साफ़ की है, तो इसमें हरिजनों को अपना आश्रित समझने का भाव आ जाता है। मेरा यह काम स्वार्थपूर्ण होगा, यदि भंगियों की अपेक्षा अधिक साफ़ रखने के लिए मैं अपनी टट्टी तो खुद साफ़ करूँ और अपने भंगी को सफ़ाई की आधुनिक रीति सिखाने में अपना समय नष्ट न करूँ, या अधिक योग्य और अच्छी सेवा के लिए उसे अधिक वेतन न देना चाहूँ। पर जब मैं अपने पड़ोसी भंगियों की अनेक प्रकार से सेवा करता हूँ और अपनी टट्टियाँ खुद साफ़ करके उन्हें प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा सिखाता हूँ कि सफ़ाई का काम कोई नीच कर्म तो है नहीं, बल्कि वह सम्मानयोग्य एक अत्यन्त उपयोगी काम है, तो मेरे इस काम से किसीको असंतोष नहीं हो सकता। यह एक ऐसा काम है, जो सभी लोगों को सीख लेना चाहिए, और यदि सेवा-वृत्ति से प्रेरित होकर बहुत-से लोग इसे करने लगें तो समाज का बहुत-कुछ हित हो सकता है।

'हरिजन-सेवक' से] मो० क० गांधी
(२७-१०-१९३३)

हरिजन तथा मध्यभारत की भूमि-समस्या

मध्यभारत में, अन्य प्रान्तों के समान, दलित वर्ग के लोग अधिकतर ग्रामों में रहते हैं, जहाँ वे मज़दूरी तथा छोटे-छोटे ग्रामोद्योगों से अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। इन दलित किसानों के पास ज़मीन नहीं होती, इसलिए वे या तो 'हर्ली' हो जाते हैं या फुटकर मज़दूरी करते हैं। "हलियों" को साधारणतः आजकल बीस रुपया महीना मज़दूरी मिलती है और उन्हें प्रतिदिन करीब १४ घंटे काम करना पड़ता है। 'हर्ली' प्रथा मनुष्य जाति के क्रय-विक्रय की प्रथा है। यह हमारी संस्कृति पर एक कलंक है। इस प्रथा को ख़तम करने के लिए तथा भूमिहीन दलित खेतिहरों का जीवन-स्तर ऊँचा उठाने के लिए उन्हें भूमि की मालकियत देना हरिजनों के उत्थान का एक बड़ा महत्त्वपूर्ण भाग है।

ग्रामोद्योगों से भी कुछ हदतक ग्रामीण क्षेत्र की बेकारी हट सकती है। मगर वे सिर्फ़ सहायक उद्योग के नाते ही पनप सकते हैं। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र का मुख्य धंधा होने के कारण, खेती की सहूलियतें व साधन खेतिहर हरिजनों को दिलवाना अत्यन्त ज़रूरी है। अपने देश का यहां एक वर्ग है जो कृषि व ग्रामोद्योग साथ-साथ कर सकता है। पंचवर्षीय योजना में चर्म-उद्योग, वस्त्र-उद्योग आदि के विकास के लिए व्यवस्था की गई है। मगर भूमिहीनों को ज़मीन दिलवाने का कोई सुझाव उसमें नहीं है। मध्यभारत में क़रीब डेढ़ लाख भूमिहीन हरिजन-कुटुम्ब ऐसे हैं जो खेती करना जानते हैं और ज़मीन की मालिकी चाहते हैं। मगर उनको ज़मीन दिलाने की कोई ठोस योजना न होने से उन्हें दास-अवस्था में दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। हमारे संविधान में दी गयी आर्थिक सहूलियतों का ख़ास मतलब यही है कि ग्रामीण क्षेत्र के हरिजनों का रोटी का सवाल हल करने के लिए भूमि दिलाकर उन्हें अपने पैरों पर खड़ा कर दिया जाये।

मध्यभारत में भूमि

मध्यभारत में भूमि-समस्या अन्य प्रान्तों से कुछ अलग प्रकार की है। इस प्रान्त में भूमि काफ़ी पड़ी है, और हर किसान को भूमि मिल सकती है। मगर दलित किसानों का यह दुर्भाग्य है कि ज़मीन होते हुए भी उन्हें भूमि हासिल करने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। भूमि-संबंधी जो आँकड़े प्रकाशित हुए हैं वे नीचेलिखे अनुसार हैं :—

१. जिसमें काश्त की गई	१०६१६६५१	एकड़
(फेलो) ,, ,, नहीं की गई	३७८६०६५	,,
बागीचे आदि	३३१८८	,,
२. जंगल	२६१५३६२	,,
बंजर भूमि	३५००५६६	,,
३. खेतीयोग्य पड़ती	२३४२०६६	,,
गोचर-भूमि	१६४७७६६	,,

क. इन आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि **खेतीयोग्य पड़ती** भूमि, जो २३ लाख एकड़ से ऊपर **है, अन्न उपजाने के** काम आ सकती **है, और खेतिहर मज़दूरों को दी जा सकती** है। क़रीब एक लाख कुटुम्ब इस भूमि से अपने जीवन-निर्वाह की व्यवस्था कर सकते हैं। अगर तेरह लाख हरिजनों में से चार लाख हरिजनों के (१ लाख कुटुम्बों के) आर्थिक स्वावलंबन की व्यवस्था भूमि-वितरण से कर दी जाये, तो मध्यभारत का स्वरूप ही बदल जायेगा और हरिजन-कार्य में भी यह एक क्रांतिकारी क़दम होगा।

ख. ऊपर लिखी २३ लाख एकड़ ज़मीन के वितरण की योजना बनाते समय इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि बंजर भूमि, गोचर-भूमि व जंगल की ज़मीन बिल्कुल अलग है। अगर कोई कहे कि पशु कहाँ चरेंगे, मकान बनाने के लिए स्थान कहाँ से आयेगा इत्यादि, तो ये आपत्तियाँ निराधार हैं। जहाँ १६ लाख एकड़ भूमि गोचर और बीड़ की है वहाँ घास-चारे की कमी नहीं हो सकती। वैसे ही ३५ लाख एकड़ बंजर भूमि पर गाँव बस सकते हैं, और मकान बनाये जा सकते हैं।

ग. क़रीब १४७ लाख एकड़ से ऊपर ज़मीन इस समय खेती के उपयोग में लायी जा रही है, जिसमें से ३७ लाख एकड़ पड़ती रह जाती है, यानी २५ प्रतिशत ज़मीन। क़ानून की दृष्टि से १० प्रतिशत से ज़्यादा पड़ती नहीं रहनी चाहिए। अगर इस क़ानून पर कड़ाई से अमल किया जाये तो जिनके पास ज़्यादा ज़मीन है, या जो जोत नहीं पाते हैं, वे अपनी सब ज़मीन बेच देंगे। इस तरह से २२ लाख एकड़ ज़मीन बेचा जायेगा। इसमें का कुछ हिस्सा हरिजनों के पास ज़रूर आयेगा।

उपर्युक्त सुझावों को अगले पाँच वर्षों में यदि कार्यान्वित किया जाये, तो मध्यभारत से अन्न की कमी सदा के लिए दूर हो जायेगी।

मौजूदा व्यवस्था

सरकारी पड़ती ज़मीन नीलाम करने के नियम बन गये हैं। इन नियमों के अनुसार सरकारी पड़ती ज़मीन का रक़बा व खसरा नंबर प्रकाशित करके उसको नीलाम करवाने की ज़िम्मेदारी सरकार पर नहीं है। सरकार के पास जो पड़ती ज़मीन है, उसको खोज करके माँग करने की ज़िम्मेदारी अर्जदार पर रखी गयी है। एक ग़रीब, दलित व अशिक्षित किसान यह काम कर सकेगा या नहीं, इसका कोई ख़याल नहीं रखा गया है। अर्ज करने का फार्म भी प्रकाशित किया गया है। उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्राम के पटवारी, पटेल व पंचायत के सहयोग के बिना अर्जी पेश नहीं हो सकती। फार्म का मसौदा बनाते समय ग्रामों की वास्तविक स्थिति व हरिजन-सम्बन्धी वातावरण का कोई ख्याल नहीं रखा गया। छह मास के अनुभव से अब यह कहा जा सकता है कि इस पद्धति से २३ लाख एकड़ पड़ती ज़मीन का वितरण इस शताब्दी में तो पूरा होने का नहीं। पड़ती ज़मीन का खसरा नंबर व रक़बे की जानकारी पटवारी से लेते समय ग़रीबों को कितना तंग किया जायेगा और कितना भ्रष्टाचार बढ़ेगा, इसका ध्यान नहीं रखा गया। फिर यह भी निश्चित नहीं है कि जो व्यक्ति शुरू से कार्रवाई करता है उसे ही ज़मीन मिलेगी। पैसेवाला व्यक्ति अधिक पैसा लगाकर बाद में भी वह ज़मीन ले सकता है।

नीलाम में आदिवासी व पिछड़ी हुई जातियों के लिए नीलाम की बोली की रक़म चार क़िश्तों में देने की सुविधा दी गयी है, मगर यह सुविधा हरिजनों के लिए है या नहीं, यह स्पष्ट नहीं है। धार ज़िले में एक जगह पूरी रक़म देने के लिए कहा गया। मध्यभारत सरकार ने नीलाम-प्रथा अपनायी है। बम्बई व भोपाल प्रान्तों में बिना नीलाम के खेती की ज़मीन दी जाती है, जो बहुत सुविधाजनक सिद्ध हुई है। हरिजनों को ज़मीन देने का तरीक़ा आसान होने से समय नष्ट नहीं होता और अर्जदारों का फ़ैसला जल्दी हो जाता है। नीलाम-प्रथा से ज़मीन देने में एक-दो साल लगना स्वाभाविक समझा जाता है।

सहकारी समिति बनाकर भी हरिजनों को ज़मीन दिलायी जा सकती है। मगर सहकारी खेती करने के लिए जो आवश्यक साधन होते हैं वे उपलब्ध नहीं होते। पड़ती ज़मीन के टुकड़े अलग-अलग बिखरे हुए होते हैं। उनपर सामूहिक खेती करना अत्यन्त कठिन है। जब अच्छे पढ़े-लिखे लोगों में भी सहकारिता का अभाव है, तो पीड़ित, अशिक्षित व ग़रीब लोगों में इसका प्रचार करना तो और भी कठिन है। इससे सहकारिता के आन्दोलन को धक्का लगेगा। जहाँ-जहाँ बड़े-बड़े चक उपलब्ध हों और पानी का उचित प्रबन्ध हो, वहाँ सामूहिक खेती की जा सकती है।

फौजी बीड़ें

भूतपूर्व रियासतों में घुड़सवार सेना काफ़ी संख्या में होती थी, घोड़ों के लिए घास की बीड़ें रखी जाया करती थीं। होलकर रियासत में तो इंदौर के नज़दीक के किसानों की ज़मीनें छीनकर बीड़ व रमणे तैयार किये गये। मध्यभारत बनने के बाद न घुड़सवार सेना रही, न घोड़े। उस ज़मीन का उपयोग घास बेचने के लिए किया जा रहा है।

ऊपर के आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि मध्यभारत में घास की कमी नहीं है, इसलिए फौजी बीड़ों पर जोत शुरू करना देश के हित में है। यहाँ पर सहकारी आधार पर गांव बसाकर खेती की जा सकती है।

चाकराना ज़मीन

चाकराना ज़मीन की प्रथा क़रीब पूरे मध्यभारत में है। चाकरी के मुआविज़े के रूप में दी गयी ज़मीन को चाकराना ज़मीन कहते हैं। उसपर तौजी नहीं लगती। इस क़िस्म की ज़मीन गांव के नाई, धोबी, कुम्हार, ब्राह्मण, बलाई, चमार, चौकीदार, इन सबके पास थी। मगर भिन्न-भिन्न कारणों से हरिजनों के सिवाय बाकीसब की ज़मीन पर तौजी लगकर वह उनकी निजी सपत्ति हो गयी। मगर हरिजनों को उस हक़ से वंचित रखा गया। उनके पास माफी की ज़मीन होने से उनसे गाँव के लिए बेगार दिन-रात ली जाती है। स्वतंत्र भारत में बेगार-प्रथा बंद ज़रूर हुई है, मगर चाकराना ज़मीन का कलंक जारी है, जिसमें ग़रीब के श्रम की पूरी मज़दूरी सरकार नहीं देती। विरोध में कहा जाता है कि सरकारी ज़मीन वापस लौटा दी जाये। चाकराना ज़मीन पर तौजी लगाना यह एक सांकेतिक कल्याण-कार्य है, जिसमें सरकार की नीति और मन्शा ग़रीब लोगों के सामने स्पष्ट हो जायेगी।

आन्दोलन का नेतृत्त्व

भूमिहीनों को भूमि दिलाने का आन्दोलन किनके नेतृत्त्व में होना चाहिए, यह एक विचारणीय विषय है। अगर हरिजन ज़मीन की माँग पेश करते हैं, तो उनपर जातीयता का दोष लगाया जाता है। कहा जाता है, कि "यह सिर्फ हरिजन-समस्या नहीं है, भूमिहीनों की समस्या है।" अधिकतर भूमिहीन किसान हरिजन होने से हरिजनों को ही आवाज़ उठानी पड़ती है, और उनको ही यह आन्दोलन करना पड़ता है।

यह देखा गया है कि सवर्ण जाति के भूमिहीन किसान हरिजनों का साथ नहीं देते, जातीयता के आधार पर सम्पन्न किसानों से वे मिल जाते हैं। सम्पन्न किसान इस भूमि-वितरण के आन्दोलन के ख़िलाफ़ हैं। उन्हें यह फ़िकर रहती है कि अगर हरिजनों को भूमि दी गयी, तो वे उनके खेतों पर मज़दूरी करने नहीं आयेंगे और उनके बिना वे अपनी ज़मीन पूरी तरह से जोत नहीं सकेंगे। भूमिहीनों के संघटन में, तथा नेतृत्त्व में फूट डालना इनके लिए बहुत आसान है। हरिजन जातियों में आपस में झगड़े शुरू करा दिये जाते हैं। जो हरिजन क़र्जदार होते हैं वे इन सम्पन्न किसानों के हाथों में खेलते हैं।

इस आन्दोलन में सवर्ण भूमिहीन किसानों का सहयोग मिलना अत्यन्त कठिन है। हरिजन-ही-हरिजन इस आन्दोलन में शरीक होते हैं, इसलिए इसमें सकुचित मनोवृत्ति है, यह कहकर हरिजनों की माँगों को ठुकराना नहीं चाहिए। मध्यभारत के दलित खेतिहर मजदूरों की माँगें सामान्यतः निम्नलिखित हैं :—

१. लेण्ड रेवेन्यू क़ानून में संशोधन करके हरिजनों आदिवासियों को तथा अन्य पिछड़ी हुई जातियों को सरकारी भूमि दिलाने में प्राथमिकता दी जाने की व्यवस्था की जाये।

२. जो हरिजन अत्याचारों की वजह से निर्वासित हो जाते हैं, उन्हें अन्य जगह भूमि व भूमि पर बसने का पूरा खर्च दिया जाये।

३. १००० एकड़ के ऊपरवाले ज़मीन के ब्लाक जो तोड़े गये हों, या जो जोतनेयोग्य पड़ती भूमि हो, उसपर सहकारी आधार पर नये गाँव बसाये जायें।

४. चाकराना ज़मीन पर लगान लगाकर तौजी वसूल की जाये। जो गाँव का काम करें, उसे पंचायत की मार्फत उचित मज़दूरी दी जाये या उसे वैतनिक नौकर रख लिया जाये।

५. सरकारी पड़ती ज़मीन के नंबर व रक़बा प्रकाशित करने की व्यवस्था की जाये।

यदि मध्यभारत सरकार ऊपरलिखे कार्यक्रम पर अमल करे, तो निस्सन्देह हरिजनों का बढ़ता हुआ असंतोष बन्द हो जायेगा, और हरिजन उत्थान का संदेश भी गाँव-गाँव और घर-घर पहुँच जायेगा।

रा० मो० रानडे

हरिजन-सेवा की नयी दिशा

सन् १६५१ में पूज्य गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से जब भारत लौटे, तो उनके स्थायी निवास-स्थान का सवाल खड़ा हुआ। कई स्थानों से उन्हें आमन्त्रण मिले, किसी-किसी का मत था कि गांधीजी को 'शान्ति-निकेतन' में रहना चाहिए, क्योंकि श्री सी० एफ० एण्डूज़ वहाँ पर थे और वे गांधीजी के घनिष्ठ मित्र थे; कइयों ने उन्हें गुरुकुल कांगड़ी में रहने की सलाह दी, क्योंकि गांधीजी अपनी भाषा और संस्कृति के उपासक थे; अहमदाबाद के धनिकों ने कहा, गांधीजी गुजरात के हैं, इसलिए उन्हें अहमदाबाद में रहना चाहिए। पूज्य गांधीजी ने अहमदाबाद-निवासियों के इस प्रेमपूर्ण निमन्त्रण को स्वीकार तो कर लिया, पर एक शर्त रखी। उन्होंने कहा—"मैं अन्त्यजों को छूने में दोष नहीं मानता।" उन दिनों अछूत मानी जानेवाली जातियों के लिए कोई उपयुक्त नाम प्रचलित नहीं हो पाया था। गुजरात में उन्हें अन्त्यज कहते थे। अहमदाबाद के निवासियों ने पूज्य गांधीजी की इस शर्त पर कोई आपत्ति नहीं की और वे उनकी धन से सहायता करने लगे।

मगर, अहमदाबाद के निवासियों ने, ऐसा लगता है, अन्त्यज को स्पर्श करने की गांधीजी की शर्त पर न तो पूरी तरह विचार किया था और न उसे गम्भीरतापूर्वक ग्रहण ही किया था।

थोड़े दिनों में ठक्करबापा ने गांधीजी को एक पत्र लिखा कि एक अन्त्यज परिवार उनके आश्रम में रहना चाहता है। गांधीजी उस परिवार को आश्रम में रखने के लिए तुरन्त तैयार हो गये। और एक अन्त्यज पति-पत्नी एक छोटी कन्या सहित आश्रम में आ गये। इससे आश्रम में कुछ खलबली मच गयी।

इसी समय थोड़े दिनों के लिए श्री मगनलाल गांधी बरार चले गये। उनकी अनुपस्थिति में गांधीजी उस अन्त्यज दम्पति के साथ-साथ पानी भरने, आटा पीसने और खाना पकाने का काम करने लगे। भोजन भी सब का साथ ही होता था।

जब अहमदाबाद-निवासियों ने इस विलक्षण दृश्य को देखा, वे हक्के-बक्के रह गये। उन्होंने कहा—"यह गांधीजी ने क्या किया? वे केवल छूने की बात करते थे, वे तो अब अन्त्यज के साथ बैठकर खाना भी खाते हैं।" अहमदाबाद-निवासियों को लगा कि गांधीजी धर्म-भ्रष्ट हो गये और उन्होंने आश्रम को आर्थिक सहायता देना बन्द कर दिया।

इससे आगे की बातें गांधीजी ने स्वयं अपनी "आत्म-कथा" में लिखी हैं, इसलिए उन्हें दोहराने की आवश्यकता मैं नहीं समझता।

अस्पृश्यता-निवारण का कार्य गांधीजी के लिए मानो प्राण था। वे किसी भी ऐसे मौके को हाथ से नहीं जाने देते थे, जो इस काम को आगे बढ़ाने में सहायक हो। महानिर्वाण से कुछ पहले तो उन्होंने यहाँतक निश्चय कर लिया था कि, जिस विवाह में वर और वधू में से कोई एक पक्ष हरिजन नहीं होगा उसमें वे भाग नहीं लेंगे। कहा जाता है कि यदि सन् १६४८ की ३० वीं जनवरी को उनकी हत्या न की जाती, तो वे दो-तीन दिनों के बाद वर्धा जाने वाले थे और वहाँ एक सवर्ण कन्या और एक हरिजन युवक के विवाह में वे शरीक होते।

अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी गांधीजी के विचारों में उपर्युक्त प्रगति को देखकर कई बार बड़ा विस्मय होता है। पर वस्तुतः गांधीजी के विचारों ने ऐसी कोई खास प्रगति नहीं की, उनके विचार तो आरम्भ से ही बड़े क्रान्तिकारी थे। उनके विचारों में प्रगति का जो आभास हमें होता है, उनके तप के कारण हुई समाज की प्रगति का वह वस्तुतः प्रतिबिम्ब मात्र है। समाज में पाये जानेवाले ऊँच-नीच के भेद

को मिटाना, यह हरिजन-सेवा का ही एक अंग है। गांधीजी जीवनभर यह काम करते रहे।

गुजरात में हरिजन-सेवा का काम हमने हरिजनों के लिए पृथक् पाठशालाओं की स्थापना से शुरू किया था। मगर पृथक् पाठशालाओं का वह विचार आज हम छोड़ चुके हैं। आज तो हम इस कोशिश में हैं कि छात्रालयों और आश्रमों में हरिजन और सवर्ण बालक और बालिकाएँ साथ-साथ रहें, साथ खेलें-कूदें और साथ-साथ खायें-पीयें। हमें आशा है कि थोड़े दिनों में यह सब इतना सहज हो जायेगा कि इसके लिए हमें खास कोशिश करने की आवश्यकता नहीं रह जायेगी। अब हमारे सामने मुख्य सवाल यह है कि किस प्रकार हरिजन अन्य सवर्ण भाइयों की तरह घर और बाहर का काम बिना किसी रोक-टोक के कर सकें और इस प्रकार ऊँच-नीच का भेद-भाव समूल नष्ट हो जाये।

मुझे आशा है, हरजिन सेवा के क्षेत्र में काम करनेवाले हम सब इसी दिशा में अब विशेष प्रयत्न करेंगे।

परीक्षितलाल मजमुदार

मुख्य प्रश्न : भूमि

उस दिन हरिजन-दिवस था; सो हमने हरिजन-बस्ती जाने का निश्चय किया।

हम हरिजन-बस्ती पहुँचे। देखा, सामने एक झोंपड़ा खड़ा था, जिसके बाहर फर्श पर फटे चीथड़ों में लिपटा एक बीमार बुड्ढा लेटा हुआ था। उसकी स्त्री भी क़रीब सत्तर वर्ष की बुढ़िया। वह मज़दूरी करके अपना और अपने पति के खाने तथा दवादारू का काम किसी तरह चलाती थी।

कितना सकरुण था वह दृश्य। एक दिन वह था, जब वह भरी जवानी में था, पूर्ण स्वस्थ और बलिष्ठ। दिनभर वह काम किया करता था। सामने खड़े कटहल के दस पेड़ और उनपर फैली काली मिरच की हरी-हरी लताएँ उसने बोयीं और सींचकर बड़ी की थीं। जब वह यहाँ आबाद होने के लिए आया था, उस समय इस बगीचे की भूमि ऊसर पड़ी थी। आज वह हरी-भरी है। उसके मज़बूत हाथों की यह करामात थी।

पर आज वह बीमार है, लाचार है, निराशाभरी आँखों से अपने बगीचे की ओर देखकर वह अंतिम साँसें गिन रहा है--वह बगीचा जो हरा-भरा होकर पुनः ऊसर होने जा रहा है।

मलबार में हरिजनों की जन-संख्या लगभग चार लाख है। गत दस वर्षों में उसमें कोई खास उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई। कहते हैं, दरिद्रों की संतान अधिक पैदा होती है; पर यह यहाँ कोई स्थिर सत्य प्रतीत नहीं होता। हो सकता है कि मृत्यु-संख्या जन्म-संख्या के बराबर होने के कारण हरिजनों की जन-संख्या प्रायः उतनी ही रही हो। इसके अतिरिक्त शायद यह भी सही है कि ज़िन्दगी की मुसीबतें जन्म-संख्या की उस अधिकता को संतुलित करती रहती हों। समाज भी न जाने कितनी शताब्दियों से उन्हें पीसता आ रहा है।

मलबार में प्रायः सभी हरिजन खेतिहर मज़दूर हैं। मालिक जब चाहे उन्हें उनके घर से बाहर निकाल सकता है और ज़मीन छीन सकता है। मगर उनके बिना उसका काम भी नहीं चल सकता। इसीलिए ऊसर और बेकार ज़मीन पर झोंपड़ा बनाकर रहने की उन्हें अनुमति मिल जाती है। वे वहाँ अपना छोटा-सा झोंपड़ा बनाते हैं और अपने हाथों से खोदकर उस ऊसर ज़मीन को हरी-भरी बना देते हैं। और फिर निर्दयतापूर्वक उन्हें एक दिन कुछ बहाना बनाकर वहाँ से भगा दिया जाता है – कभी बलात्कार से, कभी बाक़ी किराये और बाक़ी लगान के नाम पर अदालती नोटिस दिखाकर और कभी झूठे मुक़द्दमों द्वारा परेशान करके। हरिजनों को ज़मीन व घर से वंचित करना कोई कठिन बात नहीं है। बहुत आसानी से यह किया जा सकता है और किया जाता है। उनके पास ऐसे दस्तावेज या कागज़ात नहीं होते, जिन्हें वे इस बात के सबूत के तौर पर पेश कर

सकें कि अमुक घर या ज़मीन पर उनका अधिकार रहा है। उनके पास तो मालगुजारी की रसीद भी नहीं होती। मालगुजारी देते हैं हरिजन, पर उसकी रसीद पहुँच जाती है ज़मीन के असली मालिक के पास, और उसीके नाम पर वह काटी जाती है। कभी-कभी तो उनके द्वारा दिये गये कर की कोई रसीद दी ही नहीं जाती। सब मालिक की—ज़मींदार की—दया समझी जाती है।

हाल ही में संसद् में एक सदस्य ने फरमाया था—"अब मलबार में ज़मीन व मकान खाली कराने की घटनाएँ कम होती हैं।" नीचे के तथ्यों से पाठक स्वयं निर्णय करें कि इस कथन में सचाई का अंश कितना है।

फरोक के पास एक गाँव है। वहाँ नीलांटन नामक व्यक्ति के पास वर्षों से एक ज़मीन चली आ रही थी। कई बार मालिक बदले, पर ज़मीन नीलांटन के पास ही रही। कागज़ात बदलते रहे, पर साथ ही नीलांटन का नाम लिखा एक छोटा कागज़ भी एक हाथ से दूसरे हाथ में जाता रहा। बेचारे नीलांटन को इसकी खबर तक नहीं थी। एक दिन वह काम से लौटा, तो देखता क्या है, कि पुलिस और कचहरी का आदमी घर के सामने खड़े हैं। उसके घर का सामान और उसके बच्चे घर से बाहर निकाल दिये गये हैं। तब उसने समझा कि वह घर व अहाता आज उसका नहीं, किसी और का हो गया है।

दूसरी घटना अरियकोट की है। अटिमा वहाँ एक छोटे से झोंपड़े में रहता था; अहाता उसका बहुत छोटा था। उसकी रजिस्ट्री अटिमा के नाम पर हो गई थी। एक दिन एक जमींदार ने बहुत थोड़ी क़ीमत में उसे लेना चाहा। पर अटिमा ने दिया नहीं। चार दिन के बाद रात के समय अचानक अटिमा के झोंपड़े पर पत्थर बरसने लगे। बाहर निकला तो एक भले व्यक्ति ने उसे थाने में रिपोर्ट करने की सलाह दी। सुबह वह थाने में गया। उसे बताया गया, "सिर्फ़ पत्थर की बात काफ़ी नहीं है, तुम्हें कहना होगा, तुम्हारी एक पेटी चोरी हो गई है।" दूसरे दिन पुलिस आई। जाँच हुई। पेटी उसके घर पर मिली। झूठी रिपोर्ट लिखाने के जुर्म में उसपर मुक़द्दमा चला। अटिमा मारे डर के उस झोंपड़े को ही नहीं, गाँव को भी छोड़कर भाग गया।

ऐसी कितनी ही कहानियाँ हैं!

प्रश्न असल में ज़मीन का है। हरिजनों की सभी समस्याओं में वह प्रधान है, क्योंकि केवल ज़मीन न होने के कारण उनका आर्थिक ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक अधः पतन हुआ है और अब भी हो रहा है।

वे अपने बालकों को शिक्षा दिलायें तो कैसे? घर के बड़े लोग बाहर काम पर जाते हैं, इसलिए छोटे बच्चों की देखभाल का काम बड़े बच्चों को करना पड़ता है। ज़मींदार के पशु भी वे चराते हैं; जबतक परायी ज़मीन पर रहना है, तबतक ज़मींदार की जी हज़ूरी भी ज़रूरी है।

रही सदाचार की बात। उसका भी यही हाल है। ज़मींदार बलात्कारतक करने से नहीं हिचकते। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि एक दिन दोपहर के समय एक ज़मींदार ने बीसों हरिजनों को भोजन कराया। उनमें स्त्रियाँ भी थीं। वहीं बीसों व्यक्तियों की आँखों के सामने एक हरिजन विवाहिता युवती पर बलात्कार किया गया। किसीने चूं तक न की, मानों सब बेड़ियों में जकड़े खड़े हों।

यदि हरिजनों को इस दासता से मुक्ति दिलानी है, तो उन्हें भूमि दिलानी होगी। यह कोई असंभव काम नहीं है। सरकार ने उन्हें मकान बनाने के लिए भूमि देने का वचन दिया है। तामिलनाड और आंध्र में कुछ व्यक्तियों को ज़मीन दी भी जा चुकी है। मलबार में भी यह काम ज़रूर शुरू कर देना चाहिए। आरम्भ में वही ज़मीन सरकार लेकर दे, जो खाली की जा रही है। बाद में औरों को भी दिलाई जाये; धीरे-धीरे सबको ज़मीन मिल जायगी।

क्या हम आशा करें कि मद्रास सरकार यह ज़रूरी काम जल्दी शुरू करेगी? याद रहे, ज़मीन को छोड़कर कोई दूसरी दवा ऐसी नहीं है, जो पीड़ित और दलित हरिजनों के जीवन को जीनेलायक बना सके और उनके निराशाभरे अंधकारमय जीवन में आशा का संचार करके उसे प्रकाशित कर सके।

टी० पी० आर० नम्बीशन

भंगी-काम में सुधार के लिए सुझाव

[गत साल बम्बई राज्य सरकार ने भंगियों की जीवन-स्थिति पर प्रकाश डालनेवाली जाँच-कमेटी की एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी। अन्य बातों के अतिरिक्त उसने कुछ ऐसे उपयोगी सुझाव भी पेश किये हैं, जिनसे भंगी-काम को अधिक स्वच्छता, सुगमता और शीघ्रता से किया जा सकता है। रिपोर्ट के तत्सम्बन्धित अंशों को हम नीचे दे रहे हैं। आशा है, नगरों और छोटे कस्बों की नगरपालिकाएँ इन सुझावों को अपने-अपने क्षेत्रों में अमल में लाकर इनसे लाभ उठायेंगी।—सं०]

काम भेद से भंगी दो प्रकार के होते हैं : एक टट्टी-सफैये और दूसरे सड़क-सफैये। दोनों में टट्टी-सफैये का काम बहुत ज्यादा गन्दा होता है, क्योंकि वह टट्टी, नाबदान और नालियाँ साफ करता है। पहले इस बात पर विचार करना है कि इसमें किस प्रकार के सुधार किये जायें।

भंगी के काम का सबसे गन्दा हिस्सा है पाखाने को हाथ से उठाने का तरीका। सामान्य प्रकार की टट्टियों में किसी भी प्रकार का बर्तन नहीं होता, फलतः पाखाना फर्श पर गिरकर छितरा जाता है या उसके गढ़े में गिरता है। उदाहरणस्वरूप, नासिक जैसे बड़े शहर में इस प्रकार के क़रीब एक हज़ार पाखाने हैं जिनमें किसी प्रकार का बर्तन नहीं रखा जाता *। इस प्रकार के बर्तन-रहित पाखानों में से भंगी टीन के टूटे टुकड़े द्वारा मैले को खरोचकर और उठाकर ढोल या बाल्टी में डालता है। ऐसा करते समय उसके हाथ भी पाखाने में सन जायें तो क्या आश्चर्य।

पाखाना-सफ़ाई के मौजूदा तरीक़े पर बिस्तार से विचार करने से पहले, हम इस बात को बलपूर्वक कह देना चाहते हैं कि पाखाना हाथसे साफ़ करने के तरीक़े को सर्वथा खत्म कर देना चाहिए और टट्टियाँ-निजी और सार्वजनिक—इस प्रकार की बनायी जायें, कि उनका पाखाना हाथ से साफ़ करने की आवश्यकता न हो। भंगी-काम में असली सुधार तभी होगा। इसलिए हम सरकार और नगरपालिकाओं से पुर-ज़ोर सिफ़ारिश करते हैं कि जब कभी उनके दफ्तरों के लिए या जनता के लिए नये पाखाने बनाने का सवाल पैदा हो, तो बर्तनवाले पाखाने वे न बनायें ; बल्कि उनके स्थान पर सैप्टिक टैंकवाले अथवा अन्य कोई उपयुक्त पाखाने बनायें ; साथ ही, हम नगरपालिकाओं से यह भी सिफ़ारिश करते हैं कि वे, जहाँतक हो सके, मकानों में बर्तनवाले पाखाने बनाने की अनुमति न दें और मकान-मालिक पर इस प्रकार का पाखाना बनाने को ज़ोर डालें जिसे साफ़ करने के लिए पेशेवर भंगी की आवश्यकता न पड़े।

यहाँ पर यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि क्या कमोड-पद्धति को, जो यूरोपियनों से कुछ भारतीयों ने ले ली है, हाथ से पाखाना-सफ़ाई के अन्दर माना जाये और क्या उसे भी खत्म कर देना चाहिए ? हमारे विचार से भारत में प्रचलित कमोड पद्धति हाथ से पाखाना-सफ़ाई के अन्दर आती है और उसे साफ़ करने के लिए भी पेशेवर भंगी की आवश्यकता होती है। इसलिए कमोड-पद्धति को व्यापक रूप में अपनाने के लिए हम तबतक सिफारिश नहीं कर सकते, जबतक कि उसे घर के लोग खुद उठाकर नगर-पालिका की टट्टी-गाड़ी में डालने के लिए तैयार न हों और उसे साफ़ करने के लिए भंगी की आवश्यकता न पड़े। यदि ऐसा हो जाये, तब तो कमोड की अपेक्षा बाल्टी-पद्धति अधिक सुविधाजनक रहेगी—एक बाल्टी पाखाने के लिए और दूसरी पेशाब और पानी के लिए, क्योंकि भारत में पाखाने के हाथ कागज़ की बजाय पानी से साफ़ करने का रिवाज है। साबरमती-आश्रम में गांधीजी ने इस दो बाल्टी-पद्धति को शुरू किया था और जबतक वे वहाँ रहे,

---

* उत्तर भारत में भी, खासकर पंजाब के शहरों में, इस प्रकार के बिना-बर्तन के पाखाने अक्सर पाये जाते हैं। यही नहीं, कुछ लोग तो अपने मकान की पूरी छत या उसके एक हिस्से को पाखाने के तौर पर इस्तेमाल करते हैं—सं०

बाल्टियों की सफ़ाई आश्रमवासी ही करते थे, भंगी नहीं। मैले को वे खेतों में गाड़ देते और बाल्टी तथा पाखाने को अपने हाथों से साफ़ करते थे। जो भी हो, कमोड और बाल्टी बर्तनवाले पाखाने एक से ही हैं और उन्हें हाथों से ही उठाकर साफ़ करना पड़ता है, फिर चाहे उन्हें घरवाले साफ़ करें या पेशेवर भंगी।

हम यह भी जानते हैं कि बर्तनवाले पाखानों को अभी जल्दी ख़त्म नहीं किया जा सकता। उसमें समय लगेगा और वह बड़े परिश्रम का काम है। इसलिए हम पाखाना-सफ़ाई की वर्तमान पद्धति में पाये जानेवाले दोषों और उन्हें दूर करने के उपायों पर विचार करेंगे।

सुविधा की दृष्टि से, बर्तन वाले पाखानों से सम्बन्धित भंगी के काम के निम्नलिखित चार अंगों पर हम विचार करेंगे:—

१. बर्तनवाले पाखाने की बनावट।

२. पाखाने का बर्तन।

३. मैला पाखाने से निकालकर मैले-गाड़ीतक ले जाने का तरीक़ा।

४. मैले का उपयोग।

पाखाने की बनावट

क्योंकि इस देश में पाखाना-सफ़ाई का काम एक ख़ास जाति के, जो समाज में सब से नीचे मानी गयी है, ज़िम्मे लगा दिया गया है, इसलिए जनता या सरकारी अधिकारियों ने बर्तनवाले पाखानों की बनावट की तरफ़ अबतक अधिक ध्यान नहीं दिया। अगर वे ऐसा करते तो हाथ से पाखाना-सफ़ाई का काम ऐसा बनाया जा सकता था कि उसमें गन्दगी न के बराबर हो।

बर्तनवाले पाखानों की बनावट में सामान्यतः निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं:—

(अ) व्यक्ति के बैठने का स्थान किसी एक प्रामाणिक आकार का नहीं होता।

(आ) वह सुराख़ या रास्ता, जिसमें से पाखाना नीचे गिरता है सामान्यतः आवश्यकता से अधिक लम्बा और चौड़ा होता है।

(इ) पाँवों रखने के लिए कुछ ऊँचे बनाये हुए स्थान का और नीचे पाखाने के बर्तन का ठीक मेल नहीं होता।

(ई) पेशाब करने और हाथ धोने का विशिष्ट बर्तन या स्थान इस प्रकार से बना हुआ होता है कि जिससे पानी और पेशाब पाखाने के बर्तन में गिरकर पाखाने के बर्तन को भर देते हैं और पाखाना चारों ओर गिरकर सारे स्थान को गन्दा कर देता है।

(उ) बर्तन रखने का स्थान आवश्यकता से अधिक लम्बा-चौड़ा होता है और उसका बर्तन की लम्बाई-चौड़ाई से कुछ सम्बन्ध नहीं होता, इसलिए पाखाने का बर्तन हिल-डुलकर कभी इधर तो कभी उधर रखा जाता है; इसका फल यह होता है, कि पाखाना बर्तन में नहीं गिरता और कभी-कभी बर्तन के किनारों पर गिरकर सफ़ाई के काम को और भी मुश्किल बना देता है।

(ऊ) पाखाने के बर्तन को उठाने का रास्ता प्रायः इतना तंग होता है—चौड़ाई और ऊँचाई दोनों दृष्टियों से—कि भंगी उसके अन्दर नहीं जा सकता और पाखाने के बर्तन को उठाने के लिए वह केवल अपना हाथ ही डाल सकता है। और कई बार बर्तन रखने का फ़र्श सड़क की सतह से नीचा होता है, जिससे वर्षा का पानी उसके अन्दर भरकर भंगी के काम को और भी कठिन कर देता है।

(ए) प्रायः पाखाने का ऊपरी फ़र्श तथा बर्तन रखने का स्थान सीमेंट आदि से बने नहीं होते, उनमें नमी जज़्ब होती रहती है। ऐसी हालत में उन्हें पानी द्वारा साफ़ करना भी असंभव हो जाता है।

(ऐ) अक्सर पाखाने की मोरी सड़क की नाली में गिरती है। इससे न केवल सड़क की खुली नाली गन्दी होती है, प्रत्युत बहुधा भंगी मैले के बर्तन को भी उसी नाली में उंडेल देते हैं।

(ओ) पाखाने के गन्दे पानी के लिए जहाँ अलग नाबदान बनाये गये हैं, वे प्रायः छोटे और टूटे होते हैं और उनका पानी सड़क पर बहता रहता है।

बर्तन

पाखाने का बर्तन किसी एक प्रामाणिक परिमाण और आकार का नहीं होता। कई बार तो बाँस की अनेक

आकार की टोकरियाँ काम में ली जाती हैं, जो टूटी होती हैं, जिनमें से मैला टपकता रहता है और ऊपर से भी बहता रहता है। कहीं-कहीं पर कनस्तर, कोई पुराना ट्रंक अथवा ऐसी ही कोई दूसरी कामचलाऊ चीज वहाँ रख दी जाती है। बहुत ही कम स्थानों पर हैंडलवाले लोहे के डब्बे इस्तेमाल किये जाते हैं।

पाखाना ले जाने का तरीका

पाखाने के बर्तन को किसी बड़े टोकरे, पीपे या बाल्टी में उलट लेने के बाद भंगी या उसकी स्त्री उसे अपने सर पर उठाकर मैले-गाड़ीतक ले जाते हैं, जो प्रायः एक फर्लांग से ऊपर दूरी पर खड़ी होती है। यह इस सारे बीभत्स कार्य की चरम सीमा है। *

मैले का उपयोग

अभी थोड़े ही दिनों से सरकार नगरपालिकाओं को इस बात के लिए प्रोत्साहित कर रही है, कि वे मैले को खाइयों में डालें और उसके ऊपर कूड़े की तह डालकर कम्पोस्ट खाद तैयार करें। मैले को खाइयों में डालने का काम काफी गन्दा होता है, क्योंकि मैले को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने का कोई अच्छा साधन नहीं होता। खाइयाँ भी ठीक तरह से बनी नहीं होतीं, और न उनके बीच पक्की सड़कें ही होती हैं, आसपास उनके बेहद घास उगी होती है और वहाँ की दुर्गन्ध से नाक फटने लगती है। इन खाइयों पर काम करनेवाले मजदूरों को धूप और वर्षा से बचाने के लिए छाया का कोई प्रबन्ध नहीं होता, और न वहाँ पीने के लिए और हाथ साफ करने के लिए पर्याप्त पानी की व्यवस्था ही होती है।

टट्टी-सफाई का काम कई स्थानों पर बहुत ही बुरे ढंग से किया जाता है। ऐसी बात नहीं है कि सरकारी स्वास्थ्य-विभाग भंगी-काम की इस शोचनीय दशा से अभिज्ञ न हों, क्योंकि यह सब काम उनकी नाक के नीचे नगरों में हो रहा है। पर असल बात यह है कि न जनमत इतना प्रबल है और न भंगियों का ऐसा सबल संगठन ही है, जो सरकारी स्वास्थ्य-विभाग को और नगरपालिकाओं को प्रचलित भंगी-काम के दोषों का सावधानीपूर्वक अध्ययन करने पर बाध्य करे और उन्हें दूर करने के उपायों पर सख्ती से अमल करने पर मजबूर करे।

भंगी-काम में सुधार करने की दृष्टि से हम नीचे लिखे उपायों पर अमल करने की सिफारिश करते हैं:—

(१) पाखाने की बैठक कंक्रीट या पत्थर की हो, जिस पर संभव हो, तो एक ऐसा ढक्कन भी जड़ दिया जाये जिसे पाखाने का उपयोग करने के बाद उस पर लगा दिया जाये और जिसमें से मक्खियाँ आ-जा न सकें।

(२) मैला नीचे गिरने का रास्ता गोल हो, जिसका व्यास ७ इंच या ८ इंच हो।

(३) बैठक पर पाँवों रखने की जगहें १० इंच या ११ इंच लम्बी हों और इस प्रकार से बनायी जायें कि उन दोनों के अन्तिम भाग को जोड़नेवाली रेखा मल गिरने के रास्ते के बीच में से गुज़रे।

(४) पेशाब गिरने और हाथ धोने का पानी जाने का स्थान इस ढंग से बनाया जाये कि पानी और पेशाब मैले के बर्तन में न गिरें, बल्कि एक दूसरी नाली से नीचे चले जायें।

(५) मल का बर्तन रखने का स्थान बहुत लम्बा-चौड़ा न हो, बर्तन रखने के बाद उसके चारों ओर एक इंच से अधिक खाली स्थान नहीं बचना चाहिए, और वह इस तरह का हो कि मल गिरने का रास्ता मल के बर्तन के केन्द्र की बिल्कुल सीध में हो।

(६) पाखाने के पीछे का स्थान इतना खुला होना चाहिए ताकि भंगी खड़ा होकर उसके अन्दर जा सके और मल के बर्तन को उठाने और उसे साफ करने में उसे जरा भी दिक्कत न हो।

(७) गन्दे पानी की नाली जहाँ संभव हो, ज़मीन के नीचे की नालियों से जोड़ देनी चाहिए, परन्तु खुली नाली में उसका पानी नहीं जाने देना चाहिए। यदि ऐसा न हो

* पहाड़ी स्थानों में नगर पालिकाओं की प्रायः कोई मैला-गाड़ी नहीं होती है। ऐसे स्थानों पर भंगी मल-मूत्र को अन्तिम स्थानतक अपने सिर पर ही उठाकर लेजाते हैं।

सके तो गन्दे पानी के लिए या तो पाखाने के अन्दर या उसके बाहर नाबदान होने चाहिएँ।

(८) मल का बर्तन प्रामाणिक परिमाण और आकार का होना चाहिए। सभी पाखानों में उसी परिमाण और आकार के बर्तन का प्रयोग लाज़मी होना चाहिए। नगरपालिकाएँ एक ऐसा कानून बना दें, जिससे भिन्न परिमाण और आकार के बर्तनों का इस्तेमाल करना और किसी भी प्रकार के बर्तन का इस्तेमाल न करना एक जुर्म माना जाये। बाँस की टोकरियों का प्रयोग बन्दकर देना चाहिए और दोनों ओर लगे हैंडलोंवाला लोहे का बर्तन इस्तेमाल करना चाहिए।

(९) पाखाने से मैला-गाड़ीतक सिर पर बाल्टी या टोकरी में मल ले जाने का जो आज रिवाज है, उसे बन्दकर देना चाहिए और उसके स्थान पर नीचे के तरीकों में से जो स्थानीय सुविधानुसार उपयुक्त जान पड़े, उसे अपनाया जायेः—

१. मैला गाड़ी या लारी पाखाना साफ करनेवालों के साथ-साथ सड़क पर चले।

२. एक ठेला-गाड़ी, जिसमें मैला डालने के लिए एक ढक्कनदार बड़ा ढोल लगा हो, हाथ से खींचकर हरेक पाखानेतक लायी जाये और मैला भरकर उसे उसी प्रकार हाथों से खींचकर मैले की गाड़ी या लारी तक ले जाना चाहिए।

३. जहाँ उपर्युक्त दोनों तरीकों में से एक भी न अपनाया जा सके, वहाँ मल ऐसी बाल्टियों में डालना चाहिए, जो न छोटी हों न बड़ी, और उन्हें दोनों हाथों में लेकर मैले की गाड़ीतक ले जाना चाहिए।†

(१०) इसी प्रकार नाबदानों के गन्दे पानी से भरे कनस्तरों को सिर पर उठाकर ले जाना रोक देना चाहिए।

(११) नाबदानों के पानी को निकालने के लिए लारी में फिट पानी निकालने के पम्पों का, जहाँ संभव हो, वहाँ इस्तेमाल करना चाहिए। बम्बई के उपनगर कुर्ला में ऐसे ही पम्पों का व्यवहार होता है।

(१२) जहाँ नाबदान कम हैं और पानी खींचने का पम्प प्रयुक्त करना व्यावहारिक नहीं है, वहाँ ठेला-गाड़ी में एक ढोल लगाकर अथवा इसी प्रकार के दूसरे तरीकों से नाबदानों के पानी और गन्दगी को निकालकर मैले की गाड़ीतक पहुँचाया जा सकता है।

(१३) जहाँ व्यावहारिक हो वहाँ पूना शहर में प्रयुक्त लारी को बड़े नाबदानों के पानी आदि को निकालने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। मैले को भी यह लारी ले जाती है।

ग्राम-लक्ष्मी गैस प्लाण्ट

सैप्टिक टैंक आदि की उपयोगिता पर हम पहले ही ज़ोर दे चुके हैं। ये सफलतापूर्वक काम देनेवाले साधन हैं। इनमें पेशेवर भंगी की ज़रूरत नहीं पड़ती।

इसी सम्बन्ध में सान्ताक्रूज में प्रयुक्त ग्रामलक्ष्मी गैस-प्लाण्ट भी एक ध्यान देनेयोग्य आविष्कार है। इसमें इस समय यद्यपि गोबर का ही इस्तेमाल किया जाता है, तथापि हमें बताया गया कि कुछ परिवर्तन के बाद इस गैस-प्लाण्ट में मनुष्य के मल को भी इस्तेमाल किया जा सकता है और इससे ऐसी गैस उत्पन्न की जा सकती है जो प्रकाश, उष्णता और चालक शक्ति के लिए उपयोगी होगी।‡ हमने उस प्लाण्ट में उत्पन्न गैस द्वारा गरम एक चूल्हे और एक छोटे इंजन को काम करते स्वयं देखा। हमें बताया गया कि यदि ६०० से ७०० की आबादीवाले एक गाँव के सार्वजनिक पाखाने इस ढंग से बनाये जायें कि उनका सारा मल-मूत्र और गन्दा पानी एक टैंक में जमा होता जाये और वहाँ पर एक गैस-प्लाण्ट लगा दिया जाये, तो उससे उस गाँव की सारी सड़कों को प्रकाशित करने को काफ़ी गैस उत्पन्न की जा सकेगी। हमें यह भी बताया गया

---

† पहाड़ी स्थानों में, जहाँ किसी प्रकार की गाड़ी को अपनाना कठिन हो, खच्चरों पर मल के डब्बे ले जाये जा सकते हैं। खच्चर की काठी इस तरह से बनायी जाये कि डब्बे सन्तुलित रहें और ऊँचे-नीचे स्थानों में चढ़ने-उतरने पर भी मल-मूत्र उनमें से बाहर न गिरे।—सं०

‡ इस समय इसमें मनुष्य के मल का उपयोग शुरू कर दिया है।

कि गैस निकालने के बाद भी इस मल-मूत्र के खादोपयोगी तत्त्व नष्ट नहीं होते। यह गैस-प्लाण्ट, छोटा या बड़ा, किसी भी आकार और परिमाण का बनाया जा सकता है और इसे चलाने के लिए किसी कुशल मेकेनिक की आवश्यकता नहीं होती। इसमें कोई शक नहीं कि यह गैस-प्लाण्ट आगे चलकर बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। काफ़ी तजरबे के बाद, संभव है, यह सैप्टिक टैंक का स्थान लेले और गाँव के लिए उपयोगी गैस और खाद दोनों देने लगे।

हम सरकार से यह सिफारिश करते हैं कि वह अपने विशेषज्ञों द्वारा इस प्लाण्ट में निहित संभावनाओं की पूरी परीक्षा कराये और इसे, यदि उपयुक्त और लाभदायक पाये, तो ग्राम-पंचायतों से इसके इस्तेमाल की सिफारिश करे।

यहाँ पर यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि हमने यान्त्रिक साधनों और उपायों को अपनाने की सिफारिश क्यों की, क्योंकि फ्लश के पाखाने, सेप्टिक टैंक तथा पानी खींचने का पम्प, लारी आदि सभी यान्त्रिक साधन हैं। भंगी-काम में सुधार सुझाने में हमने इस बात को सामने रखा है कि किस प्रकार मल-मूत्र तथा अन्य गन्दगी को साफ़ करने में सीधे हाथ का इस्तेमाल, जहाँतक हो सके, न किया जाये। क्योंकि हम ऐसी सामाजिक दशा को न्याय पर आधारित नहीं मान सकते, जिसमें कुछ विशिष्ट जातियाँ शायद इसलिए नीची मान ली गयी हैं, क्योंकि वे ऐसा पेशा करती हैं जिसमें गन्दगी को हाथ से उठाना पड़ता है।

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, आर्थिक दृष्टि की अपेक्षा मानवता का दृष्टिकोण अधिक महत्वपूर्ण है। मशीन तो आज मनुष्य-जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित कर रही है। भारत इसका अपवाद नहीं है। यदि मशीन के उपयोग का औचित्य कहीं है तो वह सफ़ाई के काम में है। जो-जो आविष्कार और उपाय सफ़ाई के काम को अधिक अच्छी तरह सरंजाम देने में सहायक होते हैं, किन्तु वे बहुत महँगे भी न हों, तो उनका उपयोग करना उचित ही है। हमने उन्हीं साधनों और उपायों को अपनाने की सिफारिश की है, जो उपयुक्त और लाभप्रद दोनों सिद्ध हुए हैं।

काम की मात्रा

दूसरा महत्त्व का प्रश्न है भंगियों और सड़क-सफैयों के काम की उचित मात्रा। कमेटी के किसी भी सड़क-सफैये ने झाड़ू के काम की अधिकता की शिकायत नहीं की। परन्तु पाखाना साफ़ करनेवाले भंगियों की यह सामान्य शिकायत है कि उन्हें बहुत अधिक पाखाने, निजी और सार्वजनिक, दोनों साफ़ करने पड़ते हैं। नगरपालिकाओं ने हमे बतलाया कि एक भंगी को २० से ६० तक पाखाने साफ़ करने पड़ते हैं। 'पब्लिक हेल्थ मेन्युल' के दूसरे संस्करण के २६० वें पृष्ठ पर इस सम्बन्ध में लिखा है:—

"पाखाना साफ़ करनेवाले भंगी—काम के ६ घण्टे मानते हुए एक भंगी से एक दिन में २०० मनुष्यों का मल साफ़ करने की आशा की जाती है (अर्थात् ५० पाखाने, जिनमें प्रत्येक पाखाने में चार व्यक्ति मल-त्याग करते हैं)। इस हिसाब से ५००० जन-संख्यावाले गाँव में ५००० ÷ २००= २५ भंगियों की आवश्यकता पड़ेगी और फिर वहाँ पर सार्वजनिक पाखानों की आवश्यकता नहीं रहेगी।"

किन्तु यह कोई विश्वसनीय और सही मापदण्ड नहीं है, इसलिए हमारी जाँच-कमेटी ने स्वयं इस बात को जाँचने का निश्चय किया कि एक भंगी वस्तुतः कितने पाखाने साफ़ करता है और कितने समय में।

१. कल्याण में ३ भंगियों के काम पर तजरबा किया गया। प्रत्येक भंगी को ३४ या ३५ निजी पाखाने साफ़ करने को दिये गये। प्रत्येक ने शुरू से आखिरतक का सारा काम ३ से ३॥ में समाप्त किया। इसमें मल के बर्तन को उठाना, मल दूसरी बाल्टी में डालना और उसे मैला-गाड़ीतक ले जाना और वापस आना शामिल है। पाखाने को ऊपर और नीचे से धोना इसमें शामिल नहीं है। सामान्यतया भंगी बिना मकान-मालिक के कहे पाखाने को धोते भी नहीं और पाखानों की दशा भी इतनी ख़राब थी कि उन्हें ठीक ढंग से धोना भी मुश्किल है। जाँच से यह भी पता लगा कि प्रत्येक पाखाने को औसतन १० व्यक्ति इस्तेमाल करते हैं। पाखाने इत्यादि साफ़ करने

वाले भंगी को शाम को कोई काम नहीं करना पड़ता।

२. जलगाँव में पाखाने पास-पास होने के कारण एक भंगी को ६० पाखाने साफ़ करने में क़रीब ४॥ घण्टे लगे। यहाँ भी भंगी शाम को काम नहीं करते।

३. धुलिया में मैला-गाड़ी भंगियों के साथ-साथ सड़क पर रहती है। उन्हें मैला सिर पर उठाकर दूर जाना नहीं पड़ता। इसलिए यहाँ एक भंगी ने ८० पाखाने २ घण्टे से भी कम समय में साफ़ कर दिये। यहाँ भी पाखाना साफ़ करनेवाले शाम को कोई काम नहीं करते।

इससे हम निम्नलिखित परिणामों पर पहुँचे हैं :—

१. भंगी को सफ़ाई के लिए सौंपे गये पाखानों की संख्या भंगी-काम की उचित मात्रा का सही मापदण्ड नहीं है, क्योंकि—

(अ) एक भंगी अमुक समय में कितने पाखाने साफ़ कर सकता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि उस पाखाने से, जिसमें मल का बर्तन है, मैला-गाड़ी कितनी दूर पर होती है, क्योंकि भंगी मल को मैला-गाड़ी में डालने जाता है और डालकर फिर वापस पाखाने के पास आता है। जितना ही यह फ़ासला कम होगा, उतने ही अधिक पाखाने भंगी साफ़ कर सकता है।

(आ) एक भंगी अमुक समय में कितने पाखाने साफ़ कर सकता है यह इस बात पर भी निर्भर करता है, कि एक पाखाना दूसरे पाखाने से, एक बर्तन दूसरे मल-बर्तन से कितने फ़ासले पर है। जितना ही फासला कम होगा, उतने ही एक भंगी अधिक पाखाने साफ कर सकता है।

२. मल के बर्तन को पाखाने में से निकालने, उसे बाल्टी आदि में उँडेलने से उसे सिर पर उठाकर मैला-गाड़ी तक लेजाने का काम अधिक मुश्किल है, इसलिए जहाँ-तक संभव हो सके इस काम को कम करना चाहिए।

इन तथ्यों के आधार पर हम नीचेलिखी सिफ़ारिशें करते हैं :—

१. नगरपालिकाओं को मैला-गाड़ियों की संख्या बढ़ानी चाहिए, ताकि भंगियों को मल की बाल्टी आदि लेकर दूर जाने-आने में अपना अधिक समय खर्च करना न पड़े। इससे खर्च बढ़ने की अपेक्षा कम होने की ही अधिक संभावना है।

२. नगरपालिकाओं को एक मैला-गाड़ी उस स्थान पर रखनी चाहिए जहाँ पर दो या दो से अधिक भंगी काम करते हों, इससे भंगियों को मल की बाल्टी सिर पर उठाकर ले जाने की ज़रूरत नहीं रहेगी और वे थोड़े समय में अधिक पाखाने साफ़ कर सकेंगे।

३. प्रत्येक नगरपालिका विशिष्ट स्थानों पर समय-समय पर इस बात की जाँच करती रहे कि भंगियों को बहुत अधिक काम तो नहीं करना पड़ता।

भंगी-काम की गंदगी को देखते हुए हमारा यह मत है कि भंगियों से दिनभर में अधिक-से-अधिक ५ घण्टे काम कराना चाहिए। यदि एक ही भंगी पाखाना-सफ़ाई और सड़क-सफ़ाई दोनों काम करता है, तो अधिक-से-अधिक ४ घण्टे पाखाना-सफ़ाई और २ घण्टे सड़क-सफ़ाई उससे करानी चाहिए। यदि वह केवल झाड़ू लगाने का काम करता है, तो अधिक-से-अधिक उसके काम के ७ घण्टे होने चाहिएँ। बीच में उचित आराम भी मिलना चाहिए।

साप्ताहिक छुट्टी

अब हम भंगियों की साप्ताहिक छुट्टियों पर विचार करें। सामान्यतया सरकारी दफ्तरों में काम करनेवाले सप्ताह में १॥ दिन की छुट्टी पाते हैं। रेल्वे में सड़क-सफ़ैयों और पाखाना-सफ़ैयों को बारी-बारी से सप्ताह में एक दिन की छुट्टी मिलती है। इसका नतीजा यह होता है कि उन्हें काम को जारी रखने के लिए १/७ स्टाफ़ और रखना पड़ता है। दूकानों, होटलों आदि में भी नौकरों को सप्ताह में एक दिन की छुट्टी मिलती है। अब तो डाकखाना भी रविवार को बंद रहता है। बम्बई राज्य में, पूना और ईओला के सिवा, जहाँ सप्ताह में दो बार आधे दिन की छुट्टी दी जाती है, भंगियों को सप्ताह में केवल आधे दिन की छुट्टी दी जाती है। हम इस बात की सिफारिश नहीं कर सकते कि उन्हें पूरे दिन की छुट्टी दी जाये, क्योंकि उससे १/७ स्टाफ़ बढ़ाना पड़ेगा। तो भी हम महसूस

करते हैं कि सप्ताह में आधे-आधे दिन की दो छुट्टियाँ देने का तरीक़ा बहुत सही है और सब नगरपालिकाओं को उसपर अमल करना चाहिए। जहाँ भंगी केवल सुबह काम करते हैं, वहाँ साप्ताहिक छुट्टी देने की, हमारी राय में, कोई ज़रूरत नहीं है।

मल के बर्तनों की दशा

भंगी-काम के एक दूसरे पहलू पर अभी हमें विचार करना बाक़ी है। पाखाने और बर्तन की बनावट के बारे में हमने पीछे काफ़ी विस्तृत सुझाव दिये हैं, तो भी इस बात का ख़ास ध्यान रखना चाहिए कि मल बर्तन में से अधिकता के कारण ऊपर होकर न बहे, क्योंकि इससे भंगी-काम और भी गन्दा हो जाता है। 'पब्लिक हेल्थ मेन्युअल' ने निजी और सार्वजनिक पाखानों के बर्तनों के माप दिये हैं और अधिक-से-अधिक कितने मनुष्य एक पाखाने को इस्तेमाल कर सकते हैं, यह भी नियत किया है, परन्तु व्यवहार में, इन नियमों की सर्वथा उपेक्षा की जाती है। प्रायः सभी पाखानों में—निजी हों या सार्वजनिक—मल ज्यादा होने के कारण बर्तनों में से बाहर गिरता रहता है। भंगी भी इस बात की शिकायत नहीं करते, और स्थिति वैसी ही बनी रहती है। परन्तु उचित निरीक्षण के द्वारा इसको नियमित किया जा सकता है।

इसलिए हम इस बात की सिफ़ारिश करते हैं कि नगरपालिकाओं के सैनिटरी इन्स्पेक्टर इस बात की जाँच करते रहें कि आया मल के बर्तन प्रामाणिक परिमाण और आकार के हैं या नहीं, और यदि उनके नियत आकार के होने पर भी मल बाहर बहता है, तो यह इस बात का सबूत मानना चाहिए कि पाखाने को नियत संख्या से अधिक व्यक्ति इस्तेमाल करते हैं। ऐसी हालत में, सार्वजनिक पाखानों में नगरपालिकाएँ खुद बैठकों की संख्या बढ़ायें और निजी पखानों में मकान-मालिक को अधिक पाखाने बनाने को बाध्य करें। मकान-मालिकों को इस बात से आगाह कर देना चाहिए कि यदि वे चेतावनी देने के बावजूद नियत आकार से भिन्न बर्तन इस्तेमाल करेंगे अथवा उसी बर्तन को अधिक लोग उपयोग में लायेंगे और नये पाखाने नहीं बनायेंगे तो भंगी को काम करने से इन्कार करने का पूर्ण अधिकार होगा।

भंगी-काम की दशा में सुधार की दृष्टि से हम निम्नलिखित दो सिफारिशें और करते हैं :—

१. यद्यपि नये पाखाने इस रिपोर्ट में दिये गये सुझावों के अनुसार बनाये जाने चाहिएँ, तथापि वर्तमान बर्तनवाले ऐसे पाखानों के सुधार का सवाल तो अभी रहता ही है जिनमें उपर्युक्त दोषों में से एक या अधिक दोष पाये जाते हैं। नगरपालिकाओं के स्वास्थ्य-विभागों को इस प्रश्न पर इस दृष्टि से विचार करना चाहिए जिससे भंगी-काम अधिक सरलता और स्वच्छतापूर्वक किया जा सके।

२. भंगी-काम में सुधार करने और हाथ से मैला उठाने को ख़त्म करने की दृष्टि से सरकारी स्वास्थ्य-अधिकारियों को नगरपालिकाओं और समाज-सेवकों के सहयोग से व्यापक जन-आन्दोलन की योजना करनी चाहिए और ऐसे तमाम क़दम उठाये जायें जिनसे उस आन्दोलन को बल मिले।

कपड़े

हम यह भी सिफ़ारिश करते हैं कि नगरपालिकाएँ और सरकार भंगियों को वर्षभर में दो जोड़ी कपड़े अवश्य दें।

सड़क-सफ़ैये

कई नगरपालिकाओं के सड़क-सफ़ैयों को अपनी टोकरी और अपनी झाड़ू लानी पड़ती है। यह सर्वथा अयुक्तियुक्त है। छोटी झाड़ू से झुककर झाड़ू लगाना भी स्वास्थ्य के लिए नुकसानदेह है। इसलिए हम सिफ़ारिश करते हैं कि—

१. प्रत्येक नगरपालिका और स्थानीय बोर्ड अपने सफ़ैयों को झाड़ू और टोकरी मुहैया करे।

२. झाड़ू ऐसे दिये जायें, जिनमें लम्बी लकड़ी लगी हुई हो, ताकि सफ़ैयों को झाड़ू लगाने के लिए झुकना न पड़े।

पंचवर्षीय योजना और हरिजन-सेवा

अस्पृश्यता हिन्दूधर्म और हिन्दूसमाज पर एक ऐसा कलंक है, जिसके कारण उसका ही नहीं, प्रत्युत भारतराष्ट्र का भी सिर विश्व के सम्मुख शर्म के मारे सदियों से नत रहा है। किसी राष्ट्र के उत्थान और पतन में बाहरी कारणों का भी हाथ रहता है, पर इसमें कोई शक नहीं कि समाज और राष्ट्रों के विकास और पतन के मुख्य कारण उनकी अपनी सामाजिक व्यवस्था के भीतर निहित होते हैं। जबतक सामाजिक व्यवस्था में पाये जानेवाले उन दोषों को दूर नहीं किया जाता, कोई भी राष्ट्र वांछनीय उन्नति-पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता। इस दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि अस्पृश्यतारूपी घुन ने हमारे समाज को अन्दर से खोखला कर उसे अपार हानि पहुँचायी है। हमारी आर्थिक गिरावट, बौद्धिक शिथिलता, और नैतिक पतन उसके बाहरी चिह्नमात्र हैं। हमारी सदियोंतक की राजनीतिक गुलामी भी उसीका एक परिणाम था।

गांधीजी की पैनी दृष्टि भारतीय समाज के असाध्य प्रतीत होनेवाले रोग के मूल में तुरन्त पहुँच गयी। उन्होंने विदेशी शक्ति के खिलाफ युद्ध छेड़ा। पर एक कुशल सेनापति की नाईं वे इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि विदेशी शक्ति के साथ हमारे युद्ध की जय-पराजय हमारी अपनी शक्ति और साधनों पर निर्भर करती है। वे जितने सत्यमूलक, सबल और पवित्र होंगे, हमारी विजय की संभावना भी उतनी ही अधिक होगी। यही वजह थी कि राष्ट्र के कई मुख्य नेताओं के विरोध के बावजूद वे रचनात्मक कार्य-क्रम के विभिन्न अंगों पर ज़ोर देते कभी थकते नहीं थे। असल में, केवल राजनीतिक आज़ादी उनका लक्ष्य कभी नहीं रहा, वे तो समता और प्रेम का राम-राज्य स्थापित करने का सपना देखा करते थे। उस सपने को साकार करने का प्रयास उन्होंने स्वातंत्र्य-युद्ध के दिनों में ही शुरू कर दिया था। रचनात्मक कार्यक्रम उसकी पक्की बुनियाद थी।

इस रचनात्मक कार्यक्रम में खादी और अस्पृश्यता-निवारण का स्थान सबसे प्रमुख था। इन दोनों प्रवृत्तियों की प्रगति सच्चे स्वराज्य की तरफ बढ़ने का हमारा सही माप-दण्ड होना चाहिए।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद, देश की बागडोर कांग्रेस के हाथों में आयी। रचनात्मक कार्य १९२० से ही कांग्रेस की नीति का प्रमुख अंग रहा था (पता नहीं, अब है या नहीं)! इसलिए यह स्वाभाविक था कि देश के शासन की बागडोर कांग्रेस के हाथों में आने पर जनता यह आशा करे कि वह अपने वायदों को, उस कार्यक्रम को और उसके फलितार्थों को पूरा करेगी।

हरिजन-सेवा के क्षेत्र में काम करनेवाले जनसेवकों के मन भी ऐसी ही शुभाशा से भरे हुए थे। बहुत हदतक सरकार ने, अपने तरीके से, इन आशाओं को पूर्ण करने की कोशिश की और कुछ सफलता भी उसे मिली। संविधान के १७ वें अनुच्छेद द्वारा अस्पृश्यता का किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध घोषित कर दिया गया और दस वर्ष के लिए परिगणित जातियों को विशेष संरक्षण भी दिये गये।

अभी कुछ महीने पहले सरकार ने पंचवर्षीय योजना का अन्तिम रूप प्रकाशित किया है। योजना के लक्ष्य ऊँचे और ग्राह्य हैं। योजना में उन्हें अमली जामा पहनाने का प्रयास किया गया है। योजना का लक्ष्य समता और न्याय के आधार पर समाज-व्यवस्था की स्थापना है और उसकी ओर यह योजना एक अच्छा क़दम है।

भारतीय समाज में समता और न्याय से वंचित, असमता और अन्याय का शिकार हरिजनों से अधिक शायद और दूसरा कोई वर्ग नहीं रहा है। इसलिए यह उचित ही है कि हरिजन और हरिजन-सेवक पंचवर्षीय योजना की ओर आशाभरी आँखों से देखें और उसी दृष्टि से इसकी छानबीन करें।

योजना के ३७ वें अध्याय का चौथा पैरा यों शुरू होता है :—

"अब अस्पृश्यता के मूल अथवा पावित्र्य के प्रश्नों पर बहस करने के दिन बीत चुके हैं। इस बात में सारा राष्ट्र एकमत है कि अस्पृश्यता के कलंक को पूर्णतया खत्म कर देना चाहिए। संविधान के तीसरे भाग के १७ वें अनुच्छेद के अनुसार 'अस्पृश्यता और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध' घोषित कर दिया गया है। परन्तु सदियों पुरानी संस्था होने के कारण, अस्पृश्यता की जड़ें कुछ विशिष्ट जातियों के मानस और सामाजिक ढाँचे में बड़ी गहराईतक पैठ गयी हैं। जबतक लोगों के दिलों में इसका लेशमात्र भी अंश बाकी है और अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी रूप में समाज में वह प्रचलित है तबतक हम यह नहीं कह सकते कि अस्पृश्यता पूर्णरूप से मिट गयी है।"

उसके आगे, योजना में अस्पृश्यता मिटाने के लिए यह चतुर्विध कार्यक्रम सुझाया गया है :—

(१) क़ानून से अस्पृश्यता-निवारण, (२) सामाजिक शिक्षा द्वारा जनता को समझाना और इस प्रकार इस का मूलोच्छेदन, (३) सामाजिक और मनोरंजनात्मक जीवन में लोकतांत्रिक समबर्ताव का आचरण, और (४) राज्य और गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा आत्म-विकास तथा स्वास्थ्य, शिक्षा, आर्थिक उन्नति आदि के लिए प्राप्त अवसरों द्वारा लाभ उठाकर हरिजनों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो जाने तथा उन्हें उचित शिक्षण और आर्थिक सुविधाएँ मिलने से समाज के साथ उनका सम्पर्क बढ़ेगा और वे घुलमिल कर समरस हो जायेंगे।"

पंचवर्षीय योजना ने केवल परिगणित जातियों के कल्याण-कार्य पर राज्यों द्वारा खर्च करने के लिए १० करोड़ रुपये रखे हैं; साथ ही, योजना के शेष काल में सीधे केन्द्रीय सरकार द्वारा भी ४ करोड़ रुपये खर्च करने के लिए मंजूर किये गये हैं।

यह सही है कि योजना में सुझाये गये इन उपायों पर यदि सचाई से अमल किया गया, तो हरिजनोत्थान की समस्या काफ़ी हदतक हल हो जायेगी। पं० जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में "हरिजनोत्थान का प्रश्न स्वतंत्र भारत की आर्थिक समृद्धि के प्रश्न का ही एक अंग है।" आचार्य-विनोबा भी इस कथन से सहमत-से प्रतीत होते हैं, जब वे कहते हैं कि 'भूमि-समस्या' के हल से हरिजन-समस्या भी बहुत हदतक हल हो जायेगी। यहाँ हम इस बहस में पड़ना नहीं चाहते कि अस्पृश्यता का मूल आर्थिक है या धार्मिक, या जातीय, या तीनों तत्त्व उसके मूल में हैं। यहाँ इतना कहना काफ़ी होगा कि आर्थिक हालत बेहतर होने से अस्पृश्यता-निवारण की ओर काफ़ी प्रगति निस्सन्देह होगी।

हमारे देश में अभी उद्योगों का पर्याप्त विकास नहीं हुआ है। देश की ३५ करोड़ आबादी में से २९ करोड़ ५० लाख लोग गाँवों में रहते हैं। प्रधानतया भूमि ही उनके जीवन का सहारा है। परन्तु भूमि का बँटवारा असमान और अन्याययुक्त है। किसीके पास तो हज़ारों बीघे ज़मीन है, तो हज़ारों के पास एक बीघा भी नहीं। इसलिए भूमि का प्रश्न आज सर्वाधिक प्रबल हो गया है। भूमि-वितरण की समस्या किस तरह से हल की जायेगी इसपर हमारे देश का भविष्य और हमारे समाज का भावी ढाँचा निर्भर करता है। योजना में ठीक ही कहा है :—

"राष्ट्र-निर्माण में शायद सबसे महत्वपूर्ण सवाल है ज़मीन की मालिकी और उसकी जुताई। हमारे सामाजिक और आर्थिक संगठन का ढाँचा प्रधानतया इस बात पर निर्भर करेगा कि हम अपनी भूमि-समस्या को किस तरह से सुलझाते हैं। देर या सवेर, भूमि सम्बन्धी नीति में अपनाये गये सिद्धान्त और ध्येय दूसरे क्षेत्रों में भी हमारी नीति को प्रभावित करेंगे।"

(पृ० १८४)

इसके बावजूद भूमि के न्यायपूर्ण और समान वितरण की ओर सरकार ने कोई खास ध्यान नहीं दिया। कुछ प्रान्तों में ज़मींदारी-उन्मूलन क़ानून पास अवश्य किये गये हैं, पर उनको कार्यान्वित करने से हरिजनों का कोई

फ़ायदा होगा यह नज़र नहीं आता। इससे तो वस्तुतः हरिजनों और दूसरे बेज़मीन लोगों की समस्या और भी जटिल होती जा रही है, क्योंकि ज़मीनवाले अपनी ज़मीनें पहले तो देते ही नहीं, और देते हैं तो केवल एक साल के लिए। इसलिए सरकार को चाहिए कि यदि वह योजना में दोहराये गये अपने वचनों को कार्यान्वित करना चाहती है, तो अपनी भूमि-वितरण सम्बन्धी नीति में वह मौलिक परिवर्तन करे, ताकि हरिजन-जैसे भूमिहीन लोगों को अपना आर्थिक स्तर ऊँचा करने का मौक़ा मिले, जिस आर्थिक स्तर और समान अवसर की दुहाई बार-बार दी जाती है।

योजना के १५३ वें पृष्ठ पर भूमिसम्बन्धी आँकड़े यों दिये गये हैं:-

	एकड़ (लाखों में)	कुल का प्रतिशत
जंगल	६३०	१५
काश्त की गयी भूमि	२६६०	४३
जिसमें काश्त नहीं की	५८०	६
जोतनेयोग्य पड़ती	६८०	१६
न जोतनेयोग्य	६६०	१६
योग	६१५०	१००

इसके अतिरिक्त, १६६० लाख एकड़ भूमि में पहाड़, रेगिस्तान और अगम्य जंगल हैं। इससे पता लगता है कि ६ करोड़ ८० लाख एकड़ ज़मीन अभी ऐसी पड़ी है जो खेतीयोग्य तो है, पर उसपर खेती नहीं होती। १९५१ की जन-गणना के अनुमानित आँकड़ों के अनुसार परिगणित जातियों की संख्या ५ करोड़ १७ लाख है। इनमें से लगभग १/३ से कुछ कम शहरों में रहते होंगे। जो गाँवों में रहते हैं, वे अभी कुछ समय पहलेतक ग्रामीण उद्योग-धंधे किया करते थे, पर हमारी कृपालु सरकार की नीति के कारण अब गाँवों में भी मशीन और मशीन के बने देशी और विदेशी सामान की बाढ़-सी आरही है। फलतः उनके धंधे नष्ट-प्राय हो गये हैं। और साधन उपलब्ध कराना तो दूर रहा, जो थे वे भी छिनते जारहे हैं। उनका मुख्य धंधा अब खेती ही बन गया है। योजना में दिये खेती-सम्बन्धी आँकड़ों से यह प्रकट होता है, कि २४ करोड़ ६० लाख लोग खेती से अपना निर्वाह करते हैं। इस संख्या का १८ प्रतिशत ऐसे लोग हैं, जो खेती पर मज़दूरी करके अपना पेट पालते हैं। यानी ४ करोड़ ३२ १/८ लाख खेतिहर मज़दूर हैं। यह संख्या हरिजनों की ऊपर दी गई संख्या से आश्चर्य-जनक रूप में मेल खाती है। गाँवों में रहनेवाला प्रत्येक व्यक्ति इस बात को जानता है कि खेत पर मज़दूरी करने-वाले प्रायः हरिजन ही होते हैं। इसलिए योजना में दी गयी खेतिहर मज़दूरों की अधिकांश संख्या को हरिजन मानना अनुचित न होगा।

जैसा कि योजना में सुझाया गया है खेतीयोग्य पड़ती ज़मीन हरिजनों को दी जानी चाहिए। उन्हें ज़मीन देने से हरिजन-समस्या और खेतिहर मज़दूरों की समस्या काफ़ी हदतक हल हो जायेंगी। इससे अन्न-उत्पादन की समस्या के भी बहुत हदतक हल होने की संभावना है। केवल ऐसा कह देनेभर से कि 'हरिजनोत्थान का प्रश्न स्वतंत्र भारत की आर्थिक समृद्धि के प्रश्न का एक अंग है, हरिजनों का उत्थान नहीं हो सकता। सबको समान अवसर कहनेमात्र से नहीं मिल जाते, समता और न्याय कहनेभर से स्थापित नहीं हो सकते, ज़रूरत 'करने' की है। समान अवसर के लिए समान साधन मुहैया करने चाहिएँ। भारत में समान आर्थिक अवसर देने का, भूमि ही सबसे बड़ा कारगर साधन है। पंचवर्षीय योजना के, गाँव में रहनेवाले हरिजनों को खेतीयोग्य पड़ती ज़मीन देने के अंग का जहाँतक सम्बन्ध है, उसमें अबतक दो वर्ष बीत जाने पर भी कोई खास प्रगति नहीं दिखायी देती। मद्रास आदि एक-दो राज्यों में शायद काम शुरू तो किया गया है, पर उसके ढंग और प्रगति को देखकर आशा की जगह निराशा ही अधिक होती है। सरकार की ओर से जनता के स्वेच्छया सहयोग की माँग बार-बार की जाती है। पर उससे पहले सरकार का भी यह कर्त्तव्य है कि वह जनता को सहयोग के साधन और उसके तरीके उपलब्ध कराये। साथ ही, उसे यह भी विश्वास दिलाना

होगा कि उसकी खून-पसीने की कमाई किसी परआश्रयी (Parasite)के पेट में नहीं जायेगी।

हरिजन-समस्या के हल के बारे में इस योजना से बहुत अधिक आशा करना ठीक नहीं; करनी भी नहीं चाहिए। सरकार तो एक हृदय-हीन यन्त्र होती है, और अस्पृश्यता-निवारण पश्चात्ताप-पूर्ण हृदय का पवित्र धर्म-कार्य है। सरकार के बूते का वह नहीं है। परन्तु तो भी यदि सरकार योजना में सुझाये गये उपायों पर सच्चाई से और तुरन्त अमल करे, तो हरिजनों की आर्थिक प्रगति अवश्य होगी।

यह एक प्रसन्नता की बात है कि अपने देश की सरकार भी हरिजनों के उत्थान-कार्य को अपनी ज़िम्मेदारी समझती है, और उसने उसे अपनी योजना में स्थान दिया है। इसके लिए वह जनता द्वारा धन्यवाद की पात्र है। परन्तु खेद यह देखकर होता है कि इसके फलस्वरूप प्रायः हम सब लोग इस काम को सरकार की ज़िम्मेवारी समझने लग गये हैं, और अपने कर्त्तव्य-पालन में उतने सजग नहीं रहे जितना कि हमें होना चाहिए। सरकार तो आर्थिक उन्नति के साधनभर मुहैया कर सकती है। अपने ढंग से कुछ कल्याण-कार्य कर सकती है। वह जनता के हृदय को नहीं छू सकती। अपने और जनता के हृदय में से इस कलंक को धोने के लिए तो एकनिष्ठ और निःस्वार्थ हरिजन-सेवकों की ज़रूरत है। यह एक दुःखद-सत्य है कि आज ऐसे नैष्ठिक सेवकों की बहुत कमी है। सेवक साधन है, सेवा साध्य है। साधन के बिना साध्य की साधना नहीं हो सकती। इसलिए यह नम्र सुझाव है कि सरकारी योजना के सिवा हरिजन-सेवक-संघ भी अपनी एक ऐसी योजना बनाये जिसका प्रमुख ध्येय सेवक तैयार करना हो।

धर्मवीर शास्त्री

भारत में हरिजनों की समस्या

प्रस्तावना— हरिजनों के प्रश्न को सन् १९२० में अधिक महत्त्व प्राप्त हुआ। तबसे आज ३२ साल बीत गये। हरिजन-सेवक-संघ की स्थापना सन् १९३२ में हुई थी, उसे भी २० साल हो गये हैं। इस काल-खंड में अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटती रहीं।

इस लेख में, हरिजन-समस्या का स्वरूप और इतिहास क्या है, अस्पृश्यता-निवारण का आंदोलन कैसे शुरू हुआ और बढ़ा, अभी हम कहाँतक पहुँचे हैं, बाकी रास्ता कितना तय करने का है, और हमारा कर्तव्य क्या है, इसपर संक्षेप में विचार करलेना उचित होगा।

१. अस्पृश्यता की जड़ में मूलभूत कल्पना क्या है?

भारत में हरिजनों का मुख्य सवाल अस्पृश्यता-निवारण का है। अस्पृश्यता का संबंध अज्ञान और दरिद्रता से अवश्य है, किन्तु अज्ञान और दरिद्रता केवल हरिजनों में ही नहीं हैं। वे आदिवासी तथा इतर पिछड़े हुए वर्गों में भी हैं। किन्तु हरिजनों के प्रति जो छुआछूत की भावना पाई जाती है, वह आदिवासी और अन्य पिछड़े हुए वर्गों के प्रति नहीं है। इसलिए छुआछूत की भावना असल में क्या है, यह देखना चाहिए। हरिजन जाति का मनुष्य जन्मतः नीच है, उसे हमेशा दूर रखना चाहिए, नीचे दर्जे के अनुसार उसको काम देना चाहिए, उसे वरिष्ठ वर्णों की बराबरी कभी नहीं करनी चाहिए, उच्चजाति के लिए पकाया हुआ अन्न तथा जल उसे छूना नहीं चाहिए, वह मंदिर में आयेगा तो वहाँ का पावित्र्य नष्ट हो जायेगा, इस प्रकार की मनोवृत्ति छुआछूत की भावना की जड़ में निहित है। इसका यही अर्थ होता है, कि हिन्दूसमाज में जो भिन्न-भिन्न जातियाँ हैं वे स्वभावतः श्रेष्ठ और कनिष्ठ हैं, वे ऐसी ही रहेंगी और रहनी चाहिएँ। सब एकमेक करने से उच्च वर्णवालों की सारी संस्कृति नष्ट हो जायेगी।

छुआछूत की भावना का स्वरूप इस प्रकार का होने

के कारण, हरिजनों के बरताव पर अनेक निर्बन्ध लगा दिये गये हैं, जैसे, (१) अछूत माने हुए व्यक्ति को उच्चवर्णों के लोगों का स्पर्श नहीं करना, उनपर अपनी छाया भी नहीं डालनी ; (२) उच्चवर्णों के जल अथवा जलाशय को नहीं छूना, पानी की अन्य सुविधा न हो तो अपने लिए पानी दूसरों से माँगकर लेना ; (३) उच्चवर्णियों के खाद्य पदार्थों को, खासकर पक्वान्न को नहीं छूना ; (४) परंपरा से जो धंधे अथवा उद्योग उसके लिए नियत हैं, चाहे वे कितने भी गंदे हों, उसे करने ही चाहिएँ, और उन्हींसे अपनी जीविका चलानी चाहिए। यदि वह उच्चवर्णियों से स्पर्धा करेगा, तो दंड का पात्र होगा : (५) उसकी बस्ती भी इतर बस्तियों से अलग होनी चाहिए।

इस प्रकार के अनेक निर्बंध परंपरा से रूढ़ बन गये हैं। हरिजनों में भी अनेक जातियाँ तथा उपजातियाँ हैं, और उनमें आपस में छुआछूत की भावना भी है। जन्मजात उच्च-नीचता की भावना से हिन्दू-समाज के ऊपर के स्तर जिस प्रकार ग्रस्त हैं, उसी प्रकार नीचे के स्तर भी ग्रस्त हैं।

२. जागतिक समस्या का एक अंश

जन्म पर आधारित उच्च-नीचता की भावना केवल भारत में ही नहीं है, संसार के अन्य देशों में भी उसका न्यूनाधिक प्रभाव दिखाई देता है। गौरवर्णीय और कृष्णवर्णीय लोगों के बीच हमेशा से संघर्ष होता आया है। आर्य-अनार्य का पारस्परिक संघर्ष भी इसी प्रकार का मालूम होता है।

आफ्रिका खण्ड के मूल निवासी अत्यन्त ज्ञानहीन, पिछड़े हुए और कृष्णवर्णीय थे। यूरोप के भिन्न-भिन्न राष्ट्रों से गौरवर्णीय लोग गत दो-तीन शताब्दियों में वहाँ जाकर बसे। तद्देशीय कृष्णवर्णीय लोगों को जीतकर ज़मीन पर उन्होंने कब्ज़ा किया, और अपना राज्य-शासन जमाया। अमेरिका खण्ड का अन्वेषण उससे भी पहले हो चुका था। वहाँ जंगल काटने, ज़मीन साफ़ करने और खेती करने के लिए मज़दूरों की ज़रूरत थी। इसलिए आफ्रिका के कृष्णवर्णीय लोगों को पकड़-पकड़कर और जहाज़ों में लादकर अमेरिका में ज़बरदस्ती भेजा गया, और वहाँ बतौर गुलामों के उन्हें खरीदकर अमेरिकन मालिकों ने उनसे वर्षानुवर्ष काम लिया। अमेरिका में जो नीग्रो रहते हैं, वे इसी तरह आफ्रिका से ज़बरन लाये हुए लोग हैं। उनकी गुलामी को नष्ट हुए लगभग सौ साल हो गये हैं, तो भी उनको क़ानून की दृष्टि से पूर्णतया समान नागरिक हक़ अभीतक नहीं मिले हैं। नीग्रो या 'निगर' लोग जाति से ही नीच माने जाते हैं। नीग्रो नौकर गौरांग मालिक के घर पीछे के दरवाज़े से प्रवेश पाता है। गोरे लोगों के सभी होटलों में, शिक्षण-संस्थाओं में तथा चर्चों में नीग्रो के लिए अभीतक प्रवेश निषिद्ध है।

आफ्रिका में काले लोगों की हालत इससे भी अधिक खराब है। दक्षिण आफ्रिका, पूर्व आफ्रिका, उत्तर आफ्रिका, सर्वत्र गोरों और कालों के बीच में घोर संघर्ष चल रहा है। सभी जगह खेती के लिए अच्छी-अच्छी ज़मीन को और आरोग्य की दृष्टि से जहाँ अच्छा जलवायु है उस सारे प्रदेश को गोरे लोगों ने अपने कब्ज़े में कर लिया है, और काले लोगों के लिए नामाफ़िक तथा खराब जलवायु की ज़मीन रखी है। वहाँ चर्च, होटल, रेलगाड़ी का डब्बा इत्यादि काले लोगों के लिए सभी अलग हैं। काले लोगों को अलग बस्ती में रहना पड़ता है। यह सारी भेदभाव-पूर्ण व्यवस्था क़ानून से पक्की की जा रही है। इस भेदभाव-पूर्ण व्यवस्था के मूल में जन्मजात उच्च-नीचता की ही भावना है, इसमें कोई शक नहीं।

आद्य स्मृतिकार मनु के समय में ऐसे भेदभावमय क़ानून बनाये और निर्बन्ध लगाये जाते थे। किन्तु वह पुराने ज़माने की बात है। उस समय मानववंश-शास्त्र का आधुनिक शास्त्रीय दृष्टि से विकास नहीं हुआ था। भिन्न-भिन्न वर्णों और जाति के लोग ईश्वरने ही उच्च-नीच बनाये हैं, ऐसी मान्यता थी। अभी तो संसार की सर्वमानव-जाति प्राणिशास्त्र की दृष्टि से एक ही है, और अब यह सिद्ध हो चुका है कि उसमें जो रंग-भेद और आकार-भेद मालूम होते हैं, वे भिन्न-भिन्न हवा, पानी और अन्न का लाखों वर्षोंतक जो असर होता आया उसके परिणाम हैं। आज जागतिक

लोकमत भी ऐसा बनता जा रहा है, और आफ्रिका में गोरे सत्ताधारी लोग काले लोगों पर जो अत्याचार कर रहे हैं और उनको दबा रहे हैं; उस बरताव का जागतिक लोकमत ने बार-बार तीव्र विरोध किया है। तो भी द० आफ्रिका की मलान-सरकार निर्दयतापूर्वक अपने दुराग्रह को पकड़े हुए है।

ऑस्ट्रेलिया खेण्ड की 'व्हाईट ऑस्ट्रेलिया पॉलिसी,' याने ऑस्ट्रेलिया में गोरे ही रहें, ऐसी नीति मशहूर है।

इससे यह प्रतीत होता है, कि जन्मजात उच्च-नीचता की भावना पर आधारित वर्णाभिमान और जात्यभिमान केवल भारत में ही नहीं, संसार के अन्य भागों में भी और तीव्रतर रूप में आज भी मौजूद है। वर्णाभिमान और जात्यभिमान एक जागतिक समस्या है, और भारत में प्रचलित अस्पृश्यता को उसीका एक अंश मानना चाहिए।

३. भारतीय समस्या की विशेषता

भारत में जो वर्ण-भेद और जाति-भेद है, उसको एक विशेष स्थान प्राप्त हुआ है, इसलिए अब हम उसीपर विचार करें।

संसार के अन्य देशों में वर्ण-भेद और कुछ अंश में जाति-भेद भी मौजूद है। पर उसे उन देशों के धर्मों में स्थान नहीं मिला है। किन्तु भारत में वर्ण-भेद को और जाति-भेद को हिंदू-धर्म का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण अंग माना गया है। इस तरह का भेद क्यों हुआ?

हिन्दूधर्म और अन्य धर्मों के स्वरूप में एक खास भेद है। ईसाई, इस्लाम, बौद्ध इत्यादि धर्म अमुक ऋषि अथवा पैगम्बर और उसके उपदेश को ही प्रमाण मानते हैं। हिंदू-धर्म का आरंभ और विकास इस तरह से नहीं हुआ है। हिन्दूधर्म में "श्रुतिर्विभिन्नाः स्मृतयश्च भिन्नाः नैको मुनिर्यस्य वचः प्रमाणम्" ऐसी स्थिति है। इस वजह से हिंदू-धर्म में जितना विचार-स्वातंत्र्य है, उतना अन्य धर्मों में नहीं है। ईसाई धर्म के प्रवर्त्तक यीशु खीस्त ने अपना उपदेश विशिष्ट देश, वर्ण अथवा जाति के लिए नहीं, किंतु सारे मानवसमाज के लिए किया था। जो आदमी खीस्त में और बायबल में विश्वास करता व मानता है, वह खिस्ती बन जाता है। वैसे ही, जो आदमी मुहम्मद पैगम्बर पर ईमान लाता है, और कुरान पर विश्वास रखता है, वह मुसलमान बन जाता है। किन्तु हिंदूधर्म का स्वरूप ऐसा नहीं है। हिन्दूधर्म तो विशिष्ट वर्ण और वर्णान्तर्गत जातियों से बने हुए समाज के ही लिए कहा गया है। वर्ण-जाति-बद्ध हिन्दू-समाज का जो धर्म, वही हिन्दूधर्म। ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म का प्रसार जिस तरह हो सकता है, और हुआ है, उस तरह हिंदूधर्म का प्रसार हो ही नहीं सकता।

यह बात सच है, कि बौद्ध-धर्म का संदेश पूरे मानव-समाज के लिए था; भारत में यदि उसका प्रसार और स्थायित्व हो जाता तो वर्ण-जाति-व्यवस्था को भारत में भी गौण स्थान मिल जाता। किन्तु वर्ण-जाति-व्यवस्था पर आधारित हिंदू-धर्म ने बौद्ध धर्म को देश के बाहर निकाल दिया, और वर्ण-जाति-व्यवस्था को और भी पक्का कर दिया।

हिन्दू-धर्म में अत्यन्त श्रेष्ठ नीति-धर्म है, सर्वोच्च तत्त्व-ज्ञान भी है, किंतु हरेक सांप्रदायिक धर्म में नीति-धर्म को गौण स्थान प्राप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए, ईसाई अथवा इस्लाम धर्म में जो खास धार्मिक आदेश हैं, उनपर विश्वास रखना सर्वाधिक महत्त्व की बात है। वैसी श्रद्धा रखनेवाला पुरुष धार्मिक समझा जाता है, चाहे नीति-धर्म का ठीक पालन वह करे या न करे। वर्ण-धर्म और जाति-धर्म हिन्दुओं के खास श्रद्धा के विषय बन गये हैं। इस-लिए वर्ण-धर्म का और जाति-धर्म का ठीक पालन करने-वाला पुरुष ही हिन्दू-समाज में आज धार्मिक समझा जाता है।

हिन्दुओं की जो वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था है, वह जन्मना उच्च-नीचता पर आधारित है, यह अनिवार्य सत्य है। इस सत्य को समझने के लिए केवल मनुस्मृति का परिशीलन काफी है। वर्ण व्यवस्था में श्रम-विभाग तो है, किन्तु यह श्रम-विभाग वर्णों के ऊँचे-नीचे स्थान को ध्यान में रखकर ही किया गया है। भिन्न-भिन्न वर्ण और जातियों के व्यवसाय, और भिन्न-भिन्न धार्मिक विधि तथा रिवाज, और इनका प्रचलित रूप में पालन व्यावहारिक हिन्दूधर्म है। इस व्यवस्था को कोई भी धक्का लगाये, अथवा फेरफार

करना चाहे, तो उसका वह कृत्य धर्म-विरुद्ध माना जायेगा। हरेक वर्ण और जाति को अपने-अपने काम में मग्न रहकर संतोष मानना चाहिए। जिसको जो स्थान मिला है वही उसके लिए अच्छा है, और वही उसके लिए धर्म माना गया है।

वर्ण-व्यवस्था में शूद्र-वर्ण के लोग सबसे नीचे आते हैं, और उनसे भी नीचे अतिशूद्रों अथवा अछूतों का स्थान है। जन्म से कुछ ऐसा बन गया कि अछूतों को उसी स्थान पर रहना चाहिए, उसमें ही धर्म का पालन हो जाता है; यदि वे लोग अपना स्थान छोड़कर दूसरों का काम करें, दूसरों से संपर्क रखें, तो धर्म को बाधा पहुँचती है, इसीलिए अस्पृश्यता का पालन सनातन धर्म का एक महत्त्व-पूर्ण अंग माना गया।

हमने देखा है कि, ईसाई धर्मानुयायी गोरे लोग वर्णाभिमान से प्रेरित होकर दूसरों को दबाते हैं, दूसरों पर अत्याचार करते हैं, और अपना वर्चस्व क़ायम रखते हैं। तोभी वे ऐसा दावा नहीं करते कि यह वर्ण भेद और वर्ण-वर्चस्व उनके धर्म का एक अंग है; क्योंकि ईसाई-धर्म में वर्ण और जाति-भेद को स्थान नहीं है।

अस्पृश्यता-पालन भारत में धर्म का एक अंग बनजाने के कारण, अस्पृश्यता-निवारण का धर्म के नाम पर विरोध होता आया है। जो धर्मशास्त्र के पंडित हैं, वे अस्पृश्यता-पालन के लिए शास्त्रीय आधार बताते हैं। देहातों के अनपढ़ लोगों के पास शास्त्रीय आधार नहीं है, किन्तु उनकी भी यह श्रद्धा है, कि परंपरा-प्राप्त जो जाति-मर्यादाएँ हैं, उनका पालन ही धर्म है। अस्पृश्यता-निवारण से जाति-मर्यादा का उल्लंघन होता है, और धर्म बिगड़ जाता है, इसलिए अस्पृश्यता-निवारण को रोकना चाहिए।

४. वर्ण-जाति-व्यवस्था को धर्म में स्थान मिलने का परिणाम

हिंदूधर्म में वर्ण-जाति-व्यवस्था को स्थान मिलने से बहुत सारे दुष्परिणाम आये। ऐसा मान लिया गया कि यह विषम व्यवस्था ईश्वरकृत है, शास्त्र विहित है, और स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त, हिंदू-समाज में ऐसी भी दृढ़ मान्यता है कि मनुष्य जो भला-बुरा कर्म इस जीवन में करता है, उसका भला बुरा परिणाम उसको आगामी जन्म में भोगना पड़ता है। वह अपना संचित कर्म साथ लेकर दूसरा जन्म लेता है। जिसने पुण्य कर्म किया उसको उच्च कुल में जन्म मिलता है और जिसने पाप-कर्म किया हो उसको नीच-जाति में जन्म लेना पड़ता है। नीच जाति के मनुष्य को जो दुःख और कष्ट उठाने पड़ते हैं, वे उसके पूर्व संचित कर्मों का परिणाम हैं। अपने-अपने कर्म का फल भोगना न्याय की ही बात है। किसीको आगामी जन्म में सुख भोगना हो, तो उसे अपने वर्ण-जाति के लिए विहित कर्मों को संतोषपूर्वक और उत्साहपूर्वक करना चाहिए। शूद्रों के लिए तीनों वर्णों की सेवा विहित है और अति-शूद्रों को तो शूद्रों की भी सेवा करनी है। जबतक किसी समाज के धुरीण ऐसी श्रद्धा रखते हैं तबतक दलित पीड़ित लोगों के उद्धार की बात कोई कर ही नहीं सकता, क्योंकि उसमें सामाजिक अन्याय मालूम ही नहीं होता। हरिजनों, वनवासियों और अन्य पिछड़ी हुई जातियों की शैक्षणिक, सामाजिक व आर्थिक उन्नति करना फर्ज है, ऐसा न ब्राह्मण मानते थे, न राज्य-शासक क्षत्रिय। इसलिए अंग्रेजों के आने से पहले इन पद-दलित लोगों का कल्याण अथवा सेवा करने का प्रयत्न भी देखने में नहीं आता।

५. तत्त्वज्ञों और साधु-संतों का कार्य

हिंदू-धर्म में अनेक श्रेष्ठ तत्वज्ञान पैदा हुए हैं। सबसे श्रेष्ठ तत्वज्ञान अद्वैत सिद्धांत का है। इसमें जीव, शिव और जगत् सब स्वरूपतः एकरूप हैं, उनमें कोई द्वैत और भेद नहीं है। इससे अधिक ऊँचा तत्त्वज्ञान कोई हो ही नहीं सकता। किंतु इस एकता के तत्वज्ञान को धार्मिक और सामाजिक व्यवहार में लाने का प्रयत्न किसी भी तत्त्वज्ञानी ने नहीं किया। अद्वैत सिद्धान्त के मुख्य प्रतिपादक आद्य श्रीमच्छंकराचार्य वैदिक धर्म के अभिमानी थे, और वे मानते थे कि ब्राह्मण-जाति की रक्षा करने से ही वैदिक धर्म की रक्षा होगी। (ब्राह्मणत्वस्यहि रक्षणेन रक्षितः स्यात् वैदिको धर्मः)। ऐसी आख्यायिका है कि एक बार वे कह

जा रहे थे। सामने से चांडाल-जाति का एक व्यक्ति आया: उसे रास्ता छोड़ने को स्वामीजी ने कहा। वह चांडाल सामान्य नहीं था। उसने स्वामीजी से पूछा, "चांडाल कौन और ब्राह्मण कौन है?" यह आख्यायिका सत्य हो, या न हो, पर इससे स्पष्ट होता है कि आद्य शंकराचार्य को भी धार्मिक तथा सामाजिक व्यवहार में द्वैत या भेद मान्य था।

भारत के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में अनेक श्रेष्ठ साधु-संत हो गये। वे भक्ति-मार्गी थे। भक्ति-मार्ग में अथवा भागवत् सम्प्रदाय में, देव और भक्त दोनों का अस्तित्व भिन्न-भिन्न माना जाता है। तोभी देव और भक्त का संबंध घनिष्ठ प्रेममय रहता है। देव परम दयाशील, कृपाशील और सर्वसमर्थ होते हुए भी, एकनिष्ठ भक्त के अधीन होता है। देव यह नहीं देखता कि मेरा भक्त उच्चजाति का है, या नीच जाति का। उसके मन्दिर में सभी भक्त समान होते हैं। उसके सामने न कोई ग़रीब न श्रीमान्, न कोई छोटा न बड़ा। भक्त कितना भी पातकी हो अनन्य भक्ति से उसका उद्धार हो जाता है। इसलिए साधु-संतों ने प्रायः वर्ण और जाति को महत्त्व नहीं दिया, वे तो वर्णाभिमान और जात्यभिमान से घृणा ही करते थे।

तो भी हमें सोचना है कि समाज में जो विषमतामूलक वर्ण और जाति व्यवस्था थी, उसे तोड़ने की कोशिश उन्होंने क्यों नहीं की, और वे क्यों ऐसा न कर सके। महाराष्ट्र में पंढरपुर 'विशेष' भक्ति-मार्गी वारकरी सम्प्रदाय का परमश्रेष्ठ दैवत है। वहाँ चन्द्रभागा नदी के किनारे पर भिन्न-भिन्न जातियों के लाखों की संख्या में भक्तगण यात्रा के समय इकट्ठे होते हैं, प्रेमभाव से भजन करते हैं, जाति को भूल जाते हैं, और एक-दूसरे का सम्मान करते हैं, तो भी यह ऐक्य-भाव बाहर ही रहता है। सन् १९४७ में साने गुरुजी के आमरण अनशन से और कानून से वह मंदिर हरिजनों के लिए खुला, तबतक श्री विठोबा के मंदिर में हरिजनों को प्रवेश नहीं था। हरिजनों के पक्ष में किसी भी भक्त ने या संत ने कोशिश नहीं की! सुप्रसिद्ध हरिजन संत चोखामेला विशेष मन्दिर में कभी नहीं जा सका, वह अन्ततक बाहर ही रहा। अभीतक उसकी छत्री रास्ते में बाहर से ही दिखाई देती है।

इसका निष्कर्ष यह है, कि पूर्व-ब्रिटिश काल में हरिजनों को आगे बढ़ने के लिए अवकाश ही नहीं था।

६. ब्रिटिश-शासन-काल में परिस्थिति बदली

ब्रिटिशों के शासन में परिस्थिति बदलने लगी। ब्रिटिश लोग हिन्दू और मुसलमान दोनों से भी आगे बढ़े हुए थे। वे अपने साथ यूरोप से नई विद्या, कला और शास्त्र भारत में लाये। यूरोप में मार्टिन लूथर ने धार्मिक क्रान्ति की नींव डाली थी। नये-नये यंत्र आविष्कृत होने से औद्योगिक क्रान्ति भी शुरू हो चुकी थी। फ्रेंच राज्य-क्रान्ति से नई-नई विचारधाराएँ प्रवाहित हुई थीं। इंग्लैंड में प्रभावशाली उदार मतवादी लेखकों ने जन्म लिया था, और प्रातिनिधिक राज्य-पद्धति चल रही थी; इसका नतीजा यह हुआ, कि भारत में नई हवा बहने लगी।

ब्रिटिश शासक वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था के पक्षपाती नहीं थे। ब्राह्मण क्षत्रियों से लेकर शूद्र-अति-शूद्र सारे लोग पराधीन हो गये। वर्णाभिमान और जात्यभिमान की दीवार गिर पड़ी। कायदे-कानून सभी के लिए समान होने लगे। शिक्षण और सरकारी नौकरी के द्वार तत्त्वतः सभी के लिए खुल गये। मुद्रणालयों की सुविधा होने से समाचार-पत्रों द्वारा विचार-प्रसार शुरू हुआ।

मुट्ठीभर अंग्रेजों ने यह विशाल देश कैसे जीत लिया, यहाँ के लोगों में क्या खामी है, क्या सुधार करना होगा, इसका बुद्धिमान लोग विचार करने लगे, और सामाजिक सुधार की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। राजकीय आंदोलन के साथ-साथ सामाजिक आन्दोलन भी शुरू हुआ। राष्ट्रीय कांग्रेस सन् १८८५ में शुरू हुई, और सन् १८८७ में राष्ट्रीय सामाजिक परिषद् भी शुरू हुई।

अस्पृश्यता-निवारण का बीज महाराष्ट्र में महात्मा ज्योतिराव फुले ने सन् १८५० में बोया। वे बड़े क्रांतिकारक समाज-सुधारक थे। उन्होंने अपना पानी का निजी हौज अछूतों के लिए खोल दिया, और उनके लिए पाठशालाएँ खोलीं। इससे उनका सामाजिक बहिष्कार भी किया गया। तो भी उन्होंने अपना काम नहीं छोड़ा। ब्राह्मणों के वर्णाभिमान पर उन्होंने प्रखर प्रहार किये और 'सत्य-

शोधक-समाज' की स्थापना की। उनके बाद कर्मवीर अण्णा साहेब शिंदे ने डिप्रेस्ड क्लास मिशन सोसायटी स्थापित की, और अनेक जगहों पर पाठशाला, छात्रालय आदि संस्थायें खोलकर अस्पृश्य माने हुए लोगों की सेवा की।

राष्ट्रीय कांग्रेस केवल राजनैतिक संस्था थी। वहाँ धार्मिक तथा सामाजिक प्रश्नों पर चर्चा नहीं थी। अस्पृश्यता-निवारण का प्रश्न केवल धार्मिक समझा जाता था, इसलिए राष्ट्रय कांग्रेस के मंच पर उसके लिए स्थान नहीं था। किंतु जब भारत मंत्री मि० मॉंटेग्यूने भारत को जबाबदार राज्य पद्धति क्रमशः देने की घोषणा की, तब भिन्न-भिन्न समाजों में हलचल मची, और राष्ट्रय कांग्रेस को दलितों के सवालों पर विचार करना पड़ा।

७. गांधीजी का कार्य

अस्पृश्य माने हुए लोगों के जीवन-इतिहास में गांधीजी ने एक नया युग शुरू किया, इसमें कोई संदेह नहीं। प्रथम महायुद्ध के आरम्भ-काल में गांधीजी द० आफ्रिका छोड़कर भारत लौट आये, और परिस्थिति का निरीक्षण करने लगे। उनको शायद इसकी कल्पना भी नहीं होगी, कि कांग्रेस की बागडोर उनके हाथ में आयेगी। रौलट-एक्ट-आंदोलन और पंजाब के हत्याकाण्ड ने गांधीजी को राजनैतिक क्षेत्र में खींचा। उन्होंने द० आफ्रिका में सत्याग्रह के जो प्रयोग किये थे, और अनुभव लिये थे, वे सब उनके काम आये।

गांधीजी का यह निश्चय था कि कोई भी आन्दोलन हो उसका कार्यक्रम ऐसा हो जिससे आत्मशुद्धि, स्वावलंबन और आंतरिक ऐक्य प्राप्त हो सके। उनके नेतृत्व में जब कांग्रेस ने असहयोग का आंदोलन शुरू किया, तब गांधीजी ने साम्प्रदायिक ऐक्य और अस्पृश्यता-निवारण को कार्यक्रम में महत्त्व का स्थान दिया। अस्पृश्यता-निवारण को गांधीजी मूलतः एक धार्मिक विषय मानते थे। तोभी उनका कहना यह था, "कि अंग्रेजों से तो स्वराज्य माँगना, और दलित वर्ग को दबाके रखना, ये दो बातें साथ-साथ नहीं चल सकतीं। जिस स्वराज्य में अस्पृश्यता क़ायम रहेगी, वह स्वराज्य हो ही नहीं सकता और ऐसा स्वराज्य मुझे चाहिए भी नहीं।" इस तरह अस्पृश्यता-निवारण के प्रश्न को राष्ट्रीय महत्त्व प्राप्त हुआ। गांधीजी अपने भाषणों और 'यंग इंडिया' के लेखों में अस्पृश्यता-निवारण के महत्त्व पर जनता का ध्यान हमेशा खींचते रहे।

सन् १९३२ में एक बहुत बड़ी घटना घटी, जिसने इस आंदोलन में जान डालदी। द्वितीय गोलमेज परिषद् में कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में गांधीजी उपस्थित थे। वहाँ अल्प-संख्यकों का सवाल खड़ा हुआ। अल्प-संख्यकों में हरिजनों का सवाल महत्त्व का था, किन्तु उसके बारे में गांधीजी और डॉ० अम्बेडकर के बीच में समझौता न हो सका। अल्प-संख्यकों का सारा प्रश्न ब्रिटेन के महामंत्री मि० मेक्डोनल्ड के सुपुर्द कर दिया गया। उन्होंने अपने निर्णय द्वारा हरिजनों को पृथक् चुनाव और अपने प्रतिनिधियों को हिंदुओं से पृथक् भेजने का अधिकार दिया। उस निर्णय को रद्द कराने के लिए पूर्व वचन के अनुसार गांधीजी ने आमरण अनशन शुरू किया। इससे सारे देशमें अस्पृश्यता-निवारण का आंदोलन ज़ोर से उठा। सारे भारत के हिंदू नेता बम्बई और पूना में इकट्ठे हुए, और अंत में गांधीजी और डॉ० अम्बेडकर के बीच में समझौता हो गया, जिसे पूना-पैक्ट कहा गया।

वह समझौता था चुनाव-हलका और प्रतिनिधियों के चुनाव के बारे में, किन्तु अलिखित शर्त तो यह थी कि हिंदू-समाज अस्पृश्यता को जल्द-से-जल्द खत्म कर दे। परिणामतः बम्बई में नेताओं की सभा में अ० भा० अस्पृश्यता-निवारक संघ (हरिजन-सेवक-संघ) स्थापित किया गया, और उसकी शाखा-उपशाखाएँ देशभर में काम करने लगीं। जेल से बाहर आने के बाद १९३४ में गांधीजी ने पू० ठक्कर बापा के साथ एक सालतक अस्पृश्यता-निवारण के लिए देश-व्यापी दौरा किया, और हरिजन-कार्य के लिए निधि इकट्ठी की। अन्ततक गांधीजी इस कामपर अधिकाधिक ध्यान देते रहे।

भारत में स्वराज्य के आंदोलन के साथ जो अस्पृश्यता-निवारण का आंदोलन जोड़ा गया, इसका खास महत्त्व है,

यह भूलना नहीं चाहिए। ऐसा न होता, तो सम्भव है कि स्वराज्य समय पर मिल जाता, किंतु अस्पृश्यता-निवारण का सवाल एक तरफ़ पड़ जाता। इतिहास में अन्यत्र इस प्रकार की घटनाएँ घटी हैं।

इतिहास में से मैं ऐसे दो उदाहरण देता हूँ। अमेरिका को इंग्लैंड के शासन से स्वतंत्र हुए १७५ वर्ष बीत गये, किंतु नीग्रों की हालत वहाँ आज भी वैसी ही है। इतने साल बीत गये तो भी नीग्रों को संपूर्ण नागरिक अधिकार क़ानून से अभीतक नहीं मिले।

दक्षिण आफ्रिका भी इंग्लैंड का एक उपनिवेश था। उसमें अधिकतर लोग बोअर (डच) थे। उन्होंने स्वतंत्र होने के लिए इंग्लैंड से युद्ध किया, पीछे समझौता हुआ और द० आफ्रिका युनियन को स्वायत्तता दी गई। युनियन में अधिकतर बस्ती तो आफ्रिकन काले लोगों की है। किंतु बोअर-युद्ध से उनके हक़ों का सवाल जुड़ा नहीं था। इस वजह से द० आफ्रिका तो स्वतंत्र हो गया, किंतु आफ्रिकन लोगों की हालत पहले-जैसी ही बनी रही। इतना ही नहीं किंतु इंग्लैंड का किसी प्रकार का अंकुश द० आफ्रिका पर न रहने के कारण, द० आफ्रिका की मलान-सरकार आफ्रिका के मूलनिवासियों को मन-माने ढंग से दबा रही है, और देश के मूल निवासी बहुसंख्या में होते हुए भी गुलाम जैसे ही हैं। उनके जन्म-सिद्ध अधिकार उन्हें कब मिलेंगे, कोई नहीं जानता।

इससे मालूम होगा कि स्वराज्य के सवाल के साथ अस्पृश्यता-निवारण का प्रश्न जोड़ने में गांधीजी ने कितनी दूर-दृष्टिसे काम लिया। आत्म-शुद्धि का मार्ग ही अन्त में सफल होता है।

८. म० गांधी और डॉ० अम्बेडकर

डॉ० अम्बेडकर जैसा एक अध्ययनशील और विद्वान् पुरुष अछूत माने हुए पद-दलित समाज में से उत्पन्न हुआ, यह गर्व की बात है। दलितों में कैसी सुप्त शक्ति पड़ी हुई है, उसका सबूत इससे मिलता है। अस्पृश्यता-निवारण के कार्य में डॉ० अम्बेडकर साहब का सहयोग मिल जाता तो वह बड़े सौभाग्य की बात होती। किंतु गोलमेज परिषद् के समय से वे गांधीजी और कांग्रेस के विरोधी बन गये, और उनका विरोध बना ही रहा। १६३२ में उनके साथ समझौता हुआ था, किंतु हरिजन-सेवक-संघ की कार्य-पद्धति मुझे पसंद नहीं है, ऐसा कहकर वे अलग हो गये। पीछे धर्मांतर की घोषणा, द्वितीय महायुद्ध के समय कांग्रेस द्वारा पद-त्याग करने पर श्री जिन्ना के मुक्ति-दिवस मनाने में उनका शामिल होना, शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की स्थापना करके स्वतंत्र-मतदार-संघ, स्वतंत्र उपनिवेश, मंत्रि-मण्डलों में रक्षित जगहें रखना, इत्यादि आत्यंतिक माँगों पर आग्रह, ये सब घटनाएँ न घटी होतीं तो ठीक होता।

किंतु स्वातंत्र्य-प्राप्ति के बाद संविधान बनाने में उन्होंने प्रमुख भाग लिया, और भारत-सरकार के विधिमंत्री के रूप में उनके ही हाथों से अस्पृश्यता रद्द करनेवाली धारा पास की गई, यह बड़े सौभाग्य की बात है। ऐसा सुयोग क्वचित् ही आता है। हिंदू-कोडबिल भी उनके हाथों से पास हो जाता, तो और भी बड़े सौभाग्य की बात होती। किंतु वैसा मौक़ा नहीं आया।

आज संविधान की दृष्टि से अस्पृश्यता समाप्त हो गई है। उसे समूल नष्ट करने के लिए केन्द्र द्वारा शीघ्र एक क़ानून बननेवाला है। सार्वत्रिक प्रौढ़ मताधिकार मिला है तथा जाति-धर्म-पंथ-निरपेक्षता भी संविधान में स्वीकार की गई है। भारत सरकार और राज्य सरकारें हरिजनों की शैक्षणिक तथा औद्योगिक उन्नति करने के लिए अधिकाधिक रुपया खर्च कर रही हैं। ऐसी स्थिति में शेड्यूल्ड-कास्ट-फेडरेशन का काम राजनैतिक क्षेत्र में नहीं रहा है। बल्कि हरिजनों की सर्वांगीण उन्नति शीघ्रता से सिद्ध करने के काम में सहकारी बुद्धि से हाथ बटाना ही उसका आज का कर्त्तव्य है, ऐसी मेरी राय है।

९. अस्पृश्यता-निवारण कार्य कहाँतक हुआ और कितना रहा ?

अब विशेष महत्व के विचार पर हम आते हैं।

अस्पृश्यता-निवारण कार्य के दो भाग मानने चाहिएँ, एक वैधानिक और दूसरा व्यवहारिक।

वैधानिक कार्य क़रीब-क़रीब पूरा हो गया है। क्योंकि

संविधान ने अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया है। इसका अर्थ यह है कि, भारत का मूलभूत विधान किसीको अस्पृश्य के रूप में नहीं देखता। यदि किसी क़ानून, या दस्तावेज़ में अस्पृश्यता का उल्लेख होगा, अथवा मान्यता दी होगी, तो उसे कार्यान्वित नहीं किया जा सकेगा। अस्पृश्यता का किसी भी रूप में आचरण क़ानून से दंडनीय अपराध होगा, ऐसा विधान ने ठहराया है। इसलिए अस्पृश्यता-पालन के कारण किसीको दंड देना हो, तो उसके लिए खास क़ानून बनाना आवश्यक है। 'अ' वर्ग के राज्यों ने बहुधा ऐसे क़ानून बनाये हैं, किंतु उनमें एक-सूत्रता नहीं है, बहुसंख्यक 'ब' वर्ग तथा 'क' वर्ग के राज्यों में क़ानून बनाने की आवश्यकता है। अभी इस विषय में नया क़ानून बनाने तथा विद्यमान क़ानून को बदलने का अधिकार केवल लोक-संसद् को है, राज्य-विधान सभाओं को नहीं। इसलिए अभी संसद् को ही सारे भारत पर लागू होनेवाला अस्पृश्यता-निवारण के लिए क़ानून बनाना होगा। उसका मसविदा तैयार हो रहा है, और संसद् के आगामी अधिवेशन में वह पेश किया जायेगा, ऐसा भारत सरकार की ओर से घोषित किया गया है। यह क़ानून बन जाने पर वैधानिक काम में त्रुटि नहीं रहेगी। भारत के सारे नागरिकों को समान नागरिक हक़ संविधान से मिले ही हैं। भारत का महामंत्री तथा राष्ट्रपति कोई हरिजन या आदिवासी भी हो सकता है। हिंदुओं के व्यक्तिगत क़ानून के सिवा सब क़ानून सब लोगों पर समान रूप से लागू हैं। संचार-स्वातंत्र्य, व्यवसाय-स्वातंत्र्य, मिलकियत कमाने का स्वातंत्र्य सबको समान हैं।

वैधानिक कार्य भी कम महत्त्व का नहीं है। यह कार्य अमेरिका में नीग्रों के बारे में अभीतक पूरा नहीं हुआ है। और आफ्रिका में तो सामान्य नागरिक हक़ों के लिए भी सत्याग्रह चालू है। भारत में ऐसा कोई झगड़ा नहीं करना पड़ा, और स्वराज्य हासिल होते ही, लोकनियुक्त सरकार ने वैधानिक कार्य तुरन्त ही हाथ में ले लिया। इसका कारण यही है, कि अस्पृश्यता-निवारण के बिना स्वराज्य सिद्ध ही नहीं होता, यह आदेश गांधीजी ने हमें दिया था।

अब रही बात व्यवहार की, सामाजिक जीवन की। इसके बारे में अभीष्ट प्रगति नहीं हुई है, यह सत्य है। किन्तु कुछ भी नहीं हुआ है, ऐसा कहना अतिशयोक्ति है। क़ानून का असर व्यवहार पर भी बहुत पड़ा है। बड़े-बड़े मंदिर प्रायः हरिजनों के लिए खोल दिये गये हैं। स्कूल, सार्वजनिक वाहन, सरकारी दफ्तर, अदालतें, दवाखाने, इत्यादि स्थानों में रुकावट नहीं रही। इन बातों में अब कोई विशेषता भी नहीं रही। १९२० से समाज-सेवक मत-परिवर्तन का काम तो करते रहे हैं, किन्तु क़ानून की मदद से ही प्रगति को शीघ्र गति मिली है। सहभोज एक मामूली बात हो गई है; क़ानून का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है।

यह बात सत्य है, कि छोटे-छोटे गाँवों में प्रगति बहुत कम हुई है, और वहाँ पानी का सवाल सबसे कठिन सिद्ध हुआ है। इसका कारण स्पष्ट है--मंदिरों में, स्कूलों में अथवा सार्वजनिक वाहन, दवाखाना इत्यादि स्थलों में केवल स्पर्श का सवाल रहता है, खाने-पीने का नहीं। और स्पर्श का डर शीघ्रता से नष्ट हो रहा है। होटलों में जाना न जाना एक ऐच्छिक बात है। किन्तु पानी की ज़रूरत ऐच्छिक बात नहीं है। वह जीवनावश्यक वस्तु है। इसलिए छोटे गाँवों में सार्वजनिक कुओं के बारे में बहुसंख्यक लोगों का विरोध है, और वहाँ के हरिजन भी कुएँ से पानी लेने की हिम्मत नहीं करते। इसका कारण एक तो हरिजनों का आर्थिक परावलंबन है और दूसरा सामाजिक बहिष्कार या मार-पीट का डर। केवल क़ानून से यह काम होनेवाला नहीं है। क़ानून की मदद तो रहेगी, किन्तु कार्यकर्त्ताओं को धीरता से मत-परिवर्तन का काम करके छोटे गाँवों का बौद्धिक वातावरण बदलना है। हरिजनेतरों के मन में अभीतक जो सन्देह बने हैं, उन्हें दूर करना, तथा हरिजनों के मन में जो डर है उसे हटाना और स्वाभिमान जाग्रत करना यही मुख्य काम है। वैचारिक और मानसिक क्रांति ही सच्ची क्रांति है। छोटे गाँवों में भी थोड़ी-थोड़ी प्रगति हो रही है। निराशा का कारण नहीं, अधिकाधिक कार्य की माँग है।

१०. हरिजन-नेताओंका दृष्टिकोण, और उनकी ज़िम्मेदारी

अस्पृश्यता-निवारण के बारे में वैधानिक दृष्टि से जो काम हुआ है, तथा सामाजिक व्यवहार में भी जो कुछ

प्रगति हुई है, उसका आकलन संक्षेप में ऊपर किया गया है। मनुष्य का यह स्वभाव है, कि जो वस्तु प्राप्त हो जाती है, उसकी उसके लिए फिर ज्यादा कीमत नहीं रहती और जो अभी हासिल करनी है उसीपर वह ज़ोर देता है।

यह बात सच है कि हरिजनों की आर्थिक उन्नति का होना अत्यंत आवश्यक है और उस पर खास ध्यान देना ही चाहिए। किंतु हरिजनों के बारे में अभीतक कुछ हुआ ही नहीं, आर्थिक उन्नति होगी तभी कुछ होगा, यह कहना वास्तविकता को भुलाना है। आर्थिक समस्या और सामाजिक समस्या एक दूसरी से संबंध रखती हैं, तोभी ये समस्याएँ स्वतंत्र हैं। डा० अम्बेडकर साहब का ही एक उदाहरण हमारे सामने है। वे महाविद्वान् हैं, आर्थिक परिस्थिति से भी अच्छे हैं, तो भी क्या देहात का मामूली आदमी उनसे खाने-पीने का व्यवहार करेगा? उनको अपने घर आदरपूर्वक ले जायेगा?

क़रीब पचीस साल के पहले की बात है। डा-अम्बेडकर साहब खानदेश के चालिसगाँव स्टेशन पर आये थे, गाँव में जाने के लिए उन्हें ताँगे की ज़रूरत थी। स्टेशन पर स्वागत के लिए कुछ हरिजन भाई पहुँचे थे। उससे ताँगेवाले समझ गये कि डा० अम्बेडकर साहब एक हरिजन हैं। उन्होंने एक तांगा तो दे दिया, किन्तु स्वयं चलाने से इनकार कर दिया। फिर एक हरिजन भाई ताँगा हाँकने को बैठा, किन्तु वह अनजान होने के कारण ठीक नहीं चला सका, और डा० साहब तांगे से गिर पड़े।

परन्तु आज ऐसी घटना का होना असंभव है, तो भी सामाजिक समस्या की स्वतंत्र हस्ती है; उसे मिटाना है, यह हमें भूलना नहीं चाहिए। जो शिक्षित हरिजन नेता लोग शहरों में तथा बड़े गाँवों में रहते हैं उनको दिक्कतें भोगनी नहीं पड़तीं। किन्तु छोटे गाँवों में कैसी दिक्कतें हैं, कैसा अपमान सहन करना पड़ता है, इसका ख्याल उन्हें रखना चाहिए। समाजिक समस्या अब नहीं है, ऐसा मानना भूल होगी। और देहातों के ग़रीब, अनपढ़, असहाय हरिजनों के सामाजिक दुःख मिटाने के लिए उन्हें पूरा प्रयत्न करना चाहिए। दूसरी महत्त्व की बात यह है, कि आर्थिक प्रश्न अत्यंत व्यापक है, पर वह केवल हरिजनों तक ही मर्यादित नहीं है, हरिजनों के समान आदिवासी और अन्य पिछड़े हुए लोग भी दरिद्रता से पीड़ित हैं। आर्थिक समस्या देशव्यापी है। इतर देशों की अपेक्षा भारत ग़रीब है। इसके अनेक कारण हैं, जैसे— जन-संख्या की अमर्यादित वृद्धि, खेती की ज़मीन की कमी, खेती में कम पैदावार, भिन्न-भिन्न उद्योगों तथा लोगों में उद्योगशीलता का अभाव, और शरीर-श्रम का अनादर इत्यादि। समस्या व्यापक होने के कारण उसका हल निकालना कोई आसान बात नहीं है।

हरिजनों की आर्थिक हालत सुधारने के लिए प्रयत्न हो रहे हैं। सरकारी पड़ती जमीन पिछड़े हुए लोगों को देने की सरकार की नीति, भूदान-यज्ञ में प्राप्त जमीन का तीसरा हिस्सा हरिजनों को देने का विनोबाजी का संकल्प, शैक्षणिक प्रगति के लिए सरकारी छात्र-वृत्तियाँ तथा अन्य सहूलियतें, देश में उद्योग बढ़ाने के लिए सरकार के प्रयत्न, सरकारी नौकरियों में सुरक्षित स्थान, ऐसे बहुविध प्रयत्न हो रहे हैं। उनका अधिक से-अधिक फल प्राप्त होगा तो धीरे-धीरे आर्थिक परिस्थिति सुधरेगी। किंतु उसमें सोचने की अनेक बातें हैं। उनपर हरिजन नेता ध्यान देंगे तो अच्छा होगा।

बार-बार ऐसा अनुभव आता है, कि हरिजनों को या अन्य पिछड़े हुए लोगों को खेती के लिए ज़मीन दी गई, तो स्वयं जोतने के बजाय वे ज़मीन दूसरों को दे देते हैं, और फसल का कुछ हिस्सा या कुछ पैसा लेकर संतोष मान लेते हैं। हाँ, साधनों की कमी होती है, किंतु साधन दिये जाते हैं तो उनका भी दुरुपयोग किया जाता है, प्रायःऐसा अनुभव आया है। ज़मीन और साधन मिलने से ही अच्छी खेती नहीं होती, उसके लिए अनुभव, अवलोकन, शरीर-कष्ट, समयज्ञता, आदि अनेक बातों की ज़रूरत होती है। इसके बारे में हरिजन नेता बहुत कुछ कर सकते हैं। जिनको ज़मीन मिली है, व्यक्ति अथवा सहकारी संस्थाएँ किस तरह से काम कर रही हैं, उनकी अड़चनें क्या हैं, साधनों का ठीक उपयोग होता है या नहीं, ज्यादा-से-ज़्यादा फसल पैदा करते हैं या नहीं,

आपस में मिल-जुलकर काम करते हैं या नहीं, ऐसी अनेक बातों पर ध्यान देना चाहिए। यह विधायक कार्य है, और विधायक कार्य के बिना आर्थिक उन्नति होनेवाली नहीं।

और भी एक बात है। खेती की ज़मीन कम होने के कारण, सरकार कुछ ज़मीन देगी, और भूदान-यज्ञ से भी कुछ ज़मीन मिलेगी तोभी भूमिहीनों की माँग पूरी होनेवाली नहीं है। इसके लिए छोटे-बड़े तांत्रिक उद्योगों की शिक्षा हरिजनों को प्राप्त करनी चाहिए, कारीगर तथा तंत्रज्ञ बनना चाहिए। केवल मामूली हाईस्कूलों तथा कॉलेजों की शिक्षा पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। सफ़ेद पोशाक-वाला बनना आसान है, किन्तु जो हाथों से काम नहीं कर सकते, ऐसे सफ़ेद पोशाकवालों में ही सबसे अधिक बेकारी बढ़ रही है, और बढ़ेगी। इसलिए तरुण विद्यार्थियों का ठीक मार्गदर्शन करना चाहिए। फौज, शस्त्र-उद्योग, हवाई जहाज, इत्यादि जो अनेक व्यवसाय-क्षेत्र भारतीयों के लिए अब खुल गये हैं, उनका भी पूरा उपयोग करना चाहिए।

मेरा ऐसा कहना नहीं है, कि सारी ज़िम्मेदारी हरिजन नेताओं पर ही है, और सरकार, हरिजन-सेवक तथा सार्वजनिक कार्यकर्त्ता ज़िम्मेदारी से छूट गये हैं। उनका तो फर्ज है ही और उनको अधिक तेज़ी से और अधिक उत्साह से काम करना है। किन्तु अभी जो सामाजिक तथा आर्थिक समस्या का अधूरा काम पड़ा है, उसे पूरा करने में हरिजन-नेताओं का विधायक दृष्टि से पूरा सहयोग मिलेगा, तभी शीघ्र प्रगति होगी, अन्यथा नहीं। हरिजन-नेताओं की भूमिका प्रेक्षकों की नहीं, कुश्ती लड़ने में भाग लेने वालों की होनी चाहिए।

"उद्धरेदात्मनात्मानम्" यह सर्वमान्य सत्य है। केवल सरकार या दूसरे लोग सब कुछ करेंगे और हम केवल माँग और पुकार करते रहेंगे ऐसी भूमिका निर्बलता की निशानी है। अमेरिकन नीग्रों का उदाहरण स्फूर्तिदायक है। वहाँ की सरकार उनको मदद देने में सोत्साह नहीं है। तोभी स्वावलंबन से अनेक शिक्षण-संस्थाएँ उन्होंने खड़ी कर ली हैं। और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में वे लोग आगे बढ़ रहे हैं।

हरिजनों में आज छोटे-बड़े अनेक नेता मौजूद हैं। विधान-सभाओं में तथा लोक-सभा में भी संरक्षित जगहों पर हरिजन-प्रतिनिधि काफ़ी संख्या में चुनकर आये हैं। प्रतिनिधित्व के साथ-साथ उनको एक प्रतिष्ठा भी प्राप्त हुई है, और कार्य के लिए कुछ साधन भी उनके पास हैं। हरेक प्रतिनिधि अपनी ज़िम्मेदारी समझकर अपने-अपने क्षेत्र में विधायक दृष्टि से काम करेगा, सहयोग देगा और लेगा, तो प्रगति शीघ्र होगी। भविष्य आशा-पूर्ण है। मैं जानता हूँ कि श्री नारायणराव काजरोलकर-जैसे प्रतिनिधि खूब काम कर रहे हैं, किंतु सभी प्रतिनिधियों को क्रियाशील बनना चाहिए, यही प्रार्थना है।

उपसंहार

मेरा हरिजन-कार्य से संबंध करीब १९२३ से है। हरिजन-समस्या का दीर्घकालीन धार्मिक और सामाजिक इतिहास है। उसके बहुविध पहलू हैं। उनपर गत ३० वर्षों में मेरा खूब चिंतन हुआ है, और अनुभव भी खूब पाये हैं। मैंने उपर्युक्त लेख में अपने कुछ विचार संक्षेप में दिये हैं, तोभी लेख अपेक्षा से अधिक लंबा हो गया है।

परिस्थिति का मुझे जो आकलन हो सका, उससे मैं कह सकता हूँ कि गत ३० सालों में अच्छी प्रगति हुई है। भविष्यकाल मुझे तो आशादायक प्रतीत होता है। हिन्दू-समाज ने वर्ण-जाति-व्यवस्था को धर्म में स्थान दिया और दलित-वर्ग की न केवल उपेक्षा की, वरन् उसको दीर्घ-कालतक दबाकर रखा था। किन्तु आज ऐसा प्रतीत हो रहा है कि भारत ही ऐसी कठिन जातीय समस्या को अच्छी तरह से हल करने का रास्ता जगत् के दूसरे देशों को दिखायेगा। जातीय समस्या केवल भारत की ही नहीं, जगत् की है। अस्पृश्यता-निवारण करने में हम केवल अपना ही कलंक नहीं धो रहे हैं, बल्कि जगत् की एक समस्या को भी हम हल कर रहे हैं। मानव की प्रतिष्ठा स्थापित करने के इस पवित्र कार्य में हमें और अधिक उत्साह और लगनपूर्वक प्रयत्न करना चाहिए।

वि० न० बरवे

ठक्कर बापा तथा नोआखाली का हरिजन-कार्य

हरिजन-सेवा ठक्कर बापा के लिए मानों हरि-भक्ति थी। इसी भक्ति और भजन में वे दिन-रात रमे रहते थे। उसमें अपने प्राणों की भी आहुति देने को वे सदा तत्पर रहते थे। ऐसे अवसर उनके जीवन में अनेक आये भी। यहाँ तो केवल एक ही ऐसे प्रसंग का वर्णन मैं करता हूँ।

१९४६ का रोमांचकारी नोआखाली हत्याकांड सभी ने सुना है। आज यह ज़िला पूर्वी पाकिस्तान में है। सन् १९४६ का अक्तूबर मास था। समाचार-पत्रों के पन्ने नोआखाली की रोमांचकारी घटनाओं से रंगे रहते थे। समाचार रोज़ हृदय-विदारक आ रहे थे। प्रत्येक हिन्दू के ही मर्मस्थल को क्या दूसरे धर्मावलम्बियों को भी हार्दिक वेदना हो रही थी। ऐसी अवस्था में गांधीजी ने अपना ध्यान उधर दिया और दिल्ली में चलरही देश-विभाजन की भाग्य-निर्णायक वार्ता को भी छोड़कर वे नोआखाली को चल पड़े। ठक्कर बापा भी रात-दिन इसी चिंता में डूबे रहते थे, कि नोआखाली के हरिजनों की दशा कैसी होगी, उनका कौन आश्रय-दाता होगा। इतने में ही यह सुयोग मिला और बापा गांधीजी से आज्ञा लेकर उनके साथ हो लिये।

गांधीजी की यह मंडली केवल ८ व्यक्तियों की थी, जिसमें एक बापा भी थे। गांधीजी के दर्शन करने के लिए स्टेशनों पर भारी भीड़ लगी रहती थी। वे केवल दो शब्दों से सबको संतोष दिला देते थे। उनका कहना था, "अब मैं भी उसी अग्नि-कुण्ड में कूदने जा रहा हूँ।" जनता समझती थी कि वे तो १२५ वर्षतक जीवित रहेंगे, उनका कोई बाल भी बांका करनेवाला नहीं। परन्तु जनता की दृष्टि जब बापा की भव्य-वृद्ध मूर्ति पर पड़ती, तो उसे अनुमान होता था कि वास्तव में वे अपने प्राणों की आहुति देने को ही निकले हैं। उनके शब्दों से और उनकी मुद्रा सभी से ऐसा ही प्रतीत होता था।

कलकत्ता पहुँचनेपर बापू की यह टोली खादी-प्रतिष्ठान में ठहरी। यहाँ गांधीजी को नोआखाली के दुःखद समाचार सुनाने के लिए अनेक व्यक्ति पहुँचे। वे सबका दर्द सुनते थे। परन्तु बापा ने तो हरिजनों के ही विषय में जानकारी प्राप्त करना शुरू कर दिया। उन्होंने यहींपर पता लगा लिया, कि हरिजनों की अधिक आबादी नोआखाली के किस भाग में है और कहाँ-कहाँ उनपर अधिक अत्याचार हुआ है। इन लोगों की अधिक आबादी 'चरप्रदेश' में थी और वहींपर अधिक अत्याचार भी हुआ था। मेघना नदी की पार्श्व भूमि 'चरप्रदेश' कहलाती है। यह लगभग २४ मील की एक लम्बी पट्टी है, जिसकी चौड़ाई करीब ६ या ७ मील है।

गांधीजी ने नोआखाली पहुँचकर जब सब घटनास्थल देखा तो उनको वास्तविक स्थिति का ज्ञान हुआ। मार-काट तो उनके जाते ही बन्द हो गयी, परन्तु लोगों में आतंक बहुत छाया था। उसको दूर करने के लिए बापू ने यह योजना बनाई कि उनकी टोली का प्रत्येक व्यक्ति एक-एक ग्राम में जाकर बैठ जाये और वहाँ के निवासियों से एकरस हो जाये। इससे गाँववालों का भय दूर होगा। अन्त में ऐसा ही हुआ, श्रीरामपुर पहुँचकर बापू ने अपना कैम्प तोड़ दिया और सबको एक-एक गाँव में भेज दिया। हरिजन बापा के प्राण थे। वे उनकी सेवा के लिए उसी चरप्रदेश की ओर चल पड़े। पहले चरमण्डल नामक स्थान पर जाना था, परन्तु मार्ग इतना दुर्गम था कि बापा-जैसे वृद्ध व्यक्ति का वहाँ पहुँचना असम्भव-सा था। बापा का हृदय हरिजनों की सेवा-सहायता के लिए अधीर हो रहा था। वे कुछ दूर जीप में चले और कुछ दूर नौका में, अंत में धोती ऊपर चढ़ाई, हाथ में लाठी ली, और एक आदमी के कंधे पर हाथ रखकर पैदल चलना प्रारम्भ कर दिया। यहाँ पानी के अतिरिक्त रपटन बहुत थी, पग-पग पर पैर फिसलता था। कीचड़ का तो कहना ही क्या। बापा ५ मील की इस कठिन यात्रा को पैदल पार करके निश्चित स्थान पर आखिरकार पहुँच ही गये। उनको यहाँ भी विश्राम नहीं मिला। टीन

का घर, और फर्श सीलन से भरा हुआ, नींद उसमें कैसे आने का साहस करती ? परन्तु बापा तो कर्मयोगी थे, वे इसीमें प्रसन्न थे। वे हरिजनों को कुछ राहत पहुँचाने के लिए वहाँ गये थे, न कि अपने शरीर को आराम देने।

बापा ने हरिजनों को बुलाकर तथा उनके घर-घर जा कर उनकी क्षति का अनुमान लगाना शुरू कर दिया। उनके पहुँचने से पहले एक भी रिपोर्ट थाने में हरिजनों की क्षति की नहीं लिखी गई थी। उन्होंने सबको प्रोत्साहन दिया, अपने कार्यकर्त्ता साथ में भेजे और उनकी रिपोर्ट थाने में लिखाई गई। हरिजनों के प्रत्येक घर को लूटा तो था ही, कुछ को जला भी दिया था। बेचारों के पास पहले ही छोटे-छोटे झोंपड़े थे, परन्तु अब तो वे भी नहीं रहे थे। फिर भी वृक्षों के नीचे वे गुज़ारा कर रहे थे। नारियल की फसल थी। और धान की फसल भी पकने लगी थी। कच्चा नारियल (डाभ) पीकर और कच्चा धान ही खाकर अपना निर्वाह वे कर रहे थे। सुपारी एकत्र करके बेचना यही उनका धंधा था। उसमें वे लगे थे। परन्तु उनके वृक्षों से नारियल या सुपारी और खेतों से धान की बालें पहले ही आततायियों ने काट ली थीं। यहसब कुछ देखकर बापा का हृदय द्रवित हो गया, उनसे यहसब देखा न गया। उन्होंने तुरन्त सरकार को लिखा कि मकान बनाने तथा खेती के लिए बैल आदि खरीदने के लिए उन्हें तकावी दी जाये। इसमें देर लगते देखकर मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी से पत्र-व्यवहारकर उन हरिजनों के लिए अन्न तथा कपड़ा मँगवाकर अपने समक्ष वितरित कराया। जिन स्त्रियों की चूड़ियां आततायियों ने अपने हाथों से तोड़ डाली थीं उन्हें चूड़ियाँ बाँटी गयीं। इस प्रकार उनका सभी आवश्यक प्रबन्ध कर दिया।

अबतक प्राणों की आहुति का क्षण नहीं आया था। यह भी अब आ गया। चरमण्डल का एक प्रसिद्ध बदमाश था, जिसने खूब लूट-पाट की थी, हरिजनों का धर्म-परिवर्तन किया था और बहुत-से आदमियों तथा बच्चों के सिर काट थे। बापा हरिजनों को फिर से बसाने का कार्य कर रहे थे। इसलिए वह बापा से सख्त नाराज़ था। उसने बापा के पास कहला भेजा कि, "अगर तुम यहाँ इस काम को करोगे, तो दो दिन में तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर दूँगा।" बापाने इस चुनौती को सहर्ष स्वीकार किया और उत्तर में कहला भेजा कि "मैं कल यहाँ से जानेवाला था, परन्तु अब चार दिन-तक नहीं जाऊँगा। वह तो दो दिन में मेरा सिर काटना चाहता है, मैं उसे दो दिन और देता हूँ। वह चार दिन में मेरा सिर काट दे।" बापा ने यह भी कह दिया, कि "यदि वह मेरे पास आने से डरता हो, तो मैं उसके घर पर जाने को तैयार हूँ। वह मुझे घर पर आने का संकेतमात्र करदे।"

बापा के इन शब्दों को सुनकर वह बदमाश चरमंडल से भाग गया और बापा वहाँ चार के स्थान पर छह दिन और ठहरे और उन्हें हानि पहुँचाने की किसीकी हिम्मत नहीं हुई। यह था अग्नि-परीक्षा का क्षण। भगवान् को बापा से अभी हरिजनों की और भी सेवा लेनी थी।

बापा को हरिजनों की उतनी सेवा से संतोष नहीं हुआ। उन्होंने इस चरप्रदेश का पैदल ही प्रवास किया, हरिजनों को जैसी राहत की आवश्यकता थी, उसका प्रबंध किया। उन्होंने यहाँतक भी किया कि जिन स्त्रियों के पति उस हत्याकांड में मारे गये थे, नृशंसतापूर्वक उनके सिर काटे गये थे, उनकी एक सूची बनवाई और जिनका कोई सहारा संसार में नहीं था, ऐसी २२ विधवाओं को ५ वर्ष के लिए १० रु० से ३० रु० मासिकतक की वृत्ति बाँध दी।

हरिजनों की अनन्य सेवा के लिए बापा के हृदय में अदम्य उत्साह और सच्ची लगन थी। उनके पास ऐसी कोई वस्तु न थी, जिसे हरिजनों के प्रीत्यर्थ अर्पित करने में उन्हें ज़रा भी संकोच हुआ हो। ईश्वर हम सब हरिजन-सेवकों को बल दे, कि हम बापा द्वारा प्रदर्शित प्रकाश-पथ पर श्रद्धापूर्वक चल सकें।

रामचरण लाल

हम अपनी गति को तेज़ करें

[५ अप्रेल को नई दिल्ली में माननीय श्री जगजीवनरामजी को, उनके अभिनन्दन-समारोह के अवसर पर, एक-अभिनन्दन-ग्रन्थ-भेंट किया गया था। हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान मंत्री श्री वियोगी हरिजी बीमारी के कारण उपस्थित नहीं हो सके थे। उस समय उन्होंने जो लिखित संदेश भेजा था, वह नीचे दिया जा रहा है—सं०]

यकायक बीमार पड़ जाने से आज के इस मंगल समारोह में मैं उपस्थित नहीं हो सका, इसका मुझे सदा पछतावा रहेगा, पर मन से तो मैं उपस्थित हूँ ही। बन्धुवर जगजीवनरामजी के ४६वें जन्म-दिवस पर हरिजन-सेवक-संघ की ओर से तथा मित्र के नाते अपनी ओर से भी मैं उनका हृदय से अभिनन्दन करता हूँ।

हरिजनों का ही नहीं, हरिजनेतरों का भी भाई जगजीवनरामजी ने ईमानदारी के साथ प्रतिनिधित्व किया है। यही कारण है कि पूज्य गांधीजी का आशीर्वाद और पूज्य बापा का स्नेह उन्हें प्राप्त रहा है। राष्ट्र का साथ उन्होंने सभी दिनों दिया है। अस्पृश्यता की विविध समस्याओं की जड़तक पहुँचने का प्रयत्न उन्होंने किया है। उनका अभिनन्दन करना मानों हमारा अपना ही अभिनन्दन है। ऐसे मांगलिक अवसरों पर हम अपने हृदय के आनन्द को प्रकट करें, यह स्वाभाविक है, परन्तु सच्चा आनन्द तो एक जगजीवनरामजी का ही नहीं, वरन् सारे समाज का और राष्ट्र का करने के योग्य तो हम उस दिन होंगे, जिस दिन देश-विदेशों में हमें शरमिन्दा करनेवाली, हमारा सिर नीचा करनेवाली यह अस्पृश्यता जड़मूल से नष्ट हो जायेगी।

एक तरफ़, एक दृष्टि से देखते हैं तो ऐसा लगता है कि अस्पृश्यता की समस्या बहुत-कुछ हल हो गयी है — इस दृष्टि से कि हरिजनों में से कितने ही व्यक्ति ऊँचे-ऊँचे पदों पर यहाँतक कि राज्यों और केन्द्र के मन्त्रिमण्डलों में पहुँच गये हैं, शिक्षण संस्थाओं में से भी भेद-भाव निकल गया है, शहरों और क़सबों में सार्वजनिक समारोहों में सबके साथ वे हिलने-मिलने भी लगे हैं। मगर दूसरी तरफ़ जब लाखों देहातों पर हम नज़र डालते हैं, तो यह समस्या आज भी वैसी ही जटिल और भयंकर दिखाई देती है। सार्वजनिक कुओं पर उन्हें चढ़ने नहीं दिया जाता, होटलों और उपाहारगृहों में बराबरी से सबके साथ चाय वगैरह नहीं पिलाई जाती। कई स्थानों पर उनके ज़रा-सा सिर उठाने पर उनकर सामाजिक बहिष्कार किया जाता है और कभी-कभी क़तलतक हो जाते हैं।

संविधान में से अस्पृश्यता का अन्त कर देने के बाद हमारे सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं और बड़े-बड़े राजनेताओं तकका कुछ ऐसा ख़याल बन गया है कि अब जैसे इस दिशा में कुछ करने को रहा नहीं। यह दुर्भाग्य की बात है।

केन्द्रीय व राज्य-सरकारें अपने-अपने ढंग से हरिजनोत्थान के क्षेत्र में बहुत-कुछ काम कर रही हैं। मगर जबतक भूमि के प्रश्न को हल नहीं किया जाता अर्थात् यह नहीं मान लिया जाता कि भूमि उसीकी जो उसे जोते, साथ ही, हरिजनों के पुश्तैनी गृह-उद्योगों को, बड़े-बड़े कल-कारखानों पर पाबन्दी लगाकर, प्रोत्साहित नहीं किया जाता, तबतक उनकी आर्थिक समस्या हल नहीं हो सकती, वे सबके समान स्तर पर नहीं आ सकते। किंतु अस्पृश्यता-निवारण का काम तो सरकार को नहीं, जनता को करना है। हृदय परिवर्तन संसार की कोई भी सरकार नहीं कर सकती। अस्पृश्यता-निवारण का प्रश्न आज भी इतना अधिक महत्त्व रखता है कि उसकी तरफ़ से हम अपने प्रयत्नों में शिथिल नहीं हो सकते। जैसा कि मैंने शुरू में कहा है, यही एक ऐसा प्रश्न है, जिसके कारण देश में और विदेशों में हमें अपना सिर नीचा करना पड़ता है। यह कोई नहीं चाहता कि संविधान में जो विशेष संरक्षण हरिजनों को दिये गये हैं, वे १० वर्ष के बाद भी कायम रहें। लेकिन जिस गति से आज हम चल रहें हैं, हमें ठण्डे हृदय से अपने आप से पूछना होगा कि क्या वह गति विशेष संरक्षणों को १० वर्ष की

अवधि के अन्दर समाप्त कर देनेवाली है ? ये सब समस्याएँ हैं, जिनकी ओर हमारा ध्यान आज के इस माँगलिक अवसर पर जाना चाहिए।'

हम भाई जगजीवनरामजी का अभिनन्दन इसलिए करने नहीं आये हैं कि वे आज केन्द्रीय मंत्रि-मण्डल में एक दायित्वपूर्ण पद पर आसीन हैं। यह पद तो एक छोटी-सी चीज़ है। उनका अभिनन्दन तो हम इसलिए कर रहे हैं कि वे इन समस्याओं के प्रति, जिनका मैंने ऊपर उल्लेख किया है, जागरुक और कृतसंकल्प हैं। ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि श्री जगजीवनरामजी देश की और हरिजन-समाज की सेवा करने के लिए बहुत वर्षोंतक हमारे बीच में स्वस्थ और सुखी रहें।

धर्म-परिवर्तन के आपत्तिजनक तरीके

[मद्रास नगर-हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री और सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के सदस्य श्री एस० आर० वेंकटरमण ने इस विषय पर जो एक लेख लिखा है, उसमें से महत्त्वपूर्ण अंश हम नीचे उद्धृत करते हैं—सं०]

धार्मिक सहिष्णुता या समभावना आदिकाल से ही हिंदू-धर्म की एक विशेषता रही है। ऊँची-से-ऊँची आध्यात्मिकता से लेकर घोर भौतिकवादतक सभी उसमें फले-फूले हैं। वस्तुतः यदि देखा जाय तो हिंदू-धर्म अन्य कुछ मज़हबों के समान कोरा मज़हब नहीं है, बल्कि वह जीवन और विचार की एक पद्धति है। उसका आधार बौद्धिक विश्वास और संयत आचार है। उसकी अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णुता का आधार भी असल में यही है।

हमारे संविधान के २५वें अनुच्छेद द्वारा इस धार्मिक सहिष्णुता को मान्य किया गया है। यह अनुच्छेद सब व्यक्तियों को अन्तःकरण की स्वतंत्रता का तथा धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने का समान अधिकार देता है।

यद्यपि हम हृदय से इस बात का समर्थन करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को उसकी अन्तरात्मा की पुकार के अनुसार चलने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, तथा धर्माचरण और धर्मप्रचार करने का पूर्ण अधिकार भी सबको समान रूप से हो, तथापि हम महसूस करते हैं कि कुछ ऐसे मज़हबों ने, जो धर्मपरिवर्तन में विश्वास रखते हैं, हिंदुओं की धार्मिक सहिष्णुता की भावना से अनुचित लाभ उठाया है और अनुचित तथा अन्यायपूर्ण तरीकों से हिन्दुओं का धर्मपरिवर्तन करके हिंदूसमाज को भारी हानि पहुँचाई है।

हम किसी ऐसे व्यक्ति के धर्मपरिवर्तन पर एतराज़ नहीं कर सकते, जिसकी बुद्धि और ज्ञान परिपक्व हैं, किंतु जिसे अपने जन्मप्राप्त धर्म में पर्याप्त आध्यात्मिक शान्ति नहीं मिल पाती। लेकिन कुछ अन्य धर्मों के मिशनरी अपने सिद्धांतों का प्रचार करके ही संतुष्ट नहीं होते, वे हिंदुओं का धर्म-परिवर्तन करने के लिए उन्हें भौतिक प्रलोभन भी देते हैं।

यहाँ यह भी बताना ज़रूरी है कि प्रचार (प्रोपेगेंडा) शब्द अन्य धर्मों के मिशनरियों को धर्म-परिवर्तन करने का अधिकार नहीं देता। आक्सफोर्ड कंसाइज़ डिक्शनरी में 'प्रोपेगेट' का संबंधित अर्थ विश्वास और आचरण का प्रसार करना और फैलाना दिया हुआ है। इसलिए जो मिशनरी प्रचार शब्द के उपर्युक्त अर्थ के बाहर जाकर अन्य लोगों का धर्म-परिवर्तन करते हैं, वे संविधान को भंग करते हैं।

भारत-सरकार विदेशी मिशनरियों के विषय में तो चिंतित है, पर भारतीय ईसाई मिशनरियों के सम्बन्ध में उसका क्या कहना है ? भारतीय ईसाई मिशनरियों के तौर-तरीके तो विदेशियों से भी अधिक गिरे हुए और अधिक असभ्य मालूम होते हैं। उनमें से एक के संबंध में तो मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ।

मद्रास राज्य के उत्तर अर्काट ज़िले में नाडुकुप्पम् एक गाँव है, वालाजाबाद से करीब पांच मील दूर। वहाँ के हरिजनों का मेरे पास एक पत्र आया और १२ मार्च सन् ४७ को मैं उस गाँव में उनका मामला समझने के लिए गया।

वहाँ के हरिजनों ने वांडीवाश के रोमन केथोलिक पादरी पर कुछ इलज़ाम लगाये थे, मैंने उनकी पूरी जाँच की। सभी इलज़ाम सही साबित हुए। उनका सार यह है: वहाँ का वाडीवेलु नामक एक हरिजन सन् १९४६ में ईसाई होगया था और उसके बाद रोमन केथोलिक पादरी उस हरिजन-बस्ती में आया करते और अन्य दीन हरिजनों पर वाडीवेलु के उदाहरण का अनुकरण करने के लिए ज़ोर डालते और उन्हें बहुत तंग करते थे। पादरियों ने उनकी हर प्रकार की भौतिक सहायता करने का वचन दिया, बशर्ते कि वे ईसाई बन जायें। परन्तु धर्मभीरु हरिजनों ने पादरियों की बात को स्वीकार नहीं किया फलस्वरूप, पादरी नाराज़ हो गये और हरिजनों को जेल भिजवाने और बस्ती को जला डालने-तक की धमकी दी।

दिसम्बर १९४६ में वाडीवेलु और दूसरे हरिजनों में, जो उसके संबंधी ही थे, झगड़ा हो गया। वाडीवेलु ने वांडीवाश के पादरी इग्नेटियस से शिकायत की। पादरी ने जनवरी १९४८ को सब हरिजनों को वहाँ बुलाया और प्रत्येक को तीन कोरे कागज़ों पर अँगूठे लगाने और हस्ताक्षर करने को मजबूर किया। तब उसने उनसे अंतिम बार पूछा, "क्या तुम ईसाई बनोगे?" परन्तु हरिजनों ने फिर भी इन्कार कर दिया। इसके पश्चात् पादरी ने वाडीवेलु की शिकायत की जाँच की और उन हरिजनों पर ६६ रु० जुर्माना किया, जो उन्होंने अदा कर दिया। उनमें अम्मनी नामकी एक स्त्री भी थी। पादरी ने उसे दो घण्टे धूप में घुटनों के बल खड़ा रखा और घुटनों के बल ही चर्च के पाँच चक्कर कटवाये।

१२ मार्च को मैं स्वयं पादरी इग्नेटियस से मिला। मैंने उससे कहा कि उसे ग़ैर ईसाइयों पर जुर्माना करने का कोई अधिकार नहीं है। काफ़ी विवाद के उपरान्त उसने, प्रधान पादरी से पूछकर, वह रकम लौटादी और अन्त में हरिजनों का पैसा उन्हें मिल गया।

वांडीवाश तालुका कांग्रेस कमेटी के सभापति और मंत्री आदि से मैंने मुलाक़ात की और वांडीवाश तालुका के गाँवों में उनकी कारगुज़ारियों की जानकारी प्राप्त की। हरिजनों का घरेलू झगड़ा हो, या किसानों और ज़मींदारों का संघर्ष हो अथवा हरिजनों और सवर्णों में मतभेद हो— ईसाई मिशनरी प्रत्येक अवसर का ईसाइयों की संख्या बढ़ाने में उपयोग करते हैं। मुझे बताया गया कि पादरियों ने क्रिसमस के मौके पर कई हरिजन परिवारों को कपड़े का प्रलोभन देकर ईसाई बनाने की कोशिश की—उस कपड़े से, जो क्रिसमस के अवसर पर सरकार ने ईसाइयों को विशेष रूप से दिलवाया था। उरकुंडी गाँव में, मुझे बताया गया, कई हरिजन परिवारों को ईसाई बनाने का प्रयत्न किया गया। मोरुवाडी गाँव की तो पूरी बस्ती ही धर्मान्तरित कर ली गई और विनयागार-मन्दिर को भी चर्च के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। केथोलिक पादरियों ने अपढ़ और दीन हरिजनों के मन में यह बात बिठादी है कि पादरियों के अतिरिक्त उन्हें मकानों के लिए भूमि, कुएँ, स्कूल आदि और कोई नहीं दिलवा सकता। अब सरकार हरिजनों के मकानों के लिए भूमि, कुओं, स्कूलों इत्यादि का प्रबन्ध कर रही है। यदि प्रत्येक ज़िले में एक हरिजन-विशेष कल्याण अफसर नियुक्त कर दिया जाये, जो हरिजनों की अत्यावश्यक समस्याओं को सवर्णों अथवा अहिंदुओं के हस्तक्षेप के बिना सुलझाये, तो हरिजन-समस्या बहुत हदतक हल की जा सकती है।

केथोलिक पादरियों के बर्बर तरीक़ों का दूसरा उदाहरण सेलम ज़िले का है। अत्तुर गाँव में एक केथोलिक पादरी एक अनाथालय और एक छात्रावास चलाते हैं। उस छात्रावास में कोरवा और हरिजन बालक भी रहते हैं। क़रीब दो वर्ष पहले एक कोरवा बालक को ईसाई बनाया गया। छात्रावास में रहनेवाले कुछ कोरवा बालकों ने इस बात को बाहर फैला दिया। जब पादरी के कानोंतक यह खबर पहुँची तो, कहते हैं, उसने उन खबर फैलानेवाले बालकों को काफ़ी कड़ी सज़ा दी— उन्हें रोटी नहीं दी, उनके सर के बाल काटकर चेहरों पर काले और सफ़ेद और लाल धब्बे लगाकर उन्हें सारे छात्रावास में घुमाया। मुझे पता लगा है, कि जब हरिजन-कल्याण-विभाग का ध्यान इस

घटना की ओर दिलाया गया, तो उसने कुछ ऐसी शर्तें लगाई हैं ताकि ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो। यदि अहिंदू धर्म-प्रचारक हिंदुओं का इस प्रकार धर्म-परिवर्तन करेंगे, तो हिंदू-संस्थाएँ उन्हें पुनः हिंदू बनाने में पूर्णतः न्याय्य पथ पर होंगी। परन्तु इस तरह तो हम एक ऐसे कुचक्र में फँस जायेंगे, जो हमारे देश के लिए कुल मिलाकर घातक सिद्ध होगा।

इस संबंध में ईसाई मिशनरियों के विषय में गांधीजी के मंतव्य प्रत्येक भारतीय के लिए विचारणीय है। वे कहते हैं :—

"ईसाई धर्म, जैसा कि वह आज है, भारतीयों को शांति नहीं दे सकता। यह मेरा विश्वास है कि जो लोग आज अपनेको ईसाई कहते हैं, वे महात्मा ईसा के सत्य संदेश को नहीं समझते। जुलु-विद्रोह के समय जुलुओं पर किये गये कुछ अत्याचारों को मैंने अपनी आँखों देखा है। बम्बाटा उनका मुखिया था। उसने कर देने से इन्कार कर दिया था। एक व्यक्ति के इन्कार करने पर उस पूरी जाति पर घोर अत्याचार किये गये। मेरे नीचे उन दिनों एक अम्ब्युलेंस टुकड़ी काम करती थी। मैं उस दृश्य को कभी नहीं भूल सकता, जब डण्डों से मार-मारकर जुलुओं की कमर लहू-लुहान कर दी गई थी और वे सेवा-सुश्रूषा के लिए हमारे पास लाये गये थे, क्योंकि गोरी नर्सों ने उनकी सेवा करने से इन्कार कर दिया था! तो भी ये सब अत्याचार करने-वाले लोग अपनेको ईसाई—ईसा के अनुयाई—कहलाने का दावा करते थे। ये लोग शिक्षित थे और जुलुओं से अच्छे कपड़े पहनते थे, परन्तु नैतिकता की दृष्टि से उनसे बिल्कुल अच्छे नहीं थे—" ['तेन्दुलकर कृत 'महात्मा' खंड ५ पृ० २०]

भारतीय गणतंत्र धर्म-निरपेक्ष (सेक्युलर) राज्य है। ऐसे राज्य में बलपूर्वक धर्म-परिवर्तन के लिए कोई स्थान नहीं है, खास तौर से तब जबकि हमारे देश के धर्म इस प्रकार से धर्म-परिवर्तन में विश्वास नहीं रखते। यदि धर्म-परिवर्तन करने का अधिकार स्वीकार कर लिया जाता है, तो यहाँ के धर्मों को हानि पहुँचाकर वे धर्म फ़ायदे में रहते हैं, जो धर्म-परिवर्तन कराते हैं। क़ानून सब धर्मों के लिए एक और हिन्दूधर्म के समान होना चाहिए, यह नहीं कि ईसाई-धर्म के लिए दूसरा। यदि राज्य की धर्म-निरपेक्षता की हमें रक्षा करनी है, तो सामूहिक रूप में धर्म-परिवर्तन क़ानूनन बंद कर देना चाहिए। यदि सब धर्म इसी प्रकार धर्म-परिवर्तन कराने के तरीकों को अपनायेंगे, तो उसके फलस्वरूप समाज में तना-तनी, दुर्भावना और घृणा की भावना बढ़ेगी। गांधीजी सामूहिक धर्म-परिवर्तन की प्रवृत्ति में निहित घातक संभावनाओं को अपनी दूरदृष्टि से पूर्णतया देख चुके थे।

हिंदू समाज का अपना भी कर्त्तव्य है। मूलतः उसकी अपनी विशिष्ट जीवन-पद्धति है, जिसमें शांति और प्रेम, भाईचारा और एकता को बढ़ाने की शक्ति किसी अन्य धर्म से कम नहीं है। अनेक जातियों और धर्मों के प्रति सहिष्णुता उसकी अपनी विशेषता है। परन्तु इस जीवन-प्रणाली का हमें पुनरुद्धार करना चाहिए और उसमें निहित समता और प्रेम-भावना का स्पर्श छोटे-से-छोटे और निर्बल-से-निर्बल व्यक्ति को भी होना चाहिए।

एस० आर० वेंकटरमण

विभिन्न राज्यों में हरिजन-कार्य

तामिलनाड

नागरिक निर्योग्यता-निवारक-क़ानून के मातहत नीचे-लिखे मामले पुलिस में दर्ज कराये गये :—

जनवरी, १९५३

१	चेक्कुपट्टी	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
२	,, ,,	अलग प्याले में चाय दी।
३	नातन्	नाई ने एक हरिजन से दुगुनी मज़दूरी माँगी
४	पल्लापट्टी	हरिजन को सामान्य से भिन्न प्याले में चाय दी

५ तिरुपुरकुण्ड्रम	हरिजन को सामान्य से भिन्न प्याले में चाय दी
६ ,, ,,	नारियल की नरेली में काफी दी गई
७ तिरुपवनम्	चाय के दूकानदार ने दूसरे प्याले में चाय दी
८ तिरुपवनम्	नाई ने हरिजनों के बाल काटने से इन्कार कर दिया।
९ पुदुपट्टी	अलग प्याले में चाय दी
१० ,, ,,	होटल में प्रवेश-निषेध पर
११ ,, ,,	काफीवाले ने सोडे की बोतल में काफी दी
१२ मायुकलीपुरम्	तामलोट में चाय दी गयी
१३ ,, ,,	केले के पत्ते के दौने में काफी दी
१४ मीनाक्षीपुरन्	तामलोट में चाय दी गयी
१५ कोसलकुलम्	अलग प्याले में चाय दी
१६ ,,	काफी-क्लब में प्रवेश-निषेध पर
१७ अरिट्टपट्टी	होटल में प्याले में चाय देने से इन्कार किया

फरवरी, १९५३

१ विरुदनगर	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
२ ,, ,,	हरिजन को चाय अलग प्याले में दी गयी
३ अमाटूर	चाय सोडे की बोतल में दी गयी
४ उसीलमपट्टी	अलग प्याले में चाय देने पर दूकानदार को चेतावनी दी
५ एलुमलाई	अलग प्याले में चाय दी गयी
६ ,,	अलग प्याले में चाय दी गयी
७ मनीगरपट्टी	तामलोट में चाय दी गयी, चेतावनी दी
८ मनीगरपट्टी	नारियल की नरेली में चाय दी गयी
९ रामनाथपुरम्	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
१० ,, ,,	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
११ एलुमलाई	नाई ने बाल काटने से इन्कार किया
१२ वीरपांडी	अलग कमरे में बैठाया गया
१३ अम्मापट्टी	केले के पत्ते में चाय दी गयी
१४ मीनाक्षीपुरम्	तामलोट में चाय दी
१५ विश्वासपुरम्	नारियल की नरेली में चाय दी
१६ सुलीमान	नाई ने बाल काटने से इन्कार किया
१७ बैरागेनारी	अलग प्याले में चाय पिलाई
१८ वालीगुंडी	नारियल की नरेली में चाय दी
१९ ,,	नाई ने बाल काटने से इन्कार किया
२० डट्टानेरी	अलग प्याले में चाय पिलाई
२१ कुमारम्	अलग प्याले में चाय पिलाई
२२ अय्युट	अलग प्याले में चाय पिलाई
२३ वेल्लोर	चाय पीने के उपरान्त प्याले को धोने के लिए कहा
२४ कण्डोट	चाय पीने के उपरान्त प्याले को धोने के लिए कहा
२५ नीलेश्वर	अलग प्याले में चाय दी
२६ ,,	अलग प्याले में चाय दी
२७ ,,	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
२८ ,,	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया
२९ चेरुवतुर	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया
३० वाण्डीयुर	अलग प्याले में काफी पीने को दी
३१ अल्लमपट्टी	हरिजन को काफी न पिलाने पर दूकानदार को १५) रु० जुर्माना
३२ चोलमलयालम-पट्टी	चाय पिलाने से इन्कार किया
३३ सरुगण्डी	प्याले में काफी पिलाने से इन्कार किया

सभाएँ

मैसलुर, अमट्टुर, सेलाडीपुरम्, मीनाक्षीपुरम्, चेरुवट्टुर, सौटेरपेट्ट और मंगली में स्वामी आनन्दतीर्थ ने और कंचमपेट, सुब्रमनु, तोण्डमपट्टी में रामस्वामी ने अस्पृश्यता-निवारण के सम्बन्ध में भाषण दिये।

मार्च, १९५३

मार्च में नागरिक निर्योग्यता-निवारक क़ानून के मातहत नीचे लिखे मामले पुलिस में दर्ज कराये गये :—

१ अल्लाल	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया
२ उल्लाल्	होटल में प्रवेश-निषेध पर
३ मंगलपाड़ी	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
४ मंजेश्वर	चाय की दूकान में प्रवेश-निषेध पर
५ मंजेश्वर	नारियल की नरेली में चाय दी ; पुलिस-चेतावनी दी
६ मंजेश्वर	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया
७ तालपाड़ी	चाय की दूकान में दूसरे कमरे में बैठाया
८ कन्नोरी	चाय की दूकान के दूसरे कमरे में बैठाने पर मालिक को चेतावनी दी
९ मंगलपाड़ी	होटल में प्रवेश-निषेध पर
१० माल्लीकर	अलग प्याले में चाय दी
११ ,,	दूसरों से अलग बैठने को कहा
१२ बक्कलम्	चाय पीने पर गिलास साफ़ कराया
१३ ताल्लीमरम्ब	मन्दिर में प्रसाद पत्थर के टुकड़े पर दिया, जबकि ब्राह्मणों को हाथों में दिया
१४ बुटमंगलम्	सामान्य प्याले में चाय पिलाने से इन्कार किया
१५ अट्टपट्टी	सामान्य प्याले में चाय पिलाने से इन्कार किया
१६ चैएड्डुराई	नारियल की नरेली में चाय दी
१७ कंचालियामपट्टी	लोहे के गिलास में चाय दी

सभाएँ

उल्लाल, मंगलपाड़ी, पाल्लीकर, मय्यट्टुर, टालीपरम्ब स्थानों पर स्वामी आनन्दतीर्थ और चिन्नायतपट्टी तथा मायान्वीपट्टी में श्री रामस्वामी ने अस्पृश्यता-निवारण के सम्बन्ध में भाषण दिये।

अप्रेल, १९५३

सामाजिक निर्योग्यता-निवारक क़ानून के अन्तर्गत निम्नलिखित मामले पुलिस में दर्ज कराये गये :—

१ कसरगौड	नाई ने बाल काटने से इन्कार कर दिया
२ रामनगर	हरिजन को भिन्न थाली-गिलास में खाना दिया
३ कुड्लु	हरिजनों को दूसरे स्थान पर बैठने को कहा
४ ,,	हरिजनों को बाहर और भिन्न गिलास में चाय दी
५ कांजीवरम्	नाई ने बाल बनाने से इन्कार किया;
६ ,,	भिन्न प्याले में चाय दी
७ राजपालयम्	हरिजनों को दूसरे स्थान पर बैठाया
८ ,,	धोबी ने हरिजनों के कपड़े धोने से इन्कार किया
९ काम्बुर	प्याले में चाय देने से इन्कार किया
१० चिन्नाकरमपट्टी	नारियल की नरेली में काफ़ी दी

सभाएँ

कुड्लु, कांजीवरम्, राजपालयम्, मजमपट्टी और सामयतल्लुर में अस्पृश्यता-निवारण पर स्वामी आनन्दतीर्थ ने भाषण दिये।

उल्लेखनीय

१ हरिजनों ने स्वामीजी को बतलाया कि कोट्टमपट्टी में उनके साथ बिल्कुल भेद-भाव नहीं बर्ता जाता।

२ स्वामीजी मम्मेडपट्टी और पण्डमगुडी के सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनों से मिले। हरिजनों ने बताया कि दो चाय की दूकानों के सिवा उनके साथ उचित व्यवहार किया जाता है। स्वामीजी ने दोनों दूकानदारों को चेतावनी दी।

३ मानमदुरा में भेद-भाव प्रचलित है, पर हरिजन अपने अधिकारों का उपयोग ज़ोर-जबर्दस्ती से नहीं करना

चाहते। वे स्वामीजी के साथ दूकानों पर नहीं गये ; कहने लगे, हम अपने मालिकों को ठेस पहुँचाना नहीं चाहते।

४ मदुराई में दो दूकानदारों पर हरिजनों से भेद-भाव बर्तने पर १०—१० रुपये जुर्माना किया गया। उन्होंने अपना अपराध स्वीकार किया।

५ सुलोमन के हरिजनों को दूकानों पर चाय-काफी प्यालों में नहीं दी जाती, तोभी वे स्वामीजी के साथ दूकानों पर नहीं गये।

६ तिरूपवनम् के उपनगर मदपुर में पूजा-उत्सव के समय स्वामीजी कुछ हरिजन बालकों को लेकर मन्दिर में गये। साधारणतया हरिजन मन्दिर के अन्दर तक नहीं जाते, पर इस बार किसीने ऐतराज़ नहीं किया और बड़े सत्कारपूर्वक सबको प्रसाद भी दिया।

७ पुडुपट्टी में स्वामीजी ने हरिजनों और सवर्ण-हिन्दुओं का गाँव के मुन्सिफ के सामने फैसला कराया।

८ तिरूमलाई के होटलवालों के व्यवहार में आश्चर्य-जनक परिवर्तन पाया गया ; अब हरिजनों के साथ वे कोई भेद-भाव नहीं बर्तते।

९ पारामक्कुडी में ज़िला-भंगी-कान्फ्रेंस हुई। संसद्-सदस्य श्री पी० ककन, विधान-सभा के सदस्य श्री बी० शिव प्रकाशम् तथा स्वामीजी ने भाषण दिये।

१० मेसलुर के खास-खास व्यक्तियों ने स्वामीजी को लिखित वचन दिया कि अबसे भेद-भाव नहीं बरता जायेगा।

११ रामनाथपुरम् के एक होटल में स्वामीजी कुछ हरिजन लड़कों को लेकर गये। होटल-मालिक ने हरिजन लड़कों को बाहर निकल जाने को कहा। कारण पूछने पर उसने स्वामीजी को गालियाँ दीं, उनके गाल पर एक थप्पड़ लगाया और कागज़-कलम छीन लिये। कागज़-कलम बाद में लौटा दिये।

११ विलानगुडी में हरिजनों को चाय प्याले में नहीं दी जाती। यहाँ के हरिजन अपने अधिकारों का उपयोग करने को बड़े उत्सुक हैं, मगर उनकी हिमायत करनेवाला कोई नहीं है। अय्युर के दूकानदार मौके के अनुसार चलते हैं, और भेद-भाव बर्तने की कोशिश करते हैं।

१३ नातम् के नाई हरिजनों से दुगुनी बाल-कटाई माँगते हैं, ताकि उन्हें उनके बाल न काटने पड़ें।

१४ चेरूवतुर के दूकानदारों ने पहले तो चाय दूसरे प्यालों में दी और प्याले धुलवाये भी, पर स्वामीजी को आया जानकर दूकानदारों ने वैसा करना छोड़ दिया।

१५ नीलेश्वर में एक दूकानदार के खिलाफ पुलिस में शिकायत करने के बाद होटलवालों के व्यवहार में बड़ा परिवर्तन हो गया है ; अब वे हरिजनों के साथ भेदपूर्ण बर्ताव नहीं करते।

१६ त्रिक्करीपुर में एक सन्त हैं। यहाँ तीर्थ-यात्रियों की भीड़ लगी रहती है। इसके कारण छुआछूत सर्वथा मिट गई है।

१७ श्री रामस्वामी कुछ हरिजनों को लेकर पानी लेने के लिए तेरकुतेरु के उरणी (तालाब) में गये।

१८ कल्लमपट्टी और तुम्बाइयपट्टी में होटलों और चाय की दूकानों में हरिजनों के साथ भेदपूर्ण व्यवहार नहीं किया।

१९ अलागरकोइल में हरिजनों को काफ़ी समान रूप से पिलाई गई।

२० अल्लमपट्टी के मन्दिर में श्री रामस्वामी २० हरिजनों को लेकर दर्शनार्थ गये।

२१ कामाक्षीपुरम् के होटलों में हरिजनों को समान रूप से चाय दी गई।

२२ नालीपट्टी के सवर्ण हरिजनों को कुएँ से पानी नहीं भरने देते थे। श्री रामस्वामी कुछ हरिजनों को लेकर कुएँ पर चढ़े। इस बार किसीने ऐतराज़ नहीं किया।

२३ पटुपेरारा के हरिजन वेल्फेयर स्कूल में दोपहर के भोजन के समय हरिजनों के साथ भेद-पूर्ण व्यवहार बरता जाता था। अब ऐसा नहीं किया जाता, यद्यपि भोजन हरिजन तैयार नहीं करते।

२४ बाजपाई में चाय की दूकानों पर छूआछूत नहीं चलती।

२५ मंगलपडी के हरिजन सबके साथ बैठकर चाय पीने के लिए तैयार ही नहीं हुए। वे अलग प्यालों में और अलग कमरे में बैठकर चाय पीते हैं।

२६ मंगलपडी में स्वामी आनन्दतीर्थ कुछ हरिजन बालकों को लेकर होटल में गये। होटलवाले ने उन्हें न केवल अन्दर जाने नहीं दिया, बल्कि वह उन्हें मारने भी दौड़ा।

२७ पय्यनुर में एक राजनैतिक पीड़ित की बरसी पर सहभोज हुआ। उसमें हरिजनों के साथ भेदपूर्ण व्यवहार नहीं किया गया।

२८ पराशीन कडवु मन्दिर में जिन व्यक्तियों ने हरिजनों को अंदर जाने से रोका था, उनपर बीस-बीस रुपये जुर्माना किया गया।

२९ किलवल्वु और किलाइवुर में नाइयों ने हरिजनों के बाल काटने से इन्कार नहीं किया।

३० उसीलमपट्टी के कुएँ पर श्री रामस्वामी हरिजनों को लेकर चढ़े। किसीने आपत्ति नहीं की।

३१ एस० एस० कोट्टाई और कट्टुपट्टी में हरिजनों को दूसरों के समान चाय दी गई।

३२ चिंगलपेट के हरिजनों का कहना है कि उन्हें कोई नागरिक निर्योग्यता नहीं है। उनका मुख्य प्रश्न तो जमीन का है। जो जमीन वे वर्षों से जोतते आ रहे थे, बिल्डिंग को-आपरेटिव सोसाइटी उसे ले रही है। हरिजन, यद्यपि गांधीजी के प्रति श्रद्धालु हैं, तोभी वे साम्यवादी होते जा रहे हैं। स्त्रियाँ कहती हैं कि मद्य-निषेध उनके लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है।

३३ तिरुपवनम् के एक नाई और एक चाय के दूकानदार पर जनवरी में १०-१० रु० जुर्माना किया गया था। अब वहाँ पर कोई शिकायत नहीं है।

३४ मलम्पट्टी के सवर्ण और हरिजन एकसाथ तालाब में से पानी लेते हैं; कोई आपत्ति नहीं करता है।

३५ अरट्टपट्टी और कुंचीकरमपट्टी में होटलवालों ने हरिजनों के साथ समानता का व्यवहार किया।

राजस्थान

जयपुर की चाँदपोल-हरिजन-बस्ती में सवर्णों और हरिजनों ने मिलकर होली खेली। जयपुर की नगरपालिका में १२ भंगियों को काम दिलाया। २ व्यक्तियों को १००-१०० रु० कर्ज दिलाया। मार्च में सारे शहर के हरिजनों का सर्वे किया गया। २५ व्यक्तियों से शराब न पीने की प्रतिज्ञा ली गई। पंच-कमेटियों ने काम शुरू कर दिया।

अप्रैल मास में मानपुरा-हरिजन-बस्ती में ऋण-मुक्ति के लिए सहकारी समिति की स्थापना की गई। ६ व्यक्तियों को जयपुर-नगरपालिका में काम दिलवाया गया। ३ व्यक्तियों को १००) कर्ज दिलाया। एक प्याऊ की स्थापना कराई गई, जिसपर हरिजनों के लिए तालीं नहीं रखी गई है।

महाराष्ट्र

महाराष्ट्र में हरिजन-कार्य की प्रगति फरवरी और अप्रैल में इस प्रकार हुई :—

नासिक जिले के टिंगरी गाँव के हरिजनों ने स्थानीय मन्दिर में प्रवेश किया।

नागाझिरी गाँव के हरिजनों को खेती के लिए थोड़ी-सी जमीन मिली।

सायने, कुकाणे, दहिवल, कलवाडी, रांजे और सावकारवाडी के हरिजनों को सार्वजनिक कुओं पर चढ़ाया गया।

करंजगहाण और उंबरदे के नाइयों ने हरिजनों के बाल बनाये। यहाँ के मन्दिर भी खुल गये।

पूर्व खानदेश जिले के प्रचारक श्री वी० ना० जाधव घोडम गाँव के हरिजनों को लेकर मन्दिर में गये।

काचेगाँव में हरिजनों को सार्वजनिक कुएँ पर चढ़ाया।

अंजालेगाँव के होटलों में हरिजनों पर पाबन्दी नहीं रही।

अकोला तालुका के शेरणखेल मन्दिर में भजन-कीर्तन के समय हरिजनों ने सवर्णों के साथ भाग लिया।

सोलापुर जिले के शिरडी, सांगोला, कडलास और बेगम-

पुर गाँव के होटलों में हरिजनों के साथ भेदभाव नहीं रहा।

कडलासगाँव के सेलूनों में हरिजनों को प्रविष्ट कराया।

उत्तर सातारा के गाँव सोनेवडे व मोरगिरी के सार्वजनिक कुओं पर हरिजनों को चढ़ाया।

वाढोशीगाँव के नाई ने हरिजनों के बाल बनाये।

साकेगाँव के होटलों में हरिजनों को समानभाव से चाय पिलाई गई।

वडगाँव में भी हरिजनों को सम्मान-पूर्वक चाय पिलाई गयी।

पूर्व खानदेश के गाँव अजंग के हरिजनों ने सार्वजनिक कुएँ से पानी लिया।

कागणेगांव के होटल में समान बरताव किया गया।

शिपुर के हरिजनों को मन्दिर-प्रवेश, सेलून-प्रवेश और होटल-प्रवेश मिले।

चाडोली और चाकण में सम्मानपूर्वक चाय पिलाई गई।

मासर्गी और कार्शीवेग में हरिजनों ने होटल में प्रवेश किया।

मध्यभारत

खाचरोद इलाके के बहुत-से गाँवों में सवर्ण हिन्दू हरिजन स्त्रियों को सोने-चाँदी के आभूषण पहनने नहीं देते और न उनका दूल्हा घोड़े पर बैठ सकता है। कुएँ से पानी भरने की और देव-मन्दिरों में प्रवेश की तो बात ही क्या? ग्राम कड़ियाली में श्री दोला बलाई के लड़के की शादी थी। दो भीलों ने दूल्हा को घोड़े पर चढ़ने और स्त्रियों को चाँदी के गहने पहनकर गाँव में निकलने से रोक दिया। हरिजन औरतों पर थोड़ी दौड़ादी। हरिजन-सेवक श्री रामगोपाल मेहता ने गाँववालों को एकत्रकर समझाया और तब दूल्हे को घोड़े पर बैठाकर बाजे-गाजे के साथ और स्त्रियों को चाँदी की कड़ी पहनाकर गाँव में घुमाया।

रामगढ़ रामगढ़ के जागीरदार ने हरिजनों का सामाजिक बहिष्कार कर रखा है। पढ़ाना में नाई बाल नहीं काटते।

सारंगपुर में शिक्षा-विभाग की ओर से हरिजन-बस्ती में कन्या-पाठशाला आरम्भ की गई।

मुरार में अस्पृश्यता-निवारणार्थ एक प्रीति-भोज दिया, जिसमें १२ धारा-सभाई और शहर के ५ प्रतिष्ठित सज्जन सम्मिलित हुए।

२६ अप्रेल से २ मईतक श्री कु० वा० दातेजी की अध्यक्षता में मकडोन में एक शिविर चलाया गया। श्री काशिनाथ त्रिवेदी, श्री खोड़े और मुख्य मंत्री उसमें शरीक हुए। यहाँ रामजी का एक बड़ा मन्दिर है, जो हरिजनों के लिए खुला नहीं था। सब लोगों की भोजन-व्यवस्था उसी मन्दिर में थी। मेहतर, बलाई, चमार और सवर्ण सभी एकसाथ उसमें भोजन करते थे। गाँव के मेहतर और बलाई लोगों ने कार्यकर्त्ताओं को अपने घर भोजन कराया। इस शिविर की वजह से आस-पास के २०–२५ गाँवों में हरिजन-कार्य का अच्छा प्रचार हुआ।

खाचरोद के इलाके में बलाई व चमार ज़मीन की माँग करते हैं।

आन्ध्र

नेल्लोर में हरिजनों की ओर से भूमि की आम माँग की जा रही है। कानीगिरी के सहकारी-विभाग के इन्स्पेक्टर की सहायता से २२ मार्च १९५३ को शंकवरम् गाँव में बहुमुखी सहकारी-समिति स्थापित की गई। ९७ उसके सदस्य हैं और १–१ रुपये के ६७ हिस्से हैं। उसके सदस्यों की संख्या शीघ्र ही बढ़ने की सम्भावना है।

यहाँ के बहुत-से हरिजन ईसाई हो गये हैं, जिसके पीछे रोटी के प्रश्न की भावना प्रधान है।

अप्रेल मास में उपर्युक्त समिति के ८ हिस्सोंवाले ३ सदस्य और बन गये।

शंकवरम् और मचवरम् में ५४ हरिजन परिवारों को संघ ने २०४ एकड़ भूमि दिलाई। इसको मिलाकर अबतक हरिजनों को यहाँ १५३६ एकड़ भूमि दिलाई जा चुकी है।

कानीगिरी के प्रदेश के हरिजनों को जल-कष्ट है। गरमी के मौसम में तो वह और भी बढ़ जाता है, क्योंकि कुओं का पानी सूख जाता है। इसलिए यहाँ के हरिजन चाहते हैं कि उनके कुएँ किसी तरह और गहरे कर दिये जायें। धन की कमी के कारण पंचायतें कुछ नहीं कर सकतीं।

निर्वासितों का पुनर्वास-कार्य

निर्वासित हरिजन-पुनर्वास बोर्ड ने नीचेलिखे अनुसार काम किया :—

फरवरी, १६५३

१ दिल्ली की साँसी-बस्ती में एक मन्दिर और एक कार्य-केन्द्र बनाना शुरू किया। १४ भंगियों को काम दिलाया।

२ अहमदाबाद में निर्वासित हरिजनों की एक और सहकारी समिति बनायी। राज, बढ़ई और अकुशल मज़दूर इसके सदस्य बनाये गये।

३ कश्मीर-सरकार, निर्वासित हरिजन-पुनर्वास बोर्ड के प्रयत्नों के फलस्वरूप, कश्मीर से आये निर्वासित हरिजनों को फिर से सम्बा और जसमरगढ़ तहसील में बसाने के लिए सहमत हो गयी है। हरिजन इस शर्त पर वहाँ लौटने को तैयार हो गये हैं कि वहाँ उन्हें जो ज़मीन दी जाय वह खेतीयोग्य हो और सिंचाई की भी सुविधाएँ हों। आरम्भ में बतौर तजरबे के दो दल वहाँ भेजने का निर्णय किया गया है।

४ अलवर की किशनगढ़ तहसील के बंकरा गाँव में श्री रामलाल नामक निर्वासित हरिजन को ज़मीन दी गयी है।

५ महीने के अन्त में निर्वासित हरिजनों का गंगानगर में श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की अध्यक्षता में एक सम्मेलन हुआ। उसने, अन्य प्रस्तावों के अतिरिक्त, एक प्रस्ताव द्वारा यह माँग की कि भूमिहीन हरिजनों को दी गयी ज़मीन वापस न ली जाये।

६ गंगानगर के प्रदेश में पाकिस्तान गये हुए शरणार्थियों के १३२ मकान निर्वासित हरिजनों को दिलाये गये। १६ हरिजन परिवारों को खेतीयोग्य ज़मीन दिलाई गयी।

७ म्युनिसपल कमेटी की हद के अन्दर बसे हुए हरिजनों को उनकी झोंपड़ियों से निकाला जारहा था। बोर्ड के प्रादेशिक मन्त्री के हस्तक्षेप के कारण उन्हें वहीं रहने की अनुमति मिल गयी।

८ कच्छ प्रदेश में ३५ निर्वासित हरिजनों को सड़क बनाने और नहर खोदने के काम पर लगाया गया।

९ भारत-सरकार ने यह यक़ीन दिलाया है कि बहावलपुरी निर्वासित हरिजनों के ५०० परिवारों को पेप्सू में जो ज़मीन दी गयी है, यहाँ ज़मीन और किसी निर्वासित को नहीं दी जायेगी। इसलिए यह ज़मीन हमेशा के लिए ही हरिजनों को मिल गयी, ऐसा समझ लेना चाहिए।

१० गुलहेर और शुतराना में बसे १४० परिवारों को सरकारने २५,००० रु० का कर्ज़ देना मंजूर किया।

११ बंगाल में ३३ और निर्वासितों को ज़मीन पर बसा दिया है। १४ शरणार्थी सहकारिता के आधार पर दलदल को साफ़ कर रहे हैं, ताकि उसमें धान बोये जा सकें। फ्रेंड्स-सर्विस-यूनिट से प्राप्त ८० सेर चावल, ५० सेर गेहूं, १० सेर चीनी, ५० पाउण्ड दूध का पाउडर, १०००० विटामिन की गोलियाँ और ५० पुराने कपड़े शरणार्थियों में बाँटे गये।

१२ ब्यावर की हरिजन-कालोनी के मकान निर्वासित हरिजनों को दिये गये। अजमेर की हरिजन-बस्ती में ५ और मकान निर्वासित हरिजनों को दिये गये। मोची-मोहल्ले में प्रौढ़ स्त्रियों की शिक्षा के लिए क्लास शुरू की गयी।

मार्च, १६५३

१ दिल्ली में ४६ निर्वासित हरिजनों, ५ सांसी पुरुषों और ३ सांसी स्त्रियों को काम दिलाया गया। रामेश्वरी नगर के ४० निर्वासित हरिजनों को १६५०० रु० का कर्ज़ नीचेलिखे अनुसार दिलाया गया :—

२६ निर्वासित हरिजनों को, प्रत्येक को ५०० रु०

१४ निर्वासित हरिजनों को, प्रत्येक को २५० रु०

२ दो बूढ़ी भील स्त्रियों को छह मासतक, प्रत्येक को १५ रु० मासिक के हिसाब से, वृत्ति दिलाने का प्रबन्ध किया।

३ पंजाब में २ हरिजनों को स्थायी काम दिलाया।

४ गंगानगर प्रदेश में ३ निर्वासित हरिजन परिवारों को घर दिलाये; २६ निर्वासित हरिजनों को ज़मीन दिलायी; ४ परिवारों को पहले से दी गयी ज़मीन की मालिकी दी गयी; २०० निर्वासित हरिजनों को तकावी मिली।

५ अहमदाबाद (गुजरात) के ठक्करबापा-नगर में बिजली-पानी का प्रबन्ध पूर्ण हो गया। ३०० परिवारों को ज़मीन देने का काम शुरू कर दिया गया। उनके लिए गोकुलपुर-सहकारी समिति में १५०० रु० क़र्ज़ लिये गये, ताकि वे बीज आदि आवश्यक सामान ख़रीद सकें। अहमदाबाद कामगार सहकारी मण्डली लिमिटेड नाम की मज़दूरों की एक सहकारी समिति बनायी गयी।

६ कच्छ में पिछड़ी-जाति-विभाग से ७० निर्वासित हरिजन परिवारों के लिए ५८१० रु० की सहायता नीचे-लिखे अनुसार ली गयी :—

२० परिवारों को खेती के लिए ३००० रु०

१५ परिवारों को मकानों के लिए २२५० रु०

१५ परिवारों को गृहोद्योगों के लिए ५६० रु०

१५५ निर्वासित हरिजनों को ३४७२५ रु० पुनर्वास-क़र्ज़ के रूप में दिलाये गये; ७ परिवारों को खेती की ज़मीन दी गयी।

अप्रेल, १९५३

१ दिल्ली में ४५ निर्वासित हरिजनों को काम दिलाया। ५ सांसियों को, जिन्हें किसी कारणवश काम से बरख़ास्त कर दिया गया था, फिर से काम पर लगवाया।

२ दो हरिजन विधवाओं को मकान-किराये के बक़ाया में ५०० रु० की छूट दिलाई।

३ २ हरिजन लड़कों को फ़िरोज़पुर के अनाथालय में दाख़िल कराया गया। १२ सांसी बालकों को शिक्षा-विभाग से १-१ रु० मासिक छात्रवृत्ति दिलायी।

४ अलवर प्रदेश में ६ निर्वासित हरिजन परिवारों को ज़मीन दिलायी गयी।

५ गुजरात में २०० निर्वासित हरिजन कुटुम्बों को एक वर्ष के लिए खेती की ज़मीन दी गयी।

६ गंगानगर में चार कुटुम्बों को ज़मीन और दी गयी; १६ कुटुम्बों की जो खराब ज़मीन थी, उसके बदले में अच्छी ज़मीन दिलायी; ३५ निर्वासित हरिजन कुटुम्बों को ज़मीन दिलायी गयी; ४ को ज़मीन की मालिकी दी गयी; एक को पाकिस्तान गये शरणार्थी का घर मिला।

७ पंजाब में ५० निर्वासित हरिजन कारीगरों को और मज़दूरों को चण्डीगढ़ में काम दिलाया गया। नारायणगढ़ तहसील में १५ झगड़े सुलझाये गये।

हरिजन-उद्योगशाला, दिल्ली का कार्य-विवरण

विद्यार्थियों की संख्या

मई १९५२ के शुरू में विद्यार्थियों की कुल संख्या १४० थी, जिनमें से ५२ विद्यार्थी स्नातक होकर अपने-अपने घर चले गये। १० लड़के गर्मी की छुट्टियों के बाद घरों से वापस नहीं आये। जुलाई में ९३ नये छात्र दाख़िल हुए। इन १७१ छात्रों में से १९ बीच में ही चले गये। मई १९५३ के अन्त में छात्र-संख्या १५२ रही।

प्रांतवार संख्या छात्रों की इस प्रकार रही :—

उत्तर-प्रदेश	५७	गुजरात	४१
बिहार	१४	मध्य प्रदेश	६
पंजाब	६	राजस्थान	६
दिल्ली	५	बंगाल	३
हिमाचल-प्रदेश	२	आसाम	३
उड़ीसा	३	कुल	१५२

और उद्योग-विभागवार इस प्रकार :—

दरज़ी-विभाग	५२	बढ़ई-विभाग	३२
चमड़ा-विभाग	२८	लोहार-विभाग	२४
प्रेस-विभाग	१३	शीघ्रलिपि व टाइपिंग	३
		कुल	१५२

निर्वासित ८ विद्यार्थियों को पहले की तरह इस वर्ष भी भारत-सरकार के पुनर्वास-विभाग की तरफ से २५ रु० मासिक प्रतिविद्यार्थी छात्रवृत्ति मिली।

१५२ विद्यार्थियों में से १२ (८ निर्वासित विद्यार्थियों सहित) अन्य हिंदू-जातियों के, तथा ६ आदिम-जातियों के भी रहे।

उद्योग-शिक्षण

सभी उद्योग-विभागों का शिक्षण गत वर्ष की तरह लगभग इस वर्ष भी हुआ, कोई खास उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। प्रेस-विभाग और कताई को छोड़कर दूसरे विभागों को न्यूनाधिक घाटा रहा। कुछ विभागों में शिक्षण भी यथेष्ट संतोषकारक नहीं रहा और सुधार के लिए गुंजाइश पाई गई।

रुई की व्यवस्था इस साल क़रीब-क़रीब ठीक रही। सूत की कुल ८२३० गुण्डियाँ पाँच मन साढ़े सोलह सेर वज़न की काती गईं। पिछले साल के बकाया सूत को मिलाकर खादी १६८६॥ गज़ १४ गिरह अर्ज़ की तैयार हुई, बाकी तीन मन साढ़े सोलह सेर सूत स्टाक में जमा है, जिससे क़रीब १०६२ गज़ खादी तैयार होगी।

उद्योग-परीक्षाएँ

मई, १९५३ में जो औद्योगिक परीक्षाएँ हुईं, उनमें निचेलिखे अनुसार विद्यार्थी उत्तीर्ण होकर स्नातक हुए :—

विभाग	उत्तीर्ण
१. बढ़ई-विभाग	८
२. दरज़ी-विभाग	१५
३. चमड़ा-विभाग	६
४. प्रेस-विभाग	४
५. लोहार-विभाग (ढलाई व खराद)	१०
६. शीघ्रलिपि व टाइपिंग	२
७. कताई-विभाग	४०

साहित्य-परीक्षाएँ

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, तथा राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा की परीक्षाओं में नीचेलिखे अनुसार विद्यार्थी उत्तीर्ण हुए :—

	परीक्षा	उत्तीर्ण
हिंदी-साहित्य-सम्मेलन	मध्यमा	३
	प्रथमा	३
राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति	कोविद	२३
	परिचय	१६
	प्रवेश	३५
	प्रारम्भिक	८

विद्यार्थियों की २५ प्रतिशत मज़दूरी

'औज़ार-सहायता-योजना' के अनुसार उत्तीर्ण विद्यार्थियों को उनके तीन साल की मज़दूरी का २५ प्रतिशत अंश सन् १९५३ में इस प्रकार मिला :—

१. बढ़ई-विभाग के विद्यार्थियों को	१२७	२	०
२. दरज़ी-विभाग के विद्यार्थियों को	१४७	७	०
३. चमड़ा-विभाग के विद्यार्थियों को	७०	१५	०
कुल	३४५	८	०

उद्योग-शिक्षण और स्वावलंबन

१-४-५२ को कच्चा व तैयार

माल स्टाक में	६१८२॥-)॥
कच्चा माल खरीदा	७८३३॥=)।
शिक्षकों का वेतन	१७०५४-)
मज़दूरी	५०७५।=)।
औज़ारों की घिसाई	४५२=।।।-)॥
कुल खर्च	४३६७४॥)।।।

और आय की मदें हैं :—

माल की बिक्री से	१८२०८।।।)।
३१-३-५३ को कच्चा व तैयार माल स्टाक में	११३७४।।।=)।
कुल आय	२९५८३।≡)॥

इस आय और व्यय को देखते हुए इस वर्ष केवल उद्योग-शिक्षण ६८ प्रतिशत स्वावलंबी रहा, जब कि गत वर्ष ७१ प्रतिशत था।

उद्योग-शिक्षण के साथ यदि साहित्य-शिक्षण, पाठ्य-सामग्री तथा व्यवस्था पर होनेवाले खर्च, जो १६४१८॥) होता है, जोड़दें, तो सारा खर्च ६००६३)॥। हो जाता है। इस हिसाब से सम्पूर्ण शिक्षण ५० प्रतिशत स्वावलंबी रहा ; गत वर्ष ५३ प्रतिशत था।

इसमें यदि विद्यार्थियों के भोजन-वस्त्र, साबुन आदि का सारा खर्च शामिल कर लिया जाय, तो सारा खर्च ११३३१२=)॥। हो जाता है। और तब उद्योगशाला लगभग २७ प्रतिशत स्वावलंबी कही जा सकती है।

ध्यान रहे कि विद्यार्थी मास में साप्ताहिक छुट्टियाँ निकालकर १३ दिन पढ़ाई करते हैं और १३ दिन उद्योग का काम। गरमी की तथा अन्य छुट्टियों के २ मास और निकल जाते हैं। इसलिए साल में व्यावहारिक उद्योगों का काम केवल ४ मास ही होता है।

आर्थिक सहायताएँ

हरिजन-सेवक-संघ के द्वारा श्री माधवप्रसादजी बिड़ला ने १२५००) रु० प्रदान किये। उद्योगशाला-निधि के व्याज से २५८३८) रु० प्राप्त हुए।

नीचेलिखे राज्यों की सरकारों से हरिजन-सेवक-संघ द्वारा इस प्रकार छात्रवृत्तियाँ मिलीं :

राज्य	कुल छात्रवृत्तियाँ	प्रतिछात्रवृत्ति	कुल रकम
बिहार-सरकार	७	२५ रु० मासिक	६१५०)
उड़ीसा-सरकार	११	१५) व २५) ,,	११७०)
भोपाल-सरकार	१	२५) मासिक	१२५)
दिल्ली-सरकार	५	—	२५०)
बम्बई-सरकार	३७	२०) ,,	८८८०)
पंजाब-सरकार	२	२०) ,,	४८०)
राजस्थान-सरकार	३	२०) ,,	७५०)

अनेक हरिजन-हितैषी सज्जनों द्वारा ३४६०) रु० छात्र-वृत्तियों के रूप में प्राप्त हुए।

विशेष कार्यों के लिए सहायताएँ १५०८॥) की तथा सामान्य सहायताएँ १४३) की प्राप्त हुईं।

हमारी समस्याओं की ओर

तो समाज का नाश निश्चित

'मुंगेर जिला पिछड़ावर्ग-संघ' के प्रथम वार्षिक अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए भारत-सरकार के संवादवहन मंत्री श्री जगजीवनराम ने समाज के दलित एवं पिछड़े वर्ग की जनता को अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध डटकर खड़े होने का आह्वान करते हुए कहा—"भारत का पीड़ित और शोषितवर्ग किसीका उपकार नहीं चाहता, वह तो अपने मुनासिब अधिकारभर चाहता है। यदि कोई उपकार की भावना से शोषितों और दलितों को उनके उचित अधिकार देने का गर्व करता है, तो वह उपकार ठुकरा देने-लायक है।"

उन्होंने आगे कहा कि, "यदि गांधीजी द्वारा दिखाये गये रास्ते से समाज की विषमता, अन्याय और अत्याचार का अन्त न किया गया, तो एक ऐसा ज्वालामुखी भड़क उठेगा जो सारे समाज को भस्मसात् कर सकता है। क़ानून बनानेवाले अपनी सुविधाओं और स्वार्थों को सुरक्षित रखकर क़ानून और समाज के नियम बनाते हैं। जो सचमुच समाज की व्यवस्था को बदलना चाहते हैं उनपर आज जातीयता का आरोप लगाया जाता है।

जनता से सामाजिक असमानता और जातपाँत तथा विकृत वर्ण-व्यवस्था के खिलाफ़ ज़ोरदार और व्यापक विद्रोह करने का अनुरोध करते हुए श्रीजगजीवनरामजी ने कहा, "जिस दिन शोषित वर्ग समझ लेंगे कि शान्तिपूर्ण और वैधानिक तरीक़ों से समाज की व्यवस्था में परिवर्तन नहीं हो सकता, उस दिन इस समाज को विध्वंस करके उन्हें नयी रचना करनी होगी।"

नागरिक निर्योग्यताएँ समाप्त की जायें

२४ मार्च को दिल्ली-राज्य-विधान-सभा ने एक मत से एक ग़ैरसरकारी प्रस्ताव पास किया, जिसमें सरकार से माँग की गयी कि वह सब ऐसे आवश्यक क़दम उठाये, जिससे

कि सवर्ण हिन्दू हरिजनों को कुओं पर पानी भरने और मन्दिरों में देव-दर्शन करने से रोक न सकें।

उसी प्रस्ताव पर बोलते हुए एक हरिजन-सदस्य ने बताया कि, "एक नाई ने मेरे बाल बनाने से उस दिन इन्कार कर दिया था और सवर्णों ने मेरी लड़की को, जो बी० ए० में पढ़ती है, कुएँ से पानी नहीं भरने दिया।"

हरिजनों को औद्योगिक ऋण

बिहार-सरकार ने शाहाबाद ज़िले के ३० हरिजनों को गृहोद्योगों के विकास के लिए ६८२५)रु० का कर्ज़ देने का निश्चय किया है। रांची के १४ हरिजनों को ३०००) रु० औद्योगिक कर्ज़ के रूप में दिये जा चुके हैं।

हरिजन-आश्रम को सहायताएँ

बिहार-सरकार ने इलाहाबाद के स्व० मुंशी ईश्वर-शरण द्वारा स्थापित सुप्रसिद्ध हरिजन-आश्रम को २०००) रु० की सहायता दी है।

ईरान के भारतीय राजदूत डा० ताराचन्द ने ईरान में २५०००) रुपये इस काम के लिए एकत्र किये हैं कि उनसे हरिजन-आश्रम, इलाहाबाद में एक ऐसा पुस्तकालय बनाया जाये, जिसमें गांधी-साहित्य और ऐसे ही दूसरे नैतिक साहित्य की पुस्तकें रखी जायें।

हरिजन छात्रों को सहायता

पंजाब-सरकार ने हरिजन और सिख पिछड़ी जातियों के छात्रों के परीक्षा-शुल्क के रूप में २४३८३) रु० देना मंजूर किया है। इस प्रकार १५ मार्च १९५३ तक पिछले वर्ष में पंजाब सरकार ने हरिजन छात्रों को कुल ५६६४८) रु० की सहायता दी।

कोरियों के साथ अन्याय

आगरे से पं० राजनाथ कुंजरू एक पत्र में लिखते हैं कि "उत्तर-प्रदेश की सरकार ने अपनी १२ सितम्बर १९५० की आज्ञा से खटीक और कोरी जातियों को परिगणित जातियों की सूची से निकाल दिया था। फलस्वरूप इस साल इन दोनों जातियों के छात्रों को सरकारी छात्रवृत्तियाँ तथा अन्य सुविधाएँ मिलना बन्द हो गया।

"कोशिश करने पर खटीक जाति को तो फिर से परिगणित जातियों की सूची में ले लिया गया है, पर अभागे कोरी नहीं लिये गये। क्योंकि कोरी जाति शान्त और असंगठित है, क्या इसीलिए उसपर यह अन्याय किया जा रहा है? वे भी जाटव आदि दूसरी जातियों की ही तरह सामाजिक निर्योग्यताओं के शिकार रहते आये हैं, फिर उनपर यह अन्याय क्यों?"

विशेषाधिकार नहीं, समान अवसर

श्री जगजीवनरामजी का उनके ४५ वें जन्म-दिवस पर गत ५ अप्रेल को नई दिल्ली में अभिनन्दन किया गया था। उस अवसर पर श्री जगजीवनराम ने कहा कि, "हरिजन विशेष अधिकारों के लिए लालायित नहीं हैं। यदि उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में समान अवसरभर मिले तो वे सन्तुष्ट हो जायेंगे। तब वे यह दिखा देंगे कि वे अन्य किसी भी वर्ग या जाति से किसी भी क़दर कम नहीं हैं।"

मन्दिर खुले

हैदराबाद राज्य के अट्टपुर गांव के राम-मन्दिर में सोश्यल सर्विस-मंत्री श्री शंकरदेव हरिजनों को लेकर देव-दर्शनार्थ गये और उनके साथ हरिजनों ने पूजा भी की।

हैदराबाद राज्य के करीमनगर ज़िले का प्राचीन राजेश्वर मन्दिर भी हरिजनों के लिए खोल दिया गया। मन्त्री श्री शंकरदेव के साथ काफ़ी हरिजनों ने देवदर्शन किये।

केन्द्रीय क़ानून की सख्त ज़रूरत

विन्ध्य-प्रदेश की ओर से आये हुए हरिजन सदस्य श्री मोतीलाल मालवीय ने ३० मार्च, १९५३ को संसद् में बोलते हुए इस बात पर ज़ोर दिया कि "केवल संविधान में एक अनुच्छेद रख देनेभर से छुआछूत खत्म नहीं की जा सकती। उसे कार्यान्वित करने के लिए एक ऐसे केन्द्रीय क़ानून की ज़रूरत है, जो सारे भारत में एकसमान लागू हो सके, और जो लोग छुआछूत को बरतें उनपर पुलिस शीघ्र क़ानूनी कार्रवाई कर सके।" इसके अतिरिक्त, उन्होंने सरकार से हरिजन-सेवक-संघ जैसी ग़ैरसरकारी संस्थाओं को सहयोग देने और लेने की भी अपील की।

अस्पृश्यता के खिलाफ़ केन्द्रीय सरकार क़ानून बनायेगी

संसद् ने गत अधिवेशन में श्री एस० एन० दास का यह प्रस्ताव पास किया :—

"इस सदन की यह राय है कि एक ऐसा व्यापक

क़ानून शीघ्र बनाया जाये, जिससे छुआछूत और उससे उत्पन्न सामाजिक निर्योग्यताएँ तुरन्त खत्म हो जायें, सभी नागरिकों को समान सामाजिक स्तर पर लाया जाये और छुआछूत बरतनेवाले व्यक्ति को तुरन्त दण्ड दिया जा सके।"

इस प्रस्ताव पर बोलते हुए भारत-सरकार के उपगृह-मन्त्री श्री दातार ने "कहा यह कहना सही नहीं है कि छुआ-छूत को मिटाने के लिए सरकार ने कुछ नहीं किया। कई राज्यों ने इस सम्बन्ध में क़ानून बना दिये हैं और छुआ-छूत को हस्तक्षेप्य अपराध भी मान लिया गया है। परन्तु निजी प्रयत्नों पर बहुत कुछ निर्भर करता है।"

उन्होंने यह भी बताया कि, "जल्दी ही भारत-सरकार इस सम्बन्ध में एक ऐसा बिल संसद् में पेश करेगी, जो भारतभर में लागू होगा। किन्तु केवल क़ानून बना देना काफ़ी नहीं होगा। यह तो एक ऐसा प्रश्न है, जिसपर आप और हम सदैव सहयोग कर सकते हैं। उस सहयोग के फलस्वरूप छुआछूत बहुत जल्दी समूल नष्ट हो जायेगी, और हरिजन दूसरों के समान स्तर पर आ जायेंगे।"

बिहार में हरिजन-कार्य

विधान-सभा के सदस्यों से मिलने के लिए बिहार-हरिजन-सेवक-संघ की एक बैठक शिक्षा-मंत्री आचार्य बदरीनाथ वर्मा की अध्यक्षता में लैजिस्लेचर्स-क्लब में हुई।

बिहार-हरिजन-सेवक-संघ के मन्त्री श्रीनगेन्द्रनारायण सिनहा ने संघ के उद्देश्यों और काम को बताते हुए कहा कि संघ की प्रवृत्तियाँ सात प्रकार की हैं:—

(१) अस्पृश्यता-निवारण के लिए देहातों में ज़ोरदार प्रचार करना, (२) नगरपालिकाओं के भंगियों में कर्ज़ के लिए सहकारी समितियाँ स्थापित करना और उनका निरीक्षण करना, (३) चम्पारन ज़िले में चौतरवा डोम-बस्ती का प्रबन्ध, (४) राज्य के ६ हरिजन-छात्रावासों का निरीक्षण (५) बौरियों में सेवा-कार्य, (६) गाँवों के कुओं की मरम्मत और (७) समाज-सेवा खासकर हरिजन-सेवा के लिए "अमृत" नामक मासिक पत्र का प्रकाशन।

श्री सिनहा ने मद्य-निषेध करने की अपील की, क्योंकि इससे हरिजनों का नैतिक स्तर और आर्थिक दशा सुधर जायेगी। उन्होंने सरकार से एक ऐसा कड़ा क़ानून बनाने की भी सिफारिश की, जिससे छुआछूत माननेवालों को तुरन्त दण्ड दिया जा सके।

जोधपुर में होटल-प्रवेश-दिवस

जोधपुर के हरिजनों ने २० अप्रेल को 'होटल-प्रवेश-दिवस' मनाया। क़रीब २० हरिजन एकसाथ सोजाती गेट के एक होटल में गये और वहाँ चाय आदि माँगी। होटल-वाले ने पुलिस को टेलीफोन किया और उन्हें होटल से निकाल दिया गया। एक दूसरे होटल में उन्हें मिट्टी के सकोरों में चाय दी गई।

बिहार के हरिजनों को सरकारी सहायता

बिहार-सरकार ने हरिजनों को पीने के पानी के वास्ते कुएँ बनाने के लिए २,७५,००० रु० मंजूर किये हैं। यह रुपया ग्राम-पंचायतों की मार्फत खर्च होगा। जहाँपर ग्राम-पंचायत न हो और हरिजनों को कुएँ की ज़रूरत हो, वहाँ वे ज़िला-मजिस्ट्रेट से मिलकर इसका प्रबन्ध कर सकते हैं।

४०३ छात्रों को मासिक छात्रवृत्तियाँ दी गईं। विभिन्न छात्रावासों में रहनेवाले ८० हरिजन छात्रों को १५ रु० मासिक छात्रवृत्ति दी गई। बिक्रम और भगवानपुर में दो हरिजन छात्रावास चल रहे हैं। बिहार शरीफ़ में एक और छात्रावास खोल दिया गया। मसौढ़ी में एक और छात्रा-वास खोलने के विषय पर सरकार विचार कर रही है। इन छात्रावासों में बर्तन, मेज़-कुर्सी, नौकर, डाक्टरी सहायता आदि का पूरा प्रबन्ध है। राजगिर में २५ मुसहर और मेहतर बालक शिक्षा पा रहे हैं। सरकार उनको भोजन-वस्त्र आदि के पूरे खर्च के लिए वार्षिक २६६३४ रु० देती है। ८६ छात्र औद्योगिक और व्यावसायिक शिक्षा पा रहे हैं। सरकार उन्हें क्रमशः १५ और २५ रु० मासिक छात्र-वृत्तियाँ दे रही है।

४० हरिजनों को ७४ बीघे खास महाल भूमि दी गई। २३० हरिजनों को ८७ एकड़ नहरी ज़मीन पर बसाया गया। भंगियों की १० कर्ज़-सहकारी समितियाँ काम कर रही हैं। हरिजनों का २०,००० रु० का कर्ज़ बेबाक़ कर दिया गया। २२ हरिजनों को गृहोद्योगों के विकास के लिए ६८०० रु० दिये गये।

विषय-सूची

संशोधन

हरिजन-सेवा के मई, १९५३ के अंक में काका साहेब बरवे के "भारत में हरिजनों की समस्या" शीर्षक लेख में दो स्थानों पर नीचेलिखे अनुसार कृपया सुधार करलें :

पृष्ठ—२४, कॉलम—२ "गोरे लोगों के सभी होटलों में, शिक्षण-संस्थाओं में तथा चर्चों में नीग्रो के लिए अभीतक प्रवेश निषिद्ध है"। —इसके स्थान पर पढ़ा जाय—"गौरवर्ण लोगों के सभी होटलों में, शिक्षण-संस्थाओं में तथा ईसाई प्रार्थना-मन्दिरों में नीग्रो को अभीतक प्रवेश नहीं है।"

पृष्ठ—२९, कॉलम—१ "इतिहास में से मैं ऐसे दो उदाहरण देता हूँ। अमेरिका को इग्लैंड के शासन से स्वतन्त्र हुए १७५ वर्ष बीत गये, किन्तु नीग्रों की हालत वहाँ आज भी वैसी ही है। इतने साल बीत गये तो भी नीग्रों को संपूर्ण नागरिक अधिकार क़ानून के अभीतक नहीं मिले।" —के स्थान पर पढ़िए—"मैं ऐसे दो उदाहरण देता हूँ। अमेरिका को इग्लैंड से स्वतन्त्र हुए १७५ साल बीत गये हैं। स्वतन्त्रता के लिए अमेरिका को इंग्लैंड के साथ लड़ना पड़ा। उस स्वतन्त्र्य-युद्ध में नीग्रो के सवाल को स्थान ही नहीं था। अमेरिका तो स्वतन्त्र हो गया, किन्तु नीग्रों की हालत जैसी थी वैसी ही रही। इतने साल बीत जाने पर भी नीग्रों को सम्पूर्ण हक क़ानून से भी अभीतक नहीं मिले हैं और प्रगति धीमे-धीमे हो रही है।"

हरिजन-सेवा

हरिजन-सेवक-संघ

की
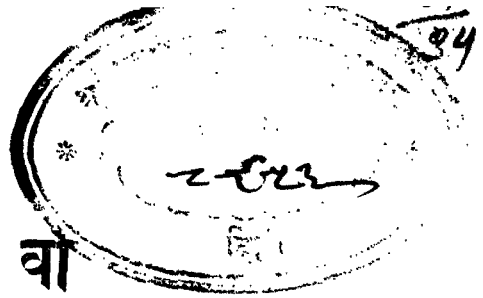
त्रैमासिक मुख-पत्रिका

दूसरा वर्ष] — अगस्त, १९५३ — [चौथा अंक

संपादकीय

हमारा 'दससूत्री' कार्यक्रम

मैंने अपने पिछले दो-ढाई वर्ष के अनेक प्रवासों में अनुभव किया कि अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-सेवा-कार्यसंबंधी सही जानकारी साधारण जनों को बहुत कम है, जिनमें अशिक्षित और रूढ़िग्रस्त ही नहीं, बल्कि कई शिक्षित और उच्चशिक्षा-प्राप्त व्यक्ति भी थे। किन्तु कहीं-कहीं पर तो कुछ रचनात्मक कार्यकर्त्ताओं को भी हमारे कार्यक्रम की रूप-रेखा के बारे में सही और आवश्यक जानकारी नहीं थी, ऐसा देखने में आया। जो व्यक्ति अस्पृश्यता-निवारण-कार्य को अपनी शक्ति और समय देकर करना चाहते हैं, स्वाभाविक है कि वे उसके उद्देश्यों और कार्यक्रम के बारे में यथेष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहें। वह उन्हें करानी ही चाहिए। ऐसे लोगों के सामने भी अपने उद्देश्य और कार्यक्रम की स्पष्ट स्थिति हमें रखनी है, जिनके मन में, स्वतंत्रता आने और गांधीजी के चले जाने के बाद, बहुधा ये दो प्रकार के विचार उठनेलगे हैं— एक तो यह कि, तबकी वे तमाम रचनात्मक प्रवृत्तियाँ केवल साधनरूप थीं, साध्य तो उनका एकमात्र स्वराज्य था। साध्य प्राप्त हो जाने के बाद चूँकि साधनों की आवश्यकता नहीं रही, अतः उनको अब उसी तरह पकड़े रहना आवश्यक नहीं है। दूसरा विचार यह कि, यदि राष्ट्र-निर्माण के लिए रचनात्मक कार्यों की कुछ आवश्यकता हो भी, तो हमारी अपनी सरकार तो उनको पूरा कर ही रही है। ये दोनों ही प्रकार के विचार बहुत अंशों में गलत हैं।

गांधीजी ने जिन ऊँचे उद्देश्यों को लेकर रचनात्मक प्रवृत्तियों को शुरू किया और चलाया था, स्पष्ट है कि वे राजनैतिक स्वतंत्रता मिल जाने के बाद भी पूरे नहीं हुए हैं। साथ ही, जिस स्वराज्य का आज हम उपभोग कर रहे है वह भी गांधीजी की अपनी कल्पना का स्वराज्य नहीं है। इसलिए गांधीजी के स्वप्न के उस स्वराज्यतक पहुँचने के पहले उनके रचनात्मक साधनों को अधबीच में ही छोड़ा नहीं जा सकता। और कुछ साधन तो ऐसे भी हैं, जिनकी आवश्यकता वास्तविक स्वराज्य प्राप्त कर लेने के बाद भी रहेगी। जबतक मानव-समाज कायम रहेगा, तबतक उत्पीड़न भी जगत् में किसी-न-किसी रूप में रहेगा और उसे दूर करने के लिए लोक-सेवकों की भी हमेशा आवश्यकता रहेगी। ऐसे लोक-सेवकों की सेना राज्य को स्वेच्छापूर्वक एक सीमा-तक अपना सहकार तो देगी, मगर अपने अस्तित्व को राज्य

से स्वतंत्र रखकर वह अपनी विविध सेवा-प्रवृत्तियों को चलायेगी। अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजनसेवा की प्रवृत्तियों को आज, और भविष्य में भी, हमें इसी दृष्टि को लेकर चलाना है। अस्पृश्यता का स्थूल रूप नष्ट हो जाने पर भी जन-सेवा का कार्यक्रम तो सदा रहने ही वाला है।

हरिजन-सेवक-संघ का मूल उद्देश्य है सत्य और अहिंसा-पूर्ण साधनों से हिंदू-समाज में से अस्पृश्यता का सर्वथा उन्मूलन, तथा हरिजनों की तमाम बाधाओं या निर्योग्यताओं का निवारण और उनको शेष हिंदुओं के बिल्कुल समान स्तर पर लाने का प्रयत्न।

अस्पृश्यता का अंत यद्यपि वैधानिक रूप में हो चुका है, तथापि व्यावहारिक रूप में अभी उसका सर्वथा अंत नहीं हुआ है। जड़ें उसकी हिल चुकी हैं, पर वे अभी उखड़ी नहीं हैं। पूर्वकालिक शासन ने अस्पृश्यता को क़ायम रखने में जो एक वैधानिक भूल की थी उनका परिमार्जन देश के स्वतंत्र होते ही विधान-परिषद् द्वारा हमारे विधि-विशारदों ने कर दिया। संविधान तथा शासन अस्पृश्यता की जड़ों को और अधिक हिला देने में कुछ हदतक मददगार हो सकते हैं, पर उनपर अंतिम कुठाराघात तो तथाकथित सवर्ण-समाज को ही करना है और हरिजनों की निःस्वार्थ सेवा करके अपने पूर्वकृत पाप का प्रायश्चित्त भी स्वयं उसीको करना है।

तब, उपर्युक्त मूल उद्देश्य को सामने रखकर अस्पृश्यता का मूलोच्छेद करने तथा अनुसूचित जातियों को सबके समान स्तर पर लाने का कार्यक्रम, सत्य और अहिंसापूर्ण साधनों द्वारा, नीचेलिखे अनुसार स्थिर किया जा सकता है :—

(१) रूढ़िप्रिय सवर्णों से संपर्क बढ़ाकर उनको अस्पृश्यता का संपूर्ण त्याग करने के लिए समय-समय पर प्रेमपूर्वक समझाया जाये। दलीलों से भी अधिक अपने शुद्ध सेवामय आचरण द्वारा अस्पृश्यता में विश्वास रखनेवाले सवर्णों के गले इस बात को उतारने का प्रयत्न किया जाये कि, अस्पृश्यता हिंदू-धर्म के मूल सिद्धांतों के तथा मानवता के एवं सामाजिक स्वास्थ्य के सर्वथा विपरीत है।

(२) ऐसे अवसर बारंबार तलाशे और पैदा किये जायें कि जिनका उपयोग सवर्णों और हरिजनों के बीच व्यवहारतः प्रेमपूर्ण संपर्क व आत्मीय संबंध बढ़ाने में किया जा सके। धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय त्योहारों, उत्सवों और खेल-कूदों में हरिजनों को प्रेमपूर्वक आमंत्रित किया जाये, और ऐसे अवसरों पर हरिजनों के घरों में भी सवर्णों को ले जाया जाये। सम्भव हो तो हरिजन-बस्तियों के पास के मैदान में सार्वजनिक सभाएँ करने और राष्ट्रीय उत्सव मनाने के भी आयोजन किये जायें।

(३) सवर्ण बहिनें हरिजन बहिनों के साथ अपना सतत संपर्क रखें, उनकी बस्तियों में जाकर उन्हें पढ़ायें लिखायें, एकाध गृह-उद्योग भी सिखायें, उनके बच्चों को प्यार करें, और उनके दुख-दर्द व हँसी-खुशी में शामिल होकर उनके साथ अपनापन बढ़ायें।

(४) विद्यार्थी छुट्टी के समय, खासकर लंबी छुट्टियों में शहरों और देहातों की हरिजन-बस्तियों में जाकर वहाँ के छोटे-छोटे बच्चों तथा प्रौढ़ों को भी साक्षर बनाने और सफ़ाई वग़ैरा करने का काम हाथ में लेलें। ग़रीब हरिजन विद्यार्थियों को अपने पास से या आपस में पैसा इकट्ठा करके पुस्तकें और अन्य पाठ्य-सामग्री जुटाने का भी वे प्रबन्ध करें। रात्रि को भी, जहाँ सम्भव हो, पढ़ाई के वर्ग चलायें और बस्ती के स्त्री-पुरुषों को सरल भाषा में कथा-वार्ता भी सुनायें।

(५) साधारण छात्रावासों में हरिजन विद्यार्थियों के रहने की व्यवस्था कराई जाये। जो अतिरिक्त खर्च आये उसे या तो सरकार से अथवा सम्भव हो तो किसी संस्था से या किसी अन्य साधन से दिलाने का प्रयत्न किया जाये।

जिन छात्रावासों की संचालन-व्यवस्था शुरू में केवल हरिजन छात्रों के लिए की गई थी उनमें थोड़े-से ग़ैर हरिजन छात्र भी कुछ शुल्क लेकर दाखिल किये जायें। हरिजन-सेवक-संघ की सीधी व्यवस्था द्वारा संचालित छात्रावासों में प्रार्थना, कताई, शरीरश्रम तथा उद्योग-शिक्षण के कार्यक्रम को स्थान देकर आश्रम के जैसा वातावरण निर्माण किया जाये।

(६) हरिजनों के हाथ से सार्वजनिक कुओं से पानी भराने, नदियों और तालाबों के सभी घाटों का समान-

रूप से उपयोग कराने, धर्मशालाओं में सबके साथ उन्हें ठहराने, भोजनालयों, होटलों, बाल काटने की दूकानों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में ले जाने और मन्दिरों में भी उनके प्रवेश कराने का कार्यक्रम ज़ोर से चलाया जाये। सार्वजनिक स्थानों के उपयोग में बाधा उपस्थित करनेवालों को प्रेम और दलील के साथ पहले खूब समझाया जाये, भारतीय संविधान की उन सब धाराओं को भी बताया जाये, जिनके अधीन अस्पृश्यता का मानना और उससे उत्पन्न किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध माना गया है, जो क़ानून के अनुसार दण्डनीय है। हरिजनों को भी बताया जाये कि उन्हें भी वे सब नागरिक अधिकार प्राप्त हैं, जो कि दूसरों को हैं। अतः उनको साहस और दृढ़ता के साथ अपने प्राप्त अधिकारों का उपयोग करना चाहिए। यदि किसी बाधा के हटने में फिर भी अत्यन्त कठिनाई मालूम दे तो अंत में निर्योग्यता-निवारक क़ानून का भी, जिन राज्यों में वह लागू है, सहारा लिया जाये। पर यह ध्यान रहे कि उनसे सवर्णों और हरिजनों के बीच कटुता न बढ़ने पाये।

(७) इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि, देश के लगभग सभी भागों में हरिजन प्रायः भूमिहीन हैं और उनकी भूमिहीनता उनकी दरिद्रता और उनपर आये दिन होनेवाले अनेक तरह के अत्याचारों का एक बड़ा कारण है, ऐसे तमाम हरिजनों को, जो या तो खेतिहर मज़दूर हैं या बटाई पर खेती करते हैं या जो ज़मीन मिल जाने पर खेती करना चाहते हैं, ज़मीन दिलाने का प्रयत्न किया जाये, और इस बात का भी प्रयत्न हो कि जिन खेतों पर वर्षों से वे खेती करते आ रहे हैं उनसे उनको बेदखल न किया जा सके। बेदखली के मामलों में ग़रीब हरिजनों को सेवाभावी वकीलों द्वारा निःशुल्क क़ानूनी सहायता दिलाने का भी यत्न किया जाये।

विनोबाजी के भूदान-यज्ञ से प्राप्त कम-से-कम एक तिहाई भूमि खेती करनेवाले और खेती करने के इच्छुक हरिजनों को, भूदान-समितियों के संचालकों से मिलकर, दिलाने का प्रयास किया जाये। उनके लिए कूप-दान द्वारा कुएँ और खेती के दूसरे ज़रूरी साधन भी जुटा देने का प्रयत्न किया जाये।

(८) देहातों में, जहाँ आबादी बढ़ जाने के कारण घरों की तंगी देखने में आये, वहाँ नये घर बनाने और पास ही अपने गुज़ारेलायक साग-भाजी उगा लेने के लिए ज़मीन सरकार से दिलवाई जाये, जिसपर उन्हें अपनी मालिकी का हक़ हो।

शहरों में, खासकर सफ़ाई-काम करनेवाले हरिजनों के लिए स्वच्छ स्थानों पर और यदि जगह मिल सके तो आम बस्ती के बीच में या उसके नज़दीक अच्छे हवादार मकान नगरपालिकाओं द्वारा बनवाने और वहाँ पर्याप्त प्रकाश, पानी और सफ़ाई की व्यवस्था कराने का ज़ोरदार प्रयत्न किया जाये।

(९) इस बात को ध्यान में रखते हुए कि पाखानों और नालियों आदि की मौजूदा सफ़ाई-पद्धति बहुत गंदी बल्कि अमानुषिक है, नगरपालिकाओं पर ज़ोर डालकर निजी व आम पाखानों और गटरों में तथा उनकी सफ़ाई की पद्धति और उसके साधनों में तत्काल इस प्रकार के आवश्यक सुधार कराने का प्रयास किया जाये, जो स्वच्छतापूर्ण और वैज्ञानिक हों।

(१०) बड़े-बड़े कल-कारखानों द्वारा तैयार होनेवाली चीज़ों की प्रतियोगिता में न ठहरकर हरिजनों के जो अनेक पुश्तैनी उद्योग-धन्धे दिन प्रतिदिन मरते जा रहे हैं, और जिसके फलस्वरूप भयकर बेकारी फैलती जा रही है, उन गृह-उद्योगों को अकाल मृत्यु से बचाने के लिए एक तरफ तो सरकार पर यह ज़ोर डाला जाये कि वह उन उद्योग-धन्धों को आवश्यक संरक्षण दे, और दूसरी तरफ गृह-उद्योगों की चीज़ों को स्वदेशी की भावना से अपनाने के लिए देश-व्यापी प्रचार किया जाये।

इस 'दससूत्री' कार्यक्रम में अस्पृश्यता-उन्मूलन एवं निर्योग्यता-निवारण तथा हरिजनों के सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान का समावेश हो जाता है। इस कार्यक्रम को समग्र-रूप में अथवा आंशिकरूप में, जहाँ जैसी साधन-सुविधा हो, चलाया जा सकता है। सिर्फ़ हरिजन-सेवक ही नहीं, बल्कि

दूसरे भी रचनात्मक कार्यकर्त्ता और सुधारक, चाहे वे किसी भी पक्ष के हों, इस कार्यक्रम को हाथ में ले सकते हैं। जहाँतक अस्पृश्यता-निवारण का प्रश्न है, उसे तो स्वतः-प्रेरणा से धर्मसंशोधन की दृष्टि से सवर्ण-समाज को ही हल करना है। हरिजनों के आर्थिक उत्थानों तथा उन्हें समान स्तर पर लाने के प्रश्न ऐसे हैं, जिनमें हमारे लोकनेता, जन-सेवक, संसद और राज्य-विधान-सभाओं के सदस्य, सेवाभावी वकील, डाक्टर, अध्यापक, विद्यार्थी और सरकारी अधिकारी और कर्मचारी भी दिलचस्पी ले सकते हैं, और जिनके हल करने में जिनसे जितना बने अपना-अपना योग भी दे सकते हैं।

ऊपर का यह कार्यक्रम कोई नया नहीं है। हरिजन-सेवक-संघ वर्षों से अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-कल्याण के विविध कार्यों को अपनी मर्यादित शक्ति तथा साधनों से चलाता आ रहा है, और उसे न्यूनाधिक रूप में सफलता भी मिली है। अस्पृश्यता-निवारण की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति और अधिक वेग के साथ चले इसी दृष्टि से उसके कार्यक्रम को एक योजित रूप में रखने का यह प्रयत्न है।

हमारा एकमात्र ध्येय

अपनी पिछली बीमारी के दिनों में एक हरिजन-प्रवृत्ति पर ही मेरा ध्यान सदा केन्द्रित रहा। साथ ही, अपनी सीमित शक्ति और संघ के यथोपलब्ध साधनों का भी ज्ञान निरन्तर रहा। पूज्य बापा ने जितना कार्य किया था, उतने को ही हम क़ायम रख सकें, तो हमें संतोष होगा। उनके अनुग्रह से कार्य का अधिक विस्तार कर सकें तो और भी अधिक परितोष होगा। मैं अनुभव करता हूँ कि संघ की प्रान्तीय शाखाओं में से कुछ तो अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-सेवा का कार्य काफ़ी संतोषजनक रीति से कर रही हैं, किन्तु कुछ स्थानों पर कार्य की गति पिछले कई वर्षों से कुछ मन्द-सी देखने में आती है। पूज्य गांधीजी के निधन के पश्चात् तथा स्वराज्य आने के बाद यों लगभग सभी रचनात्मक कार्यों की तरफ़ लोकनेताओं तथा जनसेवकों का ध्यान पहले के जैसा नहीं रहा। यह दुर्भाग्य की बात है! एक इस ग़लत धारणा से भी बहुत-कुछ शिथिलता आ गई है कि चूँकि भारतीय संविधान ने अस्पृश्यता का सब प्रकार से अन्त कर दिया है, और केन्द्र-सरकार तथा राज्य-सरकारें तो हरिजन-कल्याण का कार्य कर ही रही हैं, इसलिए अब हम हरिजन-सेवकों को कुछ खास करने का नहीं रहा है। गांधीजी और ठक्कर बापा के मार्ग-दर्शन में जिन कार्यकर्त्ताओं ने शिक्षा पाई थी, वे तो वैसी ही लगन और परिश्रम के साथ काम कर रहे हैं, किन्तु कुछेक अन्य कार्यकर्त्ताओं का ध्यान राजनैतिक, खासकर एक के बाद दूसरे आनेवाले चुनावों के काम की ओर ही अधिक आकृष्ट देखने में आया है। प्रायः हरेक रचनात्मक क्षेत्र में शुद्ध धर्म-दृष्टि से काम करनेवाले लोकसेवक देश की बदली हुई परिस्थितियों में बहुत कम देखने में आ रहे हैं, फिर भी हताश होने का कोई कारण नहीं। जितने भी कुछ कार्यकर्त्ता अस्पृश्यता-निवारण के महत्त्व को गहराई से अनुभव करते रहे हैं उनकी सेवा-साधना अवश्य सफल हुई है और आगे भी होगी, इसमें संदेह नहीं।

वैसे तो कितने ही पिछड़े वर्गों और पिछड़ी जातियों के अनेक जटिल प्रश्न आज हमारे स्वतंत्र राष्ट्र के सामने हैं। पर हरिजनों का प्रश्न केवल 'पिछड़ेपन' का ही प्रश्न नहीं है। जिन अनेक सामाजिक व नागरिक निर्योग्यताओं के वे आज भी शिकार बने हुए हैं, वे निर्योग्यताएँ अन्यथा पिछड़ी हुई दूसरी जातियों में नहीं मिलती हैं। अस्पृश्यता का यह घातक प्रश्न तो देश में और विदेशों में लज्जा से हमारा सिर आज भी नीचा कर रहा है। गांधीजी को हिन्दू-धर्म पर लगे इसी महाकलंक को धोने के लिए अपने प्राणों की भी बाजी १९३२ में लगा देनी पड़ी थी।

अस्पृश्यता-निवारण या निर्योग्यता-निवारण केवल क़ानून के बल पर या राज-दण्ड के भय से सम्भव नहीं। क़ानून भी अन्त में कुछ सहायक तो हो सकता है, पर असल में तो सवर्णों के हृदय-परिवर्तन के द्वारा ही अस्पृश्यता का सम्पूर्ण निवारण सम्भव है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि गांधीजी के घोर तप तथा स्व० ठक्कर बापा द्वारा संचालित हरिजन-सेवक-संघ के निरन्तर प्रयत्नों, और काल की गति से भी, वातावरण में कुछ खासा परिवर्तन हुआ है। किन्तु कोई कारण नहीं कि इतने मात्र से आत्म-संतोष करके हम बैठ जायँ।

केन्द्र-सरकार तथा राज्य-सरकारें परिगणित जातियों को सबके समान स्तर पर लाने के जो अनेकविध प्रयत्न कर रही हैं, उनके प्रति उचित संतोष प्रकट करते हुए तथा उन प्रयत्नों को अधिक ज़ोरदार बनाने के लिए सरकारों को प्रेरित **करते हुए,** पर उन्हींपर निर्भर न रहकर, हम हरिजन-सेवकों **को अपने** खुद के कर्त्तव्यों और प्रयत्नों के प्रति अधिक-से-**अधिक कृतसंकल्प** और जागृत रहना है, क्योंकि अस्पृश्यता-**निवारण** तथा हरिजन-सेवा की जिम्मेदारी मूलतः हिन्दू-समाज पर आती है।

ग्रामों में और अनेक कस्बों में भी, किसी-किसी शहर में भी, अस्पृश्यता के भयंकर रूप आज भी सुनने व देखने में आते हैं। कहीं पर उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाता है, कहीं-कहीं उनके झोंपड़ों में आग लगा दी जाती है और उन्हें क़त्लतक कर दिया जाता है। उनकी भूमि-हीनता के कारण तो उनकी बदतर हालत है ही। जहाँ भी हरिजनों पर ऐसे-ऐसे अत्याचार होते हुए सुने और देखे जायँ वहाँ तुरन्त हरिजन-सेवक दौड़कर उनके निवारण का प्रयत्न करें। सेवाभावी वकील भी उनके मामलों में 'बुद्धि-दान' देकर बग़ैर फ़ीस लिये पैरवी करें।

सार्वजनिक कुओं और दूसरे जलाशयों को खुलवाने, देव-मन्दिरों तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों में सबके समान हरिजनों का प्रवेश कराने आदि का कार्यक्रम तो हरिजन-सेवकों को पूरे ज़ोर से चलाना ही चाहिए।

म्यूनिसिपैलिटियों और ग्राम-पंचायतों पर ज़ोर डालकर नगर-सफ़ाई व ग्राम-सफ़ाई करनेवाले हरिजन कर्मचारियों **के काम और साधनों में सुधार, और** उनके लिए घरों की, पानी की व रोशनी इत्यादि की आवश्यक व्यवस्था तत्परता-पूर्वक करानी चाहिए।

आचार्य विनोबा के भूमिदान-आन्दोलन से भी पूरा लाभ उठाना चाहिए। भूमिदान-यज्ञ के सिलसिले में जो लोकनेता और सर्वोदयी कार्यकर्ता गाँव-गाँव में पैदल यात्रा कर रहे हैं, उनका ध्यान हरिजन-समस्या पर अवश्य जाता होगा। तो फिर उनकी यात्राओं से लाभ क्यों न उठाया जाय? हरिजन-सेवक स्थानीय भूमि-वितरण-समितियों से संपर्क स्थापित करें और आचार्य विनोबाजी द्वारा दिये वचन के अनुसार एक-तिहाई खेतीयोग्य भूमि, और जहाँ सम्भव हो वहाँ बैल भी, हरिजनों को दिलाने का प्रयत्न करें। जहाँ घोर जल-कष्ट देखने में आये वहाँ 'कूप-दान' करने के लिए भी लोगों को प्रेरित करें। और भी कितने ही ऐसे कार्य हैं, जिनको उत्साह और निष्ठा से हाथों में लेकर हरिजन-सेवक-संघ के कार्यकर्त्ता अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजनों की सामाजिक और आर्थिक उन्नति कर सकते हैं। संक्षेप में कहा जाये तो गांधीजी और बापाजी के छोड़े हुए अधूरे काम पर हमारी निरन्तर दृष्टि रहे। अस्पृश्यता का जल्द-से-जल्द नाश कर देना ही हम हरिजन-सेवकों का एकमात्र ध्येय हो।

हरिजनों का जल-कष्ट और उसका निवारण

जिन सार्वजनिक स्थानों का समान उपयोग हरिजनों द्वारा हमें प्रयत्नपूर्वक कराना है उनमें कुओं एवं अन्य जलाशयों का उपयोग सबसे अधिक महत्त्व रखता है। मंदिरों में यदि उनको जाने नहीं दिया जाता, या वे स्वयं ही उनमें नहीं जाना चाहते, तो इससे उनका अपना कुछ खास बिगड़ता नहीं है। यह तो हिन्दू-धर्म पर लगा हुआ एक लज्जास्पद कलंक है, जिसे सवर्ण-समाज को, हरिजनों द्वारा मन्दिर-प्रवेश की माँग न रखते हुए भी, स्वयं ही मिटाना है। होटलों और उपाहारगृहों में यदि हरिजनों के साथ अपमान-जनक भेद-भाव बरता जाता है, तो या तो वे होटलवालों पर क़ानून का सहारा लेकर मुकदमा चला सकते हैं, या ऐसे होटलों और उपाहारगृहों में वे जायेंगे ही नहीं। ऐसी हालत में अगर वे अपने लिए अपने खास होटल खोज लेते हैं तो उससे उनका काम तो चल जायेगा, पर सवर्णों के लिए यह एक शर्म की बात होगी। ऐसे नये होटल और उपाहारगृह अस्पृश्यता-निवारण में सहायक हो सकते हैं, यदि उनमें जाकर सवर्ण हिन्दू भी खाने-पीने लग जायें। शिक्षण-शालाओं में हरिजन बच्चों के साथ जो भेद-भाव पहले बरता जाता था वह आज सद्भाग्य से दूर हो गया है। सभा-सम्मेलनों में भी हरिजनों के साथ आज शायद ही कभी कहीं भेद-भाव बरता जाता है। ग्रामों में अभी ज़रूर अर्के-

जनिक समारोहों में कभी-कभी कुछ भेदपूर्ण बर्ताव देखने में आते हैं। मगर सार्वजनिक स्थानों और समारोहों की अपेक्षा कुओं व अन्य जलाशयों के उपयोग का प्रश्न जटिल और भयंकर है। जिन थोड़े-से भागों में हरिजन-सेवकों की ओर से, और कहीं-कहीं सरकार के प्रयत्न से भी, कुछ काम हुआ है वहाँ थोड़ी संख्या में सार्वजनिक कुओं और अन्य जलाशयों का उपयोग हरिजन करने लगे हैं। उनकी बस्तियों में कुछ नये कुएँ खुद जाने से भी उनका अपमान-पूर्ण जल-कष्ट कहीं-कहीं कुछ कम हो गया है।

जल-कष्ट-निवारण के तब दो उपाय या दो रास्ते हैं—एक तो यह कि आपत्ति उठानेवाले लोगों को अच्छी तरह समझा-बुझाकर या अन्त में निर्योग्यता-निवारक कानून का सहारा लेकर सार्वजनिक—मकान के अन्दर के कुएँ के सिवा सार्वजनिक तो सब कुएँ होते ही हैं—कुओं को सभी के लिए खुलवा दिया जाय; और दूसरा यह कि तात्कालिक कष्टपूर्ण स्थिति को देखते हुए हरिजनों की बस्तियों के पास या तो राज्य-सरकारों द्वारा कुएँ खुदवाने का प्रबन्ध कराया जाय या लोगों को कूपदान करने के लिए प्रेरित किया जाये। हरिजनों की जो बस्तियाँ ग्रामों की आम आबादी से दूर हों उनके नज़दीक तो नये कुएँ खुदवाना आवश्यक ही है। किन्तु प्रश्न यह है कि क्या दया-भावना से द्रवित होकर जल-कष्ट दूर करने के लिए अलग कुएँ खुदवाने का ही कार्यक्रम प्रमुखरूप से हाथ में ले लिया जाये? इसमें सन्देह नहीं कि हरिजनों के जल-कष्ट को जल्द-से-जल्द दूर करना हमारा सबका और सरकार का पहला फर्ज है। यह मानते हुए भी अलग कुएँ खुदवाने पर बहुत ज़ोर देना अस्पृश्यता-निवारण का मुख्य कार्यक्रम नहीं हो सकता। सार्वजनिक कुओं पर हरिजनों को चढ़ाने का हमारा मुख्य कार्यक्रम इससे शिथिल भी पड़ जा सकता है। हमें एक क्षण के लिए भी यह नहीं भूलना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारण द्वारा समाज में समानता स्थापित करना ही हमारा मुख्य प्रश्न है; दूसरे सब उपप्रश्न हैं।

ऊपर की इस भूमिका को सामने रखकर हरिजन-सेवक-संघ ने सार्वजनिक कुओं और जलाशयों को अधिक-से-अधिक संख्या में हरिजनों के लिए खुलवाने का शुरू से ही आग्रह रखा है। मेरा निवेदन है कि पूज्य ठक्कर बापा की जयन्ती तक, जो २९ नवम्बर को पड़ेगी, प्रेमपूर्वक लोगों को समझा-बुझाकर और जहाँ ज़रूरत ही हो वहाँ सामाजिक निर्योग्यता-निवारक क़ानून का सहारा लेकर भी अधिक-से-अधिक कुएँ व अन्य जलाशय हरिजनों के लिए खुलवाये जायें। साथ ही, जिन स्थानों में हरिजन-बस्तियाँ आम आबादी से दूर हों वहाँ का जल-कष्ट दूर करने के लिए सरकार द्वारा कुएँ सबके समान उपयोग के निमित्त खुदवाने का भरसक प्रयत्न कराया जाये, और लोगों से कूप-दान करने का भी अनुरोध किया जाये।

इससे पहले नीचेलिखे अनुसार कुछ चुने हुए क्षेत्रों की जाँच करा लेनी आवश्यक है—

(१) ऐसे कितने कुएँ और अन्य जलाशय हैं, जिनका उपयोग पहले से ही हरिजन बिना किसी रोक-टोक के सबके समान करते आ रहे हैं? उन कुओं से एकसाथ एक ही समय में सब पानी भरते हैं, या अलग समय में? कुएँ की जगत का अलग स्थान या पनघट उनके लिए नियत तो नहीं है?

(२) हरिजन-सेवकों या सरकारी अधिकारियों के प्रयत्न से हाल में कितने कुएँ और दूसरे जलाशय हरिजनों के लिए खोल दिये गये हैं? खोल दिये जाने के बाद उनसे हरिजन क्या रोज़ पानी भरते हैं?

(३) खासकर हरिजनों के लिए कितने नये कुएँ सरकार के ज़रिये या सार्वजनिक प्रयत्न से बनवाये गये हैं?

(४) सार्वजनिक कुओं और अन्य जलाशयों पर भेद-भाव बरतने के कारण हरिजनों को क्या-क्या अपमान और कष्ट उठाने पड़ते हैं?

(५) जल-कष्ट-निवारण के लिए सरकारी और ग़ैर-सरकारी क्या प्रयत्न हो रहे हैं?

हरिजनों का मंदिर-प्रवेश

हरिजन-सेवक-संघ की मुख-पत्रिका "हरिजन-सेवा" के नवम्बर, १९५२ के अंक में 'मंदिर-प्रवेश' शीर्षक एक लेख मैंने लिखा था। इस लेख का काफ़ी अच्छा प्रचार हुआ। अनेक

हिन्दी और अंग्रेजी पत्रों में यह लेख प्रकाशित हुआ और मेरे एक हरिजन-सेवी मित्र ने हिन्दी और अंग्रेजी में इसकी हजारों प्रतियाँ छपवाकर कितने ही नगरों में वितरण कराईं। एक-दो पत्रों ने इस लेख की आलोचना भी की। उनकी दृष्टि में मेरा यह लिखना सही नहीं है कि उत्तर भारत के काशी, अयोध्या और मथुरा जैसे बड़े-बड़े तीर्थ-स्थानों के मंदिर आज भी हरिजनों के लिए बन्द हैं। उत्तर प्रदेश की सरकार का भी ध्यान उक्त लेख पर गया। गवर्नमेंट की ओर से मुझे एक पत्र में लिखा गया है कि उसने आवश्यक पूछ-ताछ करने के उपरान्त यह पाया कि अयोध्या और मथुरा में एक भी मंदिर हरिजनों के लिए बन्द नहीं है। काशी के विश्वनाथ-मंदिर और अन्नपूर्णा-मन्दिर में भी हरिजन दर्शनार्थ जाते हैं। हाँ, बनारस में एक गोपाल-मन्दिर ही नहीं खुला है, और इसी प्रकार वृन्दवान के रंगजी के मन्दिर में भी हरिजनों का प्रवेश बन्द है। मेरा ध्यान उत्तर प्रदेश की गवर्नमेंट के १९४७ के सामाजिक-निर्योग्यता-निवारक क़ानून की तरफ खींचा गया है, जिसके मातहत किसी भी ऐसे व्यक्ति पर मामला चलाकर उसे दण्ड दिया जा सकता है, जो किसी ऐसे दर्शनार्थी को सार्वजनिक मन्दिर में जाने से रोके, जो कि परिगणित जाति का हो। इस बात पर भी मेरा ध्यान आकृष्ट किया गया है कि गवर्नमेंट हमेशा ही इस बात पर सतर्क रही है कि हरिजनों को उत्तर प्रदेश राज्य में किसी भी सामाजिक निर्योग्यता से पीड़ित न होने दिया जाये और सभी ज़िलों के अधिकारियों को यह आदेश दिया जा चुका है कि जो शख्स सामाजिक निर्योग्यता-निवारक क़ानून की धाराओं का उल्लंघन करे, उसके साथ सख्ती से कार्रवाई की जाये।

उत्तर प्रदेश की गवर्नमेंट का मैं आभार मानता हूँ कि उसका ध्यान मेरे उक्त लेख पर गया और इस बात का स्पष्टीकरण करते हुए उसने आश्वासन दिया कि उसने वैधानिक कर्त्तव्य का ही पालन नहीं किया है, बल्कि हरिजनों की सामाजिक निर्योग्यताएँ दूर करने और उनके नागरिक अधिकारों को सुरक्षित रखने का भी हमेशा ध्यान रखा है। सरकार से मुझे इस बारे में कोई शिकायत भी नहीं है। सामाजिक निर्योग्यता-निवारक क़ानून को यदि अन्य कई राज्यों की तरह उत्तर प्रदेश की सरकार ने 'काग्निजेबल' अर्थात् हस्तक्षेप्य बना दिया होता, तो उससे निर्योग्यता-निवारण में कहीं ज्यादा मदद मिली होती। पर अब तो भारतीय संविधान बन जाने के बाद राज्य-सरकारें इन क़ानूनों में शायद संशोधन नहीं कर सकतीं। आशा है कि भारतीय लोक-संसद के अगले अधिवेशन में इस सम्बन्ध का जो सरकारी बिल आनेवाला है, उसके मातहत ऐसे अपराधों को हस्तक्षेप्य मान लिया जायेगा। मेरा निवेदन तो सामान्यरूप से खासकर उत्तर भारत के जन-सेवकों, लोकनेताओं और जनसाधारण से था और है कि काशी, अयोध्या, और मथुरा और बदरीनाथ जैसे बड़े-बड़े तीर्थ-स्थानों के प्रसिद्ध मंदिरों में हरिजनों का प्रवेश वे उसी प्रकार करायें, जिस प्रकार निर्वाधरूप से दक्षिण भारत के बड़े-बड़े मन्दिरों में जाकर हरिजन देव-दर्शन और पूजन करते हैं।

मैं यह मानता हूँ कि सभी छोटे-बड़े मंदिरों में दूसरे दर्शनार्थियों के साथ हरिजन भी चले जाते हैं। ऐसा कोई खास पहिचान का चिन्ह तो होता नहीं, कि जिससे यह जाना जा सके कि अमुक दर्शनार्थी सवर्ण है और अमुक हरिजन, और न किसी दर्शनार्थी से उसकी जाति पूछने की ज़रूरत रहती है और न उसे अपनी जाति बताने की। मगर प्रश्न यह है कि यदि कोई हरिजन जाना-पहिचाना आदमी हो तो उसे काशी के विश्वनाथ-मंदिर में या अयोध्या के प्रख्यात मन्दिरों के अन्दर या मथुरा के द्वारिकाधीश-मन्दिर में और वृन्दावन के श्री राधारमणजी, श्री बिहारीजी और श्री राधावल्लभजी के मन्दिर में क्या उसी तरह जाने दिया जायेगा, जिस तरह कि दूसरे दर्शनार्थी जाते हैं? इन मन्दिरों के सामने झाड़ू लगानेवाला भंगी और जूते टाँकनेवाला कोई चर्मकार नहा-धोकर और साफ़ कपड़े पहनकर (यद्यपि दूसरे दर्शनार्थियों के लिए यह भी आवश्यक नहीं है।) क्या दर्शन और पूजन के लिए जाता है? यदि उन मन्दिरों में हरिजनों का प्रवेश इस प्रकार होता है, तो यह बड़े आनन्द की बात होगी और मैं नम्रतापूर्वक मान लूँगा कि मेरा वैसा लिखना सही नहीं था।

काशी, अयोध्या, मथुरा व बदरीनारायण आदि तीर्थ-स्थानों के हरिजन-सेवकों को चाहिए कि कभी-कभी अपने साथ दस-दस पांच-पांच हरिजनों को स्नान कराकर और स्वच्छ वस्त्र पहनाकर कीर्तन करते हुए दर्शन व पूजन के लिए मन्दिरों में ले जाया करें। इससे पूर्व हरिजन-सेवक मन्दिर के पुजारियों और अधिकारियों को इस आन्दोलन की धर्म-भावना को समझाने और उनके गले उतारने का पूरा प्रयत्न करें, साथ ही सामाजिक-निर्योग्यता-निवारक क़ानून की धाराओं की तरफ भी उनका ध्यान दिलायें। कोई दो साल पहले मैं अपने साथ उज्जैन के महाकालेश्वर-मन्दिर में इसी प्रकार हरिजनों की एक टोली को लेकर गया था। हरिजनों ने शिवलिंग पर जल और फूल अपने हाथ से चढ़ाये थे। पुजारियों ने यह जानते हुए भी कि वे हरिजन थे किसी प्रकार की आपत्ति नहीं की थी, हम सबको एक समान प्रसादरूप में उन्होंने विल्वपत्र भी दिये थे। जो हरिजन-सेवक और हरिजन दर्शन-पूजन के लिए इन मंदिरों में जायें, उनमें मन्दिरों के प्रति श्रद्धा-भावना अवश्य होनी चाहिए। यदि उनको अन्दर जाने से रोका जाये, तो शान्तिपूर्वक मन्दिर के द्वार पर फूल चढ़ाकर उन्हें लौट आना चाहिए। ज़िले के अधिकारी के दफ्तर में जाकर वे शिकायत लिखादें कि उनको अमुक मन्दिर में जाने से रोका गया है और सामाजिक-निर्योग्यता-निवारण क़ानून का तथा भारतीय संविधान का भी उल्लंघन किया गया है। मन्दिर-प्रवेश के कार्य को जो हरिजन-सेवक हाथ में लें, वे निश्चय ही सत्य और अहिंसा में दृढ़ निष्ठा रखनेवाले हों। वे यह न भूलें कि यह शुद्ध धर्म-संशोधन की प्रवृत्ति है। पुजारियों और अधिकारियों के हृदय को उन्हें प्रेम से जीतना है और यह बतला देना है कि जिन मन्दिरों के द्वार किसी भी दर्शनार्थी के लिए बन्द रखे गये हैं, उनके अन्दर से भगवान् उन देव-स्थानों को छोड़कर चले गये हैं।

मेरा यह दृढ़ मत है कि धर्म-संशोधन के मामलों में क़ानून का सहारा लेना बहुत अच्छा नहीं है। क़ानून तो अन्त में एक लाचारी का हथियार है। उसका या तो बिल्कुल नहीं या कभी कहीं बहुत ही कम, लाचारी की हालत में, उपयोग करना चाहिए।

असल में तो सभी तीर्थ-स्थानों के बड़े-बड़े प्रसिद्ध मन्दिरों में स्वच्छता के सर्वसामान्य नियमों के साथ बिना किसी भेद-भाव के सब दर्शनार्थियों को दर्शन और पूजन के लिए जाने देना चाहिए। यह दलील न दी जाये कि मन्दिरों में जाने और पूजा करने की ओर से हरिजन स्वयं ही उदासीन हैं अथवा उनके सामने तो प्रश्न भूमि और रोटी का है, मन्दिर में जाने का नहीं। सवर्ण कहे जानेवाले समाज को इस दलील से प्रभावित होने का कोई कारण नहीं। सभी या एक बड़ा भाग सवर्णों का भी कब मंदिरों में नियम से जाता है, मगर जाना चाहें तो बिना किसी रोक-टोक के वे मंदिरों में देव-दर्शनार्थ जा सकते हैं। यही बात हरिजनों पर लागू नहीं होती है; वे जाना भी चाहें तो भी उनके लिए मन्दिरों के द्वार बन्द हैं। अतः वास्तव में मन्दिरों में हरिजनों के प्रवेश करने या न करने का प्रश्न नहीं है; प्रश्न है उन्हें प्रवेशाधिकार देने व दिलाने का, अपने हृदय-द्वार खोल देने का।

वि० ह०

मन्दिर-प्रवेश का आशय

[१९३९ के जून में कनगेरी (बंगलोर के पास) की हरिजन-सेवक-परिषद् में गांधीजी ने हरिजनों के मन्दिर-प्रवेश के संबंध में जो भाषण दिया था उसे हम २० जून, १९३९ के 'हरिजन-सेवक' से नीचे उद्धृत कर रहे हैं—सं०]

अगर किसी मन्दिर में आप रोज़ नियमितरूप से जाते हैं, तो अपने साथ हरिजनों को भी मन्दिर में ले जाया करें। पर यदि आप देखें कि आपको हरिजन भाइयों के साथ मन्दिर में नहीं जाने दिया जाता, तो उस मन्दिर से आप उसी तरह दूर रहें, जिस तरह कि आप बिच्छू या आग से बचा करते हैं। मेरी ही तरह आपकी यदि इस बात में जीवन्त श्रद्धा

है कि अस्पृश्यता अधर्म है, तब आप भी मेरी ही तरह इस बात पर विश्वास करने लगेंगे कि ऐसे मन्दिरों में भगवान् का वास नहीं है। जगद्-विख्यात काशी-विश्वनाथ के मंदिर को मैं उदाहरण के रूप में लेता हूँ। वह मन्दिर भगवान् विश्वनाथ का अर्थात् जगत् के नाथ का है ऐसा मानते हैं और फिर उन्हीं भगवान् विश्वनाथ के नाम पर आज ये सवर्ण हिन्दू हरिजनों से कहते हैं कि इस मन्दिर में तुम लोग प्रवेश नहीं कर सकते!

मैं किसी चुस्त सनातनी हिन्दू से कुछ कम नहीं हूँ, यह मेरा दावा है। हिन्दूधर्म के तमाम अनुशासनों को अपने खुद के जीवन में उतारने का मैंने अपनी योग्यताभर प्रयत्न किया है। मैं मानता हूँ कि योग्यता मेरी अल्प है। पर हिन्दूधर्म के प्रति मेरे हृदय में जो भाव और भक्ति है, उसपर मेरी क्षुद्र योग्यता का कोई असर पड़ने का नहीं। हिन्दूधर्म के प्रति उस सब भक्तिभाव के होते हुए भी अपने खुद के उचित उत्तरदायित्व के साथ मैं आपसे कहता हूँ कि जबतक एक भी हरिजन के लिए काशी के सुविख्यात मंदिर के द्वार बन्द पड़े हैं, तबतक उसके अंदर भगवान् विश्वनाथ का वास नहीं है और इस विश्वास से कि वह मन्दिर पुनीत है या इस श्रद्धा से कि वहाँ भगवान् की पूजा-अर्चा करने से मेरे पाप धुल जायेंगे, मैं अपने वशभर उस मन्दिर के पास फटक भी नहीं सकता। ऐसे मन्दिर के प्रति मेरे हृदय में पवित्रता की भावना नहीं आ सकती। जो बात मैंने काशी-विश्वनाथ के मन्दिर के सम्बन्ध में कही है, वही बात भारत के उन तमाम मन्दिरों पर भी लागू होती है, जिनके द्वार हरिजनों के लिए बन्द हैं।

यह तो ईश्वर की कृपा ही है कि दक्षिण के गुरुवायुर-मन्दिर के फाटक मेरे लिए बन्द हैं। पर थोड़ी देर के लिए यह भी मान लिया जाये कि उस मन्दिर के ट्रस्टी या जो भी वहाँ के अधिकारी हों वह मुझे मन्दिर के अन्दर जाने की इजाज़त दे दें तोभी जबतक कि उसके द्वार हरिजनों के लिए बन्द हैं, मैं उसके अन्दर कभी जाने का नहीं। जबतक कि आपमें से हरेक व्यक्ति अस्पृश्यता-निवारण के कार्य का इस तरह आरम्भ नहीं कर देता, तबतक यह नहीं कहा जा सकता कि उसने हृदय से अस्पृश्यता को दूर कर दिया है।

यह जो कहा जाता है कि हरिजनों की बहुत बड़ी संख्या हमारे मन्दिर-प्रवेश के आन्दोलन में कोई रस नहीं ले रही है, इसका कोई अर्थ नहीं। आज सवेरे ही की बात है। मिस्टर डीसोज़ा हरिजनों का एक डेपुटेशन लेकर आये थे। उन्होंने मुझसे कहा कि हरिजनों को इस मन्दिर-प्रवेश आंदोलन में उतनी दिलचस्पी नहीं है, जितनी कि उन्हें अपने राजनैतिक और आर्थिक सुधार की बातों में है, और शायद जितनी दिलचस्पी उन्हें अपने सामाजिक दरजे की उन्नति में है। स्वभावतः वे अन्यथा सोच नहीं सकते। हमारे साथ मिलने-जुलने और हमारे मन्दिरों में साथ-साथ पूजा-अर्चा करने की उनकी इच्छा मारी गई है, तो उसकी जवाबदेही हमारे ही ऊपर है।

इसीसे मैं कहता हूँ कि हिन्दूधर्म का ईश्वर उनके लिए सचमुच कोई अस्तित्व नहीं रखता। यह सही है कि हिन्दूधर्म का ईश्वर इस्लाम या ईसाई धर्म के ईश्वर से भिन्न नहीं है। हरेक धर्म की पूजा-उपासना की पद्धति केवल जुदी-जुदी है। अगर हरिजनों को यह सिखाया गया है कि जिन मंदिरों में सवर्ण जाते हैं वे उनके लिए नहीं हैं, तो आप उनकी इस उपेक्षा के लिए उन्हें दोष नहीं दे सकते। उनकी इस उपेक्षा का कारण हमारा ही पाप है, हमारा ही वह अक्षम्य दुर्व्यवहार है, जो हमने उनके साथ किया है। मन्दिरों के प्रति उपेक्षा का भाव रखने की तो उन्हें आदत डलवाई गई है। त्रावणकोर और हिन्दुस्तान के दूसरे भागों के हरिजनों में अब भी मन्दिरों के अन्दर जाने की जो इच्छा बनी हुई है और दूसरे हिन्दुओं की तरह अपने समानाधिकार का जो वे दावा कर रहे हैं यह एक अच्छी और धीरज बँधानेवाली चीज़ है, पर मेरी इस दलील पर उसका कोई असर नहीं पड़ता।

हरिजनों के लिए मन्दिर खोल देने की एक और दृष्टि है। वह आपको ज़रूर समझ लेनी चाहिए। अगर हरिजनों के लिए आप इस वजह से अपने मन्दिर खोल रहे हैं कि उन्हें खुलवाने की हरिजनों की माँग है, तो आप कोई बड़े महत्त्व का काम नहीं कर रहे हैं। पर अगर आप यह समझकर मंदिर खोल रहे हैं कि हरिजनों के लिए मन्दिर बन्द रखकर हमने पाप किया है, तब ज़रूर वह एक धार्मिक कार्य हो जाता

है। हिन्दुस्तानभर के हरिजन दूसरे धर्मों को स्वीकार करलें, और केवल एक ही हरिजन हिन्दूसमाज के अन्दर रह जाये, तब भी मेरा यह आग्रह रहेगा कि हरिजनों के लिए सवर्ण हिन्दुओं को अपने मन्दिर खोल देने चाहिएँ। यह धार्मिक दृष्टि ही है, जो हरिजनों के प्रश्न को दूसरे प्रश्नों से एक बिल्कुल भिन्न रूप और एक खास महत्त्व दे देती है। अगर हमारा मौजूदा कार्यक्रम महज़ नीति या राजनैतिक उपयोगिता का ही होता, तो उसमें वह धार्मिक महत्त्व या अभिप्राय न रहता, जो मैं उसमें पाता हूँ। मेरे सन्तोष के लिए यदि उसमें यह दिखा दिया जाये कि हरिजनों का राजनैतिक या आर्थिक उद्धार इतना काफ़ी हो जायेगा कि वे हिन्दूसमाज में बने रहेंगे, तब भी मैं चाहूँगा कि मन्दिर तो उनके लिए खोल ही देने चाहिएँ, और असमानता का नाम-निशानतक मिटा देना चाहिए; क्योंकि मेरे लिए तो यह पश्चात्ताप और उस ग़लती या बेइन्साफ़ी को दुरुस्त करने का प्रश्न है, जो हमने अपने ही समाज के मानव प्राणियों के साथ की है।

इस प्रकार हरिजनों के दूसरे धर्मों में चले जाने की धमकी का, जिससे कि आज हिन्दुओं में खलबली-सी मच गई है, हरिजनों के प्रति हमारा जो कर्त्तव्य है उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं। अगर हम उनकी धर्म-परिवर्तन की धमकी से डरकर अपनी प्रवृत्तियों की रफ़्तार बढ़ा देंगे तो मन्दिरों के खोले जाने का वह अर्थ नहीं रहेगा, जो मैंने अभी बतलाया है। यक़ीन रखिए, इस प्रकार के उपायों से हिन्दू-धर्म की रक्षा होने की नहीं। हरिजनों से किसी भी प्रकार के प्रत्युपकार की आशा किये बिना हम अपने कर्त्तव्य-पालन के द्वारा जबतक हिन्दूधर्म की शुद्धि नहीं करेंगे तबतक हम उसकी रक्षा कर नहीं सकते। हिन्दूधर्म की रक्षा का बस यही एकमात्र उपाय है। हरिजनों के लिए अगर आप उपयोगिता या राजनैतिक चाल के तौर पर कुछ कर देते हैं, तो इससे यह नहीं कहा जा सकता कि अस्पृश्यता को आपने अपने दिल से निकाल दिया है। आगे ऐसे अनेक अवसर आ सकते हैं, जबकि यह घातक ज़हर यहाँतक हिन्दुओं के सामाजिक शरीर में फैल और भिद जायेगा कि हम किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जायेंगे। अस्पृश्यता पर अगर हम कुछ भी शर्मिन्दगी महसूस करते हैं तो हमें उसे दूर कर ही देना चाहिए, फिर चाहे उसका कुछ भी परिणाम हो, या न भी हो।

सवर्ण हिन्दू जब अपनी उच्चता और श्रेष्ठता के अभिमान में आकर यह कहते हैं कि जब हरिजन शराब पीने, मुर्दार मांस खाने, गन्दे रहने वग़ैरा की बुरी आदतें छोड़ देंगे, तब हम अस्पृश्यता को दूर कर देंगे। मान लीजिए कि मेरा पिता, मेरी माता, मेरा पुत्र या पुत्री कोढ़ी हैं, तो क्या यह मैं कह सकता हूँ कि जब वे कुष्ठ से मुक्ति पा जायेंगे, तभी मैं उनका स्पर्श करूँगा? ज़रूरत के वक़्त मैं उनकी सेवा नहीं करता, तो उनके साथ मैं जिस पवित्र आत्मीय बन्धन के साथ बँधा हुआ हूँ उसके प्रति वफ़ादार नहीं रहता। हरिजनों की स्थिति इतनी बदतर है कि उसका कोई हिसाब नहीं, और उनकी इस दुर्गति के ज़िम्मेवार खुद हमीं हैं। उनके शराब पीने, मुर्दार मांस खाने और दूसरी गन्दी आदतों की सीधी जवाबदेही हमारे ही ऊपर है। इसलिए, हम अपने प्रति सच्चे हैं तो हमें अपने हरिजन भाइयों को, बावजूद उनकी त्रुटियों के, गले लगाना ही होगा। मुझे आशा है—और यह आशा अकारण नहीं है—कि हरिजनों को आप मेरी ही तरह जब अपना भाई-बन्धु मानने का रुख अख़्तियार कर लेंगे, तो उसी दिन वे अपनी उन आदतों को छोड़ देंगे। इस दिशा में जिन लोगों को अनुभव है, वे मेरे इस कथन की पुष्टि कर सकते हैं। इसलिए यह ज़रूरी है कि सवर्ण हिन्दू सबसे पहले अपने हृदय की शुद्ध करें और हरिजनों के प्रति उनका जो रुख चला आ रहा है उसे वे बदलदें।

२० जून, १९३६]　　'हरिजन-सेवक' से

गंगा-तीर से भी प्यासे ही लौटे !

[पिछले १० अगस्त को गांधीजी के परमभक्त श्री ब्रजकृष्ण चांदीवाला ने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री कन्हैयालाल मा० मुन्शी को एक मार्मिक पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने उत्तराखण्ड की अपनी उस यात्रा के दुःखद अनुभवों का उल्लेख किया है, जो उन्होंने पूज्य गांधीजी की भस्मी को प्रवाहित करने के सिलसिले में १६४८ में की थी । चूंकि श्री बदरीनारायण तथा उत्तराखण्ड के अन्य प्रसिद्ध तीर्थ-मन्दिरों में हरिजनों का प्रवेश निषिद्ध है, इसलिए श्रीब्रजकृष्ण तथा श्री सुरेन्द्र भाई भी मन्दिरों के अंदर देव-दर्शनार्थ नहीं गये थे और पूज्य बापू की भस्मी का प्रवाह-संस्कार हरिजनों के लिए निषिद्ध गरद-कुण्ड में न कर दुःखपूर्वक अलकनन्दा में अन्यत्र किया था । उक्त पत्र में से उस दुःखद अंश को हम यहाँ ज्यों-का-त्यों उद्धृत कर रहे हैं—सं०]

मैंने जो यात्रा १६३१ में की थी उस वक्त तो मैं सवर्ण होने के नाते मन्दिरों में जाया करता था । मगर उड़ीसा में जब गांधी-सेवा-संघ का सम्मेलन हुआ और जगन्नाथपुरी के मन्दिर में पूज्य कस्तूरबा के चले जाने के कारण पूज्य बापूजी को कड़ा आघात पहुँचा तबसे मैंने भी उन सब मन्दिरों में जाना बन्द कर दिया, जिनमें हरिजन प्रवेश नहीं कर सकते । इस यात्रा में मैंने और सुरेन्द्रजी ने यह निश्चय कर लिया था कि हम दोनों उस हदतक ही जायेंगे जहांतक हरिजनों को जाने का अधिकार मिला हुआ है और पूज्य बापूजी की भस्मी की डोली भी उसी हदतक ले जायेंगे। इसलिए हम अभीतक ऐसा ही करते आ रहे थे । मगर अभीतक तो तीर्थ प्राकृतिक थे, यमुना और गंगा पर सब कोई जा सकते थे । मन्दिर हमें मिले गंगोत्री में भागीरथी का, वहाँ से आगे बूढ़े केदार का, और त्रियुगीनारायण में शिव-पार्वती का, जहाँ कुण्ड में हर समय अग्नि जलती रहती है । इन स्थानों में हम नहीं गये । जब हम केदारनाथ पहुँचे, तो हमारे सामने विषम प्रश्न था कि यहाँ क्या करें, क्योंकि केदारनाथजी का मन्दिर साधारण मन्दिर नहीं है । यह है पशुपति भगवान् शिव का प्राचीन मन्दिर, जिसके दर्शन करने के लिए हिन्दू लालायित रहते हैं । मगर इस मन्दिर के द्वार हरिजनों के लिए बन्द हैं । मन्दिर के सामने चौक है और काफी दूर सत्यनारायण का मन्दिर, वहाँतक ही हरिजन जा सकते हैं । इसलिए हमने भस्मी की डोली वहीं रखकर प्रार्थना की, और मन्दिर में जाने की लालसा त्याग दी । भस्मी को प्रवाहित करने ले गये हम उस स्थान पर जहां से मन्दाकिनी निकलती है । यह एक बहुत बड़ा सरोवर है, जो बरफ से ढका हुआ है । इसे चोरबाड़ी ताल कहते थे । चोरबाड़ी एक साग होता है जिसके नाम पर इसका नाम था । इस सरोवर में भस्मी का विसर्जन किया और इस ताल का नाम रखा गया "गांधी-ताल" ।

आप यह स्वयं समझ सकते हैं कि जो यात्री इतनी दूर जाये और भगवान् के दर्शन न पा सके उसके मन की क्या दशा होती होगी ।

केदारनाथ बहुत बड़ा तीर्थ है । यहाँ पर पाँच नदियों का संगम है । अनेक कुण्ड और ताल हैं । ११ हजार फीट की ऊँचाई पर यह स्थित है, और मन्दिर के पीछे इतनी ही बुलंदी के हिमाच्छादित शिखर मानों चांदी के पतरों से जड़े हुए खड़े हैं चन्द्रमा की शीतल किरणें जब इन पतरों पर पड़ती हैं तो सारी घाटी जगमग करने लगती है । कैसे चितेरूँ उस अद्भुत दृश्य को ?

केदारनाथ से बद्रीनाथ १०५ मील है । यह रास्ता सुगम है । इस यात्रा में हमारे साथ एक हरिजन भाई, जो डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर थे, साथ हो गये । उन्होंने इधर के हरिजनों की स्थिति सुनाई । यह लोग शिल्पकार कहलाते हैं । वह सौदा-सुलफ की दूकानों में नहीं घुस सकते, चाहे वह कपड़े की हो, चाहे चाय या दूध की । यहाँतक कि डाकखानेतक में नहीं जा सकते । गुप्तकाशी उत्तराखंड की काशी मानी जाती है । इस मंदिर में भी हरिजन नहीं जा सकते । हमारे साथ जो हरिजन भाई थे उन्हें हम मठ के चौकतक ले गये, मगर वह डरते ही रहे कि आज तो यहाँतक आने दिया गया,

बाद में क्या बनेगा। केदारनाथ से नवें दिन हम बद्रीनाथ पहुँचे। यहाँ भी मंदिर में हरिजनों का प्रवेश बंद है। यहाँ यद्यपि भस्मी का बड़ा भारी स्वागत हुआ, मगर जब लोगों ने सुना कि हम मंदिर में हरिजनों को लेकर जायेंगे, तो खलबली मच गई। श्री हरगोविन्द पंत से, जो मंदिर के ट्रस्टी हैं, हमने परामर्श किया। उन्होंने दबी ज़बान से यह तो कहा कि यहाँ कोई विशेष पाबंदी नहीं है, मगर खुले तौर पर वह हरिजनों को मन्दिर में लेजाने के पक्ष में नहीं थे। इसलिए हम वहाँतक ही गये, जहाँतक हरिजन जा सकते हैं और भगवान् बदरीविशाल के दर्शनों से वंचित रहे। वहाँवालों ने भस्मी-प्रवाह के लिए नारदकुण्ड नियत कर रखा था, लेकिन जब हमने पूछा कि क्या वहाँ हरिजन जा सकते हैं तो उत्तर नकार में मिला, इसलिए दूसरे स्थान का प्रबन्ध किया गया। ब्रह्मकुण्ड और नारदकुण्ड के बीच में अलकनंदा के किनारे एक मंच बनाया गया और उसी जगह से भस्मी का प्रवाह किया गया।

इस प्रकार मैं और सुरेन्द्रजी उत्तराखंड के मुख्य तीर्थ-स्थानों पर पहुंचकर भी दर्शनों से वंचित ही रहे। गंगातीर पर पहुँचकर भी प्यासे ही लौटना पड़ा। उस महान् आत्मा की भस्मी को, जिसने हरिजनों के अधिकारों के लिए अपनी जान की भी बाज़ी लगा दी थी, हम उन मन्दिरों में कैसे ले जा सकते थे, जिनके द्वार उनके लिए बंद थे? दक्षिण भारत के समस्त तीर्थ, जिनकी सड़कों पर चलनेतक की हरिजनों को इजाज़त न थी, जिनकी छाया पड़जाने से सवर्ण लोग भी अछूत हो जाते थे और स्नान करते थे, बापू के प्रताप से हरिजनों के लिए खोल दिये गये। उत्तरप्रदेश को छोड़कर अन्य सब प्रदेशों के भी समस्त तीर्थ-स्थान हरिजनों के लिए खुल चुके हैं। मगर आज यही प्रदेश ऐसा है, जिसके मन्दिर हरिजनों के लिए बन्द हैं। वह प्रदेश, जिसे गंगा और यमुना अपने जलों से पवित्र कर रही हैं, जिनके संगम के कारण प्रयाग को तीर्थराज माना गया, जिस प्रदेश में बाबा विश्वनाथ का अटलवास है, भगवान् रामचन्द्र की जन्मभूमि जहाँ अयोध्यापुरी है, कृष्ण भगवान् की जहाँ मथुरा नगरी, और क्रीड़ास्थल वृन्दावन, गोकुल, नन्दगाँव तथा बरसाना हैं, जहाँ तुलसी, सूर, कबीर जैसे संत महात्मा हुए, और जिस प्रदेश के आप राजप्रमुख तथा पंडित गोविन्दवल्लभ पंत मुख्य मन्त्री हैं। खेद है कि, उसी उत्तर-प्रदेश के तीर्थ-स्थान आज भी हरिजनों के लिए बन्द पड़े हैं। स्वतंत्र भारत के संविधान में समान अधिकार की धारा केवल पुस्तक के पृष्ठों को ही पवित्र कर रही है, उसे कार्य-रूप में परिणत करने का अवसर कब आयेगा, किसीको पता नहीं। पूज्य बापू के देह-विसर्जन के साथ ही, प्रतीत होता है, उनकी समस्त कलाएँ भी लुप्त हो गईं। कम-से-कम हरिजनों के अधिकारों के लिए तो किसी अधिकारी की आवाज़ सुनने में नहीं आती। वरना कोई कारण न था कि उत्तरप्रदेश के मन्दिर अभीतक हरिजनों के लिए बन्द रह सकते। मुझे पूर्ण आशा है कि आप इस ओर अवश्य ध्यान देंगे और अपने राजप्रमुख-काल में समस्त मन्दिरों के द्वार हरिजनों के लिए अमली तौर पर खुले करवाकर प्रशंसा के भाजन बनेंगे।"

कुत्ते का पिल्ला नहीं था वह

"ऐसी भी क्या जल्दी है? सामने की इन एक-दो कोठरियों को भी आपलोग अन्दर से देखलें न। बाबू, हमारी इन दो कोठरियों को तो ज़रूर। उधर की भी वे तमाम कोठरियाँ ऐसी ही बरसों से बेमरम्मत पड़ी हैं।" हमारे साथ-साथ हो लिये कोयले के गर्द से सने, कमर पर एक-एक चिथड़ा लपेटे दस-पन्द्रह मुशहरों में से एक बूढ़े कंकाल ने हाथ उठाकर कहा।

अन्दर झाँककर एक कोठरी को देखा,—क्योंकि एक-दो बस्तियों का निरीक्षण भी हमारे कार्यक्रम में शामिल था। मुश्किल से दो आदमियों के रहनेलायक छोटी-सी कोठरी थी

वह। थी पक्की। चालीस-पचास साल पहले बनी होगी। बाहर से ही उसकी दीवारें मुहँ बाये अपनी अतीत की कहानी कह रही थीं। उसके अन्दर की आप-बीती को तो घने अँधेरे में हम बहुत धीरे-धीरे कुछ-कुछ पढ़ सके। छोटे-से अधखुले दरवाज़े से मैं अंदर झाँकने लगा। पहले तो कुछ भी नहीं सूझा। फर्श कुछ नीचान में था। इतनी सड़ी सीलन थी वहाँ कि दुर्गंध आ रही थी। काली-काली छिपकलियाँ दीवारों पर इधर-उधर रेंग रही थीं। देखा कि कोने में एक काला पिल्ला भी पड़ा वहाँ कुलबुला रहा है।

"कैसी गन्दी आदतें हैं तुमलोगों की कि, एक तो योंही इस सड़ी सीलन और सामने लगे इस कचरे के घूर की दुर्गंध से नाक फटी जा रही है, और उसपर यह घिनौना पिल्ला चूल्हे के पास तुमने बाँध रखा है," उपदेश के-से सुर में उस बूढ़े मुशहर से मैंने कहा।

"ना, बाबू, यह पिल्ला नहीं है, यह तो हमारा बच्चा सो रहा है। माँ इसकी काम पर गई है। मजूरी का दिन है न आज। रोज़-रोज़ कहाँ मजूरी मिलती है, बाबू? कहीं तीसरे दिन बारी आती है। हाँ बाबू, देखो न वहीं पास में इसकी माँ थोड़ा-सा भात और माँड़ रख गई है। उठेगा तब खा लेगा। लो, वह उठ ही बैठा। देखो बाबू, यह कुत्ते का पिल्ला नहीं है; मानस का, मुशहर का बच्चा है न यह?"

देखा कि मैं धोखा खा गया था। मनुष्य के बच्चे को पिल्ला समझ बैठा था। सीलन-भरे काले फर्श पर वह बिल्कुल नंगा मीठी नींद ले रहा था कोयले के जैसा कलूटा। हम सफेदपोश बाबुओं को देखकर हकबका गया बेचारा। अपनी भात की हंडिया को दोनों नन्हें-नन्हें हाथों से पकड़ लिया। इस डर से कि शायद हमलोग उसकी सारी संपदा को न छीन ले भागें। आँखें अन्दर को धँस रही थीं, गाल पिचक गये थे, और एक-एक पसली साफ़ दीख रही थी।

मिट्टी के दो-तीन बर्तन वहीं कोने में रखे थे, एक में दो-तीन मुट्ठी उसना चावल पड़ा था, और दूसरे में दो-तीन प्याज, लाल मिर्चा और कुछ नमक। टाट की एक फटी बोरी, और बेशर्मी से धोती का नाम छीन लेनेवाला बीसों छेदों व पैबन्दों का एक काला-सा चीथड़ा खूँटी पर टँगा था। टीन की दो टूटी कटोरियाँ भी चूल्हे के पास खाली पड़ी थीं। यही सारा वैभव था उस कोठरी का, जिसे रोशनी और हवा के भी परिग्रह का लोभ नहीं था।

छत कई जगह से टूट रही थी, बड़ी-बड़ी दरारें पड़ गई थीं। "बरसात में" बूढ़े ने कहा, "इन कोठरियों में पानी-ही-पानी भर जाता है बाबू, भात पकाने को भी जगह नहीं रहती।"

"बरसात में तब और किसी जगह तुमलोगों को अपना डेरा-डंडा उठाकर रख लेना चाहिए। रेलवे के और दूसरे भी कितने ही मकानों में काफ़ी जगह खाली पड़ी है," रास्ता बतलाते हुए मैंने कहा।

"क्या कहते हो, बाबू! हमलोगों को बाबूलोग वहाँ पैर भी नहीं रखने देंगे, डेरा-डंडा रखलेने की बात तो दूर रही। हमलोग ग़रीब मजूर तो हैं ही, अछूत भी तो हैं। बाबूलोगों के कुएँ पर हमलोग चढ़ नहीं सकते, उनके साथ बराबरी से बैठ-उठ नहीं सकते। और आप वहाँ पर हमारे डेरा-डंडा रख लेने की सलाह देते हैं!"

आगे चलकर अब उनकी और कोठरियाँ देखना बेकार ही था। हरिजन-बस्ती देखने का प्रोग्राम हमने वहीं समाप्त कर दिया। इसके पहले भी हमें बताया गया था, और बाद को जब एक सुन्दर बंगले में हमारा आतिथ्य किया गया तब भी हमसे कहा गया कि "कोयला उतारने व ढोनेवाले मजदूरों के रहने के लिए क्वार्टरों की व्यवस्था शुरू से ही हमारे यहाँ खासी अच्छी है। उनलोगों को रहने की कोई खास तकलीफ़ नहीं है। कमाते हैं सब और चैन से रहते हैं।"

हमलोग सुने जा रहे थे और स्वादिष्ट भोजन भी करते जाते थे। साथ-साथ, पिल्ले-जैसे उस मुशहर बच्चे का चित्र भी हमारे सामने नाच रहा था, और हंडिये का वह बासी भात और पतला माँड़ भी। उसी समय रेडियो पर

सुना— "मज़दूरों के रहने के लिए अच्छे रोशनी और हवादार मकान बनवाने की एक नई योजना पर सरकार विचार कर रही है।"

विविध योजनाओं के सुनने के अभ्यस्त तो हमारे कान थे ही, इस सुन्दर नई योजना का भी स्वागत मन-ही-मन हमने किया। दोपहर के भोजन या कहिए 'लंच' लेते समय रेडियो पर के हलके-फुलके गीत और उसके बाद नव-निर्माण की कर्ण-मधुर योजनाओं के समाचार सचमुच बड़े सुखद होते हैं।

सोचता था कि उस मुशहर बच्चे को पिल्ला समझकर मैंने दोहरी भूल की। पिल्ले तो कोई-कोई बड़े भाग्यशाली होते हैं। प्यालियों में वे दूध पीते हैं और बिस्कुट और मांस-खंड खाते हैं, और नरम गद्दे पर सोते हैं अच्छे सजे-सजाये कमरों में।

वि० ह०

और, पानी किसने बनाया था ?

क्रोध से बुरी तरह काँपते हुए दादा पंडित को कितना ही समझाया, शान्त करने का बहुतेरा यत्न किया, पर उनकी तो एक ही रट थी, एक ही दलील थी। यह कि—

"कुएँ पर चूड़ों-चमारों को मैं कभी नहीं चढ़ने दूँगा। कुआँ यह मेरा है, मेरे घर का है, मेरे बाबा का खुदवाया हुआ है। पुरोहिताई-पंडिताई से बाबाने जो कुछ इकट्ठा किया था, सब-का-सब इस कुएँ में लगा दिया था। मन्दिर में हमारे इसी कुएँ का पानी आता है। चढ़ा दिया कल साँझ को अँधेरे में उस बूढ़ी चमारिन को हमारे कुएँ पर तुम सत्यानाशियों ने। शिव, शिव! कुआँ अपवित्र करा दिया हमारा। पानी सारा ही बाहर निकलवाना पड़ेगा अब। और ऊपर से तुम आये मुझे दया-धर्म की बात समझाने! मैंने कब किसीको खाली घड़ा घर जाने दिया? रोज़ एक घण्टा सुबह और एक घण्टा साँझ मेरा कहार उन सब अछूतों के पचासों घड़ों में पानी खींच-खींचकर दूर से डाल दिया करता है या नहीं?"

दादा पंडित ने उसी खीझ में अपनी पुरानी याद से हिसाब लगाकर बतलाया—

"कुएँ पर हमारे बाबा का तीन हज़ार से ऊपर ही खर्च आया था। साठिया कुआँ है यह। गर्मियों में भी पानी इसका कभी सूखा नहीं। नीचे से ऊपरतक सारी पत्थर की चिनाई है। बाबा ने न जाने कहाँ-कहाँ से रुपया माँग-माँगकर इसमें लगाया था, और अंत में इसे शिवमंदिर के लिए उत्सर्ग कर दिया था।"

पूछा गया—"कुएँ बनाने पर अवश्य इतना रुपया खर्च हुआ होगा। लेकिन, दादा, आपको कुछ याद है, पानी के बनाने पर कितना खर्चा आया था?"

चट्टानें तोड़-तोड़कर पाताल से पानी निकाला गया था, और संदेह नहीं, उसपर बहुत खर्चा आया होगा। बारबार पूछने पर भी दादा पंडित कुएँ की खुदाई और बँधाई पर हुए खर्च और मेहनत की ही बात दोहरा रहे थे, और क्रोध से काँप रहे थे रह-रहकर कि कुएँ को कैसा अपवित्र कर दिया इन सत्यानाशी सुधारकों ने उस चमारिन को चढ़ाकर! मगर यह नहीं सूझ रहा था उन्हें कि पानी यह किसने 'बनाया था' और उसके बनाने पर कितना खर्चा आया था।

दादा पंडित के घराने का एक दूसरा भी अच्छा पक्का कुआँ वहाँ से थोड़ा ही दूर पर था, जिसे उनके बड़े काका ने अपना नाम अमर करने के लिए खुदवाया था।

पूछने पर बताया कि, "उस कुएँ पर भी रकम खासी खर्च हुई थी। पर पानी निकला उसका नमक-सा खारा और गर्मी में सूख भी जाता है, और सड़ायंद भी आने लगती है। पैसा शायद वह सुकृत की कमाई का नहीं था।"

अछूतों को उस खारे कुएँ से पानी भरने की छूट उन्होंने उदारतापूर्वक दे रखी थी।

पूछा गया कि उस दूसरे कुएँ का पानी 'बनाने' पर खर्च क्या कुछ कम किया गया था, जिससे कि वह खारा रह गया?

यह 'पानी बनाने' का जवाब बार-बार पूछने पर भी दादा पंडित से नहीं बन पड़ा। और भी ऐसे ही प्रश्न पूछे गये कि, जो मिट्टी खोद-खोदकर बाहर फेंकी गई थी उसे किसने बनाया था, पत्थर जो तोड़े गये थे उनका बनानेवाला कौन था, और जिन झरनों से एक कुएँ में मीठा और दूसरे में खारा पानी झर-झरकर आता था, उनका स्रष्टा कौन था? मन्दिर में काम आनेवाला मीठा पानी क्या चूड़ों और चमारों के घड़ों में गिरकर खारा हो जाता था? और, उस दूसरे कुएँ का खारा पानी सवर्णों के कलशों में जाकर क्या मीठा नहीं बन सका?

दादा पंडित जैसे कुछ गहरे चिन्तन में डूब गये। अपने अंतकूँप की गहराई में ध्यान से वे उतरे, और जहाँ उनको मिल गया उन्हें सहज ही उन सब पहेलियों का। देखा कि पानी का और मिट्टी का और पवन का सिरजनहार जैसे उनके अपने अंतर में विराजमान है, वैसे ही चमारों और चूड़ों के अंतर में भी वह बस रहा है।

दूसरे दिन सुबह ही दादा पंडित ने चमारों और चूड़ों के हाथों से कलशे भरवाये, और मन्दिर में उन्हीं के कलश से शिवजी पर जल भी चढ़वाया। मंत्रोच्चार उन्होंने स्वयं किया।

कुआँ आज वह दूर-दूरतक 'तरण-तारण-कूप' के नाम से प्रसिद्ध है।

वि० ह०

तब, स्वर्ग स्वयं उतर आयगा

एक ब्राह्मण था, विद्वान् और क्रियावान्। तीनों काल वह संध्या-वंदन करता था और वैदिक विधि से नित्य-प्रति अग्निहोत्र। उसके कुल में विद्यार्थी वेद-शास्त्रों का नियमित स्वाध्याय किया करते थे। ब्राह्मण वह लोभ को सदा अग्नि समझता था। कुल-दक्षिणा द्वारा प्राप्त अन्न से उसकी जीविका चलती थी। अन्य वर्णों की तुलना में वह अपने आपको श्रेष्ठ मानता था। ब्राह्मणत्व का उसे अभिमान था। मानता था कि उसकी शिखा और उसके सूत्र में पुराकाल के ऋषियों के सदृश शाप देने की प्रचंड शक्ति है।

आचार ऐसा था उसका कि स्वयं अपने हाथ से पानी भरकर ले आता और गीला वस्त्र पहने-पहने ही स्वयंपाक किया करता था। यहाँतक कि लकड़ियों को भी धोकर चूल्हे में जलाता था। स्पर्शास्पर्श की शंकामात्र से दिन में कितनी ही बार वह सचैल स्नान करता था, और शिखा को खोलकर उतनी ही बार ब्रह्मग्रन्थि बाँधता था; प्रत्येक क्रिया उसकी मंत्रोच्चार के साथ होती थी।

और, एक भंगी था। नदी के उसपार बड़े-बड़े आचारी और धर्मोपासक नावों पर जाकर प्रातः और सांय मल-विसर्जन करते, और वह नित्य सारे तट को साफ करता था। अस्वच्छ स्थान को स्वच्छ कर देना उसका स्वभाव बन गया था। बारबार गन्दगी करनेवालों का उसे भान भी नहीं रहता था।

और, इस पार, जिस पक्के घाट पर लोग स्नान करते उसपर भी वे चाहे जहाँ थूक देते थे। भंगी किन्तु ब्रह्म-घाट पर चढ़ नहीं सकता था। गन्दगी करनेवाले बड़े लोग मानते थे कि भंगी के संसर्ग से घाट उनका अपवित्र हो जायेगा।

रात को नित्य सत्संग और कीर्तन में वह दो घड़ी बैठता और एकतारे पर संतों के पुराने भजन बड़े प्रेम से गाता था। बिरादरी के लोग उसे भगतजी कहा करते थे।

: २ :

आधी रात को एक दिन एक ही साथ ब्राह्मण के गृह में और भंगी की झोंपड़ी में दो-दो देवदूत प्रकाश बिखेरते हुए आकाश से उतरे और दोनों की जीवात्माओं को निकालकर ऊपर को उड़ गये एक ही स्वर्ग-पथ से। आदेश से धर्मराज के सामने दोनों की जीवात्माओं को लाकर देवदूतों ने उपस्थित कर दिया।

भंगी की जीवात्मा से धर्मराजने कहा—

"तुम्हें हमने सदा सर्वथा निर्मल पाया है। दूसरों के मैल को साफ करते-करते तुम्हारे अन्तर में अस्वच्छता का कहीं नाम भी नहीं रहा। तुमने संतों की वाणी को एकतारे पर

नित्य भक्तिभाव से गाया और अपने अन्तर के एक-एक तार को तुमने दिव्य प्रेम के स्वर में मिला दिया। जाओ, हम तुम्हे स्वर्ग के राज्य में भेज रहे हैं।"

"और, विद्वान् ब्राह्मण, तुम्हें भी हम स्वर्ग के राज्य में भेज देते हैं। इसलिए कि तुम लोभ की अग्नि से सदा दूर रहे, और विद्यार्थियों को स्वाध्याय कराकर तुमने केवल कुल-दक्षिणा द्वारा उपलब्ध अन्न से अपनी जीविका चलाई। मात्र इतना ही तुम्हारा पुण्य है। अतः स्वर्ग का वास तुम्हारा अल्पकाल का होगा। स्वर्ग के अपने निवास-काल में तुम कोई विशेष सुविधा चाहते हो, तो हमसे निस्संकोच कहो।"

" धर्मराज, सुविधाएँ, बस, इतनी ही कि मैं स्वर्ग में अपना भोजन स्वयं अपने हाथ से पका सकूँ; कुआँ भी वहाँ मेरे लिए अलहदा हो, जिसपर कोई दूसरा जल न भर सके, और कोई मेरा स्पर्श न करे।"

"ब्राह्मण, तुम जो ये विशिष्ट सुविधाएँ माँगते हो वे तो वहाँ नहीं मिलेंगी। स्वर्ग के राज्य में भोजन सबका एक ही पाकशाला में बनता है और एक ही पंक्ति में बैठकर सब जीवात्माएँ वहाँ भोजन करती हैं। जल में भी वहाँ कोई भेदभाव नहीं बरता जाता। स्पर्शास्पर्श की तो स्वर्ग के राज्य में तुम्हें कहीं गंध भी नहीं मिलेगी।

"ब्राह्मण, तुम तो विद्वान् हो, क्रियावान् हो। तुमने धर्मतत्त्व का गहरा अध्ययन किया है; फिर यह भेदभाव तुम्हारे अन्तर पर क्यों अपनी काली छाया फेक रहा है?" धर्मराज ने विस्मय की मुद्रा में पूछा।

"क्योंकि मैंने ब्राह्मणत्व की श्रेष्ठता को जन्मजात माना और शिखा-सूत्र और अग्निहोत्र को ब्रह्मतत्त्व से भी श्रेष्ठ-तर समझा। मेरा विश्वास तात्विक समदर्शन ही पर रहा, समवर्तन पर नहीं।" ब्राह्मण ने अपनी वर्णश्रेष्ठता को आश्रय देते हुए धर्मराज को उत्तर दिया।

"तब, ब्राह्मण, एक बार सोचलो, स्वर्ग के राज्य में क्या तुम इस असमंजस में जाना चाहोगे?" धर्मराज ने फिर ब्राह्मण से स्पष्ट उत्तर माँगा।

"नहीं, धर्मराज, मैं स्वर्ग को अपने अहंकार-दूषित संसर्ग से कलुषित नहीं करना चाहता। मुझे आप एक बार फिर मर्त्यलोक में ही भेजदें। वहाँ पर उतरकर मैं अपने अंतर में व्याप्त द्वैत के मैल को धोने का यत्न करूँगा। तत्त्वज्ञान को आचरण में उतारने की साधना होगी अब वहाँ मेरी। पुनः मर्त्यलोक में जाकर प्रायश्चित्त से निखार लूँगा अपनी आत्मा को, ठीक वैसे ही जैसे कि यह भंगी अपने आपको कुन्दन-सा निखारता रहा है।"

"तब, ब्राह्मण, तुम्हें स्वर्गलोकतक दौड़ नहीं लगानी होगी। स्वर्ग का राज्य तब स्वयं तुम्हारे आँगन में उतर आयेगा।"

वि० ह०

भंगी का लड़का मोहना

रामदीन आज पचीस दिन से पड़ा खटिया से रहा है। ज्वर ऐसा कि टूटने का नाम नहीं लेता। नीम की छाल का काढ़ा उसकी पतोहू और कभी-कभी उसकी बुढ़िया रोज़ सवेरे बनाकर पिला देती है। डाक्टर सेन ने कुनैन पीने को कहा था, और ऊपर से आधसेर दूध! दूध! दूध तो घर के नन्हे-नन्हे बच्चों को भी नहीं जुड़ता। मूँग की दाल के पानी के साथ आधी-चौथाई रूखी-सूखी रोटी ही उसे दूध और पथ्य का काम दे रही है।

फिक्र है कि इस लम्बी बीमारी में कहीं उसकी नौकरी न चली जाय। जमादार यों मुट्ठी गरम कर देने से महीनों गैरहाज़िर रहनेवालों की भी हाज़िरी भर देता है। पर रामदीन ने एक पैसा भी कभी रिश्वत में नहीं दिया। काम पर हमेशा वक्त पर गया और मेहनत और ईमानदारी से तीसों दिन नौकरी बजाई।

बड़ा लड़का उसका दक्खिन चला गया था और वहीं बस गया। वहाँ खाता-कमाता है, पर घर को एक पैसा भी नहीं भेजता। छोटा लड़का सिवदीना इधर कई साल से गृहस्ती चलाने में मदद दे रहा है, और बूढ़े माँ-बाप की

ज़मीन का प्रश्न

परिगणित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कमिश्नर श्रीयुक्त श्रीकान्त ने अपनी १९५२ की रिपोर्ट में सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में पिछड़ी हुई उक्त जातियों की अवस्था को सुधारने और उन्हें अन्य आगे बढ़ी हुई जातियों के समान स्तर पर लाने के लिए निम्नलिखित प्रश्नों पर अपने विचार प्रकट किये हैं;—

(क) मकानों की सुविधाएँ,

(ख) खेती की ज़मीन की सुरक्षा,

(ग) कर्ज़ साफ़ कराना और साहूकारों पर प्रतिबन्ध लगाना,

(घ) गृह-उद्योगों तथा अन्य आर्थिक साधनों को बढ़ावा देना।

(ङ) स्थानीक स्वायत्त-संस्थाओं, पंचायतों आदि में प्रतिनिधित्व।

इनमें भी, हमारी दृष्टि में तो, पहली दो समस्याएँ **अधिक आवश्यक और महत्त्व की हैं,** जिनपर भारत-सरकार तथा राज्य-सरकारों और नगरपालिकाओं को तत्काल प्राथमिकता देनी चाहिए। मकानों और खेती की ज़मीन का प्रश्न खासकरके भूमिहीन हरिजनों के लिए बहुत दुःख दे रहा है। **अपनी रिपोर्ट में मकानों की असुविधाओं के** बारे में श्री श्रीकान्त लिखते हैं :—

"अधिकांश राज्यों के ग्रामों में जिस ज़मीन पर हरिजनों के मकान बने हुए हैं वह उनकी अपनी नहीं है। ज़्यादातर ये लोग भूमिहीन खेतिहर मज़दूर और ग़ैर मुस्तकिल या शिकमी काश्तकार हैं। मकान बना लेने के लिए ज़मींदार इनको थोड़ी-सी ज़मीन दे दिया करता है। इस हालत में मकान तो उनके अपने होते हैं, मगर जिस ज़मीन पर वे अपने मकान बनाते हैं, वह ज़मींदारों की होती हैं। ज़मींदार किसी भी समय उनसे कह सकता है कि, छप्पर और किवाड़ वगैरह अपने उठाकर ले जाओ और हमारी ज़मीन को छोड़दो। कहीं-कहीं पर मकानों की ज़मीन गाँवों की शामिलात मिलकियत होती है। इसलिए अल्पसंख्यक हरिजनों को आर्थिक और सामाजिक रूप से गाँवों के दूसरे लोगों पर निर्भर रहना पड़ता है। उनके सिर पर हमेशा बेदखली के डर की तलवार लटकती रहती है। अनेक स्थानों पर मैंने देखा है कि हरिजनों के मकान अत्यन्त घनी बस्तियों में बने होते हैं। जगह तो उतनी ही होती है और आबादी उनकी बढ़ती जाती है।

इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए सबसे पहला और ज़रूरी क़दम है एक ऐसे क़ानून का पास कराना, जिससे हरिजनों को उस ज़मीन पर, जिसपर कि उनके मकान बने होते हैं और बनाये जायें, मालकियत का हक़ मिल जाये। कुछ राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के भी सामने ज़मीन की ऐसी ही समस्या उपस्थित है। इसलिए जो भी क़ानून बनाये जायें वह आदिवासियों के हित में भी समान रूप से लागू होने चाहिएँ। इस समस्या को अभीतक सिर्फ़ बिहार और बम्बई राज्य की सरकारों ने ही हाथ में लिया है। मेरा ख़याल है कि पंजाब-सरकार भी इस प्रश्न के हल करने का विचार कर रही है।"

बिहार-राज्य ने क़ानून तो इस सम्बन्ध का बना दिया है, पर उसपर अमल कुछ खास नहीं हो रहा है। असल में प्रश्न तो यह शासन-यन्त्र की सही और तेज़ प्रगति पर निर्भर करता है। निर्योग्यता-निवारक क़ानूनों पर अमल कराने के लिए जिस प्रकार अधिक-से-अधिक हरिजन-सेवकों का सहयोग अपेक्षित है, उसी प्रकार भूमिसंबंधी क़ानूनों पर तभी कुछ उल्लेखनीय अमल हो सकता है, जबकि सरकार के आदेशों का पालन छोटे-बड़े सभी अधिकारी करने को तैयार हों। जब कभी पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए कोई क़ानून बनाया जाता है, तब उनलोगों का वर्ग, जिन्हें अपने

अपराधों को हस्तक्षेप्य नहीं माना गया वहाँ उनकी प्रभावहीनता के कारण स्पष्ट हैं। दुःख तो इस बात का है कि जिन राज्यों में ऐसे अपराधों को हस्तक्षेप्य भी माना गया है, वहाँ भी यह क़ानून लोगों के हक़ में, जिनके लिए कि वे बनाये गये थे, कोई खास सहायक सिद्ध नहीं हुए। पुलिस में बहुत ही थोड़े मामले दर्ज हुए। स्पष्टतः इसका कारण यही है कि परिगणित जातियों के लोगों में इतनी हिम्मत नहीं आयी है कि वे सामाजिक बन्धनों और बाधाओं को तोड़ सकें। इसमें संदेह नहीं कि बुद्धिशाली वर्ग में एक आम जाग्रति देखने में आ रही है, जिसका सबसे अधिक श्रेय महात्मा गांधी द्वारा किये गये भगीरथ प्रयत्नों को है। मगर आम जनता अब भी इस सम्बन्ध में बहुत पिछड़ी हुई है और उसको घोर निद्रा से जगाने की भारी आवश्यकता है। यह ग़ैरसरकारी संस्थाओं द्वारा देश-व्यापी प्रचार से ही हो सकता है। इस काम के लिए सरकार से ऐसी संस्थाओं को आर्थिक साहाय्य तथा सहयोग अवश्य मिलना चाहिए। इस सम्बन्ध में मैं भारत सरकार के समक्ष पहले ही अपनी तजवीज रख चुका हूँ कि वह एक निश्चित पर्याप्त रकम अलहदा रखदे, जिससे विभिन्न राज्यों को इस कार्य के लिए सहायताएँ दी जा सकें। मैं यह भी महसूस करता हूँ कि जनता के सीधे संपर्क में आनेवाले अधिकारियों (जैसे, ज़िला अधिकारियों, तहसीलदारों, पुलिस अधिकारियों, सरकारी तथा म्युनिसिपल चिकित्सकों और अध्यापकों) के नाम यदि इस प्रकार के आम आदेश जारी करा दिये जायँ कि जिनके अनुसार वे जनता को बतला सकें कि अपने उपेक्षित हरिजन भाइयों के प्रति उनकी क्या नैतिक जिम्मेदारियाँ और कर्तव्य हैं, और सामाजिक अपराधों के लिए क़ानून द्वारा क्या-क्या दण्ड नियत किये गये हैं, तो इस सम्बन्ध में बहुत-कुछ सफलता मिल सकती है। सभी पक्षों और मतों के राजनैतिक नेताओं का भी यह फ़र्ज़ है कि वे हरिजनों के उत्थान व कल्याण को हमेशा अपने ध्यान में रखें, और सार्वजनिक सभाओं में भाषण देने के जब भी उन्हें अवसर मिलें, लोगों के मत को इस ओर मोड़ने का वे प्रयत्न करते रहें। मेरी पिछली रिपोर्ट पर संसद में १३ दिसम्बर १९५२ को जो चर्चा हुई थी, उसमें डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी का यह सुझाव मुझे बहुत पसंद आया था कि सभी पक्षों तथा समस्त समाज-सेवी संस्थाओं के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया जाये, जो सारे देश में कुछ महीने जगह-जगह घूमने और जनता में इस प्रकार का एक नया उत्साह पैदा करने का कार्यक्रम बनाये कि स्वतंत्र भारत में मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद करने का कोई प्रश्न हो नहीं सकता और असमानता के विचार खत्म हो जाने पर ही भारत समृद्ध हो सकता है। सामाजिक बुराइयों से ग्रस्त जनता के मानस में इस प्रकार का परिवर्तन करना ही होगा। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब कि सब मिलकर एक देशव्यापी आन्दोलन चलायें और पूरी शक्ति से अस्पृश्यता-निवारण के लिए प्रयत्न करें। मैं भारत-सरकार से बलपूर्वक अनुरोध करता हूँ कि 'सूचना और प्रसार-विभाग' द्वारा रेडियो और फिल्मों की सेवाओं को वह काम में लाये, जिससे कि अस्पृश्यता को जल्द-से-जल्द नष्ट कर देने के लिए लोकमत शिक्षित और तैयार किया जा सके। चाहे कितने ही क़ानून बनाये जायँ, तबतक वे बहुत काम नहीं देंगे, जबतक कि लोग खुद उनको अमल में लाने का प्रयत्न नहीं करेंगे, और जबतक शासन उनको फलितार्थ करने के लिए क़ानून, जनता और देश के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने के लिए पूरी तरह से सजग नहीं हो जायेगा। अच्छा होगा कि परिगणित जातियों के लोगों को, जब संविधान द्वारा दिये गये उनके अधिकारों को छीने जाने के मामले अदालतों में जायें तब उन्हें निःशुल्क क़ानूनी सहायता दिलाने का प्रबन्ध किया जाये; क्योंकि बहुत ग़रीब होनेके कारण मुकदमों पर होनेवाले खर्च को वे उठा नहीं सकते। अदालतों द्वारा अपने अन्यायों का प्रतिकार कराने के रास्ते में उनके लिए यह एक बहुत बड़ी बाधा है।"

पास न तो मुक़दमें लड़ने के लिए पैसा होता है और न इतनी हिम्मत ही कि अपराधियों को वे ललकार सकें। उपर्युक्त विवरण में दिये गये आँकड़ों से मालूम पड़ता है कि मद्रास, मध्यभारत, बम्बई और मध्यप्रदेश के राज्यों में या तो परिगणित जातियों की सामाजिक निर्योग्यताओं की समस्याएँ बहुत जटिल हैं, या इन राज्यों के परिगणित जातियों के लोगों ने पुलिस थानों में जाकर अपने मामलों को दर्ज कराने की हिम्मत दिखाई है। यह भी शायद ज़ाहिर होता है कि इन राज्यों के पुलिस अधिकारी अपने कर्त्तव्य के प्रति दूसरे राज्यों की अपेक्षा अधिक सजग हैं। किन्तु फिर भी ऊपर के विवरण से स्थिति का पूरा चित्र सामने नहीं आता। परिगणित जातियों के लोग कुछेक सामाजिक निर्योग्यताओं को सहन करने के इस क़दर अभ्यस्त हो गये हैं कि उन्हें उनका भान भी नहीं होता और होता भी है तो अपनी तकलीफ़ें दूर कराने के लिए पुलिस थाने में जाने की उनकी हिम्मत नहीं होती। फिर भी ऊपर के विवरण से इतना तो स्पष्ट है कि पुलिस ने जितने मामलों को चलाया उनमें से काफ़ी बड़ी संख्या के फैसलों में अपराधियों को दण्ड दिया गया और चन्द मामले समझौतों द्वारा तय करा दिये गये। इससे ज़ाहिर है कि मामले वे सब सच्चे थे। मुझे लगता है कि इन क़ानूनों के अधीन जो मामले दर्ज किये जायें, वे समझौतों द्वारा तय नहीं होने चाहिए। ये अपराध समाज के प्रति, न कि व्यक्तियों के प्रति, किये जानेवाले अपराध माने जायें। समझौतों से तय होनेवाले मामलों में परिगणित जातियों के लोगों पर पुलिस द्वारा दबाव या बेजा ज़ोर डाले जाने की सम्भावना रहती है।"

उक्त प्रश्नावली के जो उत्तर विभिन्न राज्य-सरकारों से आये, उनके आधार पर अस्पृश्यता तथा उससे उत्पन्न सामाजिक निर्योग्यताओं के बारे में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत रिपोर्ट में दिया गया है। आसाम, बम्बई, मध्यप्रदेश, मद्रास, पंजाब, उत्तर प्रदेश, प० बंगाल, मध्यभारत, पेप्सू, राजस्थान, सौराष्ट्र, त्रावणकोर-कोचीन, अजमेर, भोपाल, बिहार, कुर्ग, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, कच्छ, मणिपुर, त्रिपुरा और विन्ध्यप्रदेश से प्राप्त अस्पृश्यता एवं उससे उत्पन्न निर्योग्यताओं का विवरण संक्षेप में दिया गया है। इन विवरणों की यथार्थता में मतभेद होने की गुंजाइश है। राज्य-सरकारें वही विवरण तो देंगी, जो उनको अपने छोटे-बड़े अधिकारियों द्वारा प्राप्त होगा। अधिकारियों को जिस प्रकार हरिजनों पर लादी गई सामाजिक निर्योग्यताओं की सूचनाएँ मिलती हैं उनमें तथा हरिजन-सेवक-संघ को अपने कार्यकर्त्ताओं द्वारा सीधे जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं उनमें स्वभावतः अन्तर तो रहेगा ही। उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, विन्ध्यप्रदेश जैसे कतिपय राज्यों के विवरणों में जो यह लिखा गया है कि अस्पृश्यता और उससे उत्पन्न निर्योग्यताएँ, निर्योग्यता-निवारक क़ानूनों के कारण, तेज़ी से खत्म होती जा रही हैं और यहाँतक कि मन्दिरों में भी बिना किसी रोक-टोक के हरिजन जा सकते हैं, यह सही स्थिति से अभी बहुत दूर है। तथापि मध्यभारत, बिहार, राजस्थान, सौराष्ट्र, मैसूर और उड़ीसा में अस्पृश्यता तथा उससे उत्पन्न निर्योग्यताओं की भयंकर वास्तविकता को प्राप्त विवरण में स्वीकार किया गया है।

सामाजिक निर्योग्यताओं और उनके निवारण पर अपना अभिप्राय तथा सुझाव रखते हुए श्री श्रीकान्तजी अन्त में अपनी रिपोर्ट में लिखते हैं :—

"सन् १९५२ के अन्ततक अस्पृश्यता तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाले दूसरे रिवाजों पर, जिनको कि संविधान के अधीन अपराध घोषित किया गया है, दण्ड देने के अर्थ भारत-सरकार ने ऐसा कोई केन्द्रीय क़ानून बनाने के लिए लोक संसद को प्रेरित नहीं किया। मैं अपनी पिछली रिपोर्ट में जल्द-से-जल्द एक क़ानून बना देने की आवश्यकता पर ज़ोर दे चुका हूँ, जिससे शीघ्र-से-शीघ्र अस्पृश्यता तथा उससे उत्पन्न निर्योग्यताओं का निवारण किया जा सके। विभिन्न राज्यों में इसके लिए जो क़ानून बनाये गये, वे बहुत प्रभावकारी सिद्ध नहीं हुए हैं। जहाँपर क़ानूनों के मातहत दण्डनीय

(ग) कितने अपराधियों को छोड़ दिया गया ?

सामाजिक निर्योग्यताओं को दूर करने के लिए जिन राज्यों ने इस सम्बन्ध के क़ानून पास किये हैं उनको दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। पहली श्रेणी के तो ऐसे राज्य हैं, जहाँ निर्योग्यता-निवारक क़ानून के मातहत अपराध हस्तक्षेप्य हैं, और दूसरी श्रेणी के वे राज्य, जहाँ एतत्सम्बन्धी क़ानूनों के मातहत होनेवाले अपराध हस्तक्षेप्य नहीं हैं। जिन राज्यों में निर्योग्यता-निवारक क़ानूनों के अधीन अपराधों को हस्तक्षेप्य माना गया है, उनमें से उक्त प्रश्नों के उत्तर बिहार, उड़ीसा, हैदराबाद और मैसूर इन चार राज्यों से प्राप्त नहीं हुए हैं। शेष राज्यों में क्या स्थिति है, यह नीचे के विवरण से स्पष्ट हो जाता है :—

राज्य	मुक़दमों की संख्या					
	जो दर्ज हुए	जो ललकारे गये	जिनमें सज़ा हुई	जिनमें समझौते हुए	जिनमें अपराधियों को बरी किया गया	जो विचाराधीन हैं
बम्बई	३५	३५	४	...	१	३०
मध्यप्रदेश	२८	१२	३	...	...	९
मद्रास	१७४	१५५	१०६	१	१७	३१
पंजाब	६	६	२	...	१	३
पश्चिमी बंगाल	नहीं	....	...	....	....	...
मध्यभारत	७३	६१	२२	१४	१०(+३ खारिज)	१२
सौराष्ट्र	८	७	४	...	१	२
त्रावणकोर-कोचीन	३	३	१	...	...	२
कुर्ग	नहीं	...	...	...	....	....
दिल्ली	नहीं	...	....	...	....	...
कच्छ	१	१	...	....	१	....
त्रिपुरा	नहीं	....	....	....	....	...

उत्तरप्रदेश, अजमेर, भोपाल, बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश और विन्ध्यप्रदेश इन राज्यों में जो क़ानून लागू हैं उनके मातहत होनेवाले अपराध हस्तक्षेप्य नहीं हैं। अजमेर, बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश और विन्ध्यप्रदेश की अदालतों में कभी इस प्रकार के कोई मुक़दमें दायर नहीं हुए। भोपाल में एक मामला दायर हुआ था, जो अभी विचाराधीन ही है। उत्तरप्रदेश में दो मामले दायर हुए, एक तो समझौते से तय हो गया और दूसरे में अपराधी को दण्ड दिया गया।

ऊपर के इस विवरण और आँकड़ों पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कमिश्नर महोदय लिखते हैं :--

"इस विवरण से यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि जिन राज्यों में सामाजिक निर्योग्यता-निवारक क़ानूनों के अधीन किये जानेवाले अपराध हस्तक्षेप्य नहीं हैं, उनके बहुत ही कम मामले अदालतों में आये। इसका यह अर्थ हुआ कि इन राज्यों में या तो परिगणित जातियाँ सामाजिक निर्योग्यताओं से पीड़ित नहीं हैं, या वे किसी-न-किसी सबब से अपनी शिकायतें दूर कराने के लिए अदालतों में जाती नहीं हैं। स्पष्टतः पहला कारण तो नहीं है। मेरा विश्वास है कि अदालतों में अपनी शिकायतें न ले जाने का कारण अपराधों का 'हस्तक्षेप्य' न होना ही है। अतः ऐसे क़ानूनों को हस्तक्षेप्य क़रार कर ही देना चाहिए। परिगणित जाति के लोगों के

चोरी का झूठा किस्सा गढ़ने के लिए उन्हें मजबूर किया गया। तरस तो उस प्रतिष्ठित वृद्ध हरिजन पर आता है, जो सवर्ण हिन्दुओं के हाथ की कठपुतली बनकर अपने ही भाई-बन्धुओं के खिलाफ़ उसने बिल्कुल झूठा मामला चलवा दिया।

यह स्थिति है। मैं नहीं जानता कि पुलिस कहाँ-तक इस मामले में सहायक होगी। यह अच्छी तरह मालूम है कि छोटे-छोटे पुलिस अधिकारी स्थानीय हालात का ही ध्यान रखते हैं और सवर्ण हिन्दुओं के प्रभाव और उनकी शक्ति को देखकर ही कार्रवाई करते हैं। तब ऐसी हालत में क्या किया जाये ? ग्राम के लोगों ने जो यह अमानुषिक अत्याचार किया है, उसे सामने लाने का मुझे एकही तरीक़ा मालूम पड़ता है, और वह है अनशन। मेरा अनशन सरकार के विरुद्ध नहीं, बल्कि सवर्ण हिन्दुओं के हृदय-परिवर्तन के लिए होगा। उन हरिजनों के विरुद्ध भी मेरा अनशन होना चाहिए, जो सवर्ण हिन्दुओं के हाथ की कठपुतली बनकर ऐसी-ऐसी मूर्खता कर बैठते हैं। स्थानीय सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं के सामने मैंने इस मामले को रख दिया है, और उनकी मदद भी चाही है।"

यह सारा ही काण्ड बड़ा दुःखद और सवर्णों के लिए लज्जाजनक है। पंच-अदालत न्याय के नाम पर हरिजनों को पेड़ों से बँधवाकर बुरी तरह पिटवाती है—यहाँतक कि कइयों की हड्डियाँ भी टूट गईं। फिर षडयंत्र रचकर ग्राम-मुंसिफ़ उन घायल हरिजनों को गिरफ़तार कराता है, और उसके षडयंत्र में सवर्णों के साथ एक वयोवृद्ध प्रतिष्ठित हरिजन भी शामिल हो जाता है—यह सारी ही एक ऐसी दुःखप्रद घटना है, जिसपर स्वामी आनन्दतीर्थ का क्षुब्ध होना स्वाभाविक है। स्वामीजी ने इसपर जो अनशन करने का विचार किया उसे एकदम अविचारपूर्ण नहीं कहा जा सकता। पर अनशन शुरू करने के पहले ग्राम-मुंसिफ़ के षडयंत्र में शामिल होनेवालों के गले इस बात को उतारने का भरसक प्रयत्न स्वामीजी को करना चाहिए कि उन्होंने डरकर ऐसे महान् पाप में मुंसिफ़ का साथ दिया। यदि वे प्रायश्चित्त की भावना से पाप को दिल से स्वीकर कर लेते हैं, तो फिर स्वामीजी को अनशन करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। हमें आशा है कि मद्रास-सरकार उन अत्याचार-पीड़ित हरिजनों को सही न्याय दिलायेगी, और इस प्रकार की हिदायत जारी करदेगी कि भविष्य में पंच-अदालतें इस प्रकार के अमानुषिक अत्याचार न्याय के नाम पर नहीं कर सकेंगी।

वि० ह०

सामाजिक निर्योग्यताएँ

परिगणित तथा अनुसूचित जन जातियों के कमिश्नर श्री लक्ष्मीदास श्रीकान्त ने अपनी १६५२ की रिपोर्ट में हरिजनों की सामाजिक निर्योग्यताओं एवं उनकी स्थिति पर अच्छा विस्तृत प्रकाश डाला है। सामाजिक निर्योग्यताओं पर वे अपनी रिपोर्ट में लिखते हैं--

"अस्पृश्यता का तथा उसके परिमाणस्वरूप सामाजिक निर्योग्यताओं का, जो हमारी सबसे बड़ी बुराइयाँ हैं, यद्यपि हमारे संविधान द्वारा अन्त कर दिया गया है, तथा उनके व्यवहार को निषिद्ध ठहरा दिया गया है, तथापि किसी-न-किसी रूप में, खासकर ग्रामों में, उसका अस्तित्व आज भी पाया जाता है।"

इस सबकी सही-सही स्थिति मालूम करने के लिए कमिश्नर महोदय के दफ्तर से जो विस्तृत प्रश्नावली राज्य-सरकारों को भेजी गई थी, उसके ये दो प्रश्न खास महत्व के थे :—

प्रश्न २. निर्योग्यता-निवारक क़ानून या क़ानूनों के अधीन जो अपराध किये गये क्या वे हस्तक्षेप्य (काग्निज़ेबल) हैं ?

प्रश्न ७. अदालतों में जो मामले दायर हुए उनमें से,

(क) कितने समझौतों से तय हुए,

(ख) कितनों में सजाएँ हुईं, और

लत के सरपंच के नेतृत्व में सवर्ण हिन्दू हरिजनों को अक्सर ही सताते रहते हैं। तरह-तरह से हरिजनों को दंडित किया जाता है। जैसे, कभी तो उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाता है तो कभी आर्थिक ; कभी-कभी उनको खुले आम पीटा जाता है; उनकी हैसियत से कहीं ज़्यादा उनपर भारी-भारी जुर्माने किये जाते हैं ; झूठे इलजाम लगाकर पुलिस कार्रवाई कराई जाती है; तालाबों और कुओं पर उन्हें पानी नहीं भरने दिया जाता, और बाज़ार से खाने-पीनेतक की चीज़ें उन्हें नहीं खरीदने दी जातीं।

मैं यहाँ उदाहरण के तौर पर सवर्णों द्वारा हरिजनों पर किये गये घोर उत्पीड़न का एक नमूना आपके सामने रखता हूँ:

यह घटना १ अगस्त को ताम्बपट्टी ग्राम में घटी थी, जो मदुराई ज़िले के मेलूर तालुका में है। ताम्ब-पट्टी मेलूर के बिल्कुल पास है। यह लोक संसद के सदस्य श्री पी० कक्कन का ग्राम है। कतिपय हरिजन युवकों पर यहाँ यह संदेह किया गया था, कि उन्होंने कई छोटी-छोटी चोरियाँ की हैं। चावड़ी पर सवर्ण हिंदुओं ने पुराने ढंग से उनपर मुक़दमा चलाया और उसकी सुनवायी की। कल्लर जाति का मुखिया पेरिया अंबलगर इस ग्राम-अदालत का सरपंच था। हरिजन-चेरी (बस्ती) के तमाम बालिग़ हरिजनों को चावड़ी पर बुलाया गया। हरिजनों ने आकर सवर्ण हिन्दुओं को बड़े आदर से साष्टांग प्रणाम किया अपने पेट को भूमि से लगाकर। जिन व्यक्तियों पर चोरी का संदेह था, उनको खूब पीटा गया और मामूली तौर पर पूछताछ की गई। जब वे दरख्तों से बाँधे जानेवाले थे, उनमें से एक हरिजन सज़ा से बचने के लिए भाग निकला। सरपंच ने इसपर हुक्म दिया कि उसे अदालत के इस अपमान पर कड़ा दण्ड दिया जाये। सवर्णों ने टाँगें पकड़-पकड़कर हरिजन युवकों को घसीटा, और यहाँतक उनकी पिटाई की कि कइयों की हड्डियाँ भी टूट गईं। क़रीब-क़रीब सभी हरिजनों पर मार पड़ी। ऊँची जाति के कुछ लोगों ने इस मौक़े से फ़ायदा उठाकर ग्राम के सभी हरिजनों को बुरी तरह डरा दिया, कि अगर हरिजन-कार्यकर्त्ताओं के बहकाने पर कोई हरिजन गाँव के नाइयों की दूकानों पर बाल कटाने जायेगा, तो उसकी भी ऐसी ही पिटाई होगी।

जब यह देखा गया कि ग्राम के लोगों ने ग़ैर-क़ानूनी ढंग से हरिजनों को बुरी तरह पीटा है जिससे कि कइयों को सख्त चोटें आयी हैं, तब ग्राम के मुन्सिफ ने, जो इस वाक़या के समय चावड़ी पर मौजूद था, महसूस किया कि इससे तो ग्राम-अदालत के पंच और वह खुद भी क़ानून के शिकंजे में फँस जा सकते हैं। इसलिए किसी तरह पुलिस से बच निकलने के लिए उसने तुरन्त ताम्बपट्टी के एक प्रतिष्ठित वृद्ध सज्जन को, जो खुद भी हरिजन हैं, यह झूठी रिपोर्ट पुलिस में लिखाने को राज़ी कर लिया कि ३१ जुलाई की शाम को मन्दिर में से कुछ बरतन चोरी हो गये थे। उस वृद्ध सज्जन ने और गाँव के चौकीदार ने, जैसा कि उनको सिखा-पढ़ा दिया गया था, मन्दिर में से बरतनों को उठाकर मुन्सिफ के हवाले कर दिया। इसपर मुन्सिफ ने रिपोर्ट बनाकर पुलिस को देदी कि मन्दिर के बरतनों की चोरी इन्हीं हरिजनों ने की थी। पुलिस ने आकर तुरन्त उन घायल हरि-जनों को चोरी के इलजाम पर गिरफ्तार कर लिया, उनके हाथों में हथकड़ियाँ डालदीं और पुलिस की हिरासत में उन्हें अस्पताल भेज दिया। यह तो पुलिस क़बूल करती है कि ग्राम के लोगों ने हरिजनों को निर्दयतापूर्वक पीटा था, लेकिन वह यह मानती है कि ग्राम-अदालत के सामने से उन्होंने भागने की कोशिश की, इसीलिए उन्हें पीटा गया। ग्राम के लोगों ने जो इतना बड़ा ज़ुल्म किया उसके लिए उनके खिलाफ़ कोई मामला दर्ज नहीं हुआ। सवर्ण हिन्दुओं में, जो दिल के अच्छे हैं, वे मानते हैं कि पुलिस को जो रिपोर्ट दी गई वह झूठी थी। पर उनका कहना है कि उनकी उपस्थिति में उनके न चाहते हुए भी हरिजनों पर जो ज्यादती की गई उससे चूँकि वे फँस सकते थे, इस-लिए पुलिस थाने में रिपोर्ट लिखाने और बरतनों की

कपड़ा पसन्द करना पड़ता है; और दर्जी हमारा बदन देखकर दूर से नाप ले लेता है। मोहना को यहाँ कौन दर्जी का काम सिखायेगा? अरे हाँ, सीख तो सकता है। खलीफा जान साहब की दूकान पर बैठा दूँगा, वे उसे ज़रूर दिल से सिखा देंगे। फिर भी बेटी, हम यह न भूल जायें कि मोहना एक भंगी का लड़का है।" धोती के छोर से आँसू पोंछकर चाय पीते-पीते रामदीन ने कहा।

"काका, ठीक कहते हो तुम। बिरथा ही हमारे घर में मोहना ने आकर जनम लिया। कभी-कभी पूछ उठता है कि—"अम्मा, मेरे दादा, दादी और पिताजी पाखाने और गटरें साफ़ करने का यह गंदा काम क्यों करते हैं? मैं तो, अम्मा, यह काम कभी नहीं करूँगा।" काका, वह किसी के घर का जूठन भी नहीं खाता। माँ-बाप के घर पर मैं भी जूठन नहीं खाती थी। पर यहाँ शहर में आकर यह आदत डाल ली। पत्तलों पर का बचा-खुचा जूठन जो हमारी टोकरियों में दूर से लोग फेंक देते हैं उसीको लाकर हमें खाना पड़ता है, जैसे हम कुत्ते हों। काका, ऐसा क्यों?" पूछते हुए हरदेई की आँखें छलछला आईं।

"क्योंकि बेटी, हम जात के भंगी हैं। बड़े आदमियों के कुत्ते तो फिर भी हमसे अच्छे हैं, सुखी हैं।"

"क्या बातें हो रही हैं ससुर-बहू की आज सवेरे-सवेरे? मेरी लच्छमी बहू अपने काका का हमेशा कितना ध्यान रखती है। मैं तो दो घड़ी कभी इनके पास बैठ भी नहीं पाती।" बूढ़ी सास ने बहू के सिर पर लाड़ से हाथ फेरते हुए कहा।

"माँ, काका का जी रोज से आज कुछ अच्छा है। तुलसी की पत्तियाँ डालकर मैंने एक कटोरी चाय इन्हें अभी-अभी पिलाई है। माँ, अब तुम बैठो काका के पास। मैं चली जाऊँगी काम पर आज। काका के लिए खिचड़ी और मोहना के लिए रोटी आज तुम्हीं बना देना माँ।"

"ना, बहू, तुझसे मैं वह सब काम नहीं कराऊँगी, और न कभी अपने मोहना बेटा से ही। मैं कितने दिन से सोचती हूँ कि हम लोग भी क्यों न दक्खिन चले चलें। मोहना वहाँ पढ़-लिख जायेगा और कोई काम भी सीख लेगा। ठीक है न?" बुढ़िया ने बड़ी ललक से पूछा।

"ठीक ही है, मोहना की खातिर हमें देश भी छोड़ देना पड़े तो छोड़ देंगे। दक्खिन में कहीं बहुत दूर जाकर हमलोग मेहनत-मजूरी करेंगे और मोहना को पढ़ायेंगे और फिर किसी अच्छे उद्दिम में उसे लगा देंगे। फिर भी भूल तो नहीं पायेगा कि वह एक भंगी का लड़का है—भंगी का, जो मलमूत सिर पर उठाकर बाहर फेंकने ले जाता है; भंगी का, जो कुत्ते की तरह सबका जूठन खाने को मज़बूर किया जाता है; जो नीच-से भी नीच जात का समझा जाता है; जिसकी छाँह छूने से भी लोग बचते हैं; और जिसकी न कहीं अपनी ज़मीन होती है, न अपनी झोंपड़ी। नहीं भूल पायेगा वह कि बाप उसका भंगी है, और दादा भी उसका भंगी है। पर हाँ, है लड़का होनहार। हो सकता है कि वह उस पत्थर की बनी समाज की आँखें किसी दिन खोलदे, जिसने इन्सान को कुत्ते और सुअर से भी हीन बना डाला है।"

वि० ह०

दुःखप्रद और लज्जाजनक

मदुराई (मद्रास राज्य) से हरिजन-सेवक-संघ के संघटित कार्य-संचालक स्वामी आनन्दतीर्थ लिखते हैं—

"इस बात को सभी भली भाँति जानते हैं कि तामिलनाड के ग्रामों की सार्वजनिक चावड़ियों (चौपालों) में हरिजनों को वैसे तो प्रवेश नहीं करने दिया जाता, पर सवर्ण हिन्दू इन चावड़ियों में ही बैठकर हरिजनों पर चलाये गये मामलों को सुनते हैं, और इस हदतक उन्हें दण्ड देते हैं कि सदैव वे सवर्णों से भयभीत रहते हैं। नागरिक निर्योग्यता-निवारण के हमारे आन्दोलन की ओर ग्रामों में हरिजन जो आकृष्ट नहीं होते, उसका प्रमुख कारण है सवर्ण हिन्दुओं द्वारा दण्डित होने का प्रतिक्षण भय। ग्राम के अम्बलम् अर्थात् ग्राम-अदा-

सेवा भी करता है। सफ़ाई-दारोगा से कह-सुनकर बड़ी मुश्किल से सिवदीना को भैंसेगाड़ी की नौकरी रामदीन ने दिलादी थी। दारोगा वह बड़ा नेक अफ़सर था।

बीमारी में खटिये पर पड़े-पड़े न जाने कितनी कहाँ-कहाँ की बातें याद आती रहती हैं। आज १० साल पहले की वह घटना भी रामदीन को याद हो आई, जब उसने अपनी छोटी पतोहू को काम पर जाने से रोक दिया था। सिवदीना की बहू एक गाँव की लड़की है, जहाँ भंगियों के कुल तीन घर थे, और वे सब-के-सब खेतों पर मज़दूरी करते थे। टट्टी-सफ़ाई का काम तो बेचारीने यहीं शहर में आकर सीखा। रूप में और स्वभाव में लच्छमी है हरदेई। ब्याह हुए आठ दिन भी नहीं हुए थे कि सास के साथ काम पर जाने लगी। वह दिन रामदीन को याद आ गया, जब हरदेई मैले की बाल्टी सिर पर लिये डलाव को जा रही थी। सवेरे से ही मूसलाधार पानी पड़ रहा था उस दिन। खुली बाल्टी मुँहतक भरी थी, और मैला बह-बहकर उसके घूँघट पर और लँहगे पर गिर रहा था। सुबह से बारह बजेतक बारिश में उसने कोई तीस-पैंतीस टट्टियाँ साफ़ की थीं, जो काम अपने माँ-बाप के घर उसने कभी नहीं किया था। फिर एक दिन रामदीन ने उसकी सास से सुना कि बड़ी कोठीवाले बाबू लोग उसे पाप की आँख से देखते हैं। उसी दिन से काम पर जाने से उसे मना कर दिया गया। दो-तीन महीने बाद कमेटी में उसकी नौकरी लगवा दी। पर वहाँ भी जमादार उसे घूर-घूरकर देखता था। ग़रीबों की बहू-बेटियों को भगवान् क्यों सुन्दर रूप देता है।

सिवदीना की माँ ने तो सारी उमर टट्टी-सफ़ाई का ही काम किया है। उसे कभी लगा ही नहीं कि मैला उठाना और मैला-भरी टोकरी कमर या सिर पर रखकर ले जाना कोई बुरा काम है। सारे मोहल्ले में एक भी ऐसा पाख़ाना नहीं, जिसमें बाल्टी या मिट्टी के गमले रखे हों। बुढ़िया को कच्चे-खुरदरे फ़र्श पर से ही टीन के टुकड़े से मैला खरोच-खरोचकर उठाना पड़ता है। और एक दिन तो जब वह बड़ी कोठी की संडास का मैला उठा रही थी, उसी घड़ी ऊपर से, दूसरे या तीसरे तल्ले से, किसीने टट्टी फिरदी। पाख़ाना सारा उसकी पीठ पर छितरा गया। बुढ़िया ने इतना ही सुनाकर कहा कि, मालिक, थोड़ा खाँस तो दिया करो, जिससे मुझे मालूम तो हो जाये। पर अपनी पतोहू से टट्टी सफ़ाई न कराने में बुढ़िया भी सहमत थी। अपने पोते, हरदेई के बेटे को भी, बुढ़िया उस दिन कहती थी, टट्टी-सफ़ाई के काम में नहीं डालूँगी। दक्खिन से चिट्ठी आई थी कि उसके दो पोते तो मदरसे में पढ़ते हैं, और बड़ा दर्ज़ी का काम सीखता है। हरदेई भी अपने बच्चे को पढ़ाना और एकाध दस्तकारी का काम सिखाना चाहती है। मोहना दीखता भी बड़ा होनहार है। राजकुमार-सा लगता है देखने में — वृद्ध रामदीन के झुर्रियाँ पड़े पीले चेहरे पर प्रसन्नता की रेखाएँ खिंच आईं।

"काका, चाय बना लाई हूँ, गरम-गरम यह पीलो। तुलसी के पाँच-सात पत्ते भी डाल दिये हैं इसमें। थोड़ा-सा पुराना चावल माँ ने मटकी में सैंतकर रख छोड़ा था, उसकी आज तुम्हें खिचड़ी बना दूँगी। मोहना तुम्हारा अभी-अभी खेलने चला गया है। आज सवेरे से ही ज़िद कर रहा था कि दक्खिन में वहाँ मेरा बड़ा भाई दर्ज़ी का काम सीखता है, तो मैं भी वही काम सीखूँगा।" हरदेई ने गरम चाय की कटोरी ससुर के हाथ में थमाते हुए कहा।

"मोहना मुझे अभी से होनहार दीखता है, बेटी। पर हम यह कैसे भूल जायें कि उसने एक भंगी के घर में जनम लिया है—दिन-रात मल-मूत में सने रहनेवाले भंगी के घर में। बेटी, जात के हम भंगी हैं। लोग हमारी छाँह भी नहीं छूते। न सबके कुओं पर हम चढ़ सकते हैं, और न होटलवाले अपने प्याले में हमें चाय पिलाते हैं। मोहना उस दिन बच्चा ही तो था, 'लच्छमी-होटल' के अन्दर चला गया चाय पीने। एक बाबू ने पहचान लिया उसे कि यह भैंसागाड़ीवाले सिवदीना का लौंडा है। होटलवाले ने मार-मारकर मोहना को बाहर निकाल दिया। हाँ, बेटी, हम जात के भंगी हैं। कभी-कभी भगवान से भी भूल हो जाती है कि तुझ जैसी लच्छमी को और मोहना जैसे राजाबेटा को हमारे घर में भेज दिया। बजाज हमें हाथ लगाकर कपड़ा नहीं देखने देता, दूर से देखकरही हमें

कुछ अधिकार छोड़ने पड़ते हैं, पिछड़ी हुई जातियों पर तब स्वभावतः बेजा दबाव डालकर उस क़ानून को प्रभावहीन बनाने का प्रयत्न करता है। यह १६५२ की बिहार हरिजन इन्क्वायरी कमेटी के इस कथन से सिद्ध हो जाता है:—

"अपने घरों के मालिक बन जाने की बजाय उनको बराबर निर्दयतापूर्वक उन घरों से निकाला जा रहा है, जो कि अबतक उनके अपने थे। बहुत-से ज़मींदारों ने जिनको डर था कि होमस्टेड-टीनेन्सी एक्ट के अमल में आने से उनकी उतनी ज़मीन छिन जायेगी, हरिजनों को उनके घरों में से ज़बरदस्ती निकाल दिया।"

बिहार-हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री नगेन्द्रनारायण-सिन्हा ने भी ऐसी ही शिकायत अपने २५-७-५३ के पत्र में की है। लिखते हैं:—

"परिगणित जातियों के लोगों ने जिस ज़मीन पर अपने मकान बना लिये हैं, उसपर उनकी मालकियत का हक़ सुरक्षित रहेगा, इस आशय का एक क़ानून बिहार-सरकार ने पास कर दिया है। बिहार-सरकार ने हरिजनों के हितों की रक्षा करने के लिए १०० क्षेत्रीय सेवक यद्यपि नियुक्त कर दिये हैं, तो भी आये दिन उनके तरह-तरह से सताये जाने और बेदखल किये जाने के मामले होते रहते हैं। ज़िला-हरिजन-कल्याण-अधिकारी और वे तमाम सेवक सिर्फ़ अपनी फाइलों का पेट भरते रहते हैं। हरिजनों को उनके मकानों के लिए ज़मीन देने-दिलाने का महत्वपूर्ण प्रश्न योंही खटाई में पड़ा हुआ है।"

इसीप्रकार की शिकायतें अन्य राज्यों से भी मिली हैं।

जिनके लिए क़ानून बनाये जाते हैं, वे उनको ठीक तरह से समझना तो दूर, जानते भी नहीं कि उनके लिए सरकार ने क्या-क्या क़ानून बनाये हैं। न उनके पास कचहरियों में अर्जी-पुर्जी देने के लिए उतना पैसा होता है, और न हिम्मत ही। नतीजा यह होता है कि क़ानून एक घोषणा-मात्र रह जाता है। इसलिए क़ानून बना देने के बाद भी सरकार का ही यह फ़र्ज़ होना चाहिए कि परिगणित तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए सरल-से-सरल तरीक़े से उनके मकानों और खेती की ज़मीन देने और दिलाने का वह खास प्रबन्ध करे।

खेती की ज़मीन की सुरक्षा के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट में श्री श्रीकान्त लिखते हैं:—

"हरिजन और कहीं-कहीं पर आदिवासी भी या तो ग़ैरमुस्तकिल या शिकमी काश्तकार के तौर पर या भूमिहीन खेतिहर मज़दूर के तौर पर खेती-बाड़ी करते हैं। कुछ ही राज्य-सरकारों ने इस सम्बन्ध के क़ानून बनाये हैं, पर अधिकांश राज्यों ने अभीतक इस बारे में कुछ भी क़दम नहीं उठाया है। अधिकांशतः ये जातियाँ, हरिजन और आदिवासी भी, गाँवों में बसे हुए हैं और अपनी जीविका ज़मीन के सहारे चलाते हैं। इसलिए ज़मीन की समस्या के हल में ही मुख्यतः उनका आर्थिक उत्थान निहित है। अतः यह आवश्यक है कि तमाम राज्यों में ज़मींदारियाँ और जागीरदारियाँ खत्म होने और उसकेपरिणाम-स्वरूप भूमि जोतनेवालों में भूमि के पुनर्वितरण के पहले सब राज्य-सरकारों को इस प्रकार के क़ानून बना देने चाहिए कि जिनसे ग़ैरमुस्तकिल या शिकमी काश्तकारों को ज़मीन से बेदखल न किया जा सके। भूमिहीन खेती के मज़दूरों को स्वावलम्बी केवल इसी एक योजना को कार्यान्वित करने से बनाया जा सकता है, कि हरेक राज्य में जो बहुत सारी खेती-योग्य पड़ती ज़मीन पड़ी है, वह उनको मुफ्त देदी जाये। राज्य-सरकारें ऐसे क़ानून पास कर सकती हैं कि जिनसे परिगणित तथा अनुसूचित जन जातियों के लोगों को पड़ती ज़मीन देने के मामलों में प्राथमिकता दी जा सके।"

मौजूदा क़ानूनों में जबतक नये सिरे से उचित संशोधन नहीं कर दिये जाते और उनपर अमल कराने के लिए माल-विभाग के अधिकारियों को कड़े आदेश नहीं दिये जाते, तबतक शिकमी तथा भूमिहीन खेतिहर मज़दूरों की हालत में सुधार होना नामुमकिन है। ये क़ानून काफ़ी दोषपूर्ण हैं, जो कितने ही राज्यों में ग़ैरमुस्तकिल या शिकमी हरिजनों की मदद करने की बजाय उलटे सवर्ण किसानों की मदद करते हैं। परिणाम यह हुआ है कि हमारी कांग्रेस-सरकारें भी ऐसे क़ानून के बावजूद भी हरिजनों की पूरी मदद नहीं कर सकतीं।

वि० ह०

ठक्कर बापा विद्यालय के छात्रावासों का उद्घाटन

गत १८ जून को मद्रास के त्यागरायनगर में 'ठक्कर बापा विद्यालय' के छात्रावासों का उद्घाटन-संस्कार, तामिलनाड हरिजन-सेवक-संघ के अध्यक्ष श्री वैद्यनाथ ऐयर के सभापतित्व में, राज्य के मुख्यमंत्री श्री राजगोपालाचारी ने किया था। यह विद्यालय जनवरी, १९५३ से हरिजन-सेवक-संघ के केन्द्रीय कार्यालय की सीधी देख-रेख में चल रहा है। गांधी-निधि से प्राप्त विशेष आर्थिक सहायता से छात्रावासों के जिन अधूरे भवनों को पूरा किया गया, उन्हींका उद्घाटन उस दिन राजाजी के हाथ से कराया गया था। प्रबंधसमिति के अन्तरिम मंत्री श्री एल०एस० मातृभूतम् ने विद्यालय की रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए संस्था का इतिहास आदि से लेकर अबतक का संक्षेप में सुनाया। इस उद्योग-शिक्षण-संस्था में लगभग १५० हरिजन विद्यार्थियों को बढ़ईगीरी, लोहारगीरी, दरजीगीरी तथा बेंत का काम इतने उद्योगों का शिक्षण दिया जाता है। हाथकागज़-विभाग और प्रेस-विभाग फिलहाल बन्द कर दिये गये हैं।

तामिलनाड-संघ के मंत्री श्री गोपालस्वामी ने अखिल भारतीय हरिजन-सेवक-संघ के अध्यक्ष श्री घनश्यामदास बिड़ला तथा प्रधान मंत्री श्री वियोगी हरि एवं अन्य गण्य-मान्य व्यक्तियों के इस अवसर पर आये हुए शुभ कामनाओं के सन्देश पढ़े। श्री राजाजी का स्वागत करते हुए श्री वैद्यनाथ ऐयर ने कुछ चिंता के साथ कहा कि विद्यालय से विभिन्न उद्योगों में शिक्षण लेकर जो विद्यार्थी निकले हैं, वे पर्याप्त पूँजी के अभाव में अपना सीखा हुआ उद्योग प्रायः नहीं चला पा रहे हैं।

उद्घाटन करने के बाद श्री राजाजी ने छात्रावासों और विद्यालय को घूमकर देखा। तत्पश्चात् भाषण करते हुए उन्होंने कहा :—

"मुझे इस बात की खुशी है कि आज के इस समारोह आयोजन अपने घर के जैसे सुखद वातावरण में किया गया है। यह देखकर मुझे और भी आनन्द होता है कि हमारे भीष्माचार्य श्री भाष्यम् आयंगार विद्यालय को अपना आशीर्वाद देने के लिए यहाँ पधारे हैं। इस बात को सभी सार्वजनिक कार्यकर्त्ता जानते हैं कि किसी भी भवन के निर्माण के निमित्त धन-संग्रह करने का काम आज कितना कठिन हो गया है। यह आनन्द की बात है कि ठक्कर बापा विद्यालय के छात्रावास-भवन, जो अधूरे पड़े थे, आज पूरे तैयार हो गये हैं। मुझे संस्था की जो रिपोर्ट अभी मंत्री ने सुनाई है उससे मालूम होता है कि आर्थिक सहायताओं से जो आय इस विद्यालय को हुई, उसकी अपेक्षा खर्च कहीं अधिक हो रहा है। यह स्वाभाविक है। संस्था को चलाने के लिए जितना पैसा आपको चाहिए उतना मिलता नहीं है। इसमें सन्देह नहीं कि इन छात्रावास-भवनों को बहुत सुन्दर बनाया गया है। पर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जो बच्चे इन भवनों में बैठकर आज शिक्षण ले रहे हैं, उन्होंने अपनी बस्तियों में यहाँ आने के पहले ऐसे सुन्दर भवन शायद नहीं देखे होंगे, और न यहाँ से जाने के बाद ही ऐसे मकानों में रहने का उन्हें अवसर मिलेगा। तब तो उनका यहाँ आकर रहना एक स्वप्न-दर्शन ही समझा जायेगा।

"मुझे वे दिन याद आ रहे हैं, जब हरिजनों की यह उद्योग-शिक्षण-संस्था १९३२ के साल में कुछ झोपड़ियों में शुरू की गई थी। आज तो वह झोपड़ियों से उठकर धीरे-धीरे महलों में आ गई है, और इसमें १५० लड़के विभिन्न उद्योग-विभागों में शिक्षण पा रहे हैं। श्री वैद्यनाथ ऐयर ने अपना सारा जीवन हरिजन-सेवा के लिए अर्पित कर दिया है। वह इस बात की शोध में रहते हैं कि हरिजनों की कठिनाइयों और कष्टों को किस प्रकार दूर किया जाये। उन्होंने चिंता व्यक्त करते हुए अभी कहा है कि इस विद्यालय से शिक्षण लेकर जो लड़के निकले हैं, वे आवश्यक पूँजी न होने के कारण खुद अपना काम नहीं चला सके, इसलिए किसी-न-किसीके नीचे उनको काम करना पड़ रहा है। मन्त्री ने अपनी रिपोर्ट में एक स्थान पर इस बात का उल्लेख किया है कि हाथ के काम के महत्त्व को

अवश्य मान्यता मिलनी चाहिए। यह सच है। मगर प्रश्न यह है कि क्या इन शब्दों का सही-सही अर्थ लोग समझते हैं? क्या हाथ से काम करनेवालों का वे आदर करते हैं? यदि हाँ, तो मैं कहूँगा कि 'श्रम-प्रतिष्ठा' का सही अर्थ उन्होंने समझ लिया है। श्री ऐयर ने इस संस्था से निकले हुए विद्यार्थियों के विषय में जो चिंता प्रकट की, उसका यही अर्थ है कि हाथ से काम करनेवालों का आदर हम लोग नहीं कर रहे, शरीर-श्रम को हम अभी 'प्रतिष्ठा-हीन' ही मान रहे हैं।

"उदाहरण के लिए, ज़मीन जोतनेवाले किसान को ले लीजिए। श्रम वहाँ असल में जोतनेवाला किसान नहीं, बल्कि बैल करते हैं। वह तो एक 'मालिक' की स्थिति में होता है। क़ीमत देकर बैलों को और खेती के दूसरे सरंजाम को वह खरीद लेता है। फिर उन मज़दूरों को लीजिए, जो सड़क पर ठेला-गाड़ियाँ चलाते हैं। जब ठेलों पर माल भरकर वे ले जाते हैं, तब कुछ मज़दूर तो ठेलों को आगे से खींचते हैं और कुछ उन्हें पीछे से ढकेलते हैं। मगर जब माल उतार देने के बाद वे घर लौटते हैं, तब अक्सर एक-दो मज़दूर ठेले पर बैठ जाते हैं और दूसरे उसे खींचते हैं। पर हैं वे सब-के-सब शरीर-श्रम करनेवाले। प्रश्न है कि क्या लोग उनके श्रम के प्रति उचित आदर प्रकट करते हैं? नहीं। बिल्कुल यही छाप संस्थाओं के बच्चों के मन पर पड़ जाती है। वे सोचने लगते हैं कि उधार पूँजी लेकर भी 'मालिक' बनकर बैठना बेहतर है। जबतक इस प्रकार की छाप उनके मन पर पड़ी रहेगी, तबतक वे अपने जीवन में प्रगति नहीं कर पायेंगे। शरीर-श्रम के प्रति आदर-भाव प्रकट करके ही हम आगे बढ़ सकते हैं। श्रम के प्रति सम्मान महज़ प्रदर्शन के लिए नहीं होना चाहिए। मज़दूर क्या कभी प्रदर्शन के लिए शरीर-श्रम करता है? उसके प्रति क्या हम लोगों ने कभी आदर का भाव प्रकट किया है? यदि किया है, तो वह एक ऊँची चीज़ है। जो विद्यार्थी ऐसी संस्थाओं में आकर शरीर-श्रम के उद्योग सीखते हैं, उनको अभी से इसी प्रकार के काम बाहर भी करने के लिए तैयार रहना चाहिए, फिर उनके पास मालिक बनने के लिए आवश्यक पूँजी हो अथवा न हो। किसीके भी नीचे काम करने के लिए उनको खुशी से तैयार रहना चाहिए।

"यह श्रम-प्रतिष्ठा का विचार न केवल इसी संस्था पर, बल्कि दूसरी संस्थाओं पर भी लागू होता है, जैसे एग्रीकल्चरल कालेज या टेक्सटाइल इन्स्टीट्यूट। ऐसी सभी संस्थाओं के संचालक अक्सर परेशान रहते हैं कि अपने स्नातकों को वे कहाँ से काम दिलायें। यह रोना प्रायः सभी संस्थाओं का है। मगर बग़ैर किसी की मदद के बहुत-से स्नातकों को कुछ-न-कुछ काम मिल ही जाता है, और असल में कहा जाये तो सारी दुनिया का काम ऐसे ही चलता आया है।

मेरे जैसा कोई आदमी किसी गाँव में जाये, तो पहला सवाल वह वहाँ यह पूछेगा कि क्या यहाँ कपड़ा धोनेवाला कोई धोबी मिलेगा? अगर नहीं मिला, तो उसे गन्दे कपड़े लेकर गाँव से लौटना पड़ेगा। तब, धोबी और इसी प्रकार के दूसरे आवश्यक काम करनेवाले वस्तुतः 'काम करनेवाले' हैं, जो समाज के लिए आवश्यक और आदरणीय हैं। श्रम-प्रतिष्ठा के सच्चे अर्थ को हम तबतक कैसे समझ सकते हैं, जबतक कि जीवन के प्रति अपने रुख को हमने बदला नहीं है? संभव है कि इसपर लोग गुस्से में आकर कहें कि 'यह आदमी धन्धों के आधार पर चली आनेवाली जातियों को क़ायम रखना चाहता है। पर मैं उनसे पूछूँगा कि क्या आप लोग नाइयों, धोबियों, बढ़इयों और दूसरे कारीगरों को क्लार्क बना देना चाहते हैं? अपने वास्तविक कामों को छोड़कर क्या वे सब-के-सब क्लार्क याने 'अवास्तविक' काम करनेवाले बन जायें? कुछ लोगों का क्लार्क बनना वांछनीय हो सकता है, किन्तु सभीको तो समाज में उस प्रकार का काम नहीं मिल सकता।

"परीक्षाओं का पास करना और उसके बाद नौकरियों की प्रतिस्पर्धा में उतरना यह एक प्रकार का भारी जुआ है। जिन्हें कोई नौकरी नहीं मिलती वे नाराज़ हो जाते हैं। अगर कोई नौकरी मिल गई तो पहले तो उन्हें सन्तोष हो जाता है, मगर और-और ऊपर वे जाना चाहते हैं। ऊपर नहीं जा सकते तो परेशान होते हैं। अच्छा है कि अभी इस प्रकार की प्रतिस्पर्धा आम जनता में नहीं पाई जाती। जन-साधारण अपने काम-धन्धे को करते रहते हैं।

"लोग पूछ सकते हैं कि क्या इस प्रकार कोई देश आगे

बढ़ सकता है ? मेरा यही उत्तर है कि दूसरे देशों की प्रगति इसीलिए हुई, क्योंकि उन्होंने सरकारी नौकरियों को आवश्यकता से अधिक महत्व नहीं दिया; हरेक आदमी वहाँ अपना काम अपने क्षेत्र में करता रहा है।

"छात्रावास ये काफ़ी बड़े हैं। इनमें बड़े आराम से १५० विद्यार्थी रह सकते हैं। लेकिन मान लीजिए, मैं ऐसा हुक्म निकालदूँ कि इन भवनों में मद्रास के मज़दूर आकर रहेंगे, तो आपके ख्याल में कितनी बड़ी संख्या में वे यहाँ रहने के लिए आ जायेंगे ? दसगुने तो ज़रूर। उसके लिए वे मेरी जय भी ज़ोर-ज़ोर से बोलेंगे। प्रश्न यह नहीं है कि मकान ये कितने बड़े हैं, किन्तु प्रश्न यह है कि शिक्षा किस प्रकार की यहाँ पर दी जाती है। विद्यार्थी यहाँ से मकानों को लेकर नहीं, किन्तु प्राप्त शिक्षा को लेकर जायेंगे। इस विद्यालय में वे जिस प्रकार रह रहे हैं इसका परिणाम यह नहीं होना चाहिए कि ग्रामों में जाकर अपने घरवालों और रिश्तेदारों के साथ रहने में उन्हें अरुचि हो जाये।

"जो लोग हरिजन-उत्थान-कार्य में दिलचस्पी रखते हों उन्हें चाहिए कि वे विद्यालय के लिए पर्याप्त निधि की व्यवस्था करदें, जिससे कि यहाँ से काम सीखकर निकलनेवाले विद्यार्थियों को अपने-अपने उद्योग-धन्धे चलाने के लिए आवश्यक साधन जुटाये जा सकें। परन्तु जैसा कि मैंने कहा है, अगर वे आवश्यक साधनों के अभाव में अपना काम खुद न चला सकें तो दूसरों के नीचे भी काम करने के लिए उनको तैयार रहना चाहिए।"

अन्त में राजाजी ने कहा कि, "अगर आप लोग आगे बढ़ना चाहते हैं तो हाथ से काम करनेवाले का आदर आप को करना ही चाहिए। आप यह भूल जायें कि वह एक कारीगर है या मज़दूर। आप तो उसके श्रम को आदर दीजिए। इंग्लैंड के स्व० राजा जार्ज पंचम के विषय में कहा जाता है कि उनको ऐसी उम्र में एक जहाज़ पर काम करने के लिए भेज दिया गया था, जब कि उन्हें स्कूल में पढ़ना चाहिए था। अपने हाथ से काम करते हुए उन्होंने जो एक महान् पाठ पढ़ा वह था हाथ से काम करनेवालों को समुचित सम्मान देना। विद्यार्थियों से मैं कहूँगा कि वे उन लोगों का आदर करना सीखें, जो अपने हाथ से काम करते हैं। माता-पिताओं का कर्त्तव्य है कि वे अपने बच्चों को बचपन से ही ऐसा शिक्षण दें, कि वे हाथ से काम करनेवाले लोगों को सदा आदर की दृष्टि से देखें। बचपन में जो संस्कार बन जाते हैं, वे जीवनभर बने रहते हैं। इसलिए मैं विद्यार्थियों तथा शिक्षकों के मन पर यह छाप डाल देना चाहता हूँ कि शरीरश्रम की प्रतिष्ठा को वे अपने जीवन में प्रथम स्थान दें। स्वयं छोटे-छोटे पूँजीपति बनने का विचार वे छोड़दें। संस्था के व्यवस्थापकों को मेरी सलाह है कि आरामदेह ढंग से बच्चों को काम सिखाने की अपेक्षा ऐसे ढंग से सिखाना बेहतर होगा, जिसमें उन्हें थोड़ी कठिनाई या तकलीफ़ महसूस हो। उदाहरण के लिए, बुनाई के विद्यार्थियों से मैं अनुरोध करूँगा कि वे खटकेवाले करघे की बजाय खड्डी पर कपड़ा बुनना सीखें।

मैं यह भी आशा करता हूँ कि यहाँ के विद्यार्थी और शिक्षक विद्यालय और छात्रवासों को तथा अहाते को खुद अपने हाथ से साफ़ करते होंगे। ठक्कर बापा यदि आज जीवित होते, तो इस विद्यालय को इतना समुन्नत देखकर उनको बहुत आनन्द होता। इसके लिए मैं न केवल वर्तमान व्यवस्थापकों को ही, बल्कि श्रीगणेशन् जैसे पुराने संचालकों को भी धन्यवाद दूँगा, जिन्होंने कि इस विद्यालय को स्थापित किया था।"

अन्त में, विद्यार्थियों को आशीर्वाद और उपदेश देते हुए श्री राजाजी ने कहा—"तुमलोग अच्छे भले विद्यार्थी बनो। एक दूसरे के प्रति घृणा नहीं करना, और जिस हस्त-उद्योग को सीखने की तुम्हारी रुचि हो उसे अच्छी तरह सीखना। हमें सदा इस बात का गर्व रहा है कि हमारे देशवासियों ने जिस किसी भी काम में हाथ लगाया, उसे बहुत अच्छी तरह से किया और काम की निगरानी करनेवालों की उन्हें ज़रूरत नहीं पड़ी। यदि इस चीज़ को तुम अपने ध्यान में रखोगे, तो मुझे संदेह नहीं कि तुमलोग अपने जीवन में मनचाही प्रगति कर सकोगे।"

वि० ह०

भूदान और हरिजन

८ जुलाई को मैंने पूज्य विनोबाजी को लिखा था :—

"मुझे यह जानकर बड़ा आनन्द होता है कि जनक, बुद्ध और महावीर की जन्मभूमि बिहार में आपकी तपश्चर्या बहुत सफल हो रही है। निस्सन्देह, इस सफलता में भगवान् का हाथ है। पर मैं तो अपने ही दाव की तरफ हमेशा देखता हूँ, 'सूझ जुआरिहि आपन दाऊ'। भूदान-यज्ञ में यद्यपि मैं नगण्य-सा समय और शक्ति दे पाया, फिर भी हिस्सा-बाँट में संकोच नहीं करूँगा। हमारे हरिजनों को यज्ञ में प्राप्त भूमि का तीसरा भाग मिलेगा, आपका यह संकल्प मुझे सदा आह्लादित करता रहता है।

बिहार में तो आप जानते ही हैं, अधिकांश खेतिहर मज़दूर हरिजन ही हैं, जो प्रायः सभी खेती के लिए भूमि चाहते हैं। मुझे पता नहीं कि बिहार में भूमि का वितरण अभी शुरू हुआ है या नहीं। यदि शुरू हो गया है, तो हरिजनों को अवश्य भूमि का तृतीयांश मिला होगा और मिलेगा। आपको इस बात का स्मरण दिलाना भी एक प्रकार की धृष्टता है। यह तो अपनी जानकारी के लिए ही लिख रहा हूँ।

भूदान के साथ-साथ आपने 'कूपदान' की भी चर्चा की है। सिद्धान्त रूप से तो सार्वजनिक कुएँ ही हरिजनों के लिए सर्वत्र खुल जाने चाहिएँ। अस्पृश्यता-निवारण की दिशा में वांछनीय भी यही है। किन्तु आम आबादी से देहातों में जहाँ हरिजनों की बस्तियाँ ज्यादा फासले पर हों, वहाँ उनके लिए तात्कालिक जलकष्ट-निवारणार्थ कुछ कुएँ भी बनवाना आवश्यक है। कहीं-कहीं पर सरकार की तरफ़ से ऐसे कुएँ बनवाये गये हैं। हरिजन-सेवक-संघ ने भी यथासाधन थोड़े-से कुएँ कहीं-कहीं पर बनवाये हैं। यदि कूपदान की प्रवृत्ति ऐसी हरिजन-बस्तियों में योग दे सके, तो उनका जल-कष्ट कुछ अंशोंतक दूर हो जायेगा। यदि आप उचित समझें, तो इस प्रकार का संकेत अपने किसी प्रार्थना-भाषण में करदें। कदाचित् आपने कहा भी हो, जिसका मुझे पता नहीं है।

विनीत
वियोगी हरि"

इस पत्र का उत्तर विनोबाजी ने ११ जुलाई को यह दिया :—

"आपने अपना ही दाव देखा ऐसा आप लिखते हैं, लेकिन यह मेरा भी दाव है। बिहार में भूमि बाँटने में अभी देर है। उत्तरप्रदेश और हैदराबाद में बँट रही है। वहाँ कम-से-कम एक तिहाई ज़मीन हरिजनों को दी जा रही है। कूपदान की कुछ चर्चा मैंने छेड़ी तो है, पर यह सिंचाई के लिए है, याने जो ज़मीन दान में मिलेगी, उसमें कुएँ बनवाने की बात है।

मेरा शरीर आजकल ठीक काम दे रहा है।

विनोबा के प्रणाम"

विनोबाजी के इस उत्तर से स्वभावतः मुझे बहुत बल मिला। मैंने उनके इस पत्र का हवाला देते हुए समस्त भूदान-यज्ञ-समितियों के संयोजकों को निम्नलिखित परिपत्र भेजा :—

"भूदान-यज्ञ की शुरूआत पूज्य विनोबाजी ने भूमि-हीन हरिजनों को भूमि दिलाने के उद्देश्य से दो वर्ष पूर्व की थी, यह तो आपको विदित ही है। मैंने हाल में एक पत्र श्री विनोबाजी को इस सम्बन्ध में याद दिलाने के लिए लिखा था और विनोद में यह भी लिखा था कि भूमि माँगने में तो मैं कोई खास सहयोग नहीं दे पाया हूँ, किन्तु जो भूमि प्राप्त हुई है, उसमें से हरिजनों को कम-से-कम एक तिहाई भूमि लेने में मैं अपना स्वार्थ ज़रूर देखता हूँ। उसपर विनोबाजी ने मुझे लिखा है—आपने अपना ही स्वार्थ

देखा ऐसा आप लिखते हैं, लेकिन वह मेरा भी स्वार्थ है ।

मुझे मालूम नहीं कि भूमि बाँटने का कार्य आपके यहाँ अभी शुरू हुआ है या नहीं । जब भी शुरू हो पूज्य विनोबाजी द्वारा दिये गये वचन के अनुसार कम-से-कम मिली हुई भूमि का तीसरा भाग ऐसे हरिजनों को अवश्य आप दिलायें जो खेती करने के लिए तैयार हों और जैसे-जैसे भूमि वितरण होती जाये कृपा-कर हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान कार्यालय को उसका विवरण भेजते रहें कि कहाँ-कहाँ पर हरिजनों को कम-से-कम एक तिहाई भूमि के हिसाब से भूमि मिली है । साथ ही, हरिजन-सेवक-संघ के प्रान्तीय शाखा के अध्यक्ष और मंत्री से भी भूमि वितरण करते समय कृपाकर सलाह ले लिया करें ।"

आपका

हरिजन निवास, दिल्ली　　　　वियोगी हरि

१६-७-५३　　　　प्रधान मंत्री"

हैदराबाद, राजस्थान, मध्यप्रदेश, तामिलनाड, केरल, गुजरात, मैसूर और उत्तरप्रदेश की भूदानयज्ञ-समितियों के संयोजकों से इस परिपत्र के नीचेलिखे अच्छे आशा-प्रद उत्तर मुझे प्राप्त हुए हैं :—

हैदराबाद—"हरिजनों में कितने कुटुम्बों को ज़मीन मिली, इसका डेटा निकालने की कोशिश हो रही है । १/३ भाग ज़मीन हरिजनों को बटवारा करने का हमने नियम ही कर लिया है । अभीतक इस राज्य में भूदान में हमें ५६,६४६ एकड़ ज़मीन प्राप्त हुई है, जिसमें से ६,७७२ एकड़ भूमि अभीतक बाँटी गई है ।"

राजस्थान—"अभीतक जो भूमि वितरण हुई है उसमें से हरिजनों को भी ज़मीन बाँटी गई है । तिहाई हिस्से से अधिक ही भूमि हरिजनों को दी गई है । आगे भी भूमि का वितरण करते समय हम इस बात का ध्यान रखेंगे । आपको भी सूचित करते रहेंगे ।"

मध्यप्रदेश—"अबतक जो ज़मीन बँटी है उसमें १/३ से अधिक ही हरिजनों को दी गई है । पर हर गाँव में ऐसा हुआ ही है यह बात नहीं । पुराने अंक तो मेरे पास नहीं हैं, न अब उनका वर्गीकरण करके देने के लिए समय ही है । अतः आप मेरी असमर्थता के लिए क्षमा कर देंगे, और पिछले अंकों की बात छोड़ देंगे और मुझपर विश्वास रखेंगे । एक हज़ार एकड़ में से क़रीब ३५० से अधिक ज़मीन हरिजनों को ही मिली है या आदिवासियों को ।

यहाँ क़ानून बनकर भूदान-यज्ञ बोर्ड बन चुका है और वही भूमि-वितरण का कार्य करेगा । उन्हें भी मैं सूचित कर दूँगा तथा वितरण के बाद पूरा ब्योरा अपके पास भेजने की विनय कर दूँगा । संभवतः अक्टूबर के बाद ही बोर्ड की कार्यवाही शुरू हो । आपकी सलाह की बात भी मैं बोर्ड के सामने पेश कर दूँगा ।"

गुजरात—"गुजरात की भूदान-यज्ञ-समिति की आगामी बैठक में हम लोग आपकी इस सूचना पर विचार करेंगे । अभी हम लोगोंने इस प्रान्त में वितरण का काम हाथ में नहीं लिया है ।"

मैसूर—"भूमि बाँटने का काम अभी मैसूर प्रान्त में शुरू नहीं हुआ है । वितरण के समय प्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघ के अध्यक्ष और मंत्री की सलाह हम ज़रूर लेंगे । एक तिहाई हिस्सा हरिजनों के लिए बाँटने की पूरी कोशिश करेंगे ।"

केरल—"केरल में अभी भूमि बाँटने का काम शुरू नहीं हुआ है । आप चाहते हैं कि प्राप्त भूमि का एक तिहाई भाग हरिजनों को अवश्य मिले । मैं इस बात को ध्यान में रखूँगा ।"

सौराष्ट्र—"हमारे यहाँ अभीतक भूमि-वितरण का काम शुरू नहीं हुआ । आज से बहुत पहले, आरम्भ में, एकाध दान हमें मिला था, वह भूमि हमने हरिजनों को ही दे दी थी । उसके बाद भूमिदान-समिति की रचना हुई और आजतक वितरण का कार्य हमने हाथ में नहीं लिया । यह कार्य जब शुरू होगा तब आपकी बात को हम ज़रूर ध्यान में रखेंगे ।

यहाँ पर तो हरिजन-सेवक-संघ के प्रमुख श्री छगनलाल जोशी भूमिदान-समिति के भी सदस्य हैं। और इससे बढ़कर भी हरिजन-सेवा, भूमिदान आदि सर्व प्रकार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ सौराष्ट्रभर में चलाने के लिए सर्वोपरि संस्था सौराष्ट्र-रचनात्मक-समिति है। इस संस्था के भी हम दोनों मंत्री हैं। इससे यहाँ पर परस्पर याद दिलाने का और कोई सवाल ही नहीं। हमें आशा है कि इससे आपको संतोष होगा।"

विन्ध्यप्रदेश—"विनोबाजी ने भूमिवितरण के विषय में जो नियम बनाये हैं, उनके अंतर्गत कम-से-कम एक तिहाई भूमि हरिजनों को मिलनी ही चाहिए। इस प्रदेश में भूमि-वितरण का कार्य अभी केवल टीकमगढ़ और दतिया ज़िलों में हुआ है और उसमें इस बात का बराबर ध्यान रखा गया है कि उक्त नियम का पूरा-पूरा पालन हो। आगे भी नियमों का पालन तो रहेगा ही ऐसा विश्वास है।"

मध्यभारत—"भूमि-वितरण के समय आपकी सूचनाओं पर अवश्य ध्यान दिया जायेगा। पूज्य विनोबा की इच्छा से बाहर हम थोड़े ही जा सकते हैं?"

हिमाचल प्रदेश—"आपने भूमि-वितरण के समय हरिजनों का विशेष ध्यान रखने की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है। मैं अवश्य ही इस बात का ध्यान रखूँगा, क्योंकि हरिजन ही अधिकतर इस भूदान-यज्ञ के अधिक हक़दार हैं।"

वि० ह०

राजस्थान के अनेक गाँवों से शिकायतें

राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री पं० जयनारायण व्यास को राजस्थान प्रान्तीय दलित जातीय संघ के मंत्री श्री हरिशंकर सिद्धान्तशास्त्री ने, जो राजस्थान-विधान-सभा के भी सदस्य हैं, ८ जुलाई, १९५३ को एक लम्बा पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने जयपुर डिविज़न के अंतर्गत टोंक, सवाई माधोपुर और जयपुर ज़िले के कई ग्रामों में हरिजनों पर हो रहे अनेक अत्याचारों की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया था। उसकी प्रतिलिपि उन्होंने हमें भी भेजी थी। उस पत्र को हम कुछ संक्षिप्तरूप में नीचे दे रहे हैं:—

"एक महीने से टौंक, सवाई माधोपुर और जयपुर इन तीनों ज़िलों के अनेक गाँवों में चमारों की तरह-तरह से बेइज़्ज़ती की जा रही है। बेदखलियाँ आये दिन हो रही हैं, उनकी लूटपाट हुई है और कई जगहों पर उनका पूरा सामाजिक बहिष्कार किया गया है। कुओं पर हरिजन चमारों को चढ़ने नहीं दिया जाता, उनके मवेशियों को भी खेल पर पानी पीने से रोका जाता है, उनके घरों पर अक्सर हमले किये गये हैं और उनकी स्त्रियों को ज़ेवर नहीं पहनने दिये जाते, ज़बरन उनसे बेगार ली जाती है और कागज़ों पर डण्डे के बल से उनके अँगूठे लगवाये जाते हैं। हज़ारों चमारों की इज़्ज़त धूल में मिल चुकी है। आतंक बुरी तरह छा गया है। भाग-भागकर दूसरे राज्यों में जा बसने की वे सोच रहे हैं।

सरकारी अधिकारियों का ध्यान समय-समय पर इन ज़्यादतियों की तरफ़ खींचा गया, और उन्होंने चमारों की रक्षा करने का बराबर आश्वासन भी दिया। मगर ७ जुलाई को मुझे तथा कई हरिजन कार्यकर्त्ताओं को जयपुर ज़िले के कलेक्टर साहब ने कहा कि, 'सामाजिक बहिष्कार वगैरा के खिलाफ़ सरकार क़दम नहीं उठा सकती। जिन लोगों की ज़मीनें छीनी गई हैं, वे व्यक्तिगत रूप से दावे कर सकते हैं और जिन चमारों को मारा-पीटा गया है, वे पुलिस में जाकर रिपोर्ट लिखा सकते हैं।'

हमारे पास इतना रुपया नहीं कि अदालत में हम

दावा करने जायें। दावा करते भी हैं, तो तारीख-पर-तारीख पड़ती है और अपनी खेती-बाड़ी का काम बार-बार छोड़कर अदालत दौड़ना पड़ता है। हमारा विश्वास आज टूट गया है, हम निराश हो गये हैं। क्या भारतीय संविधान की धाराओं की अवहेलना इसी तरह होती रहेगी? आपसे हमारा निवेदन है कि हमारी इस प्रार्थना पर पूरा विचार करें। हमारी सुरक्षा के लिए जल्द-से-जल्द कोई ठोस क़दम उठायें और इन सारे अत्याचारों की जाँच कराने के लिए एक निष्पक्ष कमीशन नियुक्त करदें।''

इन्हीं घटनाओं से सम्बन्ध रखनेवाले और भी ऐसे ही पत्र कतिपय दूसरे व्यक्तियों के प्राप्त हुए हैं। कुछ पत्र तो मूलरूप में सीधे हरिजन-सेवक-संघ को भेजे गये हैं, और कुछ पत्रों की प्रतिलिपियाँ मिली हैं।

शिकायती पत्रों से मालूम होता है कि मुख्यतः बेगार में काम न करने और मृत पशुओं को न उठाने के कारण इस प्रकार की घटनाएँ घटी हैं। अनेक हरिजनों का कहना है कि उन्होंने मुर्दार जानवरों के उठाने का काम बरसों से छोड़ दिया है और उस काम को वे नहीं करना चाहते। उनकी शिकायत है कि इस भयंकर महँगाई के ज़माने में बेगार में पहले की तरह मुफ्त काम वे कैसे कर सकते हैं।

बैरवा महासभा, इंदौर ने उन कई गाँवों की एक लम्बी सूची भी भेजी है, जिनमें इस प्रकार के ज़ुल्म हुए हैं। बैरवा महासभा, इन्दौर से कई मास पहले भी ऐसी ही एक विज्ञप्ति हमें मिली थी।

राजस्थान-सरकार ने हरिजनों पर हुए और हो रहे इस प्रकार के बहिष्कारों और अत्याचारों की किस प्रकार जाँच कराई, और यदि सचमुच व्यापकरूप में ऐसे-ऐसे अत्याचार टोंक, सवाईमाधोपुर और जयपुर ज़िले में हुए हैं, तो उन्हें दूर करने और पीड़ितों को उचित न्याय दिलवाने के लिए सरकार ने क्या-क्या क़दम उठाये, यह हम जानना चाहेंगे। इस संबंध में सरकार को अपनी एक तथ्यपूर्ण विज्ञप्ति निकालनी चाहिए। संभव है कि रोष में आकर जागीरदारों और जाटों, मीनों और गूजरों द्वारा की गई ज्यादतियों से पीड़ित हरिजनों ने अपनी शिकायतें अधिकारियों तथा जनता के सामने रखने में सही नाप-तोल से काम न लिया हो, और वे भी बचाव या जवाब में कुछ कर बैठे हो, किन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि राजस्थान में सैकड़ों वर्ष पुरानी सामाजिक रूढ़ियों तथा सामन्तशाही के फलस्वरूप हरिजनों पर अनेक प्रकार के छुट-पुट अत्याचार होते तो रहे हैं, पर इस तरह व्यापकरूप से नहीं।

१७ अप्रैल को अस्पृश्यता-निवारण के प्रस्ताव की बहस में लोक-संसद के सदस्य श्री पन्नालाल बारूपाल ने, जो राजस्थान से आये हैं, बोलते हुए अस्पृश्यता एवं उससे उत्पन्न निर्योग्यताओं का भयंकर चित्र खींचा था। उन्होंने कहा था:—

"आज भी हमारी अवस्था वैसी ही बनी हुई है, बल्कि कहीं-कहीं पर तो हालत पहले से भी अधिक खराब हो गई है। हरिजनों के अपने निजी कुएँ नहीं हैं, इसलिए वे कुओं पर पानी भरने जाते हैं, तो उनको पास नहीं आने दिया जाता और कभी-कभी तो खैलों (गड्ढों) का भी गंदला पानी पीना पड़ता है। हरिजनों के कुओं के अंदर जानवरों की हड्डियाँतक डाली गई हैं। मैं हाल की ही एक आपबीती घटना की ओर आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ। मैं और मेरे एक मित्र राजस्थान-विधान-सभा के सदस्य श्री धर्मपाल बीकानेर गये थे। एक सरकारी सिनेमा में हमने चाय मँगवाई। चाय पीकर जब हम गिलास वापस देने लगे, तो उनको ठुकरा दिया गया और हमसे कहा गया—'तुम एम० पी० हो तो दिल्ली में हो, वहाँ चाहे जो कर सकते हो। यह बीकानेर है, यहाँपर यह सब नहीं चलेगा।' मंदिर-प्रवेश की बात तो दूर रही, हरिजनों को होटलों में भी नहीं घुसने दिया जाता। नाई उनकी हजामत नहीं बनाते, धोबी उनके कपड़े नहीं धोते, कुओं पर उनको पानी नहीं भरने दिया जाता, और जितने भी सामाजिक अधिकार हैं उनसे उनको वंचित रखा जाता है। कांग्रेस के भी कई बड़े-बड़े आदमी हरिजनों के हाथ का पानी पीना पसंद नहीं करते! हृदय बदलने

की बात कही जाती है। हृदय तो तभी बदलेगा जब हृदय होगा। वह तो पत्थर बन गया है। समाज के उन लोगों का हृदय क्या बदलेगा, जो गद्दों पर सोये पड़े रहते हैं और सुबह की कड़कड़ाती सरदी में भंगी, उनके बच्चे और उनकी स्त्रियाँ उनका पाखाना साफ़ करते होते हैं?"

परिगणित तथा अनुसूचित जन-जातियों के कमिश्नर की १९५२ की राजस्थान की रिपोर्ट भी कुछ हदतक इन तथ्यों का समर्थन करती है। रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान-सरकार भी मानती है :

"राजस्थान में परिगणित जातियों को समाज में घुला-मिला लेने और उनकी सामाजिक निर्योग्यताओं को खत्म कर देने के पक्ष में बुद्धिशाली वर्ग के बहुत छोटे-से भाग का ही झुकाव देखने में आता है। मामूली तौर पर यहाँ के आम लोग रूढ़िचुस्त हैं, इसलिए इस प्रकार के सामाजिक सुधारों के प्रति वे अपनी सख्त नाराज़ी ज़ाहिर करते हैं। दूकानें, सार्वजनिक भोजनालय और होटल अभी हरिजनों के लिए खुले हुए नहीं हैं। बेशक कभी-कभी साफ़-सुथरे कपड़े पहनकर होटलों में वे चले जाते हैं। मगर यह सामान्यतया कहा जा सकता है कि इस राज्य में निश्चयपूर्वक हरिजन इस प्रकार की निर्योग्यताओं से पीड़ित हैं। कभी-कभी ऐसे भी मामले सामने आये हैं, जबकि सार्वजनिक कुओं, तालाबों और घाटों के उपयोग में हरिजनों के साथ भेद-भाव बरता गया। मेहतरों को तो आम तौर पर सार्वजनिक कुओं पर से पानी नहीं भरने दिया जाता। पर चूँकि मेहतर सबसे अधिक दबे हुए है, इसलिए इस प्रकार की बहुत कम शिकायतें सामने आती हैं। मंदिर और दूसरी धार्मिक संस्थाओं में हरिजनों का अबतक यहाँ प्रवेश नहीं हुआ है। ऐसी घटनाएँ तो अब भी ग्रामों में देखी-सुनी जाती हैं, जबकि हरिजनों को गाँव की हद के भीतर घोड़े या ऊँट पर सवार नहीं होने दिया जाता। गहने न पहनने देने के मामले भी किसी-किसी गाँव में सुनने में आये हैं। उदयपुर डिविज़न में कहीं-कहीं पर हरिजनों को अपने घरों में ब्याह-शादी या दूसरे भोजों में भी घी-शकर के लड्डू नहीं बनाने दिये जाते। यह भी देखा गया है कि सवर्ण-मोहल्ले में बना अपना निजी मकान कोई व्यक्ति किसी हरिजन को नहीं बेच सकता।"

हरिजनों के सामाजिक बहिष्कारों तथा निर्योग्यताजनित अपराध करनेवालों को राजस्थान सरकार, जैसा कि उसका कहना है, अस्पृश्यता-निवारण क़ानून के न होने से दण्ड देने में असमर्थ है। माना कि अस्पृश्यता-निवारण क़ानून वहाँ न होने के कारण इस प्रकार के कितने ही मामलों को सरकार हाथ में नहीं ले सकती, किन्तु साधारण क़ानून या क़ानूनों से शांति और व्यवस्था क़ायम रखने के हित में ज़्यादतियाँ करनेवालों पर वह फिर भी मामले तो चला सकती है और चलाये भी होंगे। हम यह मानते हैं कि सैकड़ों वर्षों से अनुचित रीतियों से प्राप्त विशेष अधिकारों का उपभोग अबतक जो वर्ग करता आ रहा था, वह उन अधिकारों के छिन जाने या उनमें कमी आ जाने से, तथा जिस वर्ग को उसने सत्ता और तथाकथित धर्म के नाम पर आजतक बुरी तरह दबा रखा था, उसके ज़रा-सा सिर ऊपर उठाने से समाज में इस प्रकार की उथल-पुथल का होना स्वाभाविक है। मध्यभारत में तो बीसियों हरिजनों के क़तलतक हुए हैं। पर इसके साथ यह भी सच है कि सरकार की जाग्रत और सुदृढ़ नीति की परीक्षा भी ऐसे ही संक्रान्तिकाल में होती है। गरीब जनता को स्वराज्य के इस नये युग में इतना तो महसूस होना ही चाहिए कि आज वे एक नई आबोहवा में साँस ले रहे हैं।

हमें पूरी आशा है कि राजस्थान-सरकार शीघ्र ही ऐसे क़दम उठायेगी जिनसे उत्पीड़ित हरिजनों को सुरक्षा का आश्वासन मिले और निराशा और अविश्वास का रास्ता पकड़ने को उन्हें बाध्य न होना पड़े। वि० ह०

पंच-अदालत का यही फैसला है ?

अन्यत्र, इसी अंक में, हमने मदुराई ज़िले के ताम्ब-पट्टी गाँव की पंच-अदालत द्वारा दिये गये न्याय और दण्ड का उल्लेख "दुःखद और लज्जाजनक" शीर्षक लेख में किया है। पंच-अदालत द्वारा दिये गये न्याय का एक और उदाहरण हम नीचे देते हैं, जो उत्तरप्रदेश के मेरठ ज़िले का है। गत ४ मार्च को हमें निम्नआशय का एक शिकायती पत्र ग्राम ख्वाजा का नंगला, तहसील बागपत, ज़िला मेरठ से श्रीगिरवर वाल्मीकि की पत्नी श्री परसन्दी ने दिया था :—

"मैं इसी गाँव की लड़की हूँ, और अपने बाल-बच्चों व पति के साथ अपने मां-बाप के हक पर रहती हूँ, क्योंकि उनका कोई लड़का नहीं था। लगभग २० साल से अपने पिता के एक किसान का घर कमा रही हूँ। मेरे किसान भगवाना जाट के घर पर एक बूढ़े भैंसे का गोबर उठाने का काम मुझे सौंपा गया था। पंचायत के सफाई मंत्री श्री आशाराम ने उसकी मज़-दूरी ५ रुपया माहवार दिलाने का मुझे वचन दिया था। मैं हर रोज़ गोबर उठाती रही, और समय-समय पर अपनी मज़दूरी भी माँगती रही। पर श्री आशाराम मुझे बराबर बहकाते रहे और झूठे वायदे करते रहे। मुझे अभीतक कुछ भी मज़दूरी नहीं मिली। कुछ दिनों से वह भैंसा बीमार पड़ गया था। उसके गोबर से बहुत दुर्गन्ध आने लगी थी। गोबर भी अब मकान बन्द रहने के कारण दो-दो तीन-तीन दिन बाद मैं उठाती थी। मैंने श्री भगवाना व श्री आशाराम से कई बार कहा भी कि भैंसेवाला मकान रोज़ खुलवा दिया करें, क्यों-कि दो-तीन दिन का गोबर बहुत सड़ जाता है। पर इसपर उन्होंने कुछ भी ध्यान नहीं दिया।

जब मैं होलीवाले दिन उनके घर पर दो-तीन दिन का पड़ा सड़ा गोबर उठाने गई, तो उन्होंने किवाड़ नहीं खोले। मैंने कहा कि इतने दिनों का सड़ा गोबर उठाना अब मेरे बस का नहीं रहा। मैं कल नहीं आ सकूँगी। मेरी ४ महीने की मज़दूरी चुकादो। इसपर आशाराम ने क्रोध में आकर मुझे दो-तीन थप्पड़ लगाये और धक्का भी मारा। मुझे गालियाँ भी दीं और यह भी कहा कि 'चली जा यहाँ से, तुझे मज़दूरी नहीं मिलेगी।' उसी रात को वह बूढ़ा भैंसा भी मर गया।

मेरी मज़दूरी के बदले में दूसरे दिन सवेरे मुझे पंचायती अदालत की तरफ से समन मिले, जिसमें मेरे पति गिरवर तथा पुत्र हरिशंकर का भी नाम था। हमें तारीख २-३-५३ को अदालत में हाज़िर होने का हुक्म था। हम वहाँ ठीक १० बजे पहुँच गये, पर शाम के ५ बजेतक मुद्दई का पता नहीं था। इस बीच में मेरे पति गिरवर ने सरपंच साहब से पूछा कि हमसे ऐसा क्या क़सूर हो गया, जो यहाँ हमें तलब किया गया है ? पर ६ बजेतक हमें कुछ भी नहीं बताया गया। चलते समय शाम को ६ बजे हुक्म हुआ कि तुम अब २१-५-५३ को हाज़िर हो जाना, तुम्हारे ऊपर आशा-राम सफ़ाई मंत्री ने दावा किया है।

हम ग़रीब हरिजनों पर यहाँ इसी तरह के आये दिन ज़ुलम होते रहते हैं। हम लोगों से हमेशा डरा-धकमाकर बेगार ली जाती है। कहा जाता है कि 'राम-राज्य' हो गया है, यह जनता का राज्य है। कोई हिम्मत करके अपने काम की मज़दूरी माँगता है, तो उसके खिलाफ़ दावा दायर करके पहले तो महीनों तारीखें बढ़ा-बढ़ाकर उसे परेशान किया जाता है, फिर उसपर जुर्माना कर दिया जाता है। गाँवों की पंच-अदालतों में भी तो इन्हीं बड़े लोगों का ज़ोर है।

हरिजन-सेवक-संघ ही एक ऐसी संस्था है, जहाँ पर मैं समझती हूँ, हम ग़रीब हरिजनों की पुकार सुनी जा सकती है। आपसे प्रार्थना है कि हमारी इस शिकायत को मेरठ के कलेक्टर या किसी और ऊँचे अफ़सरतक

पहुँचाकर और उसकी अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करवाकर हमें न्याय दिलाने की कृपा करें।"

३० जुलाई, १९५३ को परसन्दी के पति गिरवर ने हरिजन-सेवक-संघ को फिर यह प्रार्थनापत्र दिया :

"न्याय पाने के लिए मैं पंचायत के सरपंच साहब के पास गया। पर न्याय मिलना तो दूर, मेरी भी वही गत हुई। उल्टे पंचायत ने मेरे खिलाफ़ मामला चला दिया। पंच-अदालत में तारीख पर मैं हाज़िर हुआ, मगर मेरी हाज़िरी लगाई नहीं गई। पंचायत के मेम्बर, जो ज्यादातर सवर्ण हिन्दू हैं, हम हरिजनों पर किये जानेवाले जुल्मों और ज्यादतियों का हमेशा समर्थन करते रहे हैं। वे हम लोगों से हमेशा बेगार में मुफ्त काम लेना चाहते है; और अगर हम काम करने से इन्कार करते हैं, तो हमें बेइज़्ज़त किया जाता है और तरह-तरह से सताया जाता है। यही कारण है कि सरपंच ने बिल्कुल झूठा और निराधार इल्जाम मेरे खिलाफ़ लगाकर मुझपर १००) रुपया जुर्माना कर दिया। मुझे पता भी नहीं चला कि जुर्माना कब और किस क़सूर पर किया गया। मेरठ के डिप्टी मजिस्ट्रेट की अदालत में यह शिकायत पहुँचाई गई कि मैंने जुर्माना देने से इन्कार कर दिया है। इसपर पुलिस के दो सिपाहियों ने मेरे घर पर चढ़कर मुझे धमकाया कि अगर तुम जुर्माना नहीं दोगे, तो तुम्हारा सामान ज़ब्त कर लिया जायेगा। मैंने उनसे हाथ जोड़कर बहुत-कुछ कहा, पर सब बेकार हुआ।

डिप्टी मजिस्ट्रेट की अदालत में मैंने इस सारे अन्याय की शिकायती अर्जी दी। मजिस्ट्रेट साहब ने उस फैसले की नकल पेश करने के लिए मुझसे कहा, जिसमें कि पंचायत ने मुझपर जुर्माना किया था।

इस तरह मुझे बहुत परेशान किया जा रहा है। मैं गरीब और असहाय हरिजन कैसे तो पंच-फैसले की नक़ल लाकर पेश करूँ, और कहाँ से वकील करूँ?"

१० मार्च को ही तुरन्त हमने उत्तरप्रदेश की सरकार को इस मामले के बारे में लिख दिया था। तबतक तो मामला यहींतक था, कि गिरवर की स्त्री परसंदी को भगवाना जाट का पक्ष लेकर पंचायत के सफ़ाई-मेम्बर श्री आशाराम ने एक-दो थप्पड़ें लगा दी थीं, और ४ महीने तक लगातार भैंसे का गोबर उठाने की मज़दूरी उसे नहीं दी गई थी। इस बीच में आशाराम ने पंचायत में उल्टे यह शिकायत लिखादी कि परसंदी ने ठीक तरह से अपना काम नहीं किया। दो तारीखों में गिरवर तो पंच-अदालत में हाज़िर हो गया, पर मुद्दई आशाराम हाज़िर नहीं हुआ। तीसरी तारीख पड़ी तब गिरवर पर उसकी ग़ैर-हाज़िरी में १००) रुपये का जुर्माना इस अपराध पर सरपंच ने कर दिया कि उसने समन की अवहेलना की है। पंचायत उसे फैसले की नक़ल भी नहीं दे रही है। हमने सरकार को लिखा कि,

१. बुढ़िया परसंदी को उसके काम की मज़दूरी नहीं दी गई और उससे बेगार में मुफ्त काम लिया गया।
२. अपनी मजदूरी माँगने पर उसे पीटा भी गया।
३. दबाकर रखने के लिए उनपर झूठा मामला चलाया गया।
४. ग्राम-पंचायत ने बिना किसी न्यायपूर्ण कारण के १०० रुपये का जुर्माना कर दिया।

हमने लिखा कि परसन्दी और उसके पति गिरवर के साथ उचित न्याय किया जाये और बेगार में काम लेने तथा मार-पीट करने व ग़रीब हरिजन पर बिल्कुल झूठा मुकदमा चलाकर १००) रुपये का जुर्माना कर देने के अपराधों पर पंचायत के इन सदस्यों को उचित दण्ड दिया जाये। यदि रक्षक ही भक्षक बन जायेंगे, तो न्याय और नीति का कहीं नाम भी नहीं रह जायेगा।

गिरवर की पुत्रवधू को भी इसी बीच में गाँव के मनीराम नामक एक प्रतिष्ठित व्यक्ति ने जूता फेंककर मारा। उस दिन गाँव में एक सार्वजनिक समारोह था, जिसमें उत्तर प्रदेश के एक मंत्री श्री चरणसिंहजी भी सम्मिलित हुए थे। गाँव के सब भंगी सफ़ाई के काम में लगे हुए थे। गिरवर के लड़के जयभगवान की स्त्री से उन्होंने कूड़ा उठाने को कहा; वह एक तरफ़ पर्दा किये खड़ी रही। इसपर श्री मनीराम को क्रोध आ गया, और उसे जूता मार

दिया। बाद में उन्होंने मान लिया कि वह उनकी ग़लती थी। यह सज्जन कई शिक्षण-संस्थाओं के प्रधान और सदस्य भी हैं। हमारे मित्र बड़ौत-जैन कालेज के प्रो० श्री भरतसिंह उपाध्याय, जिनको हमने इस तथा परसन्दी के मामले की भी जाँच करने के लिए ख्वाजा-के-नंगला में भेजा था, अपनी रिपोर्ट में लिखते हैं :

"श्री मनीराम आर्यसमाजी हैं। उनके कई भव्य मकान हैं, जो वैदिक आदर्श-वाक्यों से भरे पड़े हैं। एक जगह मोटे अक्षरों में यह पढ़कर बड़ा आश्चर्य और दुःख हुआ—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।' मैं यह सोचकर बड़ा खिन्न हो गया कि किस प्रकार यह दशा सुधारी जाये।"

३० जुलाई को मेरठ ज़िले के पंचायतराज-अफ़सर को भी हमने इस आशय का पत्र लिखा कि ग़रीब निरपराध गिरवर पर पंच-अदालत ने जिस फ़ैसले के अनुसार १००) रुपये का जुर्माना किया है, उसकी नक़ल वे गिरवर को दिलादें और खुद इस मामले को देखें कि उसमें एक ग़रीब हरिजन पर पंचायत द्वारा कैसा घोर अन्याय हुआ है।

हमारे पत्रों की पहुँच के मामूली-से जवाब हमें मिल गये, इस आशय के कि 'उचित कार्रवाई की जा रही है।' कई महीने गुज़र गये, पर आजतक मालूम नहीं हो पाया कि क्या कार्रवाई की गई या की जा रही है, और काग़ज़ किस दफ़्तर से किस दफ़्तरतक अबतक पहुँचे हैं।

यह तो एक ऐसे मामले का हाल है, जिसे एक अत्याचारपीड़ित हरिजन अपने लड़के के ज़रिये हमारे सामने ले आया और हमने सरकार से उसके बारे में आवश्यक लिखापढ़ी की। कोई बतला सकता है कि ग़रीब हरिजनों पर होनेवाले अत्याचारों के कितने इस प्रकार के मामले देहातों में होते रहते हैं, जो कभी हमारे सामने आते भी नहीं? अखबारों में और रेडियो पर आनेवाले देहाती प्रोग्राम तो रोज़-रोज़ हमें यही बतलाते हैं कि सर्वत्र विकास हो रहा है और पंचायत-राज्य क़ायम हो जाने से सबको सुख और न्याय मिल रहा है। महज़ प्रचार के आधार पर हम कबतक अपना राज्य चला सकेंगे? हमारे प्रशासक और हमारे लोकनेता झूठा सन्तोष मानकर न बैठ जायें, कि सब कुछ ठीक ही चल रहा है। शासकों, अधिकारियों और लोकनेताओं को दफ़्तर की फ़ाइलों पर बहुत निर्भर न रहकर जगह-जगह घूम-घूमकर सचाई की तहतक पहुँचना चाहिए, और खड़े-खड़े तत्काल उचित न्याय दिलाना चाहिए।

वि० ह०

प्रान्तीय शाखाओं का पुनःसंगठन

उत्तरप्रदेश—१० मई, १९५२ को हरिजन-सेवक-संघ की कार्य-समिति ने निश्चय किया था कि विस्तृत क्षेत्रों तथा बड़ी-बड़ी समस्याओं को देखते हुए उत्तरप्रदेश को तीन खण्डों में विभक्त कर दिया जाये, और संघ की अलग-अलग क्षेत्रीय शाखाएँ संगठित कर दी जायें।

तदनुसार, **पश्चिमोत्तर खण्ड** का पुनःसंगठन गत वर्ष प्रो० रामशरणजी की अध्यक्षता में किया गया, जिसका मुख्य कार्यालय मुरादाबाद में रखा गया है। इस खण्ड में निम्नलिखित ज़िलों का समावेश किया गया :

१ मुरादाबाद	४ अलीगढ़	७ बदायूं
२ पीलीभीत	५ मेरठ	८ बिजनौर
३ अलमोड़ा	६ टिहरी गढ़वाल	९ सहारनपुर
१० बुलन्दशहर	१३ मथुरा	१६ बरेली
११ रामपुर	१४ मुज़फ़्फ़रनगर	१७ नैनीताल
१२ गढ़वाल	१५ देहरादून	

उत्तरप्रदेश के **पूर्वी खण्ड** को अगस्त, १९५३ में संगठित कर दिया गया है। प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्ता श्री बाबा राघवदासजी को अध्यक्ष तथा सेवापुरी के संचालक श्रीकरण भाई को मंत्री नियुक्त किया गया है। इस खण्ड में निम्नलिखित ज़िलों का समावेश किया गया है और मुख्य कार्यालय बनारस में रखा गया है :

१ बनारस	४ मिर्ज़ापुर	७ बलिया
२ गोरखपुर	५ फ़ैज़ाबाद	८ आज़मगढ़
३ गोंडा	६ सीतापुर	९ जौनपुर

१० गाजीपुर	१३ देवरिया	१५ बस्ती
११ सुलतानपुर	१४ बाराबंकी	१६ बहराइच
१२ खेरी		

आंध्र—आंध्र प्रादेशिक हरिजन-सेवक-संघ इधर कुछ वर्षों से संगठित रूप में काम नहीं कर रहा था। सीमित क्षेत्र में संघ की ओर से श्री सी० एस० गुप्त संचालक के रूप में एक वर्ष से हरिजन-कार्य कर रहे हैं। गत जुलाई मास में उसका पुनःसंगठन हो गया है। अध्यक्षपद पर आंध्रदेश के प्रथम श्रेणी के रचनात्मक कार्यकर्त्ता श्री स्वामी सीताराम जी को नियुक्त किया गया है।

संघटित कार्य

तामिलनाड

नागरिक निर्योग्यता-निवारण क़ानून के मातहत नीचे-लिखे मामले मई, १९५३ में पुलिस में दर्ज कराये गये :—

१ मेलावलावु	चाय की दूकान में हरिजनों को बेंच पर नहीं बैठने दिया गया।
२ अरुडीच्यूरिणी	नारियल की नरेली में चाय दी गई।
३ ,,	हरिजनों के लिए रखे गये अलग गिलासों में चाय दी गई।
४ नवीनीपट्टी	एक हरिजन के बाल काटने से नाई ने इन्कार किया।
५ ,,	काँच के अलग गिलास में चाय दी गई।
४ रामनगर	एक हरिजन से होटल के अलग कमरे में बैठने को कहा गया और काँच के अलग गिलास में उसे चाय दी गई।
७ कुम्बला	एक हरिजन को सामने के दरवाज़े से आने से रोका गया, और पिछवाड़े से आने को कहा गया।

सभाएँ

पातिट्टनगुडी, अन्नाकुलम्, ताम्बपट्टी और रामनगर में स्वामी आनन्दतीर्थ तथा श्री रामस्वामी और कुछ अन्य सज्जनों ने अस्पृश्यता-उन्मूलन तथा निर्योग्यता-निवारण पर भाषण दिये।

उल्लेखनीय

१ पातिट्टनगुडी ग्राम में हरिजनों को किसी अम्बलम् की मृत्यु हो जाने पर मुर्गे व मुर्गियाँ मुफ्त देनी पड़ती थीं। जब उन्होंने इस भेंट को देने से इन्कार किया, तो अम्बलारों ने उनका पूरा आर्थिक बहिष्कार कर दिया और उन्हें किसी मज़दूरी पर भी नहीं लगाया। पुलिस ने बीच में पड़कर समझौता करा दिया था। स्वामीजी ने जाकर इस सारे मामले की अच्छी तरह जाँच-पड़ताल की।

२ ईडुय्यापट्टी ग्राम में एक हरिजन मज़दूर को उसके सवर्ण हिन्दू मालिक ने मज़दूरी का कुछ भी नहीं दिया था, और लिखा-पढ़ी का कागज़ भी अपने पास रख लिया था। हरिजन को पूरी मज़दूरी दिला दी गई। सवर्ण मालिक एक पाई भी देने को तैयार नहीं था, पर वह डर गया।

३ मेलावलावु और वांचीनगरम् ग्रामों में मालूम हुआ कि चाय की दूकानों पर अब भी हरिजनों के साथ भेद-भाव बरता जाता है। परीक्षार्थ दो हरिजन लड़कों को दूकानों पर चाय पीने को भेजा गया। मेलावलावू की एक दुकान पर बिना किसी भेद-भाव के चाय पिला दी गई। दिक्कत यह है कि इन गाँवों के हरिजन इस प्रकार के भेद-भाव को सहन कर लेते हैं। सिर्फ कुछ लड़के ही जब-तब स्वामीजी के पास शिकायत ले जाते हैं; मगर पुलिस में रिपोर्ट लिखाने के लिए वे भी तैयार नहीं होते। चाय के एक दूकान-वाले पर ४०) रुपये गत अप्रेल मास में जुर्माना हो जाने के बाद से वांचीनगरम् गाँव में भेद-भाव अब पहले जैसा नहीं रहा है।

४ श्रत्ताकुलम् ग्राम के एक कुएँ पर हरिजनों को पानी नहीं भरने दिया जाता था। स्वामीजी सवर्ण हिन्दुओं से मिले, तो उन लोगों का काफ़ी कड़ा रुख पाया, किन्तु पुलिस के पहुँचते ही वे मुलायम पड़ गये और कहने लगे कि हरिजन बिना किसी रोक-टोक के हमारे कुएँ पर पानी भर सकते हैं। सभा भी इस गाँव में की गई, जिसमें गवर्नमेंट की अस्पृश्यता-निवारण नीति पर विस्तार से प्रकाश डाला गया। आस-पास के कई गाँवों के हरिजन इस सभा में आये थे। इस गाँव में काफ़ी जागृति देखने में आई।

५ अरडीच्यूरिणी ग्राम में कुछ हरिजनों को चाय की दूकानों पर भेजा गया। दो दूकानों के अन्दर तो उनको जाने नहीं दिया, पर यह जानकर कि स्वामीजी गाँव में आये हुए हैं, एक दूकान में हरिजनों को बिना किसी रोक-टोक के आने दिया। दो मामले यहाँ के पुलिस में दर्ज कराये गये।

६ नीडुँगुलम् ग्राम में देखा गया कि हरिजनों को दूकानों के अन्दर बिना किसी रोक-टोक के चाय पिलाई गई। चाय की दूकान पर जो बहुत-से लोग आकर खड़े हो गये थे, उनको अस्पृश्यता-निवारण का अभिप्राय और महत्त्व समझाया गया।

७ केलावलावु और सरवलयपट्टी इन दोनों ग्रामों में पाया गया कि हरिजनों के साथ चाय की दूकानों पर भेद-भाव नहीं बरता जाता है। नाई भी उनके बाल बनाते हैं।

८ कलपट्टी में, जहाँतक चाय की दूकानों का प्रश्न है, हरिजनों के साथ कोई भेद-भाव देखने में नहीं आया। किन्तु नाई आम तौर पर उनकी हजामत नहीं बनाते। दो नाइयों से उनकी दूकानों पर स्वामीजी मिले और हरिजनों के बाल बनाने के लिए उन्हें समझाकर राज़ी किया।

बिहार

ज़िला-मानभूम

[बिहार-हरिजन-सेवक-संघ के अन्तर्गत 'बाऊरी जाति-सेवा मण्डल' द्वारा ज़िला मानभूम में लगभग दो वर्ष से कल्याण-कार्य तथा अस्पृश्यता-निवारण-कार्य हो रहा है। मण्डल के मंत्री श्री नकुलचन्द्र बाऊरी ने मई और जून मास की जो रिपोर्ट भेजी है, उसमें से कुछ महत्त्वपूर्ण अंश हम नीचे दे रहे हैं—सम्पादक]

१ गिंगारा ग्राम में १६ मई से २३ मईतक जो 'हरि-बोल' संकीर्तन चला, उसमें हरिजनों को हरि-मन्दिर में बिना किसी भेद-भाव के प्रवेश करने दिया गया। सवर्णों के साथ-साथ उन्हें प्रसाद भी दिया गया।

२ सिंगबाजार ग्राम में श्री नकुलचन्द्र ने एक सभा की। एक प्राइमरी स्कूल खोलने की भी व्यवस्था कराई। श्री गिरीशचन्द्र मजुमदार ने पाठशाला-भवन के लिए दानस्वरूप दी। अपने परिश्रमसे लोगों ने पाठशाला की दीवारें खड़ी करदी हैं। भवन तैयार होते ही पाठशाला शीघ्र शुरू हो जायेगी।

३ गिरगिरि गाँव में 'भागजोती' पद्धति पर ७ भूमि-हीन हरिजनों को खेती करने के लिए ज़मीन दिलाई। यहाँ पर हरिजनों को पीने के पानी का कष्ट है। उनकी बस्ती में कुआँ खुदवा देने के लिए ज़िला-हरिजन-कल्याण-अधिकारी को लिखा गया।

डोम-मोहल्ले में संकीर्तन कराया गया, जिसमें सभी हरिजनों ने भाग लिया।

भूदान-यज्ञ में हरिजनों को कुछ ज़मीन देने के लिए गाँव के ज़मींदार श्री ज्योतिलाल चौधरी तथा अन्य बड़े आदमियों को प्रेरित किया, और वे ज़मीन देने को तैयार हो गये।

४ सिंगबाजार गाँव में १३ जून को प्राइमरी स्कूल चालू कर दिया गया। १५०) रुपया चन्दा ग्रामवासियों ने पाठशाला की इमारत खड़ी करने के लिए जमा किया।

५ चिनपिना गाँव के माधुर और पूनों बाऊरी ने रिपोर्ट दी कि गाँव के ज़मींदार उनको बहुत ज्यादा तंग कर रहे हैं। माधुर बाऊरी और उसके चारों लड़कों को बुरी तरह पीटा गया और गाँव से निकाल दिया गया। उनसे ज़बरन बेगार ली गई और उनपर जुर्माना भी किया गया। हरिजनों के पास अपनी ज़मीन न होने से वे ज़मींदारों की ज़मीन पर काश्त करते हैं और उपज का सिर्फ़ एक तिहाई हिस्सा

उनको मिलता है। खेतिहर मज़दूर को यहाँ मज़दूरी भी बहुत कम दी जाती है। मानभूम के डिप्टी कमिश्नर से श्री-नकुलचन्द्र इस रिपोर्ट को लेकर मिले। उनकी सलाह से श्री नकुलचन्द्र ने वहाँ एक सार्वजनिक सभा करने का आयोजन किया। ७००-८०० हरिजन उस सभा में उपस्थित हुए। डिप्टी कमिश्नर सभा में हरिजनों का उत्साहपूर्वक भाग लेना देखकर बहुत खुश हुए, और उन्होंने हरिजनों पर आये दिन होनेवाली ज्यादतियों को दूर करने का वचन दिया। गाँव में एक कुआँ खुदवा देने का भी उन्होंने हुक्म दिया।

ज़िला-पटना

[पटना ज़िले के अनेक ग्रामों में इकंगरसराय को सेवा-केन्द्र बनाकर श्री मदनमोहनप्रसाद सिंह संघटित कार्य कर रहे हैं। मई और जून की उनकी रिपोर्ट में से कुछ महत्त्वपूर्ण अंश हम यहाँ दे रहे हैं—सम्पादक]

१ मण्डाछ गाँव में एक भूमिहार मुखिया के नेतृत्व में तमाम सवर्ण हिन्दू मिलकर भूमिहीन हरिजनों को, जिनकी आबादी वहाँ कोई ५० प्रतिशत है, तंग कर रहे थे। सवर्णों के इस मुखिया से मिलकर श्री सिंह ने हरिजनों को उनकी सारी पिछली मज़दूरी दिलादी। मुखिया साहब ने जो एक नाजायज़ पंचायत बना रखी थी, उसे भी पुलिस की मदद से भंग करा दिया गया। इस तरह ग्रामवासियों के बीच का झगड़ा व मन-मुटाव दूर हो गया। मण्डाछ में ग्राम-हरिजन-सेवक-समिति भी बना दी गई।

२ इकंगरसराय से ५ मील दूर चकदह गाँव में सुखदेवप्रसाद महतो ने एक ग़रीब मोची के कच्चे घर को ताड़ का एक पेड़ काटकर व घर पर गिराकर काफ़ी नुकसान पहुँचाया था। महतों पहले तो समझाने उस पर मोची को क्षतिपूर्ति के रूप में कुछ भी देने को तैयार नहीं हुआ, पर बाद को वह मुलायम पड़ गया, और उसने घर का छप्पर बाँधने के लिए सारा सामान और दो दिन की मज़दूरी भी उस मोची को देदी।

३ १५ जून को इकंगरसराय में थाना-हरिजन-सेवक-संघ नारायणपुर के श्रीकान्त शास्त्री की अध्यक्षता में संगठित किया गया।

४ चकदह गाँव में सुखदेव महतो का फिर दुसाधों और चमारों के साथ इस बात को लेकर झगड़ा खड़ा हो गया, कि वे कुएँ पर पानी भरने के लिए गये थे। श्रीसिंह ने वहाँ पहुँचकर मामला तय करा दिया।

५ जगाई ग्राम के हरिजनों ने शिकायत की कि उन्हें एक कुएँ से न तो पीने के लिए पानी भरने दिया जाता है, और न उनके खेतों की सिंचाई के लिए ही पानी लेने दिया जाता है, हालांकि जब वह कुआँ बना, तब ३० रुपया इन लोगों से भी चन्दे के वसूल किये गये थे। श्रीसिंह पंचायत के मुखिया श्री मथुरासिंह से इस सम्बन्ध में मिले। उन्होंने साफ़ इन्कार कर दिया कि वह हरिजनों को किसी भी काम के लिए उस कुएँ से पानी नहीं लेने देंगे। श्री सिंह के साथ वे बहुत बुरी तरह से पेश आये, और वहाँ से उन्हें चले जाने के लिए कहा। विश्वस्त-सूत्र से मालूम हुआ कि पंचायत के ये मुखिया साहब हरिजनों से बेगार में मुफ्त काम लिया करते हैं। बेगार देने से जिन हरिजनों ने इन्कार किया उनको बहुत बुरी तरह पीटा गया। श्री सिंह लिखते हैं कि कितने ही ग्राम-पंचायतों के मुखिये लगभग वैसे ही जुल्म कर रहे हैं, जैसे कि पहले ज़मींदार किया करते थे।

हमारी समस्याओं की ओर

अस्पृश्यता-निवारण बिल

लोक-संसद में जिस अत्यावश्यक बिल के पेश किये जाने की इधर डेढ़-दो वर्ष से चर्चा थी उस अस्पृश्यता-निवारण बिल का मसौदा ग्रह-मंत्रालय ने तैयार कर लिया है। यह बिल संसद के आगामी बजट सेशन में रखा जायेगा। इस क़ानून के बन जाने पर अस्पृश्यता तथा उससे

उत्पन्न सामाजिक निर्योग्यताओं का निवारण बहुत अंशों तक आसान हो जायेगा। क्योंकि उसके अधीन होनेवाले अपराध हस्तक्षेप्य (काग्निज़ेबल) होंगे। यह क़ानून सिवा जम्मू और काश्मीर के सारे हिन्दुस्तान पर लागू होगा।

हरिजनों को पड़ती ज़मीन दी जाये

हाल में पंजाब के दलित-जातीय-संघ ने राज्य-सरकार के सामने यह माँग रखी थी कि पड़ती ज़मीन हरिजनों के लिए सुरक्षित कर दी जाये। पर पंजाब-सरकार ने इस माँग को मंजूर नहीं किया। सरकार ने दलित-जातीय-संघ के मंत्री को लिखा है कि, "ज़मींदारों ने जिस पड़ती ज़मीन पर गत छह फसलों से खेती नहीं की उसे १६४६ के पूर्वी पंजाब भूमि-उपयोग क़ानून के अनुसार डिप्टी कमिश्नरों द्वारा पट्टों पर उठाया जा रहा है। ७ साल से २० सालतक के पट्टे नीलाम द्वारा दिये जा रहे हैं। ऐसी ज़मीनें पट्टे पर जो लोग लेना चाहें वे नीलाम में अपनी बोली लगा सकते हैं। हरिजनों और दूसरे भूमिहीन काश्तकारों की इस कठिनाई को मद्दे नज़र रखते हुए कि नीलाम में दूसरे आदमियों के मुक़ाबिले वे ऊँची बोली नहीं लगा सकते, खास करके बेज़मीन काश्तकारों के लिए, जिनमें हरिजन भी शामिल हैं, करनाल ज़िले में ८,५०० एकड़, हिसार ज़िले में १,३५५ एकड़, गुड़गांव ज़िले में ३,१३६ एकड़ और फ़िरोजपुर ज़िले में ७७३ एकड़ ज़मीन सुरक्षित रख दी गई है। इनमें से कुछ ज़मीन सिर्फ़ हरिजनों के लिए सुरक्षित रख देने के प्रश्न पर भी विचार किया गया। पर अंत में यह निश्चय हुआ कि बेज़मीन काश्तकारों में हरिजनों और ग़ैरहरिजनों के बीच कोई भेद नहीं किया जाना चाहिए।"

[टि०—बेज़मीन हरिजन और ग़ैरहरिजन काश्तकारों के बीच भेद न करने का समय अभी नहीं आया है। आपेक्षिक दृष्टि से हरिजन अभी हर तरह से असमर्थ और साधनहीन हैं। यही कारण है कि हमारे संविधान द्वारा उनको विशेष संरक्षण और सुविधाएँ दी गई हैं। भूमिहीन हरिजनों को, जो खेती करना चाहते हैं, मुफ्त पड़ती भूमि मिलनी ही चाहिए, जैसा कि कतिपय राज्यों ने किया है, यद्यपि वह आरम्भ-मात्र ही है और बहुत सीमित है।—सं०]

बेदख़ल न किया जाये

पेप्सू प्रदेश कांग्रेस की कार्यसमिति ने सरकार से माँग की है कि हरिजनों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए वह तुरन्त ज़रूरी क़दम उठाये, उनकी बेदखलियों को रोके और काश्त के लिए उन्हें नज़ूल ज़मीन दे, और ग्रामों की शामिलात ज़मीन का उपयोग सबके समान उन्हें भी बेरोक-टोक करने दिया जाये।

आसाम और मणिपुर के हरिजन

महनार (मुज़फ्फरपुर, बिहार) हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री गंगाप्रसाद गुप्त पिछले दिनों आसाम और मणिपुर राज्य में हरिजनों की अवस्था देखने के लिए गये थे। वे आसाम के कुछ ऐसे भी ग्रामों में गये थे, जो आदर्श ग्राम कहे जाते हैं, जहाँ पर कोई सामाजिक भेदभाव नहीं बरता जाता। मगर दूसरे ग्रामों में उन्होंने हरिजनों की हालत भिन्न पाई। कैबर्तपाड़ा के हरिजन, जिनका मुख्य धन्धा मछली पकड़ने का है, नागरिक निर्योग्यताओं से पीड़ित पाये गये। मणिपुर के कुछ हरिजनों के साथ काफ़ी दुर्व्यवहार किया जाता है। नागालोग तक उन्हें घृणा से देखते हैं। अलबत्ता कुछ कांग्रेसी कार्यकर्त्ता उनके साथ सहानुभूति दिखा रहे हैं। एक-दो ब्राह्मण कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं ने हाल में हरिजन लड़कियों के साथ अपना विवाह किया, यद्यपि उनको जाति से बहिष्कृत कर दिया गया।

तेजपुर, नौगाँव और गौहाटी के भंगियों की दशा शोचनीय पाई गई। म्युनिसिपैलिटी की भंगी-बस्तियाँ तो बहुतही खराब हालत में हैं। यह कुछ संतोष की बात है कि आसाम-सरकार ने म्युनिसिपैलिटियों के भंगी कर्मचारियों के मकान बनवाने के लिए कुछ लाख रुपया केन्द्रीय द्वारा दी गई सहायता में से मंजूर किये हैं। संदेह नहीं कि सारे आसाम राज्य में और मणिपुर राज्य में भी अस्पृश्यता पाई जाती है। मेहतरों की हजामत नाई नहीं बनाते। वे लोग न मन्दिरों में जा सकते हैं, न होटलों में।

[टि०—परिगणित तथा अनुसूचित जन जातियों के

कमिश्नर की १९५२ की रिपोर्ट के अनुसार आसाम राज्य में और इसी प्रकार मणिपुर राज्य में अस्पृश्यता और उससे उत्पन्न सामाजिक निर्योग्यताएँ नहीं पाई जाती हैं। यदि आसाम के शहरों में अस्पृश्यता तथा सामाजिक निर्योग्यताएँ देखने में आती भी हैं, तो वे भंगियोंतक ही सीमित हैं, जो बाहर से आकर आसाम में बस गये हैं। मणिपुर राज्य में, सरकारी रिपोर्ट के अनुसार, अस्पृश्यता का नाम भी शेष नहीं रहा है और किसी भी निर्योग्यता से वहाँपर परिगणित जाति के लोग पीड़ित नहीं हैं।

पश्चिमी बंगाल के बारे में भी इसीप्रकार कहा जाता है कि वहाँ पर अस्पृश्यता नहीं है। खेद है कि सरकारी रिपोर्टों को ज्यों-का-त्यों स्वीकार करने में हम असमर्थ हैं। न्यूनाधिक रूप में इन राज्यों में भी अस्पृश्यता आज पाई जाती है, भले ही इन राज्यों की सरकारें इस तथ्य को मानने के लिए तैयार न हों। बंगाल में मूची जाति के लोगों के हाथ का पानी सवर्ण नहीं पीते। कलकत्ते तक में हरिजनों के लिए प्रसिद्ध काली-मंदिर नहीं खुला है। भंगियों से तो परहेज़ रखा ही जाता है। जो भंगी आसाम में कई पीढ़ियों से बसे हुए हैं, उनके लिए यहकहना कि वे बाहर के हैं उचित नहीं है। —सं०]

पर इसे गांधीजीने ही ताड़ा

१७ जून को पिछड़े वर्ग कमीशन के अध्यक्ष काका साहब कालेलकर ने कमीशन के कार्य पर प्रकाश डालते हुए पत्र-प्रतिनिधियों के एक सम्मेलन में कहा :—

"किसी भी राष्ट्र की शक्ति का अन्दाज़ा उसकी सारी जनसंख्या से नहीं, बल्कि ऐसे लोगों की संख्या से लगाया जाता है जो आत्मनिर्भर तथा सुशिक्षित हों, और जो राष्ट्र तथा सारी मानवता के लिए एकसाथ मिलकर काम करने की सामर्थ्य व योग्यता रखते हों। दुर्भाग्य से हिन्दुस्तान में अपने साधारणजनों की हमने सैकड़ों वर्षोंतक उपेक्षा की है। अपने देश के मानवों की एक बड़ी संख्या को धार्मिक और सामाजिक ग़लत विचार पकड़कर हमने ऊपर उठने नहीं दिया। समाज ने अछूतों के प्रति जो अन्याय किया था उसकी ओर हमारे संतों तथा समाज-सुधारकों ने बार-बार ध्यान दिलाया। पर इस बात को गांधीजी ने ही ताड़ा कि यदि अस्पृश्यता का यह नासूर बना रहा तो इससे एक राजनैतिक खतरा पैदा हो सकता है। अतः अपनी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से जहाँ उन्होंने अस्पृश्यता को अधार्मिक और मानवीय गौरव के लिए अशोभनीय कहा, वहाँ भावी राजनैतिक खतरे को देखते हुए अस्पृश्यता-निवारण को उन्होंने स्वराज्य के कार्य-क्रम का एक अभिन्न अंग भी बनाया।"

सबके या किसीके भी हाथ में नहीं

बीकानेर की एक हरिजन-बस्ती में दादा धर्माधिकारी का स्वागत करते हुए हरिजनों ने उन्हें अपनी एक झाड़ू भेंट की। श्रीधर्माधिकारी ने अपने स्वागत भाषण में कहा :

"गांधीजी ने हरिजनों के उत्थान के लिए जो आंदोलन सारे देश में शुरू किया था, उसे सरकार ने मान्यता देकर संविधान में अस्पृश्यता को एक दण्डनीय अपराध ठहरा दिया है। सरकार ने तो जो कुछ करना था कर दिया, अब यह सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं का काम है कि वे समाज के लोगों के दिमाग़ में इस बात को बिठादें। हरिजनों को भी यह ध्यान में रखना चाहिए कि उनका उद्धार कोई दूसरा नहीं कर सकता। उन्हें स्वयं अपने उद्धार का संकल्प करना होगा। जो झाड़ू आज आपकी तरफ़ से मुझे भेंट की गई है, उसपर मेरा केवल इतना ही कहना है कि यह झाड़ू या तो सबके हाथ में होगी या फिर एक के भी हाथ में नहीं होगी। भूदान से प्राप्त भूमि में का तिहाई हिस्सा उन हरिजनों को दिया जायेगा, जो अपने हाथ से उसे जोतना चाहेंगे।

पानी का कष्ट

बीकानेर ज़िले की नोखा तहसील के कई गाँवों से हरिजनों के जल-कष्ट के दुःखद समाचार प्राप्त हुए। जून में तीन-चार गाँवों के हरिजनों ने पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट से भी इस बारे में शिकायत की थी। थारू गाँव के सवर्ण हिन्दुओं ने गाँव के कुएँ पर हरिजनों का पानी भरना तीन महीने से बन्द कर दिया। आठ-आठ, दस-दस मील जाकर दूसरे गाँवों से उन्हें पानी लाना पड़ा। एक गाँव के सवर्णों ने तो दूसरे

गाँवों के लोगों को भी रोक दिया कि वे अपने कुएँ से हरिजनों को पानी न भरने दें। हरिजनों को १३ मील दूर रेलवे स्टेशन पर जाकर जेठ-बैशाख की गर्मियों में इन्जन का उबलता हुआ पानी लाना पड़ा। हरिजनों पर ज्यादती इसलिए की गई कि उन्होंने सवर्ण हिन्दुओं को बेगार देना बन्द कर दिया है।

कच्छ में हरिजनों के लिए कुएँ

कच्छ राज्य की सरकार ने १०००३५० रु० की लागत से हरिजनों के लिए राज्य में ४५ कुएँ बनवाने का काम हाथ में लिया है। सरकार के पिछड़े-वर्ग-विभाग ने ५६०० रु० की भी अतिरिक्त रकम कुएँ बनवाने के लिए अलग रख दी है।

समुद्री सफर-खर्च

केन्द्रीय शिक्षा-मंत्रालय से प्रकाशित एक विज्ञप्ति के अनुसार भारत-सरकार ने १९५३-५४ में परिगणित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के ऐसे कतिपय उम्मीदवारों को समुद्री सफर का दूसरे दर्जे का खर्च देना मंजूर किया है, जिन्हें योग्यता के कारण विदेशों में अध्ययन करने के लिए छात्रवृत्तियाँ तो मिली हों, पर सफर का खर्च जिन्हें खुद अपने पास से देना पड़ रहा हो।

दिल्ली राज्य का कल्याण-बोर्ड

दिल्ली राज्य-सरकार ने हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए जो एक बोर्ड बनाया है उसकी पहली बैठक १४ जुलाई को डा० सुशीला नय्यर की अध्यक्षता में हुई। डा० सुशीला ने हरिजनों के गिरे हुए स्तर को ऊपर उठाने की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुए कहा—

"हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों की उन्नति आर्थिक साधनों द्वारा करने के अलावा एक ऐसा वातावरण पैदा करने की ज्यादा ज़रूरत है, जो जनता के मानस में मनोवैज्ञानिक परिवर्तन ला सके।"

बोर्ड ने दो उपसमितियाँ बनाईं, एक तो हरिजनों की निर्योग्यताओं की जाँचपड़ताल करने के लिए और दूसरी हरिजन विद्यार्थियों को शैक्षणिक सुविधाओं की सलाह देने के लिए।

पाठ्य-पुस्तकों के लिए सहायताएँ

बिहार-सरकार ने विभिन्न स्कूलों में पढ़नेवाले हरिजन विद्यार्थियों को पाठ्य-पुस्तकों की सहायताएँ देने के लिए १२००० रु० मंजूर किये हैं। ये सहायताएँ योग्य तथा साधनहीन विद्यार्थियों को ही दी जायेंगी। जिन विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियाँ दी जायेंगी उनको पाठ्य-पुस्तकों की सहायता नहीं दी जायेगी।

गांधी-छात्रवृत्तियाँ

हरिजन-सेवक-संघ ने कालेज में पढ़नेवाले निम्नलिखित छात्र तथा छात्राओं को सन् १९५३-५४, में जुलाई से जूनतक गांधी-छात्रवृत्तियाँ देना मंजूर किया है :—

छात्र	शिक्षण-संस्था	वर्ष	मासिक रकम
	आसाम		
१ ब्रजगोपाल मेधी	विश्वविद्यालय-ला कालेज, गौहाटी	अंतिम वर्ष	१२ रु०
२ अर्धीरसिंह चौधरी	बी० एन० कालेज, धूबरी	दूसरा वर्ष	१० ,,
३ हरेन्द्रनाथदास	सिवसागर कालेज, सिवसागर,	पहला वर्ष	१० ,,
२ रवीन्द्रनाथ चौधरी	बी० एन० कालेज, धूबरी	पहला वर्ष	१० ,,
५ हरिप्रसाददास	जे० बी० कालेज, जोरहट	चौथा वर्ष	१० ,,

आन्ध्र

१	बलगा मुत्यालु	गवर्नमेंट आर्ट कालेज, श्रीकाकुलम्	पहला वर्ष	१० रु०
२	अ० विजय प्रदीप	हिन्दू कालेज, मसुलीपट्टम्	,,	१० ,,
३	एम० जगन्मोहनराव	,, ,,	,,	१० ,,
४	एन० लक्ष्मीनारायण	आन्ध्र जातीय कलाशाला, मसुलीपट्टम्	तीसरा वर्ष	१० ,,
५	सी० सत्तैया	,, ,,	,,	१० ,,
६	मंगलगिरि सुब्बाराव	पी० बी एन० कालेज, निडुवरुलु	दूसरा वर्ष	१० ,,

उत्तरप्रदेश

१	ब्रजभूषण	गवर्नमेंट इन्टर कालेज, लैंसडाउ	पहला वर्ष	१० ,,
२	कमलानन्द	,, ,,	दूसरा वर्ष	१० ,,
३	फूलसिंह	लखनऊ-विश्वविद्यालय, लखनऊ	तीसरा वर्ष	१० ,,
४	कमलदास	डी० ए० वी० कालेज, देहरादून	,,	१० ,,
५	खुशहाल मनी	डी० ए० वी० कालेज, देहरादून	,,	१० ,,
६	फागूराम	हायर सेकण्डरी स्कूल, आज़मगढ़	पहला वर्ष	१० ,,
७	दुखन्तीराम	,, ,,	,,	१० ,,
८	हरगुणराम	,, ,,	,,	१० ,,
९	पवनकुमार	शिबली नेशनल कालेज, आज़मगढ़	तीसरा वर्ष	१० ,,
१०	सताईराम	एस०के०पी० इन्टर कालेज, आज़मगढ़	पहला वर्ष	१० ,,
११	सहतीराम	डी० ए० वी० हायर सेकण्डरी स्कूल, आज़मगढ़	दूसरा वर्ष	१० ,,
१२	मताई राम	,, ,,	पहला वर्ष	१० ,,
१३	विष्णुस्वरूप	डी० ए० वी० कालेज, कानपुर	,,	१० ,,
१४	शिवराम भानविक	,, ,,	,,	१० ,,
१५	मक्खनलाल	डी०ए०वी० हा० सेकण्डरी स्कूल, देहरादून	दूसरा वर्ष	१० ,,
१६	अश्विनीकुमार	श्री इन्द्रबहादुरसिंह नेशनल इन्टर कालेज, भदोही (बनारस)	पहला वर्ष	१० ,,
१७	होरीलाल	इलाहाबाद-विश्वविद्यालय, इलाहाबाद	एम० ए० (पहला वर्ष)	१० ,,
१८	सकतूदास	हरिश्चन्द्र इन्टर कालेज, लखनऊ	पहला वर्ष	१० ,,
१९	भारतीभूषण	गवर्नमेंट इन्टर कालेज, इलाहाबाद	दूसरा वर्ष	१० ,,
२०	लखीराम	एम० एम० कालेज, गाजियाबाद	तीसरा वर्ष	१० ,,
२१	कलावती मालवीय	हायर सेकण्डरी स्कूल, मुजफ्फरनगर	दूसरा वर्ष	१० ,,
२२	जयनन्दसिंह	एम० एम० कालेज, गाजियाबाद	पहला वर्ष	१० ,,

काश्मीर

१ मुन्शीराम	जी० एम० जी० कालेज, जम्मू	चौथा वर्ष	१० रु०
२ दीवानचन्द	,, ,,	,,	१० ,,
३ परसराम	,, ,,	पहला वर्ष	१० ,,
४ लक्ष्मणदास	,, ,,	,,	१० ,,
५ अचारचन्द	,, ,,	दूसरा वर्ष	१० ,,

केरल

१ केलोतकण्डी चोयी	गुरुवायुरप्पन कालेज, कोज़ीकोड	दूसरा वर्ष	१० रु०
२ कुट्टियाकिल माधवन्	,, ,,	,,	१० ,,
३ चिन्नस्वामी पोन्नन्	,, ,,	पहला वर्ष	१० ,,
४ वी० अप्पा	,, ,,	,,	१० ,,

दिल्ली

१ मेलाराम	कैम्प कालेज, दिल्ली	चौथा वर्ष	१० रु०
२ मुरारीलाल	हिन्दू कालेज, दिल्ली	तीसरा वर्ष	१० ,,

पंजाब

१ गुरुचरणसिंह सरिया	इन्जीनियरिंग कालेज, रूड़की	तीसरा वर्ष	१० रु०
२ महताब सिंह	एस० ए० जैन कालेज, अम्बाला शहर	चौथा वर्ष	१० ,,

पश्चिमी बंगाल

१ चुनीलाल मण्डल	सुरेन्द्रनाथ कालेज, कलकत्ता	दूसरा वर्ष (कामर्स)	१० रु०
२ अजितकुमार हाल्दार	,, ,,	तीसरा वर्ष	१० ,,
३ माणिकलाल दोलाइ	सिटी कालेज, कलकत्ता	पहला वर्ष	१० ,,

बरार

१ देवीदास राजाराम बांगडे	विदर्भ-महाविद्यालय, अमरावती	एम० ए० (पहला वर्ष)	१० रु०
२ सदाशिव मंगलराव रामटेक	नागपुर-विश्वविद्यालय, नागपुर	,, ,,	१० ,,
३ गेन्दू बल्लाजी ओहेकर	कालेज ऑफ एग्रीकलचर, नागपुर	तीसरा वर्ष	१० ,,
४ सम्पत सदाशिव पांजड़े	विदर्भ-महाविद्यालय, अमरावती	,,	१० ,,

मध्यप्रदेश [मराठी]

१ नाथू गंगाराम कामले	कामर्स कालेज, वर्धा	पहला वर्ष	१० रु०
२ मनोहर आत्माराम पाटिल	मोहता साइन्स कालेज, नागपुर	,,	१० ,,
३ प्रह्लाद द्वारिकानाथ माटे	साइंस कालेज, नागपुर	,,	१० ,,
४ नर्मदाप्रसाद दशरथ मेश्राम	ला० कालेज, नागपुर	पहला वर्ष (ला०)	१० ,,

५ अभिमन्यु मोतीराम गेडाम	नागपुर-महाविद्यालय, नागपुर	पहला वर्ष	१० ,,

महाकोशल

१ मांगीलाल प्यारेलाल चन्द्रवंशी	विटरनरी कालेज, जबलपुर	पहला वर्ष	१० ,,
२ परशुराम खोवरागड़े	न्यू आर्ट् स एण्ड कॉमर्स कालेज, नागपुर	,,	१० ,,

मैसूर

१ के० गोपालय्या	फर्स्टग्रेड कालेज, मैसूर	दूसरा वर्ष	१० ,,

राजस्थान

१ ओम् प्रकाश मालवीय	राजेन्द्र इन्टर कालेज, झालावार	दूसरा वर्ष	१० रु०

औद्योगिक

आन्ध्र

१ एस० वेंकटस्वामी	गवर्नमेंट ट्रेनिंग स्कूल, अनन्तपुर	ट्रेनिंग सीनियर	७ रु०
२ एम० नरसिंहमुलु	,, ,,	,,	७ ,,
३ वाई० नागरत्नम्मा	,, ,,	,,	५ ,,
४ पी० वसन्तकुमारी	,, ,,	,,	५ ,,
५ एम० रुद्रप्पा	,, ,,	,,	७ ,,
६ बी० लक्ष्मीनरसम्मा	,, ,,	,,	७ ,,
७ वी० विश्वनाथम्	,, ,,	,,	५ ,,
८ पी० बालसुन्दरम	,, ,,	,,	५ ,,
९ वल्लभपुरम् नागय्या	सेंट जोजिफ ट्रेनिंग स्कूल, टिण्डीवनम्	कारपेंट्री	५ ,,
१० पी० पालनि अप्पन	गवर्नमेंट ट्रेनिंग स्कूल, डिण्डीगल	जूनियर	५ ,,
११ जी० बापानम्मा	नारायणमूर्ति सीनियर बेसिक स्कूल, पालवेल्ला	,,	५ ,,

केरल

१ के० वी० सुकुमारिन्	गवर्नमेंट ट्रेनिंग स्कूल, कोज़ीकोड	ट्रेनिंग (दूसरा)	७ रु०
२ के० जयरमन्	,, ,,	,,	७ ,,

पंजाब

१ भतेरी देवी	गवर्नमेंट गर्ल्स हाईस्कूल, रोहतक	जे० वी०	५ रु०
२ हुकमसिंह	पटवारी स्कूल, अम्बाला शहर	पटवारी	५० रु. कुल
३ लक्ष्मणसिंह	,, ,,	,,	५० ,,
४ हरदयालसिंह	,, ,,	,,	५० ,,
५ अमरूराम पोंवार	,, ,,	,,	५० ,,
६ सूरतराम	,, ,,	,,	५० ,,
७ नानकसिंह	,, ,,	,,	५० ,,

बम्बई

१ गणपतलाल नत्थूभाई चौहान	ग्रांट मेडिकल कालेज, बम्बई	एम०बी०बी०एस० (पहला वर्ष)	१५ रु०
२ जेठालाल जीवराज मूँदावा	जे० जे० स्कूल आफ आर्ट्स, बम्बई	ड्राइंग	१० ,,

मध्यप्रदेश [मराठी]

१ श्रीमती मित्रविन्दा गजविये	सीतावल्दी मेटर्निटी होम, नागपुर	नर्स	१० रु०
२ सिन्धुबाई गजघाटे	सेवासदन, नागपुर	नार्मल	७ ,,

हाईस्कूल

नाम	स्कूल	कक्षा	मासिक रक़म
	आसाम		
१ नन्देश्वरदास	बी० बी० हाईस्कूल, जोरहट	१०	५ रु०
२ कुमारी रोहिणीबालादास	एस० डी० पी० हाईस्कूल, चेरिंग	८	४ ,,
३ कुमारी जुवाप्रभा नियोग	फुलेश्वरी कन्या स्कूल शिवसागर	८	५ ,,
४ कुमारी इन्दुमती हज़ारिका	,, ,, ,,	६	७ ,,
५ कुमारी मालतीदास	,, ,, ,,	१०	५ ,,
६ कुमारी रामलता बोरा	गर्ल्स हाईस्कूल, जोरहट	६	५ ,,
७ कुमारी रुक्मिणी बाला	वेटमरी हाईस्कूल, वेटमरी		२ ,,
८ कुमारी काननबाला	,, ,, ,,		२॥ ,,
९ कुमारी शशिबाला	,, ,, ,,		३ ,,
१० कुमारी ललिताबाला	,, ,, ,,		२ ,,
	,, ,, ,,		
	आंध्र		
१ कुमारी सी० सत्यवती	बी०एच० स्कूल, वगेश्वरपुरम्	३ फार्म	६ ,,
२ ई० गंगा भवानी	गवर्नमेंट हाईस्कूल, पोलावरम्	,,	६ ,,
३ नितपोतुराजु	बोर्ड हाईस्कूल, इलूरू	२ फार्म	४ ,,
५ एस० नेटीकल्लु	बी०एच० स्कूल, रायदुर्ग	६ फार्म	५ ,,
	उत्तरप्रदेश		
१ सावित्री देवी	अगरसेन कन्या पाठशाला, आज़मगढ़	६	३ ,,
२ केसरी देवी	अगरसेन ,, ,, ,,	७	४ ,,
३ रामदुलारी देवी	,, ,, ,, ,,	७	४ ,,
४ गुलपति देवी	,, ,, ,, ,,	७	४ ,,
५ मेवाती देवी	,, ,, ,, ,,	७	५ ,,
६ माती देवी	,, ,, ,, ,,	६	३ ,,
७ मेवाराम	हिन्दू इन्टर कालेज, अमरोहा	१०	५ ,,
८ सुरेशचन्द्र	देवनागरी हा० सेकण्डरी स्कूल, हलदौर	८	४ ,,

९ सलेखचन्द्र	जैन हा० सेकण्डरी स्कूल, खेकड़ा	९		५ रु०
१० दीनदयाल	गवर्नमेंट इन्टर कालेज, लैन्सडाउन	१०		६ "
११ कुमारी लाली	गवर्नमेंट हा० सेकण्डरी स्कूल, आज़मगढ़	८		४ "
१२ सुरेन्द्रसिंह	म्यसमोर इन्टर कालेज, चोपड़ा (गढ़वाल)	९		५ "
१३ रामरतन	डी०एन०हा० सेकण्डरी स्कूल, गुलावटी	९		५ "

कर्णाटक

१ आनन्द कुमार	गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार	८		६ "

काश्मीर

१ मुंशीराम	श्री हरिसिंह हाईस्कूल, जम्मू	१०		५ "
२ चरणदास	गवर्नमेंट हाईस्कूल ऊधमपुर	१०		५ "
३ परसराम	हरिसिंह हाईस्कूल, जम्मू	९		५ "
४ ठाकुरदास	गवर्नमेंट हाईस्कूल, रामनगर	९		५ "
५ केसरसिंह	हरिसिंह हाईस्कूल, अखनूर	१०		५ "

केरल

१ पी० के० कमलाक्षी	गणपत हाईस्कूल, कोज़ीकोड	६	फार्म	५ "

दिल्ली

१ स्वरूपचन्द	हरिजन पाठशाला, मलकागंज	४		४ रु०
२ रूपकिशोर	हरिजन पाठशाला, मलकागंज	१०		४ "
३ रामगोपाल	हरिजन पाठशाला मलकागंज	९		४ "
४ प्रेमचन्द	हरिजन पाठशाला मलकागंज	९		३ "
५ रामफल	हरिजन पाठशाला मलकागंज	१०		५ "
६ ज्ञानोदेवी	" " "	१०		५ "
७ आनन्दी	" " "	१०		५ "
८ गंगाराम	" " "	१०		५ "
९ दुर्गाप्रसाद	डी०ए०वी०हा० सेकण्डरी स्कूल, दिल्ली	११		४ "
१० रामकिशन	डी०ए०वी० स्कूल, राजेन्द्रनगर	७		४ "
११ विश्वबन्धु	डी०ए०वी० हाईस्कूल, नई दिल्ली	९		५ "
१२ जानकी	विद्यामन्दिर, करोलबाग	५		३ "
१३ बीरसिंह	बिड़ला हा० सेकण्डरी स्कूल, सब्जीमण्डी	६		३ "
१४ रामचन्द्र कर्दम	ए०वी० मिडिल स्कूल रोशनारा रोड़	६		४ "
१५ रामानन्द	क्राफ्ट हाईस्कूल, दिल्ली कैंट	८		५ "
१६ प्रेमवती	गांधी मेमोरियल कोचिंग स्कूल, सब्जीमण्डी	९		५ "
१७ मोहनलाल	रामजस हायरसेकण्डरी स्कूल, आनन्दपर्वत	९		६ "

१८ कौशल्या देवी	एम०बी० गर्ल्स स्कूल, किनारी बाजार	५	३ रु०
१९ पूर्णमल	गवर्नमेंट हायर सेकण्डरी स्कूल, दिल्ली केंट	७	४ ”
२० जयप्रकाश	गवर्नमेंट हाईस्कूल, तिमारपुर	१०	५ ”

बरार

१ कुमारी विमला माधोराव कामले	गवर्नमेंट गर्ल्स हाईस्कूल, अमरावती	१०	५ ,,

मध्यप्रदेश (मराठी)

१ कुमारी मनोमा डांगरे	सेंट उर्सिला हाईस्कूल, नागपुर	१०	४ ”
२ विद्यावती महादेवराव शिन्दे	” ” ” ”	११	६ ”
३ शेषराम क० मेश्राम	विनायकराव देशमुख हाईस्कूल, नागपुर	९	४ ”
४ शान्ता मुकुन्दराव मुरारकर	सेंट उर्सिला हाईस्कूल, नागपुर	११	५ ”
५ कुमारी सुमित्रा	गवर्नमेंट हाईस्कूल, भण्डारा	१०	६ ”
६ मानकुमारी छत्रे	गवर्नमेंट हाईस्कूल, रायपुर	६	४ ”
७ कुमारी कुन्ता दी० गायकवाड़	लोकांचीशाला, नागपुर	१०	४ ”
८ नाच्यार देवी कोंमवड़े	लोकांचीशाला, नागपुर	६	३ ”
९ सुमित्रा विश्वनाथ कानफड़े	सेवासदन, नागपुर	१०	५ ”
१० नलिनी रघुनाथराव पाटिल	” ”	११	५ ”
११ सविता बाबूराम बडगे	सेवासदन, नागपुर	८	५ ”
१२ एस० नर्मदा बाई	सेवासदन, नागपुर	१०	४ ”
१३ वेणु सखरकर	सेवासदन नागपुर	१०	६ ”

महाकोशल

१ मानिकबाई कुल्हाडे	इण्डियन इंगलिश मिडिल स्कूल, हरदा	४	४ ”
२ मन्नूलाल	म्यूनिसिपल हाईस्कूल, मण्डला	७	५ ”

महाराष्ट्र

१ कलावती एन० शिन्दे	महिला-आश्रम हाईस्कूल, पूना	ट्रेनिंग	५ ”
२ शकुन्तला कालूजी कागने	” ” ”	१०	५ ”
३ मंजुला लक्ष्मण मोरे	” ” ”	१०	५ ”
४ सुलोचना रा० गायकवाड़	” ” ”	१०	५ ”
५ सावित्री पण्डरीनाथ भोंसले	आनन्दीबाईकरवे स्कूल, पूना	६	७ ”
६ सुमन पुण्डलीक राउत	महिला आश्रम हाईस्कूल, पूना		५ ”
७ काशीताई जीपारू यादव	ए. बी. हाईस्कूल, चालीसगाँव	१०	६ ”

मैसूर

१ एस० पुत्तय्या	गवर्नमेंट महाराजा हाईस्कूल, मैसूर	मैट्रिक	५ ”

Regd. No. D. 363

अस्पृश्यता का अन्त

[भारत के संविधान में से]

अनुच्छेद १७. "अस्पृश्यता" का अन्त किया जाता है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया जाता है। 'अस्पृश्यता" से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा।

अनुच्छेद १५. (२) केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान अथवा इनमें से किसी के आधार पर कोई नागरिक—

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों तथा सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश के; अथवा

(ख) पूर्ण या आंशिक रूपमें राज्य-निधि से पोषित अथवा साधारण जनता के उपयोग के लिए समर्पित कुओं, तालावों, स्नानघाटों, सड़कों तथा सार्वजनिक समागम स्थानों के उपयोग के

बारे में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बन्धन अथवा शर्त के अधीन न होगा।

प्रकाशक—के० एस० शिवम्, कार्यवाहक मंत्री, हरिजन-सेवक-संघ, दिल्ली
मुद्रक—वियोगी हरि, उद्योगशाला प्रेस, किंग्सवे, दिल्ली